देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला-

संपादक

रायबहादुर गौरीशंकर हीराचंद ओझा

प्राचीन मुद्रा

(श्रीयुक्त राखालदास बंद्योपाध्याय की बँगला पुस्तक का अनुवाद)

अनुवादक

रामचंद्र वर्म्मा

काशी नागरीप्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित

प्रचार नहीं हुआ। भारत के प्राचीन इतिहास, भूगोल, प्राचीन-लिपितत्त्व आदि पुरातत्त्व की भिन्न भिन्न शाखाओं के संबंध में जिज्ञासु छात्रों के लिये हुए अँगरेजी भाषा में बहुत से उपयोगी ग्रंथ हैं। परंतु मुद्रातत्त्व के संबंध में प्रस्तुत पुस्तक के ढंग के ग्रन्थ बहुत ही कम हैं। इसी अभाव को दूर करने के लिये कैम्ब्रिज के अध्यापक रैप्सन ने "भारतीय मुद्रा" नामक एक छोटा ग्रन्थ तैयार किया था। परंतु अध्यापक रैप्सन का वह ग्रन्थ, (स्वर्गीय) स्मिथ (V. A. Smith) के "प्राचीन भारत का इतिहास" अथवा स्वर्गीय अध्यापक बुह्लर (G. Buhler) के "भारतीय प्राचीन लिपितत्त्व" नामक ग्रन्थ की तरह सरल अथवा विशद नहीं है। अध्यापक रैप्सन का ग्रन्थ तत्त्वानुसंधान करनेवालों को मुद्रातत्त्व की सीमा तक ही पहुँचा देता है। वह मुद्रातत्त्व संबंधी ग्रन्थों अथवा प्रबन्धों की सूची (Bibliography) मात्र है। तथापि भारतीय मुद्रातत्त्व के संबंध में किसी दूसरे ग्रन्थ के न होने के कारण भारतवर्ष का ऐतिहासिक तत्त्व जाननेवालों के लिये वही अमूल्य है।

प्रवीण ऐतिहासिक परम श्रद्धास्पद श्रीयुक्त अक्षयकुमार मैत्रेय महाशय ने कई वर्ष पहले मुझसे एक ऐसा ग्रन्थ लिखने का अनुरोध किया था, जिसका अवलम्बन करते हुए नए इतिहास-प्रेमी लोग मुद्रातत्त्व के दुर्गम क्षेत्र में प्रवेश कर सकें। परंतु अनेक कारणों से मैं मैत्रेय महाशय की आज्ञा का पालन नहीं कर सका था। इस ग्रन्थ में ऐतिहासिक युग के आरंभ से लेकर उत्तरापथ और दक्षिणापथ में मुसलमानों के विजय-काल तक के पुराने सिक्कों का वैज्ञानिक और क्रमबद्ध विवरण दिया गया है। दूसरे भाग में भारतवर्ष के मुसलमानों के राजत्व काल के सिक्कों का विवरण देने की इच्छा है।

मुसलमानों की विजय के पहले के दूसरे साधनों के अभाव में लुप्त इतिहास के उद्धार के लिये पुराने सिक्के जितने आवश्यक साधन हैं, मुसलमानों के राजत्व काल के लिपिबद्ध ऐतिहासिक विवरणों के प्रस्तुत होने के कारण इस समय के लिये पुराने सिक्के उतने आवश्यक साधन नहीं हैं। मुसलमानों की विजय के पहले का मुद्रातत्व जटिल है, और साथ ही वह बहुत सी भाषाओं तथा बहुत से देशों के इतिहासों पर निर्भर करता है। इसलिये उसकी वैज्ञानिक आलोचना करना प्रायः दुस्साध्य है। तथापि वह लुप्त इतिहास का पुनरुद्धार करने के लिये एक आवश्यक साधन है, इसलिये उसका मूल्य भी बहुत अधिक और असाधारण है। रैप्सन के ग्रन्थ के अतिरिक्त संसार की और किसी भाषा में भारतीय मुद्रातत्व का ठीक ठीक विवरण नहीं लिखा गया। इसलिये इस ग्रन्थ में मैंने यथासाध्य वैज्ञानिक रीति से और वर्तमान काल तक भारतीय मुद्रातत्व की आलोचना करने की चेष्टा की है। इसकी रचना स्वर्गीय अध्यापक बुह्लर के "भारतीय प्राचीन लिपिविज्ञान" के ढंग पर की गई है। भारतीय मुद्रातत्व के प्रमाण बहुत दुर्बल हैं और उसकी विस्तृति बहुत ही सामान्य है। तथापि विद्वानों तथा सर्वसाधारण को यह बात बतलाने के लिये इस ग्रन्थ की रचना हुई है कि केवल मुद्रातत्व की आलोचना से ही लुप्त इतिहास का कहाँ तक उद्धार हो सकता है। प्राचीन लिपितत्व अथवा उद्धृत इतिहास ने मुद्रातत्व के जिन अंशों को सुदृढ़ सत्य आधार पर स्थापित किया है, अर्थात् जिन अंशों की उनके द्वारा सत्यता सिद्ध हुई है, उन्हीं सब अंशों में शिलालेखों, ताम्रशासनों अथवा लिपिबद्ध इतिहास का उल्लेख किया गया है। इस पुस्तक में भारतीय इतिहास के प्रत्येक

युग (Period) के भिन्न भिन्न राजवंशों के सिक्कों का विस्तृत विवरण दिया गया है। भारतवर्ष के भिन्न भिन्न युगों और स्वतंत्र राजवंशों के सिक्कों की कई अलग अलग तालिकाएँ पहले प्रकाशित हो चुकी हैं। परन्तु जान पड़ता है कि संसार की किसी भाषा में किसी एक ही ग्रन्थ में समस्त भारतीय मुद्रातत्व का विस्तृत विवरण अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ है। आशा है कि विद्वान् लोग इस नए उद्योग को कृपापूर्ण दृष्टि से देखेंगे।

अध्यापक रैप्सन के "भारतीय मुद्रा" (Indian Coins), कनिंघम के "भारतीय प्राचीन मुद्रा" (Coins of Ancient India), "भारतीय ग्रीक राजाओं के सिक्के" (Coins of Indo-Greek Princes), "शक राजाओं के सिक्के" (Coins of Shakas), "भारतीय मध्य युग के सिक्के" (Coins of Mediaeval India), रैप्सन के "अन्ध्र और क्षत्रप वंश के सिक्कों की सूची" (British Museum Catalogue of Indian Coins, Andhras, W. Ksatrapas etc.), एलेन के "गुप्त राजवंश के सिक्कों की सूची" (British Museum Catalogue of Indian Coins, Gupta Dynasties), गार्डनर के "बाह्लीक और भारतवर्ष के ग्रीक और शक राजाओं के सिक्कों की सूची" (British Museum Catalogue of Indian Coins, Greek and Sythic Kings of Bactria and India), स्मिथ के "कलकत्ते के अजायबघर के सिक्कों की सूची" (Catalogue of Coins in Indian Museum Vol. 1.), ह्वाइटहेड के "पंजाब के अजायब घर के सिक्कों की सूची"

(Catalogue of Coins in the Punjab Museum, Lahore Vol 1) आदि प्रसिद्ध ग्रंथों के आधार पर यह पुस्तक लिखी गई है।

ग्रन्थकार के मित्रों के बहुत परिश्रम करने पर भी ग्रन्थ में बहुत सी भूलें रह गई हैं। आशा है कि ग्रन्थकार की असमर्थता के कारण भारतीय भाषा में लिखे हुए भारतीय सिक्कों पर इस पहले ग्रन्थ में जो दोष आदि रह गए हैं, इन्हें पण्डित लोग स्वयं सुधार लेंगे।

१४ शिमला स्ट्रीट,
कलकत्ता।
२३ आश्विन १९१९ } श्रीराखालदास बन्द्योपाध्याय

प्राक्कथन

भारतवर्ष का प्राचीन लिखित इतिहास नहीं मिलता, यह निश्चित है। ईरान के बादशाह दारा के पंजाब पर अपना अधिकार जमाने, सिकंदर की पंजाब की चढ़ाई, और महमूद गजनवी की हिंदुस्तान के भिन्न भिन्न विभागों पर की चढ़ाइयों का हमारे यहाँ कुछ भी लिखित उल्लेख नहीं मिलता। यही हमारे यहाँ के साहित्य में इतिहास विषयक त्रुटि को बतलाने के लिये अलम् है। प्रत्येक जाति और देश के जीवन तथा उत्थान के लिये उसके इतिहास की परम आवश्यकता रहती है। ईसवी सन् १७८४ में सर् विलियम जोन्स के यत्न से प्राचीन शोध की नींव डाली गई। तब से लेकर आज तक इस विस्तीर्ण देश में, जहाँ प्राचीन काल से ही अनेक स्वतंत्र राज्य या गण-राज्य समय समय पर स्थापित और नष्ट होते रहे, बहुत कुछ इतिहास संबंधी सामग्री उपलब्ध होती गई है। यद्यपि इस विषय में श्रम करनेवाले देशी और विदेशी विद्वानों की संख्या बहुत थोड़ी है, तो भी उनके श्रम से हमारे प्राचीन इतिहास की शृंखला की जो कुछ कड़ियाँ उपलब्ध हुई हैं, वे कम महत्त्व की नहीं हैं। ऐसी सामग्री में शिलालेख, ताम्रपत्र, सिक्के और विदेशी यात्रियों या विद्वानों के पत्र

यतद्देशीय विद्वानों के लिखे हुए ग्रंथ भी हमें बहुत कुछ सहायता देते हैं। ईसवी सन की छठी शताब्दी के बाद के कई एक संस्कृत और प्राकृत के ऐतिहासिक काव्य भी उपलब्ध हुए हैं जो इस विस्तीर्ण देश पर राज्य करनेवाले अनेक भिन्न भिन्न वंशों में से किसी न किसी वंश या राजा का कुछ इतिहास उपस्थित करते हैं। हमारे प्राचीन इतिहास के लिये सबसे अधिक उपयोगी तो शिलालेख और ताम्रलेख हैं, जो उस समय के इतिहास, देशस्थिति, लोगों के आचार-व्यवहार, धर्म-संबंधी विचार, आदि विषयों पर बहुत कुछ प्रकाश डालते हैं। सिक्के भी कम महत्व के नहीं हैं। जिन प्राचीन राजवंशों और राजाओं का पता शिलालेखों और ताम्रलेखों से नहीं मिलता, उनके विषय की बहुत कुछ जानकारी सिक्कों से प्राप्त हो जाती है।

काबुल और पंजाब पर राज्य करनेवाले यूनानी (ग्रीक) राजाओं के राजत्व-काल का अब तक केवल एक ही शिलालेख विदिशा (भेलसा, गवालियर राज्य में) के एक सुंदर और विशाल पाषाण स्तंभ पर खुदा हुआ मिला है, जिससे जाना जाता है कि राजा ऐंटी-आल्किडिस के समय तक्षशिला (पंजाब) नगर के रहनेवाले डियन (Dian) के पुत्र हेलियोदोर (Heliodoros) ने, जो यवन (यूनानी) होने पर भी भागवत (वैष्णव) था और जो राजा काशीपुत्र भागभद्र के यहाँ राजदूत होकर आया था, देवताओं के देवता वासुदेव

(विष्णु) का यह गरुड़ध्वज बनवाया। अब तक यूनानी राजाओं के समय का यही एक शिलालेख मिला है। सीलोन (लंका) में मलिंद पन्हो (मलिंद प्रश्न) नामक पाली भाषा की पुस्तक में मलिंद (मिनंडर) और बौद्ध श्रमण नागसेन के विवाद रूपी प्रश्नोत्तर हैं। उक्त पुस्तक से जाना जाता है कि मलिंद (मिनंडर) यवन (यूनानी) था और वह पराक्रमी होने के अतिरिक्त अनेक शास्त्रों का ज्ञाता भी था। उसका जन्म अलसंद अर्थात् अलेग्जेंड्रिया नगर (हिंदुकुश पर्वत के निकट) में हुआ था। उसकी राजधानी साकल (पंजाब में) बड़ी समृद्धिशाली नगरी थी। मलिंद (मिनंडर) नागसेन के उपदेश से बौद्ध हो गया था। प्लूटार्क नामक प्राचीन लेखक लिखता है कि वह ऐसा न्यायी और लोकप्रिय था कि उसका देहांत होने पर अनेक नगरों के लोगों ने उसकी राख आपस में बाँट ली, और अपने यहाँ उसे ले जाकर उन पर स्तूप बनवाए। शिलालेख और प्राचीन पुस्तकों से तो हमें अफगानिस्तान और पंजाब आदि पर राज्य करनेवाले यूनानी राजाओं में से केवल दो के ही नाम ज्ञात हुए हैं परंतु यूनानियों के सोने, चाँदी और ताँबे के सिक्कों ने २५ से अधिक राजाओं और रानियों के नाम प्रकाशित किए हैं। यद्यपि सिक्के छोटे होते हैं, और उन पर बहुत ही छोटे छोटे लेख रहते हैं, तो भी वे बड़े महत्त्व के होते हैं। यूनानियों के सिक्कों पर एक तरफ राजा का चेहरा और किनारे पर [illegible] खिताबों सहित राजा नाम का

पुरानी ग्रीक लिपि में रहता है, और दूसरी ओर किसी आराध्य देवी देवता का या अन्य किसी का चित्र रहता है; और किनारे के पास उस प्राचीन ग्रीक लिपि के लेख का बहुधा प्राकृत अनुवाद खरोष्ठी लिपि में होता है। इन सिक्कों पर राजा के पिता का नाम न होने से उनकी वंश-परम्परा यद्यपि स्थिर नहीं हो सकती, तो भी उनकी पोशाक, उनके आराध्य देवी-देवता, उस समय की शिल्पकला आदि का उनसे बहुत कुछ परिचय मिल सकता है। इन्हीं सिक्कों पर के प्राचीन ग्रीक लिपि के लेखों के सहारे से खरोष्ठी लिपि की वर्णमाला का भी ज्ञान हो सका, जिससे उक्त लिपि में मिलनेवाले हमारे यहाँ के शिलालेख और ताम्रलेख अब थोड़े श्रम से भली भाँति पढ़े जा सकते हैं। इन सिक्कों पर संवत् न रहने से उक्त राजाओं का अब तक ठीक निश्चय न हो सका, तो भी हमारे इतिहास की खोई हुई कड़ियों को एकत्र करने में वे बहुत बड़े सहायक हैं।

पश्चिमी क्षत्रप वंशी राजाओं के चाँदी के हो सिक्के मिलते हैं जो कलदार चौअन्नी से बड़े नहीं होते, तो भी उन पर के लेखों में क्षत्रप या महाक्षत्रप का नाम और खिताब एवं उसके पिता क्षत्रप या महाक्षत्रप का खिताब सहित नाम तथा संवत् का अंक दिया हुआ होने से इस राजवंश की २२ नामों की क्रम-बद्ध वंशावली और बहुत से राजाओं के राजत्व काल का निर्णय हो गया है, जब कि उनके थोड़े से मिले हुए

शिलालेखों में छ सात राजाओं से अधिक के नाम नहीं मिलते। उक्त सिक्कों के आधार पर क्षत्रपों का वंश-वृक्ष बनाने से यह भी निर्णय होता है कि इनमें क्षत्रपों की नाईं ज्येष्ठ पुत्र ही अपने पिता के राज्य का स्वामी नहीं होता था, किंतु एक राजा के जितने पुत्र हों, वे उसके पीछे यदि जीवित रहें, तो क्रमश सबके सब राज्य के स्वामी होते थे और उनके बाद यदि बडे भाई का पुत्र जीवित हो तो वह राज्य पाता था। यह रीति केवल सिक्कों से ही जानने में आई है।

कुशनवंशियों के सिक्कों से जाना जाता है कि वे शीत-प्रधान देशों से आए हुए थे, जिससे उनके सिर पर बडी टोपी, बदन पर मोटा कोट या लबादा और पैरों में लंबे बूट होते थे। राजतरंगिणी में कल्हण ने उनको तुरुष्क अर्थात् वर्तमान तुर्किस्तान का निवासी बतलाया है, जो उनकी पोशाक से ठीक जान पडता है। वे लोग अग्निपूजक थे, और बहुधा सिक्कों में राजा अग्निकुंड में आहुति देता हुआ मिलता है। वे शिव, बुद्ध, सूर्य, आदि अनेक देवताओं के उपासक थे, जैसा कि उनके सिक्कों पर अंकित आकृतियों से पाया जाता है। उस समय तुर्किस्तान में भारतीय सभ्यता फैली हुई थी।

गुप्तों के सोने, चाँदी और ताँबे के सिक्के मिलते हैं, जिनमें सोने के सिक्के विशेष महत्व के हैं, क्योंकि उन पर इन राजाओं के कई कार्य अंकित किए गए हैं। जैसे कि समुद्रगुप्त के सिक्कों

पर एक तरफ यूप (यज्ञस्तंभ) के साथ बँधा हुआ यज्ञ का अश्व बना है, जो उसका अश्वमेध यज्ञ करना और उसकी दक्षिणा में देने के लिये, या उसकी स्मृति के लिये इन सिक्कों का बनवाया जाना सूचित करता है। उसके दूसरे प्रकार के सिक्कों पर राजा पलँग पर बैठा हुआ कई तारवाला वसुधाहति बाद्य बजा रहा है, जो उक्त राजा का गान्धर्व विद्या में निपुण होना प्रकट करता है, जैसा कि उसी के शिलालेख से पाया जाता है। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर राजा बाण से व्याघ्र का शिकार करता हुआ अंकित किया गया है, जो उसकी वीरता प्रकट करता है। इसी तरह उस वंश के भिन्न भिन्न राजाओं के भिन्न भिन्न कार्यों आदि का पता भी इन सिक्कों से ही लगता है। इन सिक्कों से यह भी पाया जाता है कि इन राजाओं ने यूनानियों की पोशाक को भी कुछ अपनाया था, क्योंकि राजाओं के शरीर पर पुराना यूनानी कोट स्पष्ट प्रतीत होता है, जिसके आगे और पीछे का हिस्सा कमर से कुछ ही नीचे तक और दोनों पार्श्वों के अंश घुटनों के लगभग तक पहुँचे हुए देख पड़ते हैं। इन सिक्कों से यह भी पाया जाता है कि समुद्रगुप्त, चंद्रगुप्त दूसरे, कुमारगुप्त पहले, स्कंदगुप्त, बुधगुप्त आदि ने अपने कई एक सिक्कों पर भिन्न भिन्न छंदों में कविताबद्ध लेख अंकित कराए थे। दुनिया भर के इतिहास में यही एक उदाहरण है कि ईसवी सन् की चौथी शताब्दी में भारतवासी ही अपने सिक्कों पर कविता-बद्ध लेख भी लिखवाते थे।

मुसलमानों ने केवल मुगलों के समय में सिक्कों पर कविताबद्ध लेख खुदवाए थे।

सिक्कों की विशेषताओं के ये थोड़े से उदाहरण ही हमने यह बतलाने के लिये दिए हैं कि जो बातें शिलालेखों आदि में नहीं मिलतीं, उनकी बहुत कुछ पूर्ति सिक्के कर देते हैं।

ये सिक्के अनेक राजवंशों के जैसे ग्रीक, शक, पार्थिअन, कुशन, क्षत्रप, गुप्त, अर्जुनायन, औदुंबर, कुनिंद, मालव, नाग, राजन्य, यौधेय, आंध्र, हूण, गुहिल, चौहान, कलचुरि (हैहय), चंदेल, तोमर, गाहडवाल, सोलंकी, यादव, पाल, कदंब, आदि के तथा कश्मीर के भिन्न भिन्न वंशों, कांगडे, नेपाल, आसाम, मणिपुर आदि के भिन्न भिन्न राजाओं तथा अयोध्या, उज्जैन, कौशांबी, तक्षशिला, मथुरा, अहिछत्रपुर आदि नगरों के राजाओं के एवं माध्यमिका आदि नगरों के मिलते हैं जो इतिहास के लिये परम उपयोगी हैं।

हमें यह भी बतलाना आवश्यक है कि हमारे यहाँ के राजा अपने सिक्कों के संबंध में विशेष ध्यान नहीं देते थे। गुप्तों के सोने के सिक्के तो बड़े सुंदर हैं परंतु जब उन्होंने पश्चिमी क्षत्रपों का विस्तीर्ण राज्य अपने राज्य में मिलाया, तब से चाँदी के सिक्के की तरफ इन्होंने बहुत कम दृष्टि दी और क्षत्रपों के सिक्कों के एक तरफ का चेहरा ज्यों का त्यों बना रहने दिया और दूसरी तरफ अपना लेख अंकित कराया। इसी तरह जब हूण तोरमाण ईरान का खजाना लूटकर वहाँ के सिक्के हिंदु-

स्तान में लाया, तो उसके पीछे कई शताब्दियों तक राजपूताना, गुजरात, काठियावाड़, मालवा आदि देशों में उन्हीं की भद्दी नकलें बनती रहीं और वे ही प्रचलित रहे। उनकी कारीगरी में यहाँ तक भद्दापन आ गया कि राजा का चेहरा बिगड़ते बिगड़ते उसकी ऐसी भद्दी आकृति हो गई कि लोगों ने राजा के चेहरे को गधे का खुर मान लिया और उसी आधार पर उनको गधीया या गदैया सिक्के कहने लगे। उनमें बेपरवाही यहाँ तक होती रही कि उन पर राजा का नाम तक न रहा। अजमेर बसानेवाले चौहान राजा अजयदेव और उसकी रानी सोमलदेवी के चाँदी के सिक्कों के एक तरफ वही माना हुआ गधे के खुर का चिह्न और दूसरी तरफ उनके नाम अंकित हैं। राजपूताने में गुहिलवंशियों ने और रघुवंशी प्रतिहारों ने पुरानी शैली के अपने सिक्के जारी रक्खे, जैसा कि गुहिलवंशी बापा रावल के सोने के सिक्के और प्रतिहारवंशी भोजदेव (आदि वराहमिहिर) के सिक्कों से पाया जाता है। मुसलमानों की अधीनता स्वीकार करने पर हिंदू राजवंशों के सिक्के क्रमशः नष्ट होते गए और उनके स्थान पर मुसलमानों के सिक्के ही प्रचलित हुए। मुसलमानों के सिक्कों का इस पुस्तक से संबंध न होने से उनके विषय में यहाँ कुछ भी कथन करना अनावश्यक है।

भारतवर्ष के प्राचीन सोने, चाँदी और ताँबे के सिक्कों के कई बड़े बड़े संग्रह इंग्लैंड, फ्रांस, जर्मनी और रूस

आदि यूरोप के देशों में, कलकत्ता, बंबई आदि की एशियाटिक सोसाइटियों के संग्रहों में, तथा इंडियन म्युजियम् (कलकत्ता), बंगीय साहित्य परिषद् (कलकत्ता), लखनऊ म्युजियम्, राजपूताना म्युजियम् (अजमेर), सरदार म्युजियम् (जोधपुर), वॉट्सन म्युजियम् (राजकोट) प्रिन्स ऑफ वेल्स म्युजियम् (बंबई), मद्रास म्युजियम्, पेशावर म्युजियम्, लाहौर म्युजियम्, पटना म्युजियम्, नागपुर म्युजियम् आदि कई एक संग्रहालयों में तथा कई विद्यानुरागी गृहस्थों के निजी संग्रहों में विद्यमान हैं और उनमें से कई एक संग्रहों की सचित्र सूचियाँ भी छप चुकी हैं। ऐसे ही कई अलग अलग स्वतंत्र ग्रंथ भी युरोप की अनेक भाषाओं में प्रकाशित हो चुके हैं और कई पत्रिकाएँ भी केवल इसी संबंध में प्रकाशित होती रहती हैं, तथा प्राचीन शोध संबंधी अँगरेजी आदि पत्रिकाओं में समय समय पर बहुत कुछ सचित्र लेख प्रकाशित हुए हैं और होते रहते हैं। भारतीय प्राचीन सिक्कों के संबंध का यह साहित्य इतना विस्तीर्ण है कि यदि कोई उसका पूरा संग्रह करना चाहे, तो कई हजार रुपए व्यय किए बिना नहीं हो सकता।

खेद का विषय है कि हिन्दी साहित्य में इस बड़े उपयोगी विषय की अब तक चर्चा भी नहीं हुई। पुरातत्व विद्या के सुप्रसिद्ध विद्वान और सिक्कों के विषय के अद्वितीय ज्ञाता श्रीयुत राखालदास बैनर्जी, एम. ए. अपनी मातृभाषा बँगला

के प्रेम के कारण उस भाषा में 'प्राचीन मुद्रा' (प्रथम भाग) नामक उत्तम पुस्तक लिखकर इस विषय की त्रुटि के एक अंश की पूर्ति कर एतद्देशीय एवं यूरोपियन विद्वानों की प्रशंसा के पात्र हुए हैं। उनका मातृभाषा का यह प्रेम वस्तुतः बड़ा ही प्रशंसनीय है। हिंदी साहित्य में इस विषय का सर्वथा अभाव होने से काशी नागरीप्रचारिणी सभा ने उक्त पुस्तक का यह हिंदी अनुवाद कराकर और देवीप्रसाद ऐतिहासिक पुस्तकमाला में उसे प्रकाशित कर हिंदी साहित्य की अनुपम सेवा की है।

गौरीशंकर हीराचंद ओझा।

अजमेर।

विषय-सूची

चित्र-सूची

(२) सिल्यूक कालिनिक, सीरिया का ग्रीक राजा, रौप्य ”

(३) द्वितीय आन्तियोक, सीरिया का ग्रीक राजा, रौप्य ”

(४) तृतीय आन्तियोक सीरिया का ग्रीक राजा, रौप्य ”

(५) लिसिमेक, योन देश का ग्रीक राजा, रौप्य ”

(६) सुभूति, पंजाब का राजा, रौप्य ”

(७) सुभूति पंजाब का ग्रीक राजा, रौप्य—अजायबघर कलकत्ता

(८) दियदात, वाह्लीक का ग्रीक राजा, सुवर्ण ”

(९) दियदात, वाह्लीक का ग्रीक राजा, रौप्य—राय श्रीयुक्त मृत्युञ्जयराय चौधरी बहादुर।

चित्र (४)—

ग्रीक राजाओं के सिक्के

(१) एवुथदिम, वाह्लीक का ग्रीक राजा, रौप्य,—अजायबघर कलकत्ता

(२) एवुथदिम, वाह्लीक का ग्रीक राजा, रौप्य ”

(३) एवुथदिम, वाह्लीक का ग्रीक राजा, ताम्र ”

(४) दिमित्रिय, ताम्र ”

(५) ऋत, वाह्लीक का ग्रीक राजा, सिल्यूकाब्द १४६—१६५ ईसा पूर्वाब्द, रौप्य-राय श्रीयुक्त मृत्युञ्जयराय चौधरी बहादुर

(६) द्वितीय एवुथदिम, वाह्लीक का ग्रीक राजा, ताम्र ”

(७) ऋत और अगथुक्रेय, भारत के ग्रीक राजा, रौप्य—राय श्रीयुक्त मृत्युञ्जयराय चौधरी बहादुर

चित्र (५)—

यूनानी राजाओं के सिक्के

(१) दिमित्रिय, रौप्य—अजायबघर कलकत्ता
(२) दिमित्रिय, रौप्य—राय श्रीयुक्त मृत्युञ्जयराय चौधरी बहादुर
(३) दिमित्रिय, रौप्य—अजायबघर कलकत्ता
(४) दियदात और अगथुक्रेय, रौप्य,—राय श्रीयुक्त मृत्युञ्जय०
(५) पन्तलेव, भारत का ग्रीक राजा, ताम्र—राय श्रीयुक्त मृत्युञ्जय०
(६) अगथुक्रेय, भारत का ग्रीक राजा, ताम्र—राय श्रीयुत मृत्युञ्जय०
(७) दिमित्रिय, भारत का ग्रीक राजा, रौप्य—अजायब घर कलकत्ता

चित्र (६)—

यूनानी राजाओं के सिक्के

(१) मेनन्द्र, युवावस्था की राजमूर्तिवाला सिक्का, रौप्य,—राय श्रीयुक्त मृत्युञ्जयराय चौ० ब०
(२) मेनन्द्र, मध्य अवस्था की राजमूर्तिवाला सिक्का, रौप्य —राय श्रीयुक्त मृत्युञ्जयराय चौ० ब०
(३) मेनन्द्र, वृद्धावस्था की राजमूर्तिवाला सिक्का, रौप्य—राय श्रीयुक्त मृत्युञ्जयराय चौधरी बहादुर
(४) मेनन्द्र, चैत्र के मुहँवाला सिक्का, ताम्र, ,,
(५) मेनन्द्र, चमड़े के ऊपर राक्षस के मुहँवाला सिक्का, ताम्र ,,
(६) अतिमख, रौप्य ,,
(७) [illegible]

(८) हेरमय और कैलियप, राजा और रानी, रौप्य ,,

(९) फोइल, ताम्र ,,

चित्र (७)—

यूनानी और शक राजाओं के सिक्के

(१) हेलिक्लेय (?) ग्रीक राजा, रौप्य—राय श्रीयुक्त मृत्युंजय०

(२) वोनोन और स्पलहोर, शक जातीय राजा, रौप्य–अजायब घर कलकत्ता

(३) मोग्र, शक जातीय राजा, रौप्य,—राय श्रीयुक्त मृत्युंजयराय०

(४) वोनोन और स्पलगदम, शकजातीय राजा, रौप्य–अजायब घर कल०

(५) हेरमय, ग्रीक राजा, रौप्य—राय श्रीयुक्त मृत्युंजय०

(६) स्पलहोर और स्पलगदम, शक जातीय राजा, ताम्र–अजायबघर कलकत्ता

(७) अय, शक जातीय राजा, रौप्य ,,

(८) अय, शक जातीय राजा, ताम्र—राय श्रीयुक्त मृत्युंजयराय चौ० ब०

चित्र (८)—

शकजातीय और कुषणवंशीय राजाओं के सिक्के

(१) अय, शक जातीय राजा, ताम्र—राय श्रीयुक्त मृत्युंजय०

(२) अय और अस्पवर्म्मा, शक जातीय राजा, ताम्र,–अजायबघर कल०

(३) अयिलिष, शक जातीय राजा, रौप्य—राय श्रीयुक्त मृत्युंजय०

(४) गुदफर, पारद जातीय राजा, मिश्र धातु—अजायबघर कलकत्ता

(५) जिहुनिय, शक आतीय क्षत्रप, रौप्य ,,

(६) राजुवुल (?) ताम्र—राय श्रीयुक्त मृत्युञ्जय राय चौ० ध०

(७) कुजुलकदफिस, कुषणवंशीय राजा, रोमक सम्राट् आगस्टस के ढंग पर, ताम्र—राय श्रीयुत मृत्युञ्जयराय चौ०

(८) हेरमय और कुजुलकदफिस, ताम्र ,,

(९) विमकदफिस, कुषणवंशीय राजा, ताम्र, ,,

(१०) कनिष्क, कुषणवंशीय सम्राट् शिवमूर्तिवाला सिक्का, सुवर्ण—श्रीयुक्त प्रफुल्लनाथ ठाकुर

चित्र (६)—

कुषणवंशीय राजाओं के सिक्के

(१) कनिष्क, चंद्रमा की मूर्तिवाला सिक्का, ताम्र,—राय श्रीयुक्त मृत्यु-ञ्जय०

(२) हुविष्क, Ardochsho की मूर्तिवाला सिक्का, सुवर्ण ,,

(३) हुविष्क, सूर्य की मूर्तिवाला सिक्का, सुवर्ण ,,

(४) हुविष्क, अग्नि की मूर्तिवाला सिक्का, सुवर्ण ,,

(५) प्रथम वासुदेव, शिव की मूर्तिवाला सिक्का, सुवर्ण ,,

(६) द्वितीय कनिष्क और आ, बाद का कुषण राजा, शिव की मूर्तिवाला सिक्का, सुवर्ण—राय श्रीयुक्त मृत्युञ्जय राय०

(७) भो, बाद का कुषण राजा, सुवर्ण ,,

(८) द्वितीय वासुदेव, बाद का कुषणवंशी राजा, सुवर्ण ,,

(९) किदरकुषण राजवंश का सिक्का, सुवर्ण ,,

(१०) किदरकुषण वंश की गडहर (? गर्भिष्ठ) शाखा का सिक्का,

चित्र (१०)—

जानपदों और गणों के सिक्के

(१) मगोजय, मालव जाति का राजा, ताम्र,—अजायबघर कलकत्ता
(२) मालव जाति के गण का सिक्का, ताम्र ”
(३) अच्युत, अहिच्छत्र का राजा (?) ताम्र ”
(४) यौधेय जाति के गण का सिक्का, ताम्र ”
(५) स्वामी ब्रह्मण्य, यौधेय जाति का राजा, ताम्र ”
(६) अवन्तिनगर का सिक्का, ताम्र ”
(७) उत्तमदत्त, मथुरा का राजा, ताम्र ”
(८) रामदत्त, मथुरा का राजा, ताम्र ”
(९) हगामाष, मथुरा का क्षत्रप, ताम्र ”
(१०) शोडास, मथुरा का क्षत्रप, ताम्र ”
(११–१२) साँचे में ढला प्राचीन सिक्का, चंद्रकेतु का, ताम्र—बेडाचाँपा, जिला २४ परगना—वंगीय साहित्य परिषद्

चित्र (११)—

जानपदों और गणों के सिक्के

(१) दोनों ओर अंकचिह्नोंवाला चौकोर सिक्का, तक्षशिला, ताम्र—श्रीयुक्त प्रफुल्लनाथ ठाकुर
(२–३) दोनों ओर अंकचिह्नोंवाला गोलाकार सिक्का, तक्षशिला, ताम्र—श्रीयुक्त प्रफुल्लनाथ ठाकुर।
(४) एक ओर अंकचिह्नोंवाला गोलाकार सिक्का, तक्षशिला, ताम्र श्रीयुक्त प्रफुल्लनाथ ठाकुर।

(५) "पचनेक्म", तक्षशिला, ताम्र—राय श्रीयुक्त मृत्युजय राय०
(६) कुणिन्द जाति के गण का सिक्का, रौप्य—श्रीयुक्त प्रफुल्लनाथ ठाकुर
(७) विशाखदेव, अयोध्या का राजा, ताम्र—अजायबघर कलकत्ता
(८) कुमुदसेन, अयोध्या का राजा, ताम्र ”
(९) अग्निमित्र, पचाल का राजा, ताम्र ”
(१०) भूमिमित्र, पचाल का राजा ताम्र ”
(११) फाल्गुणीमित्र, पचाल का राजा, ताम्र ”
(१२) राजन्य जाति के गण का सिक्का, ताम्र ”

चित्र (१२)—

गुप्तवंशी सम्राटों के सिक्के

(१) प्रथम चन्द्रगुप्त, स्वर्ण,—बंगीय साहित्य परिषद्
(२) समुद्रगुप्त, अश्वमेध का सिक्का, सुवर्ण—श्रीयुक्त प्रफुल्लनाथ ठाकुर
(३) ” हाथ में ध्वज लिए राजमूर्तिवाला सिक्का, सुवर्ण ”
(३) ” हाथ में वीणा लिए राजमूर्तिवाला सिक्का, सुवर्ण—अजायब घर कलकत्ता
(५) ” "यच" नामांकित सिक्का, सुवर्ण ”
(६) द्वितीय चन्द्रगुप्त, हाथ में धनुष लिए राजमूर्तिवाला सिक्का, सुवर्ण—राय श्रीयुक्त मृत्युजयराय चौधरी बहादुर
(७) ” ” खाट पर बैठे हुए राजा की मूर्तिवाला सिक्का, सुवर्ण—अजायब घर कलकत्ता
(८) ” ” छत्रधर के साथ राजमूर्तिवाला सिक्का, सुवर्ण—अजायब घर कलकत्ता

(९) ” ” सिंह को मारते हुए राजा की मूर्तिवाला सिक्का,

सुवर्ण—श्रीयुक्त प्रफुल्लनाथ ठाकुर

(१०) प्रथम कुमारगुप्त, मयूर पर बैठे हुए राजा की मूर्तिवाला सिक्का,

सुवर्ण—वंगीय साहित्य परिषद्

चित्र (१३)—

गुप्तवंशी सम्राटों के सिक्के

(१) प्रथम कुमारगुप्त, घोड़े पर सवार राजा की मूर्तिवाला सिक्का,

सुवर्ण—राय श्रीयुक्त मृत्युञ्जयराय चौ० ब०

(२) ” ” सिंह को मारते हुए राजा की मूर्तिवाला सिक्का,

सुवर्ण—अजायब घर कलकत्ता

(३) ” ” हाथ में धनुष लिए राजा की मूर्ति वाला सिक्का,

सुवर्ण,—श्रीयुक्त प्रफुल्लनाथ ठाकुर

(४) ” ” हाथी पर सवार राजा की मूर्तिवाला सिक्का,

सुवर्ण—महानाद जिला हुगली—अजायब घर कलकत्ता

(५) स्कन्दगुप्त राजा और राजलक्ष्मीवाला सिक्का, सुवर्ण,—जि० मेदिनीपुर,—अजायबघर कलकत्ता

(६) ” हाथ में धनुष लिए राजमूर्त्तिवाला सिक्का, सुवर्ण—राय श्रीयुक्त मृत्युञ्जयराय चौधरी बहादुर

(७) प्रकाशादित्य (? पुरुगुप्त), घोड़े पर सवार राजमूर्त्तिवाला सिक्का, सुवर्ण—राय श्रीयुक्त मृत्युंजयराय चौधरी बहादुर

(८) नरसिंहगुप्त बालादित्य हाथ में धनुष लिए राजमूर्त्तिवाला सिक्का,

सुवर्ण—राय श्रीयुक्त मृत्युंजयराय चौधरी बहादुर

(६) द्वितीय कुमारगुप्त क्रमादित्य, हाथ में धनुष लिए राजमूर्तिवाला सिक्का, सुवर्ण—श्रीयुक्त प्रफुल्लनाथ ठाकुर

(१०) विष्णुगुप्त–चन्द्रादित्य, हाथ में धनुष लिए राजमूर्तिवाला सिक्का, सुवर्ण—अजायब घर कलकत्ता

त्र (१४)—

गुप्त सम्राटों के सिक्कों के ढंग पर बने सिक्के

(१) शशाङ्क, यशोहर, सुवर्ण,—अजायब घर कलकत्ता

(२) नरेन्द्रविनत, (? शशाङ्क) सुवर्ण ”

(३) नरेन्द्रविनत, (? शशाङ्क), सुवर्ण ”

(४) मगध के बाद के गुप्त राजाओं के सिक्के, सुवर्ण, यशोहर ”

(५) मगध के बाद के गुप्त राजाओं के सिक्के, सुवर्ण, रंगपुर–राय श्रीयुक्त मृत्युञ्जयराय चौधरी बहादुर

(६) वीरसेन (? गौड़राज) रौप्य—अजायब घर कलकत्ता

(७) ईशान वर्म्मा, मौखरी, रौप्य ”

(८) शर्ववर्म्मा, मौखरी, रौप्य ”

(६) शिलादित्य (? हर्षवर्धन), रौप्य–भिठौरा जि० फैजाबाद ”

(१०–११) नहपान, रौप्य–जोगल थेम्बी जि० नासिक ”

(१२) नहपान के सिक्के पर बना गौतमीपुत्र शातकर्णि का सिक्का, रौप्य, जोगल थेम्बी, जि० नासिक, अजायब घर कलकत्ता

त्र (१५)—

सौराष्ट्र और दक्षिणापथ के सिक्के

(१) महाक्षत्रप रुद्रसिंह, रौप्य–राय श्रीयुक्त मृत्युञ्जय राय चौ० ब०

(२) महाक्षत्रप रुद्रसेन, रौप्य—अजायब घर कलकत्ता

(३) महाक्षत्रप विजयसेन, रौप्य ”

(४) क्षत्रप वीरदान, रौप्य ”

(५) क्षत्रप विश्वसेन, रौप्य ”

(६) दह गण, रौप्य ”

(७) गौतमीपुत्र, शातकर्णि, रौप्य,–जोगल थेम्बी, जि० नासिक

अजायबघर कलकत्ता

(८) वासिष्ठीपुत्र विड्विायकुर, सीसक ”

(९) पुडमावि, पोटिन, ”

(१०) श्रीयज्ञशातकर्णि, सीसक–राय श्रीयुक्त मृत्युंजय राय चौ०

(११) श्रीयज्ञशातकर्णि, सीसक—अजायबघर करकत्ता

चित्र (१६)—

दक्षिणापथ और हूण राजाओं के सिक्के

(१) इमली के बीज की तरह का सिक्का, सुवर्ण–राय श्रीयुक्त मृत्युंजय०

(२) भिन्न आकार का इमली के बीज की तरह का सिक्का, सुवर्ण ”

(३) त्रिस्वामी पागोडा, सुवर्ण ”

(४) विष्णु पागोडा, सुवर्ण–श्रीयुक्त प्रफुल्लनाथ ठाकुर

(५) प्रतापकृष्ण देवराय, विजयनगर, सुवर्ण,–राय श्रीयुक्त मृत्युञ्जय

(६) पद्मटङ्का, सुवर्ण,–श्रीयुक्त प्रफुल्लनाथ ठाकुर

(७) पद्मटंका, सुवर्ण–श्रीयुक्त मृत्युञ्जय राय०

(८–९)पारस्य के राजा फीरोज के सिक्के के ढंग का सिक्का, रौप्य—

अजायबघर कलकत्ता

(१०) तोरमाण, ताम्र, "

(११) मिहिरकुल, ताम्र "

(१२) मिहिरकुल, ताम्र, (कुषण सिक्के के ढग का) "

चित्र (१७)—

सैसनीय सिक्कों के ढंग के सिक्के

(१) वाहितिगीन, रौप्य, मणिन्द्रलाल नि० रायनविहडी,

अजायबघर कलकत्ता

(२) नापृकिमालिक, रौप्य "

(३–५) गधैया टङ्का, रौप्य "

(६–७) श्रीदाम, रौप्य, ग्वालियर राज्य, मालवा "

(८) आदिवराह द्रम्य, रौप्य— "

(९) विग्रहद्रम्म, रौप्य "

चित्र (१८)—

सिंहल और उत्तर-पश्चिम सीमान्त के मध्य युग के सिक्के

(१) रानी लीलावती, सिंहल, ताम्र—अजायबघर कलकत्ता

(२) पराक्रमबाहु, सिंहल, ताम्र "

(३) स्पलपतिदेव, रौप्य "

(४) स्पलपतिदेव, रौप्य—राय श्रीयुक्त मृत्युंजय राय चौ०

(५) सामन्तदेव रौप्य,—अजायब घर कलकत्ता

(६) सामन्तदेव, ताम्र "

(७) वक्कदेव, ताम्र, "

(८) लुड़वयक ताम्र, ”

(९) महीपाल, ताम्र, ”

(१०) मदनपाल, ताम्र, ”

(११) अनंगपाल, ताम्र, ”

(१२) पृथ्वीराज, ताम्र, ”

चित्र (१९)—

काश्मीर, काँगड़ा, प्रतीहार, चेदी, चालुक्य, गाहड़वाल, चंदेल और जेजाभुक्ति राजाओं के सिक्के

(१) विनयादित्य, काश्मीर, सुवर्ण,—अजायब घर कलकत्ता :

(२) यशोवर्म्मा, काश्मीर, मिश्र सुवर्ण, ”

(३) रानी दिद्दा, काश्मीर, ताम्र, ”

(४) त्रिलोकचंद्र, काँगड़ा, ताम्र ”

(५) पीथमचंद्र, काँगड़ा, ताम्र ”

(६) महीपाल, ताम्र,—राय श्रीयुक्त मृत्युंजय राय चौ०

(७) गाङ्गेयदेव, सुवर्ण, ”

(८) गाङ्गेयदेव, सुवर्ण,—श्रीयुत प्रफुल्लनाथ ठाकुर

(९) कुमारपाल, सुवर्ण,—अजायब घर कलकत्ता

(१०) गोविन्द्रचंद्र, सुवर्ण—राय श्रीयुक्त मृत्युंजय०

(११) मदनपाल, सुवर्ण,—अजायब घर कलकत्ता।

(१२) जाजल्लदेव, सुवर्ण—अजायब घर कलकत्ता।

चित्र (२०)—

नेपाल और अराकान के सिक्के

(१) मानाङ्क वा मानदेव, नेपाल, ताम्र—अजायब घर कलकत्ता

(२) अंशुवर्म्मा नेपाल, ताम्र, "

(३) पशुपति, नेपाल, ताम्र "

(४) यारिक्रिय, अराकान, रौप्य—श्रीयुक्त प्रफुल्लनाथ ठाकुर

(५) रम्याकर, अराकान, रौप्य "

(६) प्रद्युम्नाकर, अराकान, रौप्य "

(७) ललिताकर, अराकान, रौप्य "

(८) अन्ता(कर), अराकान, रौप्य "

प्राचीन मुद्रा

पहला परिच्छेद

भारत के सब से प्राचीन सिक्के

बहुत ही प्राचीन काल में आदिम मनुष्यों को अपने परिवार के निर्वाह के लिये जिन पदार्थों की आवश्यकता होती थी, उनका उत्पादन और सग्रह उन्हें स्वय ही करना पडता था। परिवार के लिये भोजन वस्त्र और घर आदि जिन जिन पदार्थों की आवश्यकता होती थी, उन सब का निर्माण या सग्रह स्वय परिवार के लोगो को ही करना पडता था। इसके उपरान्त जब सुभीते के लिये बहुत से परिवार मिलकर एक ही स्थान में निवास करने लगे, तब मानव समाज में श्रमविभाग प्रारम्भ हुआ। जिस समय मानव समाज की शैशवावस्था थी, उस समय परिवार-समष्टि का कोई परिवार खाद्य पदार्थों का उत्पादन अथवा सग्रह करता था, कोई पहनने के लिये कपड़े बुनता अथवा चमड़े सग्रह करता था, कोई घर या कुटी बनाने की सामग्री एकत्र करता था और कोई लोहे आदि धातुओं

के पदार्थ बनाता था। इसी श्रमविभाग के युग में मानव-समाज में विनिमय का भी आरंभ हुआ था। खाद्य पदार्थों का संग्रह करनेवाले व्यक्ति को जब पहनने के लिये कपड़ों की आवश्यकता होती थी, तब वह अपना उपजाया अथवा एकत्र किया हुआ खाद्य पदार्थ कपड़े बनानेवाले को देता था और उसके बदले में उससे कपड़े लिया करता था। धातुओं की चीजें बनानेवाले को जब मकान की आवश्यकता होती थी, तब वह मकान बनानेवाले को अपने बनाए हुए धातु-द्रव्य देकर उससे मकान बनवा लेता था। विनिमय के काम में सुभीता करने के लिये धीरे धीरे मानव-समाज में सिक्कों का प्रचार प्रारंभ हुआ था। धातुद्रव्य बनानेवाले को जिस समय खाद्य पदार्थों की आवश्यकता नहीं होती थी, उस समय यदि कृषक अन्न लेकर उसके पास धातु-द्रव्य लेने के लिये आता था तो उसे अपने धातुद्रव्य के बदले में अन्न लेने में आगापीछा होता था। इसी अभाव को दूर करने के लिये संसार के समस्त मनुष्यों ने विनिमय का स्थायी उपकरण अथवा साधन निकाला था। विनिमय के इन्हीं उपकरणों अथवा साधनों का नाम सिक्का है। प्रारंभ में संसार के सभी स्थानों में भिन्न भिन्न धातुओं का विनियम के उपकरण-स्वरूप व्यवहार होता था। सोने, चाँदी और ताँबे आदि धातुओं का बहुत ही प्राचीन काल से विनिमय के स्थायी उपकरण-स्वरूप व्यवहार होता चला आ रहा है। अनेक स्थानों

में लोहे, सीसे, पीतल और यहाँ तक कि टीन का भी विनिमय के उपकरण-स्वरूप व्यवहार होता देखा गया है। यूनान देश के स्पार्टा नगर के निवासी लोहे के बने हुए सिक्कों का व्यवहार करते थे। अठारहवीं और उन्नीसवीं शताब्दी ईसवी तक मलय उपद्वीप में टीन के सिक्कों का व्यवहार होता था, और प्राचीन काल में भारत के दक्षिणापथ के अन्ध्र राजा लोग सीसे के सिक्के बनवाते थे। चीन देश में तो अब तक पीतल के सिक्कों का व्यवहार होता है। जिस समय मानव-समाज में विनिमय के उपकरण स्वरूप सब से पहले धातुओं का व्यवहार आरम्भ हुआ था, उस समय सुवर्ण चूर (Gold dust) अथवा नियमबद्ध आकाररहित धातुपिण्ड (Irregular mass) का व्यवहार होता था। उन्नीसवीं शताब्दी ईसवी के आरम्भ में हिमालय की तराई में लाल कपड़े की थैलियों में तौलकर रक्खा हुआ सोना सिक्कों की जगह पर चलता था। उन्नीसवीं शताब्दी में जब आस्ट्रेलिया में तथा अमेरिका के क्लाएडाइक देश में सोने की खानें मिली थीं, तब सब से पहले वहाँ की खानों से सोना निकालकर साफ करनेवाले लोग सिक्कों के बदले में सोने के चूर का व्यवहार करते थे। परन्तु चूर्ण-धातु की परीक्षा करने और उसे तौलने में अधिक समय लगता था, अत सुभीते के लिये धातुओं के बने हुए सिक्कों का प्रचार आरम्भ हुआ।

भारतवासी लोग बहुत ही प्राचीन काल से विनिमय के

लिये धातुओं के बने हुए सिक्कों का व्यवहार करते आए हैं। हिन्दुओं, बौद्धों और जैनों के सर्व-प्राचीन धर्मग्रन्थों से भी पता चलता है कि प्राचीन काल में भारत में सोने, चाँदी और ताँबे के सिक्कों का बहुत प्रचार था। सोने के सिक्कों का नाम सुवर्ण वा निष्क, चाँदी के सिक्कों का नाम पुराण वा धरण और ताँबे के सिक्कों का नाम कार्षापण था। प्राचीन भारत में भी पहले चूर्ण धातु का विनिमय के उपकरण-स्वरूप व्यवहार होता था। मनु आदि धर्मशास्त्रों में सोने, चाँदी और ताँबे आदि को तौलने की जिन भिन्न भिन्न रीतियों का उल्लेख है, उन्हें देखने से स्पष्ट सिद्ध हो जाता है कि विनियम के सुभीते के लिये भिन्न भिन्न धातुओं के लिये तौलने की भिन्न भिन्न रीतियाँ होती थीं। भारत में धातुओं को तौलने की जितनी रीतियाँ थी, रत्ती अथवा रक्तिका ही उन सब का मूल थी। मानव-धर्मशास्त्र में सोने, चाँदी और ताँबे आदि तौलने की भिन्न भिन्न रीतियाँ दी हुई हैं जो इस प्रकार हैं—

सोना तौलने की रीति

५ रत्ती = १ माशा

८० रत्ती = १६ माशा = १ सुवर्ण

३२० रत्ती = ६४ माशा = ४ सुवर्ण = १ पल वा निष्क

३२०० रत्ती = ६४० माशा = ४० सुवर्ण = १० पल वा निष्क
= १ धरण

चाँदी तौलने की रीति

२ रत्ती = १ मापक
३२ रत्ती = १६ मापक = १ धरण वा पुराण
३२० रत्ती = १६० मापक = १० धरण वा पुराण = १ शतमान

ताँबा तौलने की रीति

८० रत्ती = १ कार्पापण *

प्राचीन साहित्य में जहाँ जहाँ अर्थ अथवा सिक्कों के उल्लेख की आवश्यकता हुई है, वहाँ वहाँ ग्रंथकारों ने पुराण अथवा धरण, शतमान,पल अथवा निष्क और कार्पापण का उल्लेख किया है। इससे सिद्ध होता है कि साहित्य में जिन स्थानों में इन सब तौलों के नाम आए हैं, उन स्थानों में ग्रन्थकारों ने इन सब तौलों के धातुओं के व्यवहार का ही उल्लेख किया है। रत्ती अथवा रक्तिका की तौल स्थिर रखने के लिये उसे अनेक भागों में विभक्त किया गया था, जो इस प्रकार थे—

८ त्रसरेणु = १ लिख्या वा लिक्षा
२४ त्रसरेणु = ३ लिख्या वा लिक्षा = १ राजसर्षप
७२ त्रसरेणु = ९ लिख्या वा लिक्षा = ३ राजसर्षप = १ गौरसर्षप
४३२त्रसेरेणु = ५४लिख्या वा लिक्षा=१८ राजसर्षप = ६ गौर-सर्षप = १ यव

* मानवधर्मशास्त्र । ८ म अध्याय श्लोक १३२–३७ ।

१२९६ त्रसरेणु = १६२ लिख्या वा लिक्षा = ५४ राजसर्षप =
१८ गौरसर्षप = ३ यव = १ कृष्णल वा रत्ती

भारतवर्ष में धीरे धीरे तौली हुई चूर्ण धातु के बदले में धातुनिर्मित सिक्कों का व्यवहार आरंभ हुआ था। पुराण, कार्षापण, सुवर्ण वा निष्क आदि जो नाम पहले तौल के थे, वे पीछे से सिक्कों के हो गए। ऋक् संहिता में लिखा है कि ऋषि कक्षीवन् ने सिंधुनद-तीर के निवासी राजा भावयव्य से सौ निष्क लिए थे;*। ऋषि गृत्समद ने रुद्र के वर्णन में निष्कों के बने हुए कंठहार का उल्लेख किया है †। शतपथ ब्राह्मण में एक शतमान सुवर्ण का उल्लेख है। इन सब स्थानों में निष्क वा शतमान को चूर्ण धातुकी तौल भी समझ सकते हैं। परंतु बौद्ध साहित्य में जो कार्षापण अथवा काहापण शब्द आया है, उससे स्पष्ट सिद्ध होता है कि उन दिनों कार्षापण तौल का नाम नहीं रह गया था बल्कि सिक्के का नाम हो गया था। मनु ने ताँबा तौलने की जो रीति बतलाई है, उससे पता चलता है कि ८० रत्ती का एक कार्षापण होता था। अतः कार्षापण से तौल में ८० रत्ती ताम्रचूर्ण अथवा ताम्रपिंड का अभिप्राय समझना ही ठीक है। परंतु बौद्ध साहित्य में सोने अथवा चाँदी

---

* ऋक् संहिता, ३।४७४।

† अर्हन्बिभर्षि सायकानि धन्वार्हन्निष्कं यजतं विश्वरूप। अर्हन्निदं दयसे विश्वमभ्वं न वा ओजीयो रुद्रत्वदस्ति।

—ऋक् संहिता, २ य मंडल, ३३ सू०, १० ऋ०

के कार्षापण वा काहापण का भी अनेक स्थानों में उल्लेख है *। त्रिपिटक में एक स्थान पर एक ही पद में हिरण्य और सुवर्ण दोनों शब्द आए हैं। "पभुतम् हिरञ्ञ सुवण्ण" पद में हिरण्य शब्द से अमुद्रित सोने का और सुवर्ण शब्द से सवर्ण नामक सोने के सिक्के का बोध होता है। इन सब प्रमाणों के आधार पर नि सकोच भाव से कहा जा सकता है कि बहुत प्राचीन काल में भारतवर्ष में सोने, चाँदी और ताँबे आदि की तौलों के भिन्न भिन्न नाम सिक्कों के नाम में परिणत हो गए थे। अधिकाश विदेशी मुद्रातत्त्वविद् पडितों ने इसी मत का ग्रहण अथवा पोषण किया है। प्रसिद्ध मुद्रातत्त्वविद् एडवर्ड थामस के मत से मानव धर्मशास्त्र में सोने, चाँदी और ताँबे आदि धातुओं की तौल के ऊपर बतलाए हुए नाम केवल तौलों के ही नाम नहीं है, बल्कि मानव समाज में विनिमय के उपकरण-स्वरूप काम में आनेवाले द्रव्यों के मान हैं †।

---

* "Buddha Ghosha mentions a gold and silver as well as the ordinary (that is bronze or copper) kahapana" —On the Ancient Coins and Measures of Ceylon, by T W Rhys David, P 3

† In the table quoted from Manu, their classification represents something more than a mere theoretical enunciation of weights and values and demonstrates a practical acceptance of a pre-existing order of things, precisely as the general tenor of the text exhibits of these weights of metal in full and free employment for the settlement

में सिक्कों का आकार चौकोर है। जब इन दोनों चित्रों से पता चलता है कि अनाथपिंडद की आज्ञा से जेतवन में सोने के जो सिक्के बिछाए गए थे, वे चौकोर थे, तब यह सिद्ध हो जाता है कि भारत के सब से प्राचीन सिक्कों का आकार चौकोर * था। समस्त भारत में सोने, चाँदी और ताँबे के जो सब अंक-चिह्न-युक्त सिक्के मिले हैं, उनमें से अधिकांश चौकोर ही हैं। अतः प्राचीन पुराण या धरण और इन सब अंक-चिह्न युक्त सिक्कों के एक होने के संबंध में किसी प्रकार का संदेह नहीं हो सकता। उत्तरापथ और दक्षिणापथ में इस तरह के चाँदी और सोने के हजारों सिक्के मिले हैं जिन्हें मुद्रातत्त्वविद् लोग अंक-चिह्न-युक्त (Punch marked) सिक्के कहते हैं।

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में पाश्चात्य पण्डित समझते थे कि प्राचीन भारत के सिक्के, वर्णमाला, नाट्यकला और यहाँ तक कि वास्तु-विद्या भी, सिकंदर के भारत पर आक्रमण करने के उपरांत यूनान देश से यहाँ आई है। परंतु अब यह कहने का किसी को साहस नहीं होता कि प्राचीन भारत की वर्णमाला प्राचीन यूनानी वर्णमाला का रूपांतर मात्र है। प्राचीन भारत के शिल्प की उत्पत्ति के संबंध में अब भी बहुत कुछ मतभेद है। तथापि अब कोई यह नहीं कह सकता कि सिकंदर के भारत पर आक्रमण करने से पहले भारतवासी

* बुद्ध गया के वज्रासन के नीचे और साकिय स्तूप में सोने के बहुत से छोटे छोटे सिक्के मिले हैं।

लाग पत्थर आदि गढने का।काम नहीं जानते थे। बहुत दिनों तक युरोपीय परिडतों का विश्वास था कि भारत में मुद्रा के व्यवहार का आरभ सिकदर के आक्रमण के उपरात हुआ है। सुप्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता सर अलेक्ज़ेण्डर कनिंघम ने प्राय ४० वर्ष पहले इस मत की निस्सारता प्रमाणित की थी। इससे पहले फ्रांसीसी विद्वान् वर्नुफ ने भी लिखा था कि इस तरह के सिक्के भारतीय ही हैं, विदेशी सिक्कों का अनुकरण नहीं हैं। रोम के इतिहासवेत्ता क्विन्टस् कर्टियस् (Quintus Curtius) ने लिखा है कि जिस समय सिकंदर तक्षशिला में पहुँचा था, उस समय वहाँ के देशी राजा ने उसको ८० टेलेन्ट (Talent) मूल्य का अकित चाँदी का टुकडा (Signati Argenti) उपहार स्वरूप दिया था *। इससे भी सिद्ध होता है कि यूनानियों के भारत में आने से पहले ही यहाँ चाँदी के अकित सिक्कों का प्रचार था। उन्नीसवीं शताब्दी के अत में प्रोफेसर डार्म्स्टेटर (J Darmsteter) ने लिखा था कि सिकन्दर के आक्रमण के उपरान्त प्राचीन भारत में सिक्कों का प्रचार आरभ हुआ था †। इस पर पश्चिमी जगत में उनकी बहुत हँसी उडाई गई थी। सर अलेक्ज़ेण्डर कनिंघम, विन्सेन्ट ए० स्मिथ, ई० जे० रैप्सन आदि विद्वानों के मत के अनुसार सिकन्दर के आक्रमण के उपरान्त प्राचीन

---

* Coins of Ancient India, P V

† Journal Asiatique, 1892, p 62

भारत में सिक्कों का प्रचार होना असम्भव है। क्योंकि सिकन्दर के आक्रमण के समय ही तक्षशिला के राजा आम्भि (Omphis) ने उसको चाँदी के बहुत से सिक्के उपहार स्वरुप दिए थे। इन सब विद्वानों के मतानुसार प्राचीन भारत के सिक्के इस देश की तौल की रीति से बने हैं। क्योंकि भारतीय सिक्कों का आकार प्राचीन जगत की समस्त सभ्य जातियों के सिक्कों के आकार से भिन्न है। पश्चिमी देशों में सब से पहले लीडिया देश में सिक्कों का प्रचार आरंभ हुआ था। ये सिक्के या तो सोने के छोटे छोटे पिंड होते थे या चाँदी मिले हुए सोने के पिंड। पीछे धीरे धीरे राजा लोग सिक्के बनाने के काम में हस्तक्षेप करने के लिये बाध्य हुए थे; और नकली सिक्कों का प्रचार रोकने के लिये इन पिंडाकृति सिक्कों पर अंकचिह्न अंकित करने की प्रथा चली थी। पश्चिमी जगत के सभी देशों में इन पिंडाकृति सिक्कों के अनुकरण पर सिक्के बने थे। परंतु भारतीय सिक्कों की उत्पत्ति कुछ और ही ढंग से हुई थी। यहाँ चाँदी के पत्तरों के छोटे छोटे चौकोर टुकड़े काटकर सिक्के बनाए जाते थे। पीछे से उनकी विशुद्धता सूचित करने के लिये उन सिक्कों पर एक ओर अथवा दोनों ओर अंकचिह्न अंकित किया जाने लगा था। प्राचीन भारत में सिक्कों को अंकित करने की जो रीति थी, वह प्राचीन जगत के अन्यान्य सभ्य देशों की रीति से बिलकुल भिन्न थी। इसलिये विदेशी विद्वानों को विवश होकर यह मानना पड़ा था कि भारत में सिक्कों को

अंकित करने की जो रीति है, वह इसी देश की है, विदेशी नहीं है। सिक्कों को अंकित करने की यह स्वतन्त्र रीति उत्तरापथ की है, क्योंकि दक्षिणापथ के प्राचीन सिक्के प्राचीन पश्चिमी देशों के सिक्कों की तरह गोलाकार हैं।

अभी हाल में डेकुर डेमॉसे नामक एक फ्रांसीसी विद्वान् ने निश्चित किया है कि पुराण आदि सिक्के भारत में बने हुए पारसी सिक्के हैं। चाँदी के पुराण और चाँदी के दारिक (दारा अथवा दरायुस के सिक्के) में कोई भेद नहीं है *।

अब पाश्चात्य विद्वान् कहा करते हैं कि भारतीय वर्णमाला और पत्थर की कारीगरी प्राचीन फिनीशिआ और फारस से यहाँ आई है। इसलिये यदि प्राचीन सिक्कों के सम्बन्ध में भी इसी प्रकार की बातें कही जायँ, तो इसमें कुछ आश्चर्य नहीं है। प्रोफेसर डेकुर डेमॉसे के मत का समर्थन अभी हाल में भारतीय पुरातत्त्व विभाग के प्रधान अधिकारी डाक्टर डी० बी० स्पूनर ने किया है †। मैक्समूलर का मत है कि निष्क

---

* Nous crayons avoirdemotre que les punchmarked d argent et de culvre constituent simplement une variete hindoue du mounayage perse achemenide

(अनुवाद—हमारा विश्वास है, हमने यह बतलाया है कि अंक-चिह्नित रजत एवं ताम्रमुद्रा पारस्य देश की आखिमीय मुद्रा का भारतवर्षीय विभागमात्र है।

Notes sur les Anciennes Monnaises de L' Inde—Journal Asiatique, 1912, p 123

† Journal of the Royal Asiatic Society, 1915, p 411

शब्द संस्कृत भाषा की किसी धातु से नहीं निकला है *। प्रोफेसर टामस का अनुमान है कि यह शब्द प्राचीन हिब्रू भाषा की किसी धातु से निकला है।† । प्राचीन काल में भिन्न भिन्न जातियों के संसर्ग से प्राचीन भारत की भाषा में बहुत से विदेशी शब्द आ गए थे। यदि किसी सिक्के का नाम किसी विदेशी भाषा से लिया गया हो, तो क्या इससे यह सिद्ध होगा कि भारतवासियों ने प्राचीन काल में जिस विदेशी जाति की भाषा से सिक्के का नाम लिया था, उसी विदेशी जाति से उन लोगों ने उक्त सिक्के का व्यवहार करना भी सीखा था ? भाषातत्त्वविद् और नृतत्त्वविद् विद्वानों के मत के अनुसार प्राचीन भारतवासी और ईरानवासी दोनों एक ही आर्य जाति की भिन्न भिन्न शाखाएँ मात्र हैं। अतः यदि प्राचीन ईरान और प्राचीन भारत में धातु तौलने और सिक्के अंकित करने की रीतियाँ एक ही रही हों, तो इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। जब तक यह बात भली भाँति प्रमाणित न हो जाय कि धातु तौलने अथवा सिक्के अंकित करने की ये रीतियाँ ईरान के आर्य्य निवासियों की निज की हैं और जिस समय भारतवासियों ने उन रीतियों का अवलम्बन किया था, उससे पहले

---

* Nishka is a weight of gold or gold in general, and it has certainly no satisfactory etymology in Sanskrit. —Max Muller's History of Ancient Sanskrit Literature.

† Ancient Indian Weights, pp. 16—17.

से वे रीतियाँ ईरान वासियों में चली आती थीं, तब तक यह कहना कभी संगत नहीं हो सकता कि धातु तौलने और सिक्के अंकित करने की रीतियों के संबंध में प्राचीन भारतवासी ईरानवालों के ऋणी हैं।

गौतम बुद्ध के जन्म से बहुत पहले भारतवर्ष में जो सिक्के प्रचलित थे, उनके बहुत से प्रमाण बौद्ध साहित्य में मिलते हैं। इस विषय में किसी को संदेह नहीं है कि जातकमाला में जितनी कहानियाँ हैं, वे बुद्ध के जन्म से पहले भी यहाँ प्रचलित थीं; क्योंकि उनमें से बहुत सी कहानियाँ आर्य्य जाति की साधारण संपत्ति हैं। आजकल के पाश्चात्य विद्वानों का अनुमान है कि ईसा से पूर्व चौथी शताब्दी में सब जातक वर्त्तमान स्वरूप में लिखे गए थे। उन सब जातकों में अनेक स्थानों पर कार्षापण या काहापण शब्द का व्यवहार हुआ है। मिस्टर रिज़ डेविड ने एक प्रबन्ध में यह दिखलाया है कि पाली साहित्य में सिक्कों का कहाँ कहाँ उल्लेख है *। एक स्थान पर लिखा है कि मथुरा की रहनेवाली वासवदत्ता नाम की वेश्या पाँच सौ पुराण लेकर आत्मविक्रय किया करती थी †। बौद्ध शास्त्रों में मानव समाज की दैनिक घटनाओं का जो वृत्तान्त दिया गया है, उससे पता चलता है कि उन दिनों सुवर्ण,

---

* On the Ancient Weights and Measures of Ceylon pp 1—13

† Cunningham's Coins of Ancient India p 20

पुराण, काकिनी और कार्षापण का बहुत अधिक व्यवहार होता था। फ्रांसीसी विद्वान् बर्नुफ ने अपने "बौद्ध धर्म के इतिहास की उपक्रमणिका" (Introduction a l' Histoire de Bouddhisme) नामक ग्रन्थ में प्राचीन सिक्कों के उल्लेख के बहुत से उदाहरण दिए हैं।

सिद्धान्त कौमुदी में ही इस बात का प्रमाण मिलता है कि पाणिनि के समय में भी यहाँ सिक्कों का प्रचार था। कौमुदी के सूत्रों में रूप्य = रूपादाहत शब्द का व्यवहार है *। इस संबंध में मि० गोल्डस्टूकर का मत है कि पाणिनि ने तद्धित प्रत्यय 'य' के संबंध में कहा है कि आहत के अर्थ में रूप्य शब्द रूप (आकार) में 'य' प्रत्यय के मिलाने से निकलता है। रूप्य शब्द से अंकित और आकार का विशिष्ट अभिप्राय होता है †।

इन सब प्रमाणों से सिद्ध होता है कि ईसा से पूर्व पाँचवीं और छठी शताब्दी में भी भारतवर्ष में पुराण आदि सिक्कों

---

* सिद्धान्तकौमुदी, ५।२।११६।

† That Panini knew coined money is plainly borne out by his Sutra V, 2. 119, *rupad-ahata*........where he says "the word rupya, is in the sense of struck, (आहत) derived from rupa, 'form, shape', with the taddhita affix ya, here implying possession when rupya would literally mean "struck (money), having a form"

—Numismata Orientalia, Vol. 1., p. 39., note 3.

का प्रचार था। अत: यदि यह कहा जाय कि भारत में इन सब सिक्कों की उत्पत्ति ईसा के जन्म से १००० वर्ष पूर्व हुई थी, तो इसमें किसी प्रकार की अत्युक्ति न होगी। मुद्रातत्त्वविद् कनिंघम का यही मत है*। किन्तु रैप्सन † और स्मिथ ‡ का अनुमान है कि जिस समय जातकों की कहानियाँ वर्त्तमान रूप में लिखी गई थीं, उसी समय पुराण आदि सिक्कों का प्रचार आरम्भ हुआ था। निश्चयपूर्वक यह नहीं कहा जा सकता कि इन सब सिक्कों का प्रचार कितने दिनों तक रहा। अनुमान होता है कि ईसवी सन् के आरम्भ के समय पुराण, सुवर्ण आदि अंक चिह्न-युक्त सिक्कों का प्रचार उठ गया था। बुद्ध गया की मन्दिर वेष्टनी और बरहुत गाँव की स्तूपवेष्टनी में अनाथपिण्डद के द्वारा जेतवन के खरीदे जाने के सम्बन्ध में जो दो खोदी हुई लिपियाँ (Bas relief) हैं, उनसे प्रमाणित होता है कि उन दिनों अंक चिह्न युक्त सिक्कों का व्यवहार होता था। बर्हुत गाँव का स्तूप और बुद्ध गया की मन्दिर वेष्टनी ईसा से पूर्व दूसरी शताब्दी में बनी थी। दो वर्ष पहले पुरातत्त्व विभाग के प्रधान अधिकारी सर जान मार्शल ने तक्षशिला के खँडहरों को खोदते समय द्वितीय दियदात के सुवर्ण सिक्कों के साथ बहुत से पुराण या चाँदी के कार्षापण ढूँढ

* Coins of Ancient of India, p 43

† Indian Coins, p 2

‡ Catalogue of Coins in the Indian Museum, Vol I, P. 135,

निकाले थे *। दूसरे दियदात का आनुमानिक राजत्व-काल ईसा से पूर्व तीसरी शताब्दी का शेषार्ध है। कनिंघम ने लिखा है कि बहुत दिनों तक काम में आनेवाले अनेक पुराण द्वितीय आंतिमाख (Antimachos II), फ़िलिस्न (Philoxenos), लिसिय (Lysius), आंतिआलिकद (Antialkidas), मेनन्द्र (Menander) आदि भारतीय यूनानी राजाओं के सिक्कों के साथ आविष्कृत हुए थे †। ये सब यूनानी राजा लोग ईसा से पूर्व दूसरी शताब्दी में जीवित थे। इससे सिद्ध होता है कि ईसा से पूर्व दूसरी शताब्दी में भी भारत में पुराण आदि सिक्कों का प्रचार था। बुद्ध गया के महाबोधि मंदिर में वज्रासन के नीचे कनिंघम ने हुविष्क के सुवर्ण सिक्कों के साथ एक पुराण भी ढूँढ निकाला था ‡। हुविष्क के समय में अर्थात् ईसवी दूसरी शताब्दी में पुराणों का चाहे बहुत अधिक प्रचार न रहा हो, तो भी संभवतः साधारण प्रचार अवश्य था। पादरी लोवेन्थाल का कथन है कि दक्षिणापथ में बहुत प्राचीन काल से लेकर ईसवी तीसरी शताब्दी तक पुराणों का व्यवहार होता था ×। इन सब प्रमाणों के आधार पर अनुमान किया जा सकता है कि पुराण और सुवर्ण आदि प्राचीन

---

* J. H. Marshall—Sketch of Indian Antiquities Calcutta, 1914, p. 17.

† Cunningham's Coins of Ancient India, p. 54.

‡ Cunningham's Mahabodhi, pl. XXII., 16—17.

× Catalogue of Coins in the Indian Museum, Vol. I, p. 135.

सिक्कों का ईसा से पूर्व दसवीं शताब्दी से लेकर ईसवी सन् के आरंभ तक प्रचार था।

बारहवीं शताब्दी ईसवी में बंगाल के सेन राजाओं के ताम्रशासनों में भी पुराणों का उल्लेख मिलता है —

(१) बल्लालसेन का ताम्रशासन— प्रत्यब्द कपर्दक पुराण पञ्चशतोत्पत्तिक * ।

(२) लक्ष्मणसेन का सुन्दरवनवाला ताम्रशासन, अधस्तया सार्द्धकाकिनी द्वयाधिक त्रयोविंशत्यन्मानोत्तर सावयकसमेत भूद्रोणत्रयात्मक सवत्सरेण पचाशत् पुराणोत्पत्तिकः † ।

(३) लक्ष्मणसेन का आनुलियावाला ताम्रशासन— सवत्सरेण कपर्दकपुराणशतिकोत्पत्तिक ‡ ।

(४) लक्ष्मणसेन का माधाई नगरवाला ताम्रशासन शतैकात्मकसवत्सरेण कपर्दकाष्टपष्टि पुराणाधिक शतमूल्यका × ।

(५) लक्ष्मणसेन का तर्पणदीघीवाला ताम्रशासन— सवत्सरेण कपर्दकपुराण सार्द्धशतैकोत्पत्तिको + ।

---

* साहित्य-परिषत् पत्रिका (बँगला), १७ वाँ भाग, पृ० २३७।

† रामगति न्यायरत्न कृत "बंगभाषा ओ साहित्य", तीसरा संस्करण, परिशिष्ट, ख, पृ० ख और ग।

‡ ऐतिहासिक चित्र, १ म पर्य्याय, पृ० २६०।

× रंगपुर साहित्य परिषद् पत्रिका, ४ था भाग, पृ० १११।

+ साहित्य-परिषत् पत्रिका, १७ वाँ भाग, पृ० ११६।

(६) विश्वरूपसेन का मदनपाड़वाला तम्रशासन·········
···द्वात्रिंशत् पुराणोत्तर च शीशतिक······१३२ *।

चाँदी के पत्तर काटकर उनके दोनों ओर एक एक करके अनेक अन्य अंक-चिह्न बनाए जाते थे। सिक्कों पर एक ही ओर अधिकांश अंकचिह्न बनाए जाते थे, दूसरी ओर अनेक पुराणों पर कोई अंक-चिह्न न होता था। यदि अंक-चिह्न होते भी थे तो उनकी संख्या बहुत कम होती थी। परंतु यह नहीं कहा जा सकता कि ऐसा क्यों किया जाता था। ऐसे सिक्के बहुत ही कम हैं जिनके दोनों ओर अंकचिह्नों की संख्या समान हो। इन सब अंक-चिह्नों की उत्पत्ति के सम्बन्ध में विद्वानों में मत-भेद है। कनिंघम आदि विद्वानों का मत है कि वणिक लोग एक बार परीक्षा किए हुए सिक्कों को फिर से पहचानने के लिये इस प्रकार के चिह्न अंकित किया करते थे। बाद के बंगाल के स्वाधीन मुसलमान राजाओं के चाँदी के सिक्कों पर भी इस प्रकार के अंकचिह्न (Punch Mark वा Shroff Mark) मिलते हैं। पुरातत्त्व विभाग के प्रधान अधिकारी डाक्टर स्पूनर के मत के अनुसार पुराणों पर जो अंक-चिह्न हैं, वे उन नगरों के चिह्न हैं जिन नगरों में वे सिक्के मुद्रित हुए अथवा बने थे ×। भूतत्व-विशारद थियोबोल्ड ने इन सब

* Journal of the Asiatic Society of Bengal, 1896, Pl, I, p, 13.

× Annual Report of the Archaeological Survey of India, 1905—6, p. 155.

अंक चिह्नों का विस्तृत विवरण एकत्र करके प्रकाशित किया है *। थियोबोल्ड के २०० से अधिक भिन्न भिन्न अंकचिह्नों में से ६६ अंकचिह्न सिक्कों के एक ओर, २८ अंकचिह्न दूसरी ओर और अन्य १५ अंकचिह्न सिक्कों के दोनों ओर मिलते हैं। थियोबोल्ड ने अंकचिह्नों को छ भागों में विभक्त किया है—

(१) मनुष्य मूर्ति।

(२) अस्त्र शस्त्र और मनुष्यों के बनाए हुए द्रव्य आदि।

(३) पशु आदि।

(४) वृक्षों की शाखाएँ और फल मूल आदि।

(५) शौर, शैव अथवा प्राचीन ज्योतिष्क मंडली की उपासना के सांकेतिक चिह्न।

(६) अज्ञात।

हम पहले कह चुके हैं कि प्राचीन सुवर्ण वा निष्क अब तक कहीं नहीं मिला। जो पुराण वा धरण और कार्षापण अनेक आकार के मिले हैं, वे सम वा असम, चौकोर अथवा गोलाकार हैं। विद्वानों का अनुमान है कि विदेशी जातियों के संसर्ग के कारण भारतवासियों ने गोलाकार सिक्कों का व्यवहार करना आरम्भ किया था †।

* Journal of the Asiatic Society of Bengal, 1890, Pt I, P 151

† The cutting of circular blanks from a metal sheet being a more troublesome process than snipping strips into short lengths, the circular coins are presumably a

प्रसिद्ध मुद्रातत्त्वविद् विन्सेन्ट ए० स्मिथ ने प्राचीन पुराण, कार्षापण आदि सिक्कों को चार भागों में विभक्त किया है—

(१) चौकोर दण्ड (Solid ingot)। आज तक इस तरह के केवल तीन सिक्के मिले हैं।

(२) वक्रदंड (Bent bar)। जान पड़ता है कि चाँदी के दंड को टेढ़ा करके सिक्के तैयार करने की यह प्रथा इसलिये चलाई गई थी जिसमें उन सिक्कों में से चाँदी का टुकड़ा कोई काट न ले।

(३) सम वा असम चौकोर। इस तरह के सिक्के बहुत अधिक संख्या में मिले हैं। मि० स्मिथ ने इस विभाग के सिक्कों को चार और उप-विभागों में विभक्त किया है—

(क) इसमें एक ओर बहुत से अंकचिह्न हैं, परंतु दूसरी ओर कोई चिह्न नहीं है।

(ख) इसमें एक ओर एक और दूसरी ओर बहुत से अंकचिह्न हैं।

(ग) इसमें एक ओर दो और दूसरी ओर बहुत से अंकचिह्न हैं।

(घ) इसमें एक ओर तीन अथवा अधिक और दूसरी ओर बहुत से अंकचिह्न हैं।

---

later invention than the rectangular ones—V. A. Smith.
—Catalogue of Coins in the Indian Museum, Vol. I., P. 124.

दूसरा परिच्छेद

प्राचीन भारत के विदेशी सिक्के

बहुत प्राचीन काल से भारतवासी वाणिज्य व्यवसाय के लिये विदेश जाया करते थे और विदेशी व्यापारी इस देश में आया करते थे। प्राचीन काल में विदेशी वाणिज्य के तीन मार्ग थे। इनमें से एक तो स्थल मार्ग था और बाकी दो जल मार्ग थे। आर्यावर्त्त के उत्तर पश्चिम प्रान्त से भारतीय व्यापारी घोड़ों और ऊँटों पर माल लादकर वाह्लीक (Balkh), उत्तरकुरु, मध्य एशिया, ईरान या वर्तमान फारस और बाविरुप या बमेरु अर्थात् बेबिलोन तक जाया करते थे। व्यापारी लोग अपने देश से जो माल ले जाते थे, उसके बदले में वे भिन्न भिन्न देशों से वहाँ के सोने और चाँदी के सिक्के अपने देश में ले आया करते थे। दोनों जल-मार्गों में से अरब सागर का मार्ग ही प्रधान था। इस मार्ग से भारतीय व्यापारियों के जहाज बाविरुप, मिस्र और अफ्रिका के पूर्वी तट के देशों तक आते-जाते थे और भारतवर्ष के माल के बदले में सोने और चाँदी के विदेशी सिक्के अपने देश में लाया करते थे। रोमन साम्राज्य की चरम उन्नति के समय में भारतवर्ष के बने हुए माल के बदले में रोम [illegible] यों सोने के सिक्के भारत आया करते थे। जिस

(Trade Guild) जान पड़ता है। इस तरह के सिक्के चौकोर और साँचे में ढले हुए हैं। उन पर प्राचीन ब्राह्मी वा खरोष्ठी लिपि में "नेगमा" और "दोजक" लिखा रहता है। प्राचीन पुराण और कार्षापण, प्राचीन और आधुनिक संसार के और और सिक्कों की तरह राज-कर्मचारियों के द्वारा अंकित नहीं होते थे। श्रेष्ठी-संप्रदाय राजा की आज्ञा के अनुसार जितने सिक्कों की आवश्यकता होती थी, इस तरह के उतने सिक्के तैयार कराया करते थे *।

---

* It is clear that the punch-marked coinage was a private coinage issued by guilds and silver-smiths with the permission of the Ruling Powers."

—Catalogue of Coins in the Indian Museum, Vol. 3.

दूसरा परिच्छेद

प्राचीन भारत के विदेशी सिक्के

बहुत प्राचीन काल से भारतवासी वाणिज्य व्यवसाय के लिये विदेश जाया करते थे और विदेशी व्यापारी इस देश में आया करते थे। प्राचीन काल में विदेशी वाणिज्य के तीन मार्ग थे। इनमें से एक तो स्थल मार्ग था और बाकी दो जल मार्ग थे। आर्यावर्त्त के उत्तर पश्चिम प्रान्त से भारतीय व्यापारी घोड़ों और ऊँटों पर माल लादकर बाह्लीक (Balkh), उत्तरकुरु, मध्य एशिया, ईरान या वर्तमान फारस और बाविरुष या बमेरु अर्थात् बैबिलोन तक जाया करते थे। व्यापारी लोग अपने देश से जो माल ले जाते थे, उसके बदले में वे भिन्न भिन्न देशों से वहाँ के सोने और चाँदी के सिक्के अपने देश में ले आया करते थे। दोनों जल-मार्गों में से अरब सागर का मार्ग ही प्रधान था। इस मार्ग से भारतीय व्यापारियों के जहाज बाबिरुष, मिस्र और अफ्रिका के पूर्वी तट के देशों तक आते-जाते थे और भारतवर्ष के माल के बदले में सोने और चाँदी के विदेशी सिक्के अपने देश में लाया करते थे। रोमन साम्राज्य की चरम उन्नति के समय में भारतवर्ष के बने हुए माल के बदले में रोम के लाखों सोने के सिक्के भारत आया करते थे। जिस

समय अरबवालों ने मुसलमानी धर्म ग्रहण किया था, उस समय तक अरब सागर पर भारतीय व्यापारियों का पूरा पूरा अधिकार और प्रभाव था। ईसवी अठारहवीं शताब्दी में भी गुजरात और महाराष्ट्र देश के व्यापारी जहाज मिस्र और अफ्रिका के पूर्वी तट तक आया-जाया करते थे। भारत के माल के बदले में सोने के जो विदेशी सिक्के इस देश में आया करते थे, उनमें से लीडिया देश के सोने और चाँदी की मिश्रित श्वेत धातु (White metal) के सिक्के सब से अधिक प्राचीन हैं। कई वर्ष हुए, पंजाब के बन्नू जिले में सिंधु नद के पश्चिमी तट पर लीडिया के राजा क्रीसस (Crœsus) का सोने का एक सिक्का मिला था। रंगपुर जिले के सद्यः पुष्करिणी नामक गाँव के प्रसिद्ध जमींदार राय श्रीयुक्त मृत्युंजय राय चौधरी बहादुर ने यह सिक्का खरीद लिया है। लीडिया के राजा क्रीसस के सिक्के संसार के सब से प्राचीन सिक्कों में सब से पहले के हैं *। इस सिक्के में एक ओर एक साँड़ और एक

---

* According to Herodotus the earliest stamped money was made by the Lydians—Coins of Ancient India, p 3

The earliest coinage. of the ancient world would appear chiefly to have been of silver and electrum; the latter metal being confined to Asia Minor, and the former to Greece and India. Some of the Lydian Staters of pale gold may be as old as Gyges. —Ibid, p. 19.

शेर का मुँह बना है और दूसरी ओर एक छोटा और एक बड़ा अंकचिह्न (Punch mark) है। प्राचीन पूर्वी जगत में दो प्रकार के सोने के सिक्के प्रचलित थे। एक तो बाबिरुष की रीति (Babylonian Standard) के अनुसार बने हुए और दूसरे यावनिक रीति (Attic Standard) के अनुसार बने हुए। बाबिरुष की रीति पर बने हुए सोने के सिक्के तौल में १६८ ग्रेन हैं। श्रीयुक्त मृत्युजयराय चौधरी का सिक्का १६४ ७५ ग्रेन है, इसलिये यह बाबिरुष की रीति के अनुसार बना हुआ सिक्का है। चौधरी महाशय ने यह सिक्का खरीद-कर परीक्षा के लिये हमारे पास भेजा था। जान पड़ता है कि इस तरह का कोई सिक्का इससे पहले भारतवर्ष में नहीं मिला था और न इस तरह का कोई सिक्का भारतवर्ष के किसी अजायब खाने में है। इस तरह का और कोई सिक्का पहले से मौजूद नहीं था, इसलिये मिस्टर जी० एफ० हिल ने अपनी "ऐतिहासिक यूनानी सिक्के" * और प्रोफेसर पर्सी गार्डनर ने अपनी "सिकन्दर से पूर्व एशिया के सोने के सिक्के" † नामक पुस्तक में क्रीसस के सोने के सिक्के का जो विवरण और चित्र दिया है, उसे देखकर हमने निश्चित किया था कि चौधरी महाशय का खरीदा हुआ सिक्का असली है।

---

* G F Hill's Historical Greek Coins, p 18, pl 1"7

† Percy Gardener's Gold Coins of Asia before Alexander the Great, p 10, pl 1 5

लखनऊ के कैनिंग कालेज के अध्यापक प्रसिद्ध मुद्रातत्त्वविद् मिस्टर सी० जे० ब्राउन के पास उस सिक्के का चित्र और चौधरी महाशय का लिखा हुआ प्रबन्ध भेजा गया था। ब्राउन साहब को भी उस सिक्के के असली होने के सम्बन्ध में कोई सन्देह नहीं हुआ था। ईसा से पूर्व छठी शताब्दी के मध्य भाग में एशिया महादेश में लीडिया देश के मिश्र धातु और सोने के सिक्के ही वाणिज्य के लिये काम में आते थे। ईसा से पूर्व सन् ५४६ में लीडिया का राजा क्रीसस फारस के राजा खुरुष (Cyrus) से लड़ाई में हार गया था। उस समय लीडिया देश पराधीन हो गया था। उसी समय से पूर्वी जगत में दारिक (Daric) और सिग्लोस (Siglos) नामक सोने और चाँदी के सिक्कों का बनना आरम्भ हुआ था। राय चौधरी महाशय का अनुमान है कि उनका खरीदा हुआ सिक्का ईसा से पूर्व सन् ३२१ में, भारत पर सिकंदर के आक्रमण से पहले, किसी समय इस देश में आया होगा *।

ईसा से पूर्व पाँचवीं अथवा छठी शताब्दी में भारत के उत्तर-पश्चिम सीमान्त के प्रदेश फारस के साम्राज्य में मिल गए थे। उस समय खुरुष (Cyrus), दरियावुष (Darius) आदि हाखामानिषीय (Achaemenian) वंशी पारसी सम्राटों का अधिकार पश्चिम में भूमध्यसागर से लेकर पूर्व में पंचनद

---

* Journal and Proceedings of the Asiatic Society of Bengal, Vol. X., 1914, p. 487.

तक हो गया था। उस समय वर्त्तमान अफगानिस्तान उत्तरापथ का एक प्रदेश माना जाता था। पारस के राजाओं का भारतीय अधिकार और शासनभार तीन क्षत्रपों (Satraps) पर था। और फारस के सम्राट् प्रति वर्ष तौल में ३६० टेलेन्ट (Talent) सोने के सिक्के राजस्व स्वरूप पाते थे। उस समय पारसिक साम्राज्य की भारतीय प्रजा ने अपने शासकों से दो बातें सीखी थीं—

(१) खरोष्ठी लिपि, जो वर्तमान फारसी लिपि की तरह दाहिनी ओर से बाईं ओर को लिखी जाती थी और (२) प्राचीन पारसी सिक्कों का व्यवहार।

इस बात के बहुत से प्रमाण हैं कि पारसिक अधिकार के समय भारत के उत्तर पश्चिम सीमान्त प्रदेशों में पारसिक सिक्कों का व्यवहार होता था। भारतीय प्रदेशों में प्रचलित सोने और चाँदी के अनेक पारसिक सिक्के मिले हैं। सोने के सिक्के भारत में ही बनते थे*। उनका मूल्य दो स्टेटर (Stater) होता था। चाँदी के सिक्कों (Sigloi) पर प्राचीन भारतीय पुराण वा धरण की भाँति अंकचिह्न (Punch mark) मिलते हैं। मुद्रातत्त्वविद् कनिंघम के अनुसार ऐसे चिह्न भारतीय नहीं हैं। परन्तु उनका सिद्धान्त युक्तियुक्त नहीं है, क्योंकि इस तरह के दो एक सिक्कों पर अंक चिह्न में भारतीय ब्राह्मी

* E Babelon—Les Perses Achaemenides, pp XI XX, 16.

चा खरोष्ठी अक्षर बने हुए हैं। भारतवर्ष में मिले हुए प्राचीन पारसिक सिक्कों के अंक-चिह्न देखकर प्रोफेसर रैप्सन अनुमान करते हैं कि पारसिक अधिकार-काल में भारतवर्ष के उत्तर-पश्चिम सीमान्त के प्रदेशों में पुराण और चाँदी के पारसिक सिक्के दोनों एक ही समय में चलते थे*। इस तरह के सिक्कों में से एक सिक्के पर ब्राह्मी 'जो' और एक दूसरे सिक्के पर खरोष्ठी 'ग' बना हुआ मिलता है†। मिस्टर रैप्सन ने इस तरह के सिक्कों पर सब मिलाकर १२ खरोष्ठी और ब्राह्मी अक्षर ढूँढ़ निकाले हैं‡। अनुमान होता है कि गोलाकार पुराण आदि पारसिक अधिकार-काल में विदेशी सिक्कों को देखकर चनाए गए होंगे।

रोम साम्राज्य के अभ्युदय-काल में वहाँ के सोने, चाँदी और ताँबे के लाखों सिक्के भारतवर्ष में आया करते थे। उत्तरापथ और दक्षिणापथ के भिन्न भिन्न स्थानों में अब भी समय समय पर रोम देश के सोने, चाँदी और ताँबे के बहुत से सिक्के मिला करते हैं×। थोड़े दिन हुए, उड़ीसा में रोम के

---

* Indian Coins, p. 3.

† Ibid. pl. 1, 3—4.

‡ Journal of the Royal Asiatic Society, 1895, p. 875.

× श्रीयुत सिवएल ने भारतवर्ष में मिले हुए रोमक सिक्कों की सूची तैयार की है। —Journal of the Royal Asiatic Society, 1904 pp. 591—673.

सम्राट् हेड्रियन का सोने का एक सिक्का मिला था। रोम साम्राज्य के अध पतन के समय अरव के समुद्री मार्गवाला भारतीय वणिकों का वाणिज्य धीरे धीरे कम होने लगा। भारतीय विदेशी व्यापार का दूसरा जलमार्ग बंगाल की खाडी का था। इस मार्ग से बंगाली, उडिया और द्राविडी वणिक् लोग माल लेकर बरमा, मलय और यवद्वीप आदि स्थानों में जाया करते थे। इन देशों में उन्होंने भारतीय उपनिवेश स्थापित किए थे। इस मार्ग से विदेशी सिक्के तो भारत में न आते थे, परन्तु पूर्वी देशों में बहुत बडा औपनिवेशिक साम्राज्य स्थापित हो गया था।

बहुत प्राचीन काल से प्राचीन पारसिक सिक्कों के साथ यूनान के एथेन्स नगर के वे सिक्के भी, जिन पर उल्लू की तस वीर बनी होती थी, पूर्वी जगत में वाणिज्य-व्यवसाय में काम आते थे। पीछे ज्यों ज्यों एथेन्स की अवनति होती गई, त्यों त्यों पूर्वी जगत में ऐसे सिक्कों का अभाव होता गया, और अनुमानत. ईसा से पूर्व ३०० सन् में एथेन्स नगर में सिक्का बनाने का काम बन्द हो गया। उसी समय से पूर्वी जगत में इस तरह के सिक्कों का बनना आरम्भ हुआ। भारत में बने हुए इस तरह के बहुत से सिक्के एथेन्स के सिक्कों का अनु करण मात्र हैं। मनुष्य का स्वभाव सहज में नहीं बदलता, इस लिये जब एथेन्स के उल्लूवाले सिक्कों का अभाव हुआ, तब पूर्वी वणिकों ने नए प्रकार के सिक्कों का व्यवहार न करके उसी

पुराने ढंग के उल्लूवाले सिक्कों का अनुकरण आरम्भ किया*। भारतवर्ष में इन सिक्कों के अनुकरण पर जो सिक्के बने थे उनमें से कई सिक्कों पर उल्लू के बदले में बाज का चिह्न बना हुआ मिलता है†। ईसा से पूर्व चौथी शताब्दी के सातवें दशक में जिस समय जगद्विजयी सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण किया था, उस समय सुभूति नाम का एक राजा पंचनद में राज्य करता था‡। सुभूति ने एथेन्स के सिक्कों के ढंग पर चाँदी के जो सिक्के बनवाए थे, उन पर एक ओर शिरस्त्राण पहने हुए राजा का मस्तक और दूसरी ओर कुक्कुट की मूर्ति बनी हुई है। ऐसे सिक्कों पर यूनानी भाषा में सुभूति (Sophytes) का नाम लिखा हुआ है×। भारतवर्ष में ताँबे के कुछ ऐसे चौकोर सिक्के भी मिले हैं जिन पर सिकन्दर का नाम अङ्कित है। परन्तु इस तरह के सिक्के बहुत दुर्लभ हैं+। सिकन्दर के प्रधान सेनापति सिल्यूकस (Seleucus) ने ईसा से पूर्व ३०६ सन् में मौर्य सम्राट् चन्द्रगुप्त पर आक्रमण किया

---

* B. V. Head, Catalogue of Greek Coins in the British Museum, Attica, pp. XXXI—XXXII, Athens, Nos. 267—276a, pl. VII, 3—10.

† Rapson's Indian Coins, p. 3, pl. 1., 7.

‡ V. A. Smith, Early History of India, 3rd Edition pp. 80—90.

× V. A. Smith, Catalogue of Coins in the Indian Museum. Vol. I., p. 7, pl. I., 1—3.

+ Rapsons' Indian Coins, p. 4.

था। युद्ध में सिल्यूकस हार गया और उसे भारत के उत्तर-पश्चिम सीमान्त के तीन प्रदेशों पर से अपना अधिकार छोडना पडा। जान पडता है कि उस समय से सीरिया के सिल्यूकवंशी राजाओं के साथ मौर्य वंशी चन्द्रगुप्त, बिम्बिसार और अशोक आदि सम्राटों का फिर कोई झगडा नहीं हुआ। इस अनुमान का कारण यह है कि मेगास्थनीज (Megasthenes), दाइमाखोस (Daimachos) आदि यूनानी राजदूत पाटलिपुत्र नगर में रहा करते थे, और अशोक के अनेक शिलालेखों में आन्तियोक (Antiochos), तुरमय (Ptolemy), मक (Magas of Cyrene), आलिकसुंदर (Alexander of Epirus) आदि यूनानी राजाओं के नामों का उल्लेख है। प्रथम सिल्यूक (Seleukos Nikator), प्रथम आन्तियोक (Antiochos Theos), द्वितीय आन्तियोक (Antiochos II), तृतीय आन्तियोक (Antiochos Magnus) और द्वितीय सिल्यूक (Seleukos Kallinikos) इन चारों राजाओं के चाँदी के बहुत से सिक्के भारत के उत्तर पश्चिम सीमांत में मिले हैं।

सीरिया के सिल्यूकवंशी राजाओं के विशाल साम्राज्य के ध्वंसावशेष पर बहुत से छोटे छोटे खंड राज्य बने थे। उनमें से पारस देश का पारद राज्य और बाह्लीक में प्रथम दियदात का यूनानी राज्य प्रधान है। पारस का पारद राज्य ईसा से पूर्व तीसरी शताब्दी के मध्य भाग से लेकर ईसवी तीसरी

शताब्दी के प्रथम पाद तक बना रहा। एक बार पारदवंशी राजा लोग उत्तरापथ में अपना स्वतंत्र राज्य स्थापित करने में समर्थ हुए थे। उन लोगों के भारतीय सिक्कों का विवरण आगे चलकर यथास्थान दिया जायगा। पंजाब, अफगानिस्तान और सिन्ध देश में प्रति वर्ष पारद राजाओं के सोने और चाँदी के बहुत से सिक्के मिला करते हैं।

स्टीन (Sir Marc Aurel Stein), ग्रनवेडेल (Grunwedel) आदि विद्वानों ने यह प्रमाणित कर दिया है कि मध्य एशिया किसी समय भारतवासियों का बहुत बड़ा उपनिवेश और भारतीय सभ्यता का एक स्वतंत्र केन्द्र था। मध्य एशिया के रेगिस्तान में सैकड़ों गाँवों और नगरों के खँडहर आदि मिले हैं। उन्हीं सब खँडहरों आदि में भारतवर्ष और चीन देश की सीमा के प्रदेशों के प्राचीन सिक्के मिले हैं। मध्य एशिया के काशगर प्रदेश में जो सिक्के मिले हैं, उन पर खरोष्ठी अक्षरों में भारत की प्राकृत भाषा और चीनी अक्षरों में चीनी भाषा है। चीनी अक्षरों में सिक्के का मूल्य या परिमाण और खरोष्ठी अक्षरों में राजा का नाम लिखा हुआ है। इस तरह के सिक्के यद्यपि बहुत ही दुष्प्राप्य हैं, तो भी अनेक सिक्के मिले हैं। परन्तु दुःख की बात है कि उनमें से किसी पर का राजा का नाम पूरी तरह से पढ़ा नहीं जाता*।

---

* Rapson's Indian Coins, p. 10; Terrien de la Couperie, Comptes rendus de L' Academie des Inscriptions,

ईसा से पूर्व तीसरी शताब्दी के मध्य भाग में सिल्यूकवंशी राजाओं के अधीन वाह्लीक (Bactria) देश के शासनकर्त्ता दियदात (Diodotos) ने विद्रोह करके अपनी स्वाधीनता की घोषणा की थी। उसके उपरान्त उसका पुत्र द्वितीय दियदात सिंहासन पर बैठा। दियदात के नाम के सोने, चाँदी और ताँबे के कई सिक्के मिले हैं, परन्तु अब तक किसी प्रकार इस बात का निर्णय नहीं हो सका कि ये सिक्के प्रथम दियदात के हैं अथवा द्वितीय दियदात के। प्रथम दियदात ने मौर्य सम्राट् अशोक के राजत्व काल के मध्य भाग में वाह्लीक में स्वाधीन राज्य स्थापित किया था; और उसका पुत्र द्वितीय दियदात अशोक के राज्य-काल के शेष भाग में अथवा उसकी मृत्यु के कुछ ही बाद वाह्लीक के सिंहासन पर बैठा था। अशोक की मृत्यु के बाद ही भारत के उत्तर-पश्चिम सीमांत के प्रदेश मौर्यवंशी राजाओं के अधिकार से निकल गए थे। अनुमान होता है कि द्वितीय दियदात ने कपिशा, उद्यान और गांधार को जीतकर पंचनद के पश्चिमी भाग पर अधिकार कर लिया था, क्योंकि सिंधुनद के पूर्व ओर अवस्थित तक्षशिला नगरी के खँडहरों में से पुरातत्त्व-विभाग के प्रधान अधिकारी सर जान मार्शल ने दियदात के सोने के अनेक सिक्के ढूँढ निकाले हैं। दियदात के नाम के एक प्रकार के सोने के सिक्के, दो प्रकार के चाँदी के

1890, p 338, Gardner, Numismatic Chronicle, 1879, p 274.

सिक्के और एक प्रकार के ताँबे के सिक्के अब तक मिले हैं। मुद्रातत्त्व के ज्ञाताओं ने आकार के अनुसार चाँदी के सिक्कों को दो भागों में विभक्त किया है—एक छोटे और दूसरे बड़े। चाँदी के बड़े सिक्कों में दो उपविभाग हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा का मुख और दूसरी ओर हाथ में वज्र लिए ज्यूपिटर की मूर्त्ति, एक गिद्ध पक्षी और फूल की माला है। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर माला के बदले में चंद्रकला और छोटे गिद्धपक्षी की मूर्त्ति है *। चाँदी के छोटे सिक्के तो दुष्प्राप्य नहीं हैं, परंतु दियदात के ताँबे के सिक्के बहुत ही दुष्प्राप्य हैं। ताँबे के सिक्कों पर एक ओर ज्यूपिटर का मस्तक और दूसरी ओर देवी आर्तमिस की मूर्त्ति और कुक्कुर है। देवी के हाथ में उल्का और पीठ पर तर्कश † है। सिक्कों पर यूनानी भाषा और अक्षरों में दियदात का नाम है। इस विषय में मतभेद है कि ये सिक्के प्रथम दियदात के हैं अथवा द्वितीय दियदात के। मि० विंसेंट ए० स्मिथ कहते हैं कि ये सिक्के द्वितीय दियदात के हैं ‡। किंतु स्वर्गीय अध्यापक गार्डनर के मत के अनुसार ये सिक्के प्रथम दियदात के हैं ×। सिल्यूक-

---

* Catalogue of Coins in the British Museum, Greek and Scythic Kings of Bactria and India, p. 3, pl. 1. 5–7.

† B. M. C. pl. 1., 9.

‡ Catalogue of Coins in the Indian Museum, Vol. 1., p. 7.

× British Museum Catalogue of Indian Coins. —Greek and Scythic kings of Bactria & India, p. 3.

वशी सम्राट् तृतीय आंतियोक (Antiochos III. Magnus) ने जिस समय अपने पैतृक राज्य के उद्धार का सकल्प करके वाह्लीक और पारद राज्य पर आक्रमण किया था, उस समय यूथीदिम (Euthydemos) नामक एक राजा ने वाह्लीक में उसका मुकाबला किया था। यूथीदिम ने द्वितीय दियदात को पराजित करके वाह्लीक पर अधिकार किया था। जब आंतियोक ने यूथीदिम को हरा दिया, तब यूथीदिम ने दूत के द्वारा आंतियोक से कहला भेजा कि जिन लोगों ने मेरे बड़ों के राजत्व काल में विद्रोह किया था, उन लोगों को पराजित करके मैंने वाह्लीक पर अधिकार किया है। वाह्लीक की उत्तरी सीमा पर शक जाति सदा यवन राज्य पर आक्रमण करने के लिये तैयार रहती है। यदि हम आत्मरक्षा के लिये उन सब बर्बर जातियों से सहायता माँगें, तो वे जातियाँ बड़ी प्रसन्नता से हमारी सहायता करेंगी। परंतु जब एक बार यवन राज्य में शक जाति का प्रवेश हो जायगा, तब फिर वह कभी अपने देश को लौटना न चाहेगी; और उस दशा में एशिया खंड के ग्रीक या यवन साम्राज्य पर बहुत बड़ी आफत आ जायगी। इस पर आंतियोक ने यूथीदिम को स्वाधीन राजा मान लिया था और उसके पुत्र के साथ अपनी कन्या का विवाह कर दिया था। पाश्चात्य ऐतिहासिक पोलीबियस (Polybios) ने इन सब घटनाओं का उल्लेख किया है। यूथिदिम के सोने, चाँदी और ताँबे के सिक्के मिले हैं। इनमें से सोने के सिक्के बहुत ही दुष्प्राप्य

हैं। यूथिदिम का सोने का एक ही सिक्का लंदन के ब्रिटिश म्यूज़िअम में है। उसके एक ओर राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में दंड लिए हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति है *। यूथिदिम के चाँदी के सिक्के दो प्रकार के हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा की प्रौढ़ अवस्था की मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में दण्ड लेकर पत्थर की चट्टान पर बैठे हुए हरक्यूलस की मूर्त्ति है। ऐसे सिक्कों के दो उपविभाग हैं। पहले उप-विभाग में तो हरक्यूलस के हाथ का दण्ड पत्थर पर रखा हुआ है; परंतु दूसरे विभाग में वह दण्ड हरक्यूलस की जाँघ पर पड़ा है। दोनों प्रकार के सिक्कों का आकार बहुत छोटा है। इस प्रकार के बड़े आकार के सिक्के नहीं मिलते। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर राजा की वृद्ध अवस्था की मूर्त्ति है; परंतु इस तरह के सिक्के बहुत दुष्प्राप्य हैं। लंडन के ब्रिटिश म्यू-ज़िअम में इस तरह के केवल दो सिक्के हैं †। यूथिदिम के ताँबे के सिक्के दो प्रकार के हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हरक्यूलस की मूर्त्ति और दूसरी ओर नाचते हुए घोड़े की मूर्त्ति है। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर यूनानी देवता अपोलो का मस्तक और दूसरी ओर त्रिपद वेदी है। यूथिदिम के नाम के चाँदी के कई दुष्प्राप्य सिक्कों पर राजा की तरुण वय की मूर्त्ति है। मि० गार्डनर के मत से ये सिक्के

---

* B. M. C, 4; pl. 1.—10

† Ibid p. 5, Nos. 13—14.

द्वितीय यूथिदिम के हैं। परंतु यह नहीं कहा जा सकता कि प्रथम यूथिदिम के साथ द्वितीय यूथिदिम का क्या सबध था। मि० गार्डनर का मत है कि द्वितीय यूथिदिम, दिमित्रिय का पुत्र और प्रथम यूथिदिम का पोता था। मि० गार्डनर* के ग्रन्थ के प्रकाशित होने के उपरान्त द्वितीय यूथिदिम के और भी तीन प्रकार के सिक्के मिले हैं। इनमें से एक प्रकार के सिक्के निकल धातु के हैं। रसायन शास्त्र के पाश्चात्य विद्वानों ने ईसवी सत्रहवीं शताब्दी में निकल धातु का आविष्कार किया था†। किंतु भारतीय यूनानी राजाओं के निकल के बने हुए अनेक सिक्कों के मिलने से ‡ सिद्ध होता है कि निकल का अतिम आविष्कार पुनराविष्कार मात्र है, क्योंकि पूर्वी जगत् में बहुत प्राचीन काल से निकल धातु का व्यवहार होता आया था। यदि यह बात न होती तो द्वितीय यूथिदिम और दिमित्रिय कभी प्राय विशुद्ध निकल धातु के सिक्के बनाने में समर्थ न होते। द्वितीय यूथिदिम के निकल के सिक्कों पर एक ओर अपोलो का मुख और दूसरी ओर त्रिपद वेदी है ×। द्वितीय यूथिदिम के ताँबे के नए

---

* B M C p 18 pl III, 3—6

† Numismatic Chronicle—1868, p 307

‡ Ibid p 308

× Catalogue of Coins in the Punjab Museum, Lahore, by R B Whitehead, Vol 1 p 14

मिले हुए सिक्के दो प्रकार के हैं। पहले विभाग के ताँबे के सिक्के सब प्रकार से निकल के सिक्कों की तरह ही हैं*। दूसरे प्रकार के ताँबे के सिक्कों पर एक ओर हरक्यूलस की मूर्त्ति और दूसरी ओर एक घोड़े की मूर्त्ति है†।

प्रथम और द्वितीय यूथिदिम के सिक्के भारतीय यूनानी राजाओं की यूनान देश की तौल की रीति के अनुसार बने हुए हैं। यूथिदिम के पहले के किसी यूनानी राजा ने धातु तौलने की भारतीय रीति के अनुसार सिक्के नहीं बनवाए थे। प्रथम यूथिदिम के पुत्र दिमित्रिय ने सब से पहले अपने सिक्कों पर भारतीय भाषा में अपना नाम अंकित कराया था और यूनानी तौल की रीति के बदले पारसिक रीति का अवलम्बन किया था। दिमित्रिय के उपरान्त पन्तलेव (Pantaleon) और अगथुक्लेय (Agathocles) नामक राजाओं ने सब से पहले भारतीय तौल की रीति के अनुसार सिक्के बनवाए थे।

हम पहले कह चुके हैं कि अंक-चिह्नवाले सिक्के दो प्रकार के हैं, एक चौकोर और दूसरे गोलाकार। मुद्रातत्त्व के ज्ञाताओं का अनुमान है कि अन्यान्य विदेशी जातियों के संसर्ग के कारण भारतवासी लोग गोलाकार पुराण बनाने लग गए थे। पाश्चात्य जगत के सब से पुराने सिक्के गोला-

---

* Ibid p. 15, Nos. 32—33.

† Ibid, No. 34.

कार हैं। इसलिये अनुमान होता है कि बाबिरुषीय, फिनिशिय आदि प्राचीन सभ्य जातियों के संसर्ग के कारण भारतवासियों ने वाणिज्य के सुभीते के लिये गोलाकार पुराण बनाए थे। उस समय तक प्राचीन भारत के सिक्कों के आकार में परिवर्तन होने पर भी सम्भवत और किसी बात में कोई परिवर्तन नहीं हुआ था। सिक्कों पर राजा का नाम अथवा और कुछ अक्षर आदि न होते थे। यूनानी जाति के संसर्ग के कारण भारतवासी लोग सिक्कों की और बातों में भी परिवर्तन करने लग गए थे। उस समय सब से पहले भारतीय सिक्कों पर भारतीय भाषा में राजा की उपाधि और नाम अंकित करने की प्रथा चली थी। जिस प्रकार भारत के यूनानी राजाओं ने इस देश की धातु तौलने की रीति के अनुसार सिक्के बनवाने आरम्भ किए थे, उसी प्रकार भारतीय राजाओं और जातियों ने भी यूनानी सिक्कों के ढंग पर गोलाकार सिक्के बनवाना और उन पर अपना अपना नाम अंकित कराना आरम्भ किया था। आगे के दो अध्यायों में उन सिक्कों का विवरण दिया जायगा जो ईसा से पूर्व दो शताब्दी और ईसा के बाद दो शताब्दी तक भारत में प्रचलित थे और जो सिक्के बनाने की देशी अथवा विदेशी रीति के अनुसार देशी अथवा विदेशी राजाओं ने बनवाए थे।

आदि निरर्थक हो गए थे, तथापि भारतीय यूनानी राजाओं सम्बन्धी मुद्रातत्त्व की आलोचना का इतिहास इन्हीं सब निबंधों में मिलता है*। कनिंघम साहब भारतवर्ष में प्रायः साठ वर्ष तक रहे थे। इस बीच में उन्होंने हजारों पुराने सिक्के एकत्र किए थे। उनके इकट्ठे किए हुए भारतीय यूनानी राजाओं के सिक्के आजकल लंदन के ब्रिटिश म्यूजिअम में रखे हुए हैं। इस तरह के सिक्कों का ऐसा अच्छा संग्रह संसार में और कहीं नहीं है। कनिंघम के बाद जर्मन विद्वान् वान सैले (Von Sallet) ने बाह्लीक और भारतीय यूनानी राजाओं के सिक्कों के सम्बन्ध में जर्मन भाषा में एक ग्रन्थ लिखा था†। आजकल केम्ब्रिज के अध्यापक रैप्सन(E. J. Rapson), प्रसिद्ध ऐतिहासिक विन्सेन्ट स्मिथ और भारतीय मुद्रातत्त्वसमिति (Neumismatic Society of India) के सम्पादक ह्वाइटहेड (R. B. Whitehead) इस तरह के मुद्रातत्त्व के सम्बन्ध में विचार करने के लिये प्रसिद्ध हैं। रैप्सन ने अपने "भारतीय सिक्के" नामक ग्रन्थ और रायल एशियाटिक सोसाइटी की पत्रिका के अनेक निबंधों में भारतीय यूनानी राजाओं के सिक्कों के सम्बन्ध में

---

* इनके सिवाय विल्सन की Ariana Antiqua और रोचेट की Journal des Savants, नामक पत्रिका में प्रकाशित ग्रन्थावली और गार्डनर रचित ब्रिटिश म्यूज़िअम के सिक्कों की सूची में मुद्रातत्त्व की इस तरह की आलोचना का इतिहास दिया गया है।

† Nachfolger Alexander der Grossen in Baktrien und Indien, Zeitschrift fur Numismatik, 1879-83.

आलोचना की है*। विन्सेन्ट स्मिथ ने कलकत्ते की एशियाटिक सोसाइटी की पत्रिका में एक निबन्धमाला में† और कलकत्ते के सरकारी अजायबखाने की सूची में इस तरह के सिक्कों की विस्तृत आलोचना की है। मि० ह्वाइटहेड ने कलकत्ते की एशियाटिक सोसाइटी की पत्रिका में और हाल में प्रकाशित लाहौर के अजायबघर की सूची में‡ इस विषय का असाधारण पारदर्शिता के साथ वर्णन किया है।

कनिंघम और वान सैले भारतीय यूनानी राजाओं को सिकंदर के उत्तराधिकारी बतलाते हैं, परन्तु वास्तव में सिकंदर के साथ उन राजाओं का बहुत ही थोड़ा संबंध है। सिकंदर भारत के किसी देश पर स्थायी रूप से अधिकार न कर सका था। उसके सेनापति सिल्यूक ने एशिया के पश्चिम में जो विस्तृत साम्राज्य स्थापित किया था, वाह्लीक उसीके अंतर्गत था, और वाह्लीक के यवनों या यूनानियों ने भारतवर्ष के उत्तर-पश्चिम प्रांत पर आक्रमण करके अधिकार किया था। मुद्रा तत्त्वविद् ह्वाइटहेड का अनुमान है कि यूथिदिम ने वाह्लीक से

* Notes on Indian Coins and Seals, Journal of the Royal Asiatic Society, 1900 05, Coins of the Greco Indian Sovereigns, Agathoclela and Strato I, Soter and Strato II Philopator

† Numismatic Notes and Novelties, Journal of the Asiatic Society of Bengal—Old series I, 1890

‡ Journal and Proceedings of the Asiatic Society of Bengal-New Series, Vols I XI, Numismatic Supplement

अफगानिस्तान उद्यान और गांधार जीता था* । परंतु सम्भवतः दियदात के समय में ही भारत का उत्तर-पश्चिम प्रांत यूनानियों के हाथ में गया था; क्योंकि सिंधु नद के पूर्वी तट पर तक्षशिला नगरी के खँडहरों में दियदात के सोने के बहुत से सिक्के मिले थे† । यूथिदिम के पुत्र दिमित्रिय के समय से यूनानी राजाओं के सिक्कों पर भारतीय भाषा और अक्षरों में राजा का नाम और उपाधि मिलती है और इसी समय से प्राचीन भारतीय प्रथा के अनुसार ८० रत्ती (१४० ग्रेन) तौल के ताँवे के चौकोर सिक्कों का प्रचार आरम्भ हुआ था‡ । इन्हीं सब कारणों से यूथिदिम के पुत्र दिमित्रिय से लेकर हेरमय (Hermaios) तक यूनानी राजा लोग भारतीय यूनानी राजा माने जा सकते हैं । अब तक नीचे लिखे यूनानी राजाओं के सिक्के मिले हैं—

भारतीय नाम	यूनानी नाम
१ अर्खेबिय	Archebios
२ अगथुक्लेय	Agathokles
३ अगथुक्लेया	Agathokleia

---

* Catalogue of Coins in the Punjab Museum, Lahore, Vol. I. p. 4.

† A Sketch of Indian Archaeoloy, by Sir John Marshall, C. I. E. p. 17.

‡ Catalogue of Coins in the Punjab Museum, Lahore. Vol. I. p 14.

४ अमित	Amyntas
५ अतिआलिकिद्	Antlalkidas
६ आर्त्तिमिदोर	Artemidoros
७ आतिमख	Antimachos
८ अपलदत	Apollodotos
९ आपुलफिन	Apollophanes
१० एपन्द्र	Epander
११ एवुक्रतिद	Eukratides
१२ झोइल	Zoilos
१३ तेलिफ	Telephos
१४ थेउफिल	Theophilos
१५ दिअनिसिय	Dionysios
१६ दियमेद	Diomedes
१७ निकिय	Nikias
१८ पतलेव	Pantaleon
१९ पलसिन	Polyxenos
२० पेउकलअ	Peukelaos
२१ [प्लत]	Plato
२२ फिलसिन	Philoxenos
२३ मेनन्द्र	Menander
२४ लिसिअ	Lysius
२५ स्त्रत	Strato

२६ हिपुस्त्रत	Hippostratos
२७ हेरमय	Hermaios
२८ हेलियक्रेय	Heliokles

हम पहले कह चुके हैं कि दिमित्रिय प्रथम युथिदिम का पुत्र और सीरिआ के सिल्यूकवंशी राजा तृतीय आन्तियोक का दामाद था। इसी ने सबसे पहले प्राचीन भारतीय सिक्कों के ढंग पर ताँवे के चौकोर सिक्कों का प्रचार किया था और यूनानी खरोष्ठी अक्षरों में अपना नाम और उपाधि अंकित कराई थी। पाश्चात्य ऐतिहासिक स्ट्रावो और जस्टिन ने उसे भारतवर्ष का राजा कहा है। उसी समय शकों ने बारह बार बाह्लीक पर आक्रमण करके यूनानी राजाओं को बहुत तंग किया था। उस समय प्रथम युथिदिम का चीन साम्राज्य की पश्चिमी सीमा तक विस्तृत बाह्लीक राज्य पर अधिकार था। परंतु उसकी मृत्यु के थोड़े दिनों बाद ही वक्षु (Oxus) नदी के उत्तर तट के प्रदेश पर शक जाति का अधिकार हो गया था। दिमित्रिय के साथ एवुक्रतिद (Eukratides) नामक एक यूनानी राजा का बहुत दिनों तक युद्ध हुआ था जिसके अंत में दिमित्रिय को अपना राज्य छोड़ना पड़ा था। पाश्चात्य ऐतिहासिक जस्टिन ने इस युद्ध का उल्लेख किया है। दिमित्रिय के चाँदी और ताँवे के सिक्के मिले हैं। उसके चाँदी के सिक्के दो प्रकार के हैं। पहले प्रकार के चाँदी के सिक्कों पर एक ओर राजा का मुख और दूसरी ओर हरक्यूलस की युवावस्था

की मूर्त्ति अंकित है। दूसरे प्रकार के चाँदी के सिक्कों पर हरक्यूलस की मूर्त्ति के बदले में यूनानी देवी पैलास (Pallas) की मूर्त्ति है। इस तरह के सिक्के बहुत ही दुष्प्राप्य हैं और ऐसा केवल एक ही सिक्का कलकत्ते के अजायबघर में है। दिमित्रिय के छ प्रकार के ताँबे के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के ताँबे के सिक्कों पर एक ओर शिरस्त्राण पहने हुए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर पत्तयुक्त वज्र खुदा हुआ है*। इस तरह के सिक्के चोकोर हैं और इन्हीं पर सबसे पहले खरोष्ठी अक्षरों में राजा का नाम और उपाधि लिखी गई थी। लाहौर के अजायबघर में इस तरह का केवल एक ही सिक्का है। उसपर खरोष्ठी अक्षरों और प्राकृत भाषा में "महरजस अपरजितस दिमे [त्रियस] या देमेत्रियुस्" लिखा है। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर सिंह का चमड़ा पहने हुए हरक्यूलस का मुख और दूसरी ओर यूनानी देवी आर्तेमिस (Artemis) की मूर्त्ति है†। मि० स्मिथ का कथन है कि इस तरह के सिक्के निकल धातु के भी बनते थे‡। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राक्षसमुखयुक्त

---

* Punjab Museum Catalogue, Lahore, p 14, No 26

† Ibid, p 13, Nos 22-25, British Museum Catalogue, p 7 Nos 13-14, Indian Museum Catalogue, Vol I, p 9, No 6

‡ Ibid, Note I

ढाल या चर्म और दूसरी ओर एक त्रिशूल बना है*। चौथे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथी का सिर और दूसरी ओर यूनानी देवता मर्करी (Mercury) के हाथ का एक विशिष्ट दंड (Caduceus) बना है†। पाँचवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा का मुख और दूसरी ओर हाथ में शूल तथा चर्म लिए हुए पैलास की मूर्त्ति है‡। छठे प्रकार के सिक्कों पर भी एक ओर राजा का मुख और दूसरी ओर बैठी हुई पैलास की मूर्त्ति है×। एवुक्रतिद ने दिमित्रिय को हराकर उसका राज्य ले लिया था +। कनिंघम साहब का अनुमान है कि एवुक्रतिद ईसा से पूर्व सन् १८० में सिंहासन पर बैठा था; क्योंकि पारद (Parthia) के राजा मिथ्रदात÷ (Mithradates) और बाबिरुष् के राजा टिमार्कस= (Timarchus) ने उसके सिक्कों का अनुकरण किया था। एवुक्रतिद ने पहले तो दिमित्रिय को हराकर बहुत बड़ा साम्राज्य प्राप्त किया

---

* Ibid, Vol. I. p. 9. No. 7; B. M. C., p,.7, No. 14.

† Punjab Museum Catalogue, Vol. I, p. 13, No. 21; B, M. C. p. 7, No. 16.

‡ Ibid, p. 163, pl. XXX, 1.

× Ibid, pl. XXX. 2.

+ British Museum Catalogue of Indian Coins, Greek and Scythic Kings of Bactria and India, p. XXV.

÷ Percy Gardener, Parthian Coinage, p. 32, pl. II, 4.

= British Museum Catalogue of Indian Coins, Greek and Scythic Kings of Bactria and India, p. XXVI.

था, परन्तु उसके राजत्व काल क अंत में धीरे धीरे उसके अधिकार से बहुत से प्रदेश निकल गए थे*। पारद के राजा द्वितीय मिथ्रदात ने दो प्रदेशों पर अधिकार किया था*, और प्लेटो नामक एक विद्रोही शासनकर्त्ता ने अपनी स्वाधीनता की घोषणा करके अपने नाम के सिक्के चलाना आरंभ कर दिया था†। इन सिक्कों पर किसी संवत् का १४७वाँ वर्ष अंकित है। मुद्रातत्त्व के विद्वानों का अनुमान है कि ईसा से ३१२ वर्ष पूर्व सीरिया के राजा सिल्यूक ने जो संवत् चलाया था, उसी संवत् का वर्ष इस सिक्के पर दिया गया है। यदि यह अनुमान सत्य हो तो ये सिक्के ईसा से १६५ वर्ष पहले के बने हैं। एवुक्रतिद् के पिता का नाम सम्भवत हेलियक्लिय (Heliokles) और उसकी माता का नाम लाउडिकी (Laodike) था। एक अपूर्व सिक्के से इन नामों का पता चला है‡। एवुक्रतिद् के चाँदी और ताँबे के सिक्के मिले हैं। उसके चाँदी के सिक्के तीन प्रकार के हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा का मुख और दूसरी ओर यूनानी देवता अपोलो की मूर्त्ति है× इस तरह के सिक्कों पर खरोष्ठी लिपि नहीं है। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर अपोलो की मूर्त्ति के बदले में दो पिंड (Piles of

* I d, p XXVI, Strabo, XI, 11

† Ibid, p XXVI

‡ Catalogue of Coins in the Punjab Museum, Lahore, p 6, B M C, p XXI

×P M C, p 19 No 60, I M C Vol I, p 11.

the diosvui) हैं और प्रत्येक पिंड के बगल में ताल वृक्ष की एक एक शाखा है*। इस पर भी खरोष्ठी लिपि नहीं है। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर दो घुड़सवार बने हैं। ऐसे सिक्के दो प्रकार के हैं। पहले प्रकार में यूनानी अक्षरों में "Bailbus Eukratidon" लिखा है†; और दूसरे प्रकार में इन दोनों शब्दों के बीच में "Megalou" लिखा है‡। इस तरह का सोने का एक बड़ा सिक्का (Twenty stater piece) एक बार मध्य एशिया के बुखारा नगर में मिला था ×। वह इस समय पेरिस के जातीय ग्रंथागार में रखा है+। एवुक्रतिद के कई दुष्प्राप्य सिक्कों पर यूनानी और खरोष्ठी दोनों अक्षरों में राजा का नाम और उपाधि दी हुई है। कई तरह के चाँदी के इन सिक्कों के अतिरिक्त एवुक्रतिद के चाँदी के और भी सिक्के मिले हैं जो आकार में उक्त सिक्कों से कुछ भिन्न हैं। इस प्रकार के सिक्के बहुत ही दुष्प्राप्य हैं। कनिंघम ने उनका संग्रह किया था। मुद्रातत्त्व-विद् ह्वाइटहेड ने उन सिक्कों की संक्षिप्त सूची तैयार की है ÷।

---

* Ibid; P. M. C; Vol. I. p. 21, Nos. 71-76.

† Ibid; p. 20, Nos 61-63.

‡ Ibid, p. 20. Nos 64-70; I. M. C; Vol. I, p. 11.

× Revue Numismatique, 1867, p. 382, pl. XII.

+ Catalogue of Coins in the Punjab Museum, Vol. I, p. 5.

÷ Catalogue of Coins in the Punjab Museum, Lahore, p. 27.

खुकतिद् के सब मिलाकर पाँच प्रकार के ताँबे के सिक्के मिलते हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा का मुख और दूसरी ओर दो घुडसवारों की मूर्त्ति है। इनके दो उपविभाग हैं। पहले उपविभाग के सिक्के गोलाकार हैं और उनपर केवल यूनानी अक्षरों में राजा का नाम और उपाधि दी है*। दूसरे उपविभाग के सिक्के चौकोर हैं और उन पर यूनानी और खरोष्ठी दोनों अक्षर दिए गए हैं†। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर शिरस्त्राण पहने हुए राजा का मुख और दूसरी ओर यूनानी विजया देवी (Nike) की मूर्ति है‡। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर शिरस्त्राण पहने हुए राजा का मुख और दूसरी ओर सिंहासन पर बैठे हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति है×। इस तरह के सिक्कों पर खरोष्ठी अक्षरों में लिखा है—"कविशिये नगर देवत" +। इससे अनुमान होता है कि ज्यूपिटर की, कपिशा के नगर-देवता की भाँति, पूजा होती थी। चौथे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा का मुख और दूसरी

---

* Ibid, p, 22, Nos 81-86, I M C Vol I p 12, Nos 14-16

† Ibid, pp 22-25, Nos 87-129, I M C, Vol I, pp 12-13., Nos 17-28

‡ Ibid, p 13, NO 30, P M C Vol I p 26 No 130

× Ibid, p 26 No, 131

+ J Marquart Eranshahr, pp 280-81, Journal of the Royal Asiatic Society, 1905, pp 783-86

ओर ताल वृक्ष की दो शाखाएँ हैं*। ये तीनों प्रकार के सिक्के चौकोर हैं और इन पर यूनानी तथा खरोष्ठी दोनों अक्षर लिए हैं। कनिंघम ने पाँचवें प्रकार के जिन सिक्कों का आविष्कार किया था, उनपर एक ओर राजा का मुख और दूसरी ओर अपोलो की मूर्त्ति है†।

मुद्रातत्त्व के ज्ञाताओं के अनुसार पन्तलेव, अगथुक्लेय और आंतिमख नामक तीनों राजाओं के सिक्के एवुक्रतिद के सिक्कों की अपेक्षा पुराने हैं‡। पंतलेव और अगथुक्लेय ने तक्षशिला के पुराने कार्षापण के ढंग पर ताँबे के भारी और चौकोर सिक्के बनवाए थे×। इन लोगों के ऐसे सिक्कों पर यूनानी और ब्राह्मी अक्षरों में राजा का नाम और उपाधि दी हुई है+। पंतलेव के निकल और ताँबे के सिक्के मिले हैं। निकल के सिक्कों पर एक ओर दियनिसियस (Dionysos) का मुख और दूसरी ओर एक बाघ की मूर्त्ति है÷। पंतलेव के ताँबे के सिक्के दो प्रकार के हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर मुकुट पहने हुए राजा का मुख और दूसरी ओर सिंहासन पर

---

* P. M. C., Vol-I. p. 26 No. 132.

† Ibid, p. 27, No. VII,

‡ Rapson's Indian Coins, p. 6.

× I. M. C., Vol. I. P, 3-4. Cunningham, Archæological Survey Reports, Vol. XIV., p. 18; pl. X.

+ Rapson's Indian Coins, p. 6.

÷ P. M. C, Vol I, p. 16.

बैठे हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति है *। निकल और पहले प्रकार के सिक्कों पर केवल यूनानी भाषा है। दूसरे प्रकार के ताँबे के सिक्के चौकोर हैं। उनपर एक ओर एक नाचती हुई स्त्री की मूर्त्ति और दूसरी ओर सिंह अथवा बाघ की मूर्त्ति है। इस प्रकार के सिक्कों पर यूनानी और ब्राह्मी दोनों अक्षरों में राजा का नाम और उपाधि दी है†।

अगथुक्लेय के चाँदी, निकल और ताँबे के सिक्के मिले हैं। चाँदी के सिक्के चार प्रकार के हैं। चारों प्रकार के सिक्कों पर केवल यूनानी भाषा है। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर सिकंदर की मूर्त्ति और नाम और दूसरी ओर सिंहासन पर बैठे हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति और अगथुक्लेय का नाम है‡। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर दियदात का मुख और नाम और दूसरी ओर वज्र चलाने के लिये उद्यत ज्यूपिटर की मूर्त्ति और अगथुक्लेय का नाम है ×। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर यूथिदिम का मुख तथा नाम और दूसरी ओर पत्थर पर नंगे बैठे हुए हरक्यूलस की मूर्त्ति और अगथुक्लेय का नाम है +। चौथे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा का मुख और

---

* Ibid

† P M C, Vol I Nos 37-40

‡ B M C, p 10, No I, P. M C, Vol I, p 16, No 41

× B M C, p 10, No 2.

+ Ibid, No 3.

दूसरी ओर ज्यूपिटर और तीन मस्तकवाले हेकेट (Hecate) की मूर्त्ति है *। अगथुक्लेय के एक प्रकार के निकल के सिक्के मिले हैं। ये बिलकुल पंतलेव के निकल के सिक्कों के समान हैं†। अगथुक्लेय के चार प्रकार के ताँवे के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्के गोलाकार हैं और उन पर एक ओर दियनिस्रियस (Dionysos) का मुख और दूसरी ओर बाघ की मूर्त्ति है‡। इस प्रकार के सिक्कों पर केवल यूनानी भाषा है। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर नाचती हुई स्त्री की और दूसरी ओर बाघ की मूर्त्ति है और इन पर यूनानी और ब्राह्मी दोनों अक्षरों में राजा का नाम और उपाधि है ×। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर सुमेरु पर्वत और दूसरी ओर एक बौद्ध (?) चिह्न है +। इस तरह के सिक्कों पर केवल एक ओर खरोष्ठी अक्षरों में "हितजसमे" लिखा है। सुप्रसिद्ध पुरातत्त्ववेत्ता डा० बुलर के मत से इसका अर्थ "हितयश का आधार" है। यूनानी भाषा में "Agathocles" शब्द का यही अर्थ है÷। चौथे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर सुमेरु पर्वत और खरोष्ठी

---

* Ibid, Nos 4–5, P. M. C., Vol. I., p. 17, No, 42.

† Ibid, Nos 43–44.

‡ B. M. C., p. 11, No. 8,

× Ibid, p. 11, Nos. .9–14; P. M. C, Vol. 1, p. 17, Nos. 45–50; I. M. C, Vol. 1 p. 10, Nos 1–3.

÷ P. M. C, Vol. 1. p. 18, No. 51.

÷ Vienna Oriental Journal, Vol. VIII, 1894, p. 206.

अक्षरों में "अकथुक्रेय" और दूसरी ओर बोधि वृक्ष (?) है। अंतिम तीन प्रकार के सिक्के चौकोर हैं* ।

आन्तिमख के तीन प्रकार के चाँदी के सिक्के और एक प्रकार के ताँवे के सिक्के मिले हैं। आन्तिमग नाम के दो राजाओं के सिक्के मिले हैं; इसलिये मुद्रातत्त्वविद् कहते हैं कि ये सिक्के प्रथम आन्तिमख के हैं। इन सिक्कों में केवल यूनानी भाषा का व्यवहार है। पहले प्रकार के चाँदी के सिक्कों पर एक ओर दियदात का मुख और नाम और दूसरी ओर वज्र चलाने के लिये तैयार ज्युपिटर की मूर्त्ति और आन्तिमख का नाम है†। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर यूथिदिम का मुख और नाम और दूसरी ओर अन्तिमख का नाम है‡। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा का मुख और दूसरी ओर यूनान देश के वरुण देवता (Poseldon) की मूर्त्ति है× । आन्तिमख के ताँवे के सिक्के गोलाकार हैं और उनपर एक ओर हाथी और दूसरी ओर विजया देवी की मूर्ति है+ ।

पुरातत्त्व वेत्ताओं के मतानुसार हेलियक्रेय बाह्लीक का

---

* P M C, Vol 1 p 18, Nos 52-53, B M C, p 12 No 15

† Ibid, p 19

‡ B M C pl XXX, 6

× P, M C, Vol, 1 pp 18-19, Nos, 54-58, B M C, p 12, Nos, 1-6,

+ Ibid, p, 19, No, 59,

अन्तिम यूनानी राजा था और उसी के समय वाह्लीक से यूनानी राज्य उठ गया था*। इस समय तक के यूनानी राजाओं के चाँदी के सभी सिक्के यूनान देश की तौल की रीति (Attic Standard) के अनुसार बने हैं†। परन्तु स्वयं हेलियक्रेय ने और उसके बाद के राजाओं ने यूनान देश की रीति के बदले में पारस्य देश की तौल की रीति के अनुसार सिक्के बनवाए थे। मुद्रातत्त्व के ज्ञाताओं का मत है कि हेलियक्रेय एवुक्रतिद का पुत्र था और उसने अपने पिता की मृत्यु के उपरान्त वाह्लीक का राज्य पाया था‡। मुद्रातत्त्व के ज्ञाताओं को हेलियक्रेय के सिक्कों में ही इस बात का प्रमाण मिला है कि उसे विवश होकर वाह्लीक छोड़ना पड़ा था। हेलियक्रेय के कुछ सिक्के यूनान देश की तौल की रीति के अनुसार और कुछ सिक्के पारस्य देश की तौल की रीति के अनुसार बने हैं×। यूनान देश की रीति के अनुसार हेलियक्रेय ने जो सिक्के बनवाए थे, उनपर केवल यूनानी भाषा दी गई है और उनके एक ओर राजा का मुख और दूसरी ओर ज्यूपिटर की

---

* I, M, C, Vol, 1, p, 4; Indian Coins, p, 6,

† B, M, C; pp, L XVII–VIII.

‡ B. M, C; p, XXIX; Numismatic Chronicle, 1869, p, 240,

× Rapson's Indian Coins p, 6,

मूर्त्ति है* । बाद में जिस बर्बर जाति ने यूनानियों को बाह्लीक से भगाया था, उसने अपने ताँबे के सिक्कों में इसी तरह के सिक्कों का अनुकरण किया था †। जो सिक्के भारतीय तौल की रीति के अनुसार बने थे, उनमें एक प्रकार के चाँदी के और दो प्रकार के ताँबे के सिक्के मिलते हैं। इन सब सिक्कों पर यूनानी और खरोष्ठी दोनों अक्षर दिए हैं। चाँदी के सिक्कों पर एक ओर राजा का मुख और दूसरी ओर खड़े हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति है‡। पहले प्रकार के ताँबे के सिक्कों पर एक ओर राजा का मुख और दूसरी ओर हाथी की मूर्त्ति है×। दूसरे प्रकार के ताँबे के सिक्कों पर एक ओर हाथी की और दूसरी ओर बैल की मूर्त्ति है+। ये दोनों प्रकार के सिक्के चौकोर हैं।

हेलियक्रेय के राजत्व काल के अन्तिम भाग में एशिया की जगली शक जाति ने बाह्लीक पर अधिकार कर लिया था।

---

* P M C, Vol 1, p 27 Nos 133-35, I M C Vol 1 p 13, Nos 1-2

† P M C Vol 1 p 28 Nos 136-44

‡ Ibid, p 29 Nos 145-47, I M C, Vol 1 p 13, Nos 3-4

× P M C, Vol 1, p 29 No 148, I M C Vol 1 p 14, No 6

+P M, C Vol 1 p 29 No 149, कलकत्ते के अजायबघर में हेलियक्रेय का एक और प्रकार का ताँबे का सिक्का है। यह गोलाकार है और इसके एक ओर राजा का मस्तक और दूसरी ओर घोड़े की मूर्त्ति है।

उसी समय से पश्चिम के यूनानियों के साथ पूरब के यूनानियों का सम्बन्ध टूट गया था और इसके वाद से पश्चिमी यूनानियों के इतिहास में पूर्वी यूनानी राज्यों का वर्णन बहुत कम मिलता है। हेलिक्रेय के वाद के यूनानी राजाओं में आन्तिआलिकिद, आपलदत, मेनन्द्र और हेरमय के नाम विशेष उल्लेख-योग्य हैं। सन् १९०९ में मालव देश के वेश नगर में एक शिलास्तम्भ मिला था। उस शिलास्तम्भ पर ईसा से पूर्व दूसरी शताब्दी का खुदा हुआ एक लेख है। उससे पता चलता है कि यह स्तम्भ वासुदेव के किसी गरुड़ध्वज और तक्षशिला निवासी भगवद्भक्त दिय (Dion) के पुत्र हेलिउदोर (Hellodors) नामक यवन दूत का वनवाया हुआ है। राजा आन्तिआलिकिद के यहाँ से राजा काशीपुत्र भागभद्र के यहाँ उनके राजत्व काल के चौदहवें वर्ष में हेलिउदोर आया था*। यह अन्तिआलिकिद और सिक्कोंवाला आन्तिआलिकिद दोनों एक ही व्यक्ति हैं। आन्तिआलिकिद के तीन प्रकार के चाँदी के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर पगड़ी बाँधे हुए राजा का मुख और दूसरी ओर सिंहासन पर बैठे हुए ज्युपिटर की मूर्त्ति, उनके दाहिने विजया देवी की मूर्त्ति और एक हाथी की मूर्त्ति है†। ऐसे सिक्कों के दो उप-

---

*Journal of the Royal Asiatic Society, 1909. p. 1055–56; Epigraphica Indica, Vol. X. App, p. 63 No. 669.

† P. M. C, Vol. 1. pp. 32–34; I. M. C. Vol. 1. p. 15–16.

विभाग हैं। पहले उपविभाग में मुकुट पहने हुए राजा की मूर्त्ति* और दूसरे उपविभाग में पगडी बाँधे हुए राजा की मूर्त्ति है†। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर शिरस्त्राण पहने हुए राजा का मुख और दूसरी ओर ज्यूपिटर, विजया और हाथी की मूर्त्ति है ‡। आन्तिआलिकिद् के दो प्रकार के ताँबे के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर ज्यूपिटर की मूर्त्ति और दूसरी ओर दो पिण्ड और ताल वृत्त की दो शाखाएँ है × । इसमें भी दो उपविभाग हैं। पहले उप विभाग के सिक्के गोलाकार+ हैं और दूसरे उपविभाग के चौकोर हैं-। दूसरे प्रकार के ताँबे के सिक्कों पर एक ओर मुकुट पहने हुए राजा का मस्तक और दूसरी ओर हाथी की मूर्त्ति है = । मुद्रातत्त्व के ज्ञाताओं के मतानुसार लिसिय के साथ आन्तिआलिकिद् का सम्बन्ध था, क्योंकि ताँबे के एक

---

* P M C, Vol 1 pp 33-34, Nos 184-89 I M C Vol 1 p 15, Nos 1-3

† P M C, Vol 1 pp 32-33 Nos 167-83, I M. C, Vol. I. pp, 15-16 Nos 4-16.

‡ P M C, Vol 1, p 34, Nos 190-92

× P M C Vol, 1 pp 34-35

+ Ibid, Nos 193-96, I M C. Vol I, p. 16 No 17

− P M C, Vol 1 p. 35 Nos 197-211, I M C Vol 1, p 16. Nos 18-23

= P M C, Vol 1 p 36, No, 212

सिक्के पर एक ओर यूनानी अक्षरों में लिसिय का नाम और दूसरी ओर खरोष्ठी अक्षरों में आन्तिआलिकिद का नाम है*।

आपलदत के कई प्रकार के सिक्के पंजाब और अफगानिस्तान में मिले हैं; परन्तु आपलदत के सम्बन्ध में अब तक किसी बात का पता ही नहीं लगा। कनिंघम का अनुमान है कि आपलदत एवुक्रतिद का पुत्र था†। विन्सेन्ट स्मिथ ने भी इस अनुमान को ठीक मान लिया है‡। कुछ लोगों का अनुमान है कि आपलदत नाम के दो राजा हुए हैं; परन्तु विन्सिन्ट स्मिथ × और ह्वाइट हेड + यह बात नहीं मानते। आपलदत के दो प्रकार के चाँदी के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथी और दूसरी ओर साँड़ की मूर्त्ति है ÷। ऐसे सिक्कों के दो उपविभाग हैं। पहले उपभिवाग के सिक्के गोलाकार = और दूसरे उपविभाग के चौकोर हैं**। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर

---

* Numismatic Chronicle, 1869, p. 300. pl. IX. 4.

† Ibid, Vol. X.-p.-66.

‡ I. M. C. Vol. 1, p. 18.

× Ibid, pp, 18–21.

\+ P. M. C, Vol. I. p. 7.

÷ Ibid, pp. 40–41; I. M. C. Vol. 1. pp. 18–19.

= Ibid, p. 18, Nos. 10–11; P. M. C., Vol. 1. p. 40. Nos. 231–32.

** Ibid, pp. 40–41, Nos. 233–53; I. M. C., Vol. 1. p. 19. Nos. 12–32.

मुकुट पहने हुए राजा का मुख और दूसरी ओर यूनानी देवता पेलास की मूर्त्ति है *। इनमें भी दो उपविभाग हैं। पहले उपविभाग पर Soter "त्राता" उपाधि† और दूसरे उपविभाग में Philopator उपाधि है‡। आपलदत के दो प्रकार के ताँबे के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार में एक ओर यूनानी देवता अपॉलो और दूसरी ओर एक त्रिपद वेदी है×। इनके भी दो विभाग हैं। पहले विभाग के सिक्के चौकोर+ और दूसरे विभाग के गोलाकार– हैं। दूसरे विभाग में जो कुछ लिखा है, उसके अनुसार ह्वाइटहेड ने उन सिक्कों के तीन उपविभाग किए हैं=। इस तरह के सिक्कों में से कई सिक्के बड़े और भारी हैं**। पहले विभाग के सिक्कों के भी इनके लेख के अनुसार ह्वाइटहेड ने दो उपविभाग किए हैं††। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर साँड की

---

* Ibid, p 18 Nos, 1-2, P M C Vol 1, pp 41-43

† Ibid, pp 41-42, Nos 254-63

‡ Ibid, pp 42-43, Nos 264-92

× I M C, Vol 1, p 20 P M C Vol, 1 pp 43-45;

+ Ibid, Nos 293-317, I M C Vol 1 p 20, No, 37;

– Ibid, Nos 33-36, P M C, Vol I, pp 46-47, Nos, 322-38

= Ibid pp 46-47

** Ibid, p 47, No, 333

†† Ibid, pp 47-49.

मूर्ति और दूसरी ओर त्रिपद वेदी है*। आपलदत के कुछ सिक्कों पर केवल खरोष्ठी अक्षर मिलते हैं†। कनिंघम ने बहुत ढूँढ़ने पर दो ग्रन्थों में आपलदत के नाम का उल्लेख पाया है ऐतिहासिक ट्रागस (Trogus Pompelus) ने भारत के यूनानी राजाओं में मेनन्द्र और आपलदत नाम के दो प्रसिद्ध राजाओं का उल्लेख किया है‡। ईसवी पहली शताब्दी के एक यूनानी नाविक ने लिखा है कि उस समय भरुकच्छ (भृगुकच्छ या भड़ौच) में आपलदत और मेनन्द्र के सिक्के चलते थे×।

मेनन्द्र के कई प्रकार के सिक्के अफगानिस्तान और भारत के भिन्न भिन्न स्थानों में मिले हैं। मैसन ने काबुल के उत्तर ओर बेग्राम नामक स्थान में मेनन्द्र के १५३ सिक्के पाए थे+ और कनिंघम ने मेनन्द्र के १००० से अधिक सिक्के एकत्र किए थे÷। भारत में मथुरा, रामपुर, आगरे के समीप भूतेश्वर और शिमले जिले के साबाथू नामक स्थान में मेनन्द्र के बहुत से सिक्के

---

* Ibid, p. 45. Nos. 318-21; I. M. C, Vol. 1. p. 21. No. 53.

† P. M. C. Vol. 1. p. 49.

‡ Numismatic Chronicle, 1870, p. 79.

× Periplus of the Erythraean Sea Edited by Dr. Schoff.

+ Numismatic Chronicle, 1870, p. 220, Wilson's Ariana Antiqua. p. 11.

÷ Numismatic Chronicle, Vol. X. p. 220.

मिले हैं। स्ट्रेबो (Strabo) ने आपलोदोरस (Apollodoros) रचित पारद देश के इतिहास के आधार पर लिखा है कि बाह्लीक के यूनानी राजाओं में से कुछ राजाओं ने सिकन्दर से भी अधिक राज्य जीते थे। और मेनन्द्र हाईपानिश्रा नदी पार करके पूर्व की ओर इसामस तीर तक पहुँचा था*। अब तक यह निश्चय नहीं हुआ कि इसामस नदी कहाँ है। कनिंघम का अनुमान है कि इसामस शोण का अपभ्रंश है†। डाक्टर कर्न ने गार्गी संहिता में यवन जाति के द्वारा साकेत, मथुरा, पचाल और पुष्पपुर वा पाटलिपुत्र पर आक्रमण होने का उल्लेख ढूँढ निकाला है‡। गोल्डस्टकर (Goldstucker) ने पतञ्जलि के महाभाष्य में यवनों द्वारा अयोध्या और माध्यमिक अथवा मध्य देश पर आक्रमण होने का उल्लेख ढूँढ निकाला है×। महाकवि कालिदास के मालविकाग्निमित्र नाटक में लिखा है

---

* Ibid, p 223

† Ibid, p 224

‡ ततः साकेतमाक्रम्य पचालान् मथुरां तथा।
यवना दुष्टविक्रान्ताः प्राप्स्यन्ति कुसुमध्वजम्॥
ततः पुष्पपुरे प्राप्ते कर्दमे (?) प्रथिते हिते (?)
आकुला विषयाः सर्वे भविष्यन्ति न संशयः॥

—Kern's बृहत्संहिता p 37

सम्भवतः यही मेनन्द्र का आक्रमण है। परन्तु श्रीयुक्त काशीप्रसाद जायसवाल का अनुमान है कि यह दिमित्रिय के आक्रमण की बात है।

× Goldstucker's पाणिनि p 230

कि जिस समय सुंग-वंशीय पुष्पमित्र का पोता वसुमित्र अश्व-मेध के घोड़े के साथ घूमने निकला था, उस समय सिन्धु के किनारे यवन घुड़सवारों की सेना ने उस पर आक्रमण किया था *। तिब्बत देश के ऐतिहासिक तारानाथ ने लिखा है कि पुष्पमित्र के राजत्व-काल में भारत पर सबसे पहले विदेशी जाति का आक्रमण हुआ था †। "मिलिन्द पंचहो" नामक पाली ग्रन्थ में वह कथोपकथन लिखा है जो शागल वा शाकल देश के मिलिन्द नामक राजा और बौद्धाचार्य्य नाग-सेन में हुआ था ‡। काश्मीर के कवि क्षेमेन्द्र के "बोधि-सत्त्वा-वदान कल्पलता" में "मिलिन्द" के स्थान में "मिलिन्द्र" मिलता है ×। ऐतिहासिक प्लूटार्क लिख गया है कि मेनन्द्र के मरने पर उसका भस्मावशेष भिन्न भिन्न नगरों में बँटा था +। मेनन्द्र और आपलदत के सिक्के ईस्वी पहली शताब्दी तक भड़ोच में चलते थे। उन सिक्कों का इतना अधिक प्रचार था कि ईस्वी आठवीं शताब्दी तक गुजरात के प्राचीन राजा लोग उनका अनुकरण

---

* मालविकाग्निमित्र (Bombay Sanskrit Series) पृ० १५३.

† Numismatic Chronicle Vol. X. p. 227.

‡ मिलिन्द पंचहो (परिषद ग्रन्थावली २२) पृ० ४–४०.

× Jonrnal of the Budhist Text Society, 1904, Vol. VII, pt. iii, pp. 1–6.

+ Numismatic Chronicle, Vol. X. p. 229.

करते थे। मेनन्द्र के पाँच प्रकार के चाँदी के सिक्के मिले हैं पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर मुकुट पहने हुए राजा का मस्तक और दूसरी ओर यूनानी देवता पेलास की मूर्त्ति है *। इनके छोटे और बडे इस प्रकार दो उपविभाग हैं। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर शिरस्त्राण पहने हुए राजा का मस्तक और दूसरी ओर पेलास की मूर्त्ति है †। इसके भी छोटे और बडे दो विभाग है। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर मुकुट पहने हुए और हाथ में शूल लिए हुए राजा का आधा शरीर और दूसरी ओर पैलास की मूर्त्ति है ‡। इसके भी तीन उपविभाग हैं--एक छोटे सिक्कों का, दूसरा बडे सिक्कों का और तीसरा उन सिक्कों का जिनमें राजा के मस्तक पर मुकुट के बदले शिरस्त्राण है ×। चौथे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर पैलास की और दूसरी ओर उल्लू की मूर्त्ति है +। पाँचवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर मुकुट पहने हुए राजा

---

* P M C Vol I, p 54 Nos 373-78, I, M C Vol 1, pp 23-24, Nos 25-45

† Ibid, pp 22-23, Nos 1-23, P M C, Vol 1, p 54 Nos 379-81

‡ Ibid, p 55 No 382 I M C, Vol 1, pp 24-26 Nos 46-47

× Ibid, p, 58 No 479

+ Ibid, p 26, Nos 77-78 P M C. Vol 1, p. 59 No 480.

का मस्तक और दूसरी ओर पदालुक देवमूर्ति है*। इन पाँच प्रकार के सिक्कों के अतिरिक्त मेनन्द्र के और भी दो प्रकार के सिक्के मिले हैं जो बहुत ही दुष्प्राप्य हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर शिरस्त्राण पहने हुए राजा का मस्तक और दूसरी ओर एक घुड़सवार की मूर्त्ति†; और दूसरे प्रकार के सिक्कों पर सवार के बदले में केवल घोड़े की मूर्त्ति है‡। साधारणतः मेनन्द्र के सात प्रकार के ताँबे के सिक्के दिखाई पड़ते हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर यूनानी देवता पैलास और दूसरी ओर विजया देवी की मूर्त्ति है×। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर शिरस्त्राण पहने हुए राजा का मस्तक और दूसरी ओर चर्म पर राक्षस का मुख है+। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर साँड़ की मूर्त्ति और दूसरी ओर त्रिपद वेदी है÷। चौथे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर मुकुट पहने हुए राजा का मुख और दूसरी ओर पैलास की मूर्त्ति

---

* Ibid, No. 481.

† Ibid, p. 63.

‡ Ibid,

× Ibid, pp. 59-60. Nos. 482-94; I. M. C. Vol. 1. p. 26, Nos. 78-82.

+ Ibid, Nos. 83-84; P. M. C., Vol 1. p. 60. Nos. 495-99.

÷ Ibid. p. 61, Nos. 500-02, I. M. C., Vol. 1, p. 27, No 594-95 A.

है*। पाँचवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर शिरस्त्राण पहने हुए राजा का मस्तक और दूसरी ओर पैलास की मूर्त्ति है†। छठे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथी का मस्तक और दूसरी ओर एक गदा है‡। सातवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर योद्धा के वेश में राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर एक बाघ की मूर्त्ति है×। इनके अतिरिक्त मेनन्द्र के ताँबे के कुछ दुष्प्राप्य सिक्के भी हैं, जिनकी सूची ह्वाइटहेड ने दी है। इनमें से छ प्रकार के सिक्के दूसरी तरह के सिक्के कहे जा सकते हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर चक्र और दूसरी ओर तालवृक्ष की शाखा है+। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर मुकुट पहने हुए राजा का मस्तक और दूसरी ओर हरक्यूलस का सिंहचर्म है–। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथी और दूसरी ओर अंकुश है=। चौथे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर सुअर का मस्तक और दूसरी ओर तालवृक्ष की

---

* P M C, Vol 1 p 61, Nos, 503-05

† P M C Vol 1, p 61, No, 506

‡ I M C Vol 1, p 27, Nos 85-93, P M C Vol 1, p 62, Nos 507-14

× Ibid, No 515

+ B M C, Vol XII 7

– P M C Vol 1, p 63, No X

= B M C, pl XXXI 11

हेरमय सम्भवतः भारत का अंतिम यूनानी राजा था; क्योंकि उसके ताँबे के कई सिक्कों पर एक ओर यूनानी भाषा में उसका नाम और दूसरी ओर खरोष्ठी अक्षरों और प्राकृत भाषा में कुषणवंशी राजा कुयुल कद्फिस का नाम है। इससे सिद्ध होता है कि जब शक जाति ने अफगानिस्तान और पंजाब पर अधिकार कर लिया था, उसके बाद भी उन देशों पर यूनानी राजाओं का अधिकार था। क्योंकि कुषणवंशी शक जाति के आक्रमण से पहले बहुत दिनों तक दूसरी शक जाति के राजाओं ने उत्तरापथ पर अधिकार कर रखा था। हेरमय के तीन प्रकार के चाँदी के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के चाँदी के सिक्कों पर एक ओर राजा और उसकी स्त्री 'केलियप' (Kalliope) की मूर्त्ति और दूसरी ओर घोड़े पर सवार राजा की मूर्त्ति है*। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर शिरस्त्राण पहने हुए राजा का मस्तक और दूसरी ओर सिंहासन पर बैठे हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति है†। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर पहली ओर शिरस्त्राण पहने हुए राजा के मस्तक के बदले में मुकुट पहने हुए राजा का मस्तक है‡। हेरमय के चार प्रकार के ताँबे के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्कों

---

* Ibid, p. 31, Nos. 1-2, P. M. C. Vol. 1, p. 86, Nos. 693-98.

† I. M. C., Vol. 1, p. 32, Nos. 2-9.

‡ Ibid, No. 1; P. M. C., Vol. 1, pp. 82-83, Nos. 648-62.

पर एक ओर मुकुट पहने हुए राजा का मस्तक और दूसरी ओर सिंहासन पर बैठे हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति है*। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा का मस्तक और दूसरी ओर विजया देवी की मूर्त्ति है†। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा का मस्तक और दूसरी ओर एक घोड़े की मूर्त्ति है‡। चौथे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा का मस्तक और यूनानी भाषा में राजा का नाम और उपाधि और दूसरी ओर मुकुट पहने हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति और खरोष्ठी अक्षरों और प्राकृत भाषा में "कुजुलकससकुषण यवुगसध्रम ठिदस" लिखा है× ।

---

* Ibid, pp 83-84, Nos 663-78, I M C Vol 1, pp 32-33 Nos 10-21A

† Ibid p 33, No 22, P M C Vol 1, p 85, Nos 682-92

‡ Ibid, p 84, Nos 679-81 I M C Vol 1, p 33, Nos, 23-26

× Ibid pp 33-34, Nos 1-15, P M C, Vol 1, pp 178-79, Nos 1-7

चौथा परिच्छेद

विदेशी सिक्कों का अनुकरण

(ख) शक राजाओं के सिक्के

ईसा के जन्म से प्रायः दो सौ वर्ष पहले तक उत्तरापथ पर केवल यूनानियों का ही आक्रमण नहीं हुआ था, बल्कि कई बार अनेक बर्बर जातियों ने भी भारत पर अपना प्रभुत्व जमाया था। प्राचीन मुद्राओं से इन सब जातियों के राजाओं के अस्तित्व का प्रमाण मिलता है। उत्तरापथ में बर्बर राजाओं के हजारों सिक्के मिले हैं। इन सब सिक्कों से मुद्रातत्त्वविद् लोगों ने कम से कम तीन भिन्न बर्बर राजवंशों का पता लगाया है। यद्यपि इन सब बर्बर जातियों के तुषार, गर्दभिल्ल आदि अलग अलग नाम थे, तथापि उत्तरापथ में इन सबको लोग शक ही कहते थे। जिस प्रकार मुगल साम्राज्य के अंतिम समय में पठानों के अतिरिक्त एशिया के अन्यान्य देशों के सभी मुसलमान मुगल कहलाते थे, उसी प्रकार मुसलमानों के आने से पहले भारतवासी सभी विदेशी जातियों को शक कहा करते थे। भविष्य पुराण आदि अपेक्षाकृत हाल के पुराणों से पता चलता है कि जम्बू द्वीप अर्थात् भारतवर्ष से सटा हुआ देश ही शक द्वीप है*। शक द्वीप का विवरण देखने से साफ

---

*Indian Antiquary, 1908, p.42; भविष्य पुराण, १४६ अध्याय

मालूम होता है कि किसी समय प्राचीन ईरान या फारस तक का प्रदेश शक द्वीप के अन्तर्गत माना जाता था। पहले मुद्रा तत्त्वविद् लोग शक जातीय राजाओं को दो भागों में विभक्त किया करते थे—प्राचीन शक और कुषण। परन्तु अब ये राजा लोग तीन भागों में विभक्त किए जाते हैं—शक, पारद और कुषण। जो जाति भारत के इतिहास में प्राचीन शक जाति कहा गई है, वह पहले चीन राज्य की सीमा पर रहा करती थी। जब ईयूचो जाति ने उस जाति को हरा दिया, तब उसने वहाँ से हटकर वक्षु नदी के उत्तर किनारे पर उपनिवेश स्थापित किया था*। एक बार फारस के हखामानीषीय वंश और यूनानी राजाओं के साथ इस जाति के लोगों का कुछ झगडा भी हुआ था†। वक्षु नदी का उत्तर तीर शक जाति का निवास स्थान था, इसलिये भारतवासी उसे शक द्वीप कहते थे और यूनानी लोग उसे सोगडियाना (Soghdiana) कहते थे।

मुद्रातत्त्वविद् लोग अनुमान करते हैं कि ईसा से पूर्व दूसरी शताब्दी के अन्त में वाह्लीक अथवा बैक्ट्रिया देश पर शक जाति ने अधिकार कर लिया था। चीन देश के कई इतिहासकार लिख गए हैं कि ईसा पूर्वाब्द १६५ के उपरान्त

---

* Indian Antiquary, 1908, p 32
† Indian Coins, p 7

ईयूची जाति ने शक लोगों पर आक्रमण करके उन्हें बाह्लीक देश पर अधिकार करने के लिये विवश किया था *। शक राजाओं ने पहले पूर्ववर्ती यूनानी राजाओं की मुद्रा का अनुकरण करना आरम्भ किया था † और तब पीछे से वे स्वयं अपने नाम से स्वतंत्र मुद्राएँ अंकित करने लगे थे। शक-वंशी राजाओं के जो सिक्के अब तक मिले हैं, उनमें से मोअर नाम का सिक्का सबसे अधिक प्राचीन है ‡। प्रायः ५० वर्ष पहले प्राचीन तक्षशिला के खँड़हरों में एक ताम्रलेख मिला था जिसमें मोग नामक एक राजा के १८ वें वर्ष का उल्लेख था ×। कुछ पुरातत्त्व लोग अनुमान करते हैं कि उक्त ताम्रपत्र मोग के राजत्व काल में किसी अज्ञात संवत् के १८ वें वर्ष में खोदा गया होगा +। दूसरे पक्ष के मत से यह ताम्रपत्र मोग के संवत् के १८ वें वर्ष का खोदा हुआ है ÷। ताम्रलिपि का मोग और सिक्कों पर का मोअ एक ही व्यक्ति हैं। परन्तु डाक्टर फ्लीट आदि कुछ पुरातत्त्ववेताओं के मत से मोग और मोअ दोनों अलग अलग व्यक्ति हैं =। तक्षशिला

---

* Iudian Antiquary, 1908, p. 32.

† Coins of Ancient India, p. 35.

‡ Indian Coins. p. 7.

× Epigraphia Indica, Vol, IV, p. 54.

+ Journal of the Royal Asiatic Society, 1914, p. 995.

÷ Ibid, p. 986.

= Ibid, 1907, pp. 1013-40.

की ताम्रलिपि और सिक्कों के अतिरिक्त मोग अथवा मोअ का अस्तित्व प्रमाणित करनेवाला और कोई प्रमाण अब तक नहीं मिला है। मोग अथवा मोअ के अब तक दो प्रकार के चाँदी के सिक्के मिले है। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथ में राजदंड लिए ज्यूपिटर की मूर्ति और दूसरी ओर विजया देवी की मूर्ति है *। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर सिंहासन पर बैठी हुई देव मूर्ति और दूसरी ओर विजया देवी को हाथ में लेकर खड़े हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति है †। मोग के १४ प्रकार के ताँबे के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथी का मस्तक और दूसरी ओर ग्रीक देवता मर्करी के हाथ का दण्ड (Caduceus) है ‡। दूसरे प्रकार के सिक्कों में एक ओर ग्रीक देवता आर्तमिस् और दूसरी ओर वृष या साँड की मूर्त्ति है ×। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर चन्द्र देवता और दूसरी ओर विजया देवी की मूर्त्ति है +। चौथे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर सिंहासन पर

---

* P M C Vol 1, p 98 Nos 1-3 I M C, Vol 1, p 39 Nos 6-6 A

† P M C Vol 1, p 98, No 4

‡ P M C, Vol 1, p 98 Nos 5-9, I M C, Vol 1 p 38 Nos 1-5

× Ibid, p 39, Nos 7-10, P M C, Vol 1, p 99, Nos 10-12

+ Ibid, Nos 13-14

बैठे हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति और दूसरी ओर नगर-देवता की मूर्त्ति है *। पाँचवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर ज्यूपिटर और एक किसी दूसरे देवता की मूर्त्ति और दूसरी ओर किसी और देवता की मूर्त्ति है †। छठे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर अपोलो और दूसरी ओर त्रिपद वेदी है ‡। सातवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर वरुण (Poseidon) और दूसरी ओर एक स्त्री की मूर्त्ति है। इस प्रकार के सिक्कों के दो उपविभाग हैं। प्रथम विभाग में वरुण के हाथ में त्रिशूल × और दूसरे विभाग में उसके बदले में वज्र + मिलता है। आठवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर गदाधारी देवमूर्त्ति और दूसरी ओर देवीमूर्त्ति है ÷। नवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोड़े पर सवार राजमूर्त्ति और दूसरी ओर विजया देवी की मूर्त्ति है =। दसवें प्रकार के सिक्कों पर विजया देवी की मूर्त्ति के बदले में किसी और अज्ञात देवी की मूर्त्ति है**। ग्यारहवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर एक हाथी की मूर्त्ति और दूसरी ओर

---

* Ibid, No. 15.
† Ibid, p. 100, No. 16.
‡ Ibid, Nos. 17-19.
× Ibid, Nos. 20-22.
\+ Ibid, p. 101, No. 23.
÷ Ibid, Nos. 25-26.
= Ibid, p. 102. No. 27.
** Ibid, No. 28.

उच्च आसन पर बैठे हुए राजा की मूर्त्ति है*। ये दोनों मूर्त्तियाँ चौकोर क्षेत्र में अंकित हैं। बारहवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथी की मूर्त्ति और दूसरी ओर साँड की मूर्त्ति है। इस प्रकार के सिक्कों के भी दो उपविभाग हैं। पहले विभाग में हाथी दौड़ता हुआ चला जाता है †, परन्तु दूसरे विभाग में वह धीरे धीरे चलता हुआ जान पड़ता है ‡। तेरहवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोड़े की मूर्त्ति और दूसरी ओर धनुष है ×। चौदहवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हरक्यूलस की और दूसरी ओर सिंह की मूर्त्ति है +।

रैप्सन, विन्सेन्ट स्मिथ आदि मुद्रातत्त्वविद् लोगों के मत से वोनोन (Vonones) मोअ या मोग के ही वंश का है अथवा दोनों एक ही वंश के हैं –। इन लोगों के मत के अनुसार वोनोन के बाद अय हुआ है =। किंतु श्रीयुक्त ह्वाइटहेड के मत के अनुसार अय के बाद वोनोन हुआ है**। उनका कथन है—'मुद्रातत्त्वविद् लोग साधारणतः अनुमान करते हैं कि मोअ

---

* Ibid, Nos 29-31, I M C, Vol 1 p 40 Nos 12-13
† P M C, Vol 1, p 102, Nos, 32-33
‡ Ibid, p 103, No 34
× Ibid, No 35
+ I M C, Vol 1, p 39, No 11
– Indian Coins, p 8
= I M C, Vol 1, pp 40-43
** P M C, Vol 1, pp 103-04

वा मोग के बाद अय हुआ है *। मोग के उपरान्त वोनोन कन्धार और सीस्तान का राजा हुआ था और अय ने पंजाब पर अधिकार प्राप्त किया था।" परन्तु यह मत साधारणतः सब लोग स्वीकृत नहीं करते। गार्डनर † और वोन्स त्वाले इस मत के प्रवर्त्तक हैं; किन्तु आगे चलकर यह मत विशेष प्रचलित न हो सका। मोअ वा मोग, वोनोन अथवा अय के राजत्वकाल की खुदी हुई कोई लिपि अथवा लेख अब तक नहीं मिला है‡। अतः दूसरे प्रमाणों के अभाव में स्मिथ और रैप्सन का उक्त मत ग्रहण करना ही उचित जान पड़ता है। वोनोन की कोई स्वतंत्र मुद्रा अब तक नहीं मिली है। जिन मुद्राओं पर उसका नाम मिला है, उनमें से कई मुद्राओं पर एक ओर उसका नाम और दूसरी ओर उसके भाई स्पलहोर का नाम है ×। एक ओर यूनानी अक्षरों में वोनोन का नाम और दूसरी ओर खरोष्ठी अक्षरों में स्पलहोर का नाम मिलता है। कई मुद्राओं में एक ओर वोनोन का नाम और दूसरी ओर स्पलहोर के पुत्र स्पलगदम का नाम भी मिलता है+। वोनोन

* Ibid, p. 92.

† B. M. C, p. xll.

‡ कुछ विद्वानों के मत से तक्षशिला में मिला हुआ ताम्रपट्ट मोग के राजत्वकाल का खुदा हुआ है।

× I. M. C, Vol. 1, pp. 40–41. Nos. 1–8; P. M. C., Vol. 1, pp. 141–142, Nos. 372–381.

+ Ibid, p. 142, Nos. 382–85; I. M. C., Vol. 1, p. 42. Nos. 1–3.

और स्पलहोर दोनों के नामवाले सिक्के दो प्रकार के हैं। पहले प्रकार के सिक्के चाँदी के बने हुए और गोलाकार हैं *। इन पर एक ओर घोड़े पर सवार राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में वज्र लिए ज्यूपिटर की मूर्त्ति मिलती है। दूसरे प्रकार के सिक्के ताँबे के बने हुए और चौकोर हैं। ऐसे सिक्कों पर एक ओर हरक्यूलस और दूसरी ओर पालास की मूर्त्ति है †। वोनोन और स्पलगदम दोनों के नामवाले सिक्के भी दो प्रकार के मिले है। वे सब भी सब प्रकार से वोनोन और स्पलहोर के चाँदी और ताँबेवाले सिक्कों के समान ही हैं ‡। ताँबे के कुछ सिक्कों पर एक ओर यूनानी अक्षरों में स्पलहोर का नाम और दूसरी ओर खरोष्ठी अक्षरों में उसके पुत्र स्पलगदम का नाम भी मिलता है ×। इस प्रकार के सिक्के भी दो तरह के हैं। एक गोलाकार और दूसरे चौकोर। इस प्रकार के कुछ सिक्कों पर स्पालिरिष नामक एक राजा का नाम भी मिलता है। कुछ सिक्कों पर एक ओर यूनानी अक्षरों

---

* Ibid, p 40 Nos 1-3, P M C Vol I, p 141, Nos 372-74

† Ibid, pp 141-42, Nos 375-81, I M C Vol 1, 41 Nos 4-8

‡ Ibid, p 42, Nos 1-3, P M C, Vol. 1, p 142, Nos 382-85

× Ibid, p, 143, Nos 386-93, I M C, Vol 1, p 41 Nos 1-3

में स्पालिरिष का नाम और उपाधि और दूसरी ओर—"महरज भ्रत भ्रमियस स्पलिरिशस" लिखा हुआ है *। ऐसे सिक्के सब प्रकार से वोनोन और स्पलहोर के नामोंवाले चाँदी के सिक्कों के समान हैं। कुछ सिक्कों पर यूनानी और खरोष्ठी दोनों लिपियों में स्पालिरिष का नाम और उपाधि दी हुई है †; परन्तु उनमें स्पालिरिष का सम्पर्क बतलानेवाली कोई बात नहीं है। इस प्रकार के सिक्के ताँबे के बने हुए और चौकोर हैं। इनमें एक ओर हाथ में शूल लिए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर सिंहासन पर बैठे हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति है। पर चाँदी और ताँबे के कुछ सिक्कों पर एक ओर स्पालिरिष और दूसरी ओर अय का नाम भी मिलता है ‡। इस प्रकार के चाँदी के सिक्के सब प्रकार से वोनोन और स्पलहार के नामोंवाले चाँदी के सिक्कों के समान ही हैं। ताँबे के सिक्के गोलाकार हैं। उनमें एक ओर घोड़े पर सवार राजा की मूर्त्ति और यूनानी अक्षरों में स्पालिरिष का नाम और उपाधि तथा दूसरी ओर खरोष्ठी अक्षरों में अय का नाम और उपाधि दी हुई मिलती है ×। इन दोनों ही प्रकार के सिक्कों पर

---

* P. M. C., Vol. 1, p. 143, No. 394.

† Ibid, p. 144, Nos. 397–98; I. M. C., Vol. 1, p. 42, Nos. 1–3.

‡ P, M. C; Vol. 1, p. 144.

× Ibid, No. 396.

खरोष्ठी अक्षरों में "महरजस," "महतकस," "अयस" लिखा रहता है। एक प्रकार के सिक्कों में एक ओर मोअ और दूसरी ओर अय का भी नाम है *। इससे मुद्रातत्त्वविद् ह्वाइटहेड अनुमान करते हैं कि योनान के साथ अय का कोई सम्बन्ध नहीं था। परन्तु हम यह पहले ही बतला चुके हैं कि एक ही सिक्के पर अय के साथ स्पालिरिष का नाम भी मिलता है। स्पालिरिष का सिक्का देखने से साफ पता चल जाता है कि उसके साथ वोनोन का निकट सम्बन्ध था। ऐसी अवस्था में यह नहीं माना जा सकता कि वोनोन के साथ अय का कोई सम्बन्ध नहीं था अथवा वह वोनोन के बाद हुआ था।

अय का न तो कोई खुदा हुआ लेख मिलता है और न किसी पश्चिमी अथवा पूर्वी ऐतिहासिक ग्रन्थ में उसका कोई उल्लेख ही मिलता है। परन्तु अय के कई प्रकार के सिक्के मिले हैं। विन्सेन्ट स्मिथ कहते हैं कि अय नाम के दो राजा हुए थे†। परन्तु ह्वाइटहेड अय नाम के एक से अधिक राजा का अस्तित्व मानने के लिये तैयार नहीं हैं ‡। सर जान मार्शल ने तक्षशिला के खँडहरों में से खरोष्ठी लिपि में खोदा हुआ चाँदी का जो पत्तर या लेख ढूँढ निकाला है, उसे देखने से पता चलता है कि अय ने एक सम्वत् चलाया था और खुपण

* Ibid, p 93

† I M C, Vol 1, pp 43, 52

‡ P M C Vol 1, p 93

(कुषण) वंशीय किसी राजा के राजत्वकाल में इस संवत् के १३५ वें वर्ष में तक्षशिला के निवासी एक व्यक्ति ने एक स्तूप में भगवान् बुद्ध का शरीरांश रखा था*। अय के तेरह प्रकार के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोड़े पर सवार हाथ में शूल लिए हुए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में राजदण्ड लिए हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति है†। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर ज्यूपिटर के हाथ में राजदण्ड के बदले वज्र है ‡। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर वज्र चलाने के लिये तैयार ज्यूपिटर की मूर्त्ति है ×। चौथे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथ में चाबुक लिए और घोड़े पर सवार राज-मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में विजया देवी को लिए हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति है+। पाँचवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोड़े पर सवार हाथ में शूल लिए हुए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में वज्र लिए हुए पालास की मूर्त्ति है÷।

---

*Journal of the Royal Asiatic Society, 1914, pp. 975-76. बहुत से लोगों को अय के चलाए हुए संवत् के सम्बन्ध में सन्देह है।

† P. M. C., Vol. 1, p. 104, No. 36.

‡ Ibid, Vol. 1. pp 104-05, Nos 41-53.

× Ibid, Vol. 1, p. 104, Nos. 37-40; I. M. C. Vol. 1, p. 43, Nos, 3-6.

+ P. M. C., pp. 106-12, Nos, 54-126.

÷ Ibid, pp, 112-14, Nos. 127-144; I. M. C., Vol. 1, p. 44, Nos. 12-16.

छठे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथ में चाबुक लिए घोडे पर सवार राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर पालास की मूर्त्ति है। पालास बाईं ओर खडा है *। सातवें प्रकार के सिक्कों पर पालास अपने दोनों हाथ फैलाए हुए खडा है †। आठवें प्रकार के सिक्कों पर पालास दाहिनी ओर खडा है ‡। नवें प्रकार के सिक्कों पर पालास दोनों हाथों में मुकुट लिए हुए उसे अपने मस्तक पर धारण कर रहा है ×। दसवें प्रकार के सिक्कों पर पालास के बदले वरुण (Poseidon) की मूर्त्ति है +। ग्यारहवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोडे पर सवार हाथ में शूल लिए हुए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में तालवृक्ष की शाखा लिए हुए देवी की मूर्त्ति है – । बारहवें प्रकार के सिक्कों पर देवी के हाथ में तालवृक्ष की शाखा के बदले त्रिशूल है = । तेरहवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर

---

* P M C , Vol 1, p 114, Nos 145-48

† Ibid, pp 114-15, Nos 149-65

‡ Ibid, p 116, No 166, I M C , Vol , 1, p 44, Nos 17-72

× Ibid, Nos 9-11, P M C , Vol 1, pp 116-17, Nos 167-76

+ Ibid, p, 177-78, I M C , Vol, 1, p, 43, No 7

– P M C Vol 1, pp 117-18 Nos 179-84

= I M C , Vol 1 p 43, No 8 ये सिक्के ग्यारहवें प्रकार के सिक्के भी हो सकते हैं।

ज्यूपिटर की और दूसरी ओर विजया देवी की मूर्त्ति है *। अय के अथ तक चौबीस प्रकार के ताँबे के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर उच्च आसन पर बैठे हुए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर यूनानी देवता हरमिस (Hermes) की मूर्त्ति है †। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर सिंहासन पर बैठे हुए डिमिटर (Demeter) की मूर्त्ति और दूसरी ओर हरमिस की मूर्त्ति है ‡। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हरमिस और दूसरी ओर डिमिटर की मूर्त्ति है ×। चौथे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर सिंह और दूसरी ओर डिमिटर की मूर्त्ति है +। पाँचवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोड़े पर सवार राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर डिमिटर की मूर्त्ति है ÷। ये पाँचो प्रकार के सिक्के गोलाकार हैं। छठे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर वरुण और दूसरी

---

* P. M. C. Vol. 1, p. 118, Nos. 185–87; I. M. C., Vol. 1, p. 43, Nos. 1–2.

† Ibid, p. 47, Nos. 60–74; P. M. C., Vol. 1, pp. 118-20. Nos. 188–208.

‡ Ibid, p. 120, Nos. 209–17; I. M. C., Vol. I, pp. 49–47, Nos. 49–59.

× P. M. C. Vol. 1, p. 121, Nos. 218–19.

+ Ibid, pp. 121–22, Nos. 220–30.

÷ Ibid, p. 122, Nos.231–40.

ओर एक स्त्री की मूर्त्ति है *। सातवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर गदाधारी देवमूर्त्ति और दूसरी ओर देवी की मूर्त्ति है †। आठवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोडे पर सवार राजमूर्त्ति और दूसरी ओर पालास की मूर्त्ति है ‡। नवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हरक्यूलस और दूसरी ओर एक घोडे की मूर्त्ति है ×। दसवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोडे पर सवार राजमूर्त्ति और दूसरी ओर पत्थर की चट्टान पर बैठे हुए हरक्यूलस की मूर्त्ति है +। ग्यारहवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोडे पर सवार राजमूर्त्ति और दूसरी ओर खडे हुए हरक्यूलस की मूर्त्ति है –। छठे प्रकार से ग्यारहवें प्रकार तक के सिक्के चौकोर हैं। बारहवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर साँड और दूसरी ओर सिंह की मूर्त्ति है =। तेरहवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथी और दूसरी ओर साँड की मूर्त्ति

---

* Ibid, pp 122–23, Nos 241–49, I, M C, Vol 1, p 48, Nos 76–77A

† P M C, Vol 1, p 123, No 250

‡ Ibid, p 124, Nos 251–53,

× Ibid, No 254

+ Ibid, No 255, I M C, Vol 1, p, 49, Nos 85–86

– P M C, Vol 1, p 125, No 256

= Ibid, pp 225–27, Nos 257–82, I M C Vol 1, pp 45–46, Nos 34–48A

है*। चौदहवें प्रकार का सिक्का भी इसी तरह का है, परन्तु वह चौकोर है†। पन्द्रहवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोड़े पर सवार राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर एक साँड़ की मूर्त्ति है‡। यह भी चौकोर है। सोलहवें प्रकार का सिक्का भी ऐसा ही है, परन्तु यह गोलाकार है×। सत्रहवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर ऊँट पर सवार राजा की मूर्त्ति है और दूसरी ओर एक चँवर की मूर्त्ति है+। यह भी चौकोर है। अट्ठारहवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति और दूसरी ओर साँड़ की मूर्त्ति है। यह गोलाकार है÷। उन्नीसवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर यूनानी देवता हेफाइस्टस (Hephaistos) और दूसरी ओर एक सिंह की मूर्त्ति है=। यह चौकोर है। वीसवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोड़े पर सवार राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर

---

* Ibid, p. 45, Nos. 23-33; P. M. C., Vol. 1, p. 127, Nos. 283-89.

† Ibid, p. 128, No. 289A.

‡ Ibid, pp. 128-29, Nos. 290-303; I. M. C., Vol. 1, p. 48, Nos, 79-84.

× P. M. C., Vol. 1, p. 192, No. 304.

+ Ibid, Nos. 305-07; I. M. C., Vol. 1, p. 48, No 78.

÷ P. M. C., Vol. 1, p. 129, No. 308.

= Ibid, p. 130, No. 309.

एक सिंह की मूर्त्ति है*। इक्कीसवें प्रकार के सिक्कों पर एक उच्चासन बैठे हुए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर पालास की मूर्त्ति है †। बाईसवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथी और दूसरी ओर सिंह की मूर्त्ति है‡। तेईसवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर विजया देवी को हाथ में लेकर खड़े हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति है ×। तेइसवें प्रकार के इन सिक्कों पर एक ओर यूनानी अक्षरों में और दूसरी ओर खरोष्ठी अक्षरों में अय का नाम और उपाधि दी हुई है। चौबीसवें प्रकार के सिक्के गोलाकार हैं। उन पर एक ओर घोड़े पर सवार राजा की मूर्त्ति और यूनानी अक्षरों में अय का नाम तथा उपाधि और दूसरी ओर पालास की मूर्त्ति तथा खरोष्ठी अक्षरों में—"इन्द्रवर्म पुत्रस अस्पवर्मस स्त्रतेगस जयतस" लिखा हुआ है। इनके अतिरिक्त अय के और भी दो एक प्रकार के ताँबे के दुष्प्राप्य सिक्के हैं+। मुद्रातत्त्व-विद् हाइटहेड ने उनकी सूची दी है–। चाँदी और ताँबे के कई सिक्कों पर एक ओर यूनानी अक्षरों में अय का नाम और

---

*I M C, Vol 1, p 49, No 87

† Ibid, p 48, No 75

‡ P M C Vol 1, p 131

× Journal of the Asiatic Society of Bengal N S, Vol VI p 562.

+I M C, Vol 1, pp 52-54, Nos 1-27, P M C, *Vol 1, pp 310-18*

–Ibid, p 131,

उपाधि तथा दूसरी ओर खरोष्ठी अक्षरों में अयिलिष का नाम और उपाधि है *। इस प्रकार के सिक्के बहुत ही दुष्प्राप्य हैं। इनमें तीन प्रकार के चाँदी के और एक प्रकार के ताँबे के सिक्के मिलते हैं। पहले प्रकार के चाँदी के सिक्कों में एक ओर घोड़े पर सवार और हाथ में शूल लिए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में तालवृक्ष की शाखा लिए हुए देवी की मूर्त्ति है †। दूसरे प्रकार के सिक्कों में दूसरी ओर हाथ में तालवृक्ष की शाखा लिए हुए देवी की मूर्त्ति के बदले हाथ में वज्र लिए हुए पालास की मूर्त्ति है ‡। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथ में चाबुक लिए हुए घोड़े पर सवार राजमूर्त्ति और दूसरी ओर विजया देवी को हाथ में लिए खड़े हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति है ×। ताँबे के सिक्कों पर एक ओर हरक्यूलस की मूर्त्ति और दूसरी ओर घोड़े की मूर्त्ति है +।

अब तक अयिलिष के दस प्रकार के चाँदी के सिक्के मिले हैं जो सबके सब गोलाकार हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर

---

* Ibid, p 132.

† Ibid, No. 319

‡ Numismatic Chronicle, 1890, p. 150, pl. X. 2 (Coins, of the Sakas, pl. VII, 2.)

× B. M C. p. 92, No.1, pl. XX, 3.

+ Journal of the Asiatic Society of Bengal, Numismatic Supplement, XIV. N. S., Vol. VI, p. 562.

एक ओर घोडे पर सवार राजमूर्त्ति और दूसरी ओर खड़े हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति है* । दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर विजया देवी को हाथ में धारण किए खड़े हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में शूल तथा तालवृत्त की शाखा लिए हुए दो सवार (Dioskouroi) हैं † । तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर विजया देवी को हाथ में लिए सिंहासन पर बैठे हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति और दूसरे प्रकार के सिक्कों की तरह दो सवारों की मूर्त्ति है ‡ । चौथे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोडे पर सवार राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में शूल लिए हुए दो सैनिकों की मूर्त्ति है × । पाँचवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोडे पर सवार राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर पालास की मूर्त्ति है + । छठे प्रकार के सिक्कों पर पालास की मूर्त्ति के बदले में लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति है – । सातवें प्रकार के सिक्कों पर लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति के बदले में किसी अज्ञात देवता और देवी की मूर्त्ति है = ।

---

* P M C , Vol 1 p 133, Nos, 320-22

† Ibid, Nos 323-24

‡ Ibid, p 134, Nos 325-26

× Ibid, Nos 327-28

+ Ibid, p 135, No 331, I M C Vol 1, p 49, Nos 1-2

– P M C Vol 1, p 135, Nos 332-33

= Ibid, p 334-35

आठवें प्रकार के सिक्कों पर देवता और देवी की मूर्त्तियों के बदले में नगर देवता की मूर्त्ति है* । नवें प्रकार के सिक्कों पर नगर देवता की मूर्त्ति के बदले हाथ में तालवृक्ष की शाखा लिए हुए देवी की मूर्त्ति है †। दसवें प्रकार के सिक्कों में देवता और देवी की मूर्त्तियों के बदले हाथ में शूल लेकर खड़े हुए सैनिक की मूर्त्ति है ‡। अयिलिष के सब मिलाकर बारह प्रकार के ताँबे के सिक्के मिले हैं, जिनमें से सात प्रकार के सिक्के प्रायः देखने में आते हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोड़े पर सवार राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर पत्थर की चट्टान पर बैठे हुए नंगे हरक्यूलस की मूर्त्ति है× । दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर खड़े हुए हरक्यू-लस की मूर्त्ति और दूसरी ओर एक घोड़े की मूर्त्ति है+ । तीसरे प्रकार के सिक्कों पर दूसरी ओर घोड़े के बदले में साँड़ की मूर्त्ति है÷ । चौथे प्रकार के सिक्कों पर साँड़ के बदले में हाथी की मूर्त्ति है= । पाँचवें प्रकार के सिक्कों पर

* Ibid, p. 136, No. 336.

† Ibid, pp. 136–38, Nos. 337–52, I. M. C. Vol. 1, pp. 49–50, Nos. 3–6.

‡ P. M. C., Vol. 1, p. 134, Nos. 329–30.

× Ibid, p. 138, Nos. 353–56.

+ Ibid, No. 357,

÷ Ibid, p. 139, Nos. 358–60; I. M. C., Vol. 1, p. 50, Nos. 7–8.

= P. M. C., Vol. 1, p. 139, Nos. 361–62.

एक ओर हाथी की मूर्त्ति और दूसरी ओर साँड की मूर्त्ति है *। छठे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर खड़े हुए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर देवी की मूर्त्ति है †। सातवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर खड़े हुए यूनानी देवता हेफाइस्टस (Hephaistos) की मूर्त्ति और दूसरी ओर एक सिंह की मूर्त्ति है‡। अयिलिष के पाँच प्रकार के दुष्प्राप्य सिक्कों की सूची मिस्टर ह्वाइटहेड ने तैयार की है ×।

मोअ, वोनोन, अय, अयिलिष आदि शक राजाओं के सिक्कों के उपरान्त मुद्रातत्त्वविद् लोग सिक्कों के आकार पर निर्भर होकर गुदुफर आदि पारदवंशी राजाओं के सिक्कों का समय निश्चित करते हैं।+ अय के एक प्रकार के ताँबे के सिक्के पर अय के साथ स्ट्रैटेगस (सेनापति, Strategos) इन्द्रवर्मा के पुत्र अस्पवर्मा का नाम मिलता है। गुदुफर के बहुत से सिक्के ऐसे हैं जो कई धातुओं के मेल से बने हैं। उनमें एक ओर गुदुफर का नाम और दूसरी ओर इन्द्रवर्मा के पुत्र अस्पवर्मा का नाम है ÷। मुद्रातत्त्वविद् ह्वाइटहेड ने इन सिक्कों का आकार देखते हुए निश्चित किया है कि ये सिक्के गुदुफर के

* Ibid, Nos 363-64

† Ibid, p 140, Nos 365-68

‡ Ibid Nos 369-71

× Ibid, p 141

+ Indian Coins, p 15,

÷ P. M. C, Vol 1, p 150

है*; क्योंकि इनके एक ओर जो यूनानी अक्षर हैं, वे इतने अशुद्ध हैं कि उन्हें ठीक ठीक पढ़ना असम्भव है। यदि मि० व्हाइटहेड का यह अनुमान ठीक हो तो अय अथवा अयिलिष के बहुत ही थोड़े समय के उपरान्त गुडुफर का काल निश्चित करना पड़ता है। हम पहले अपने "शकाधिकारकाल और कनिष्क" नामक प्रबन्ध में दिखला चुके हैं कि गुडुफर के "तख्ते बहाई" वाले शिलालेख के अक्षर कनिष्क और हुविष्क के राज्यकाल के खरोष्ठी अक्षरों की अपेक्षा प्राचीन नहीं हैं†। परन्तु ईसाई धर्मशास्त्रों पर विश्वास रखते हुए पाश्चात्य विद्वान् यह मत ग्रहण नहीं कर सकते‡। कहते हैं कि ईसा का शिष्य टामस गुडुफर के राज्यकाल में भारत में आया था। इसी प्रवाद के आधार पर वे लोग ईसा की पहली शताब्दी के प्रथमार्द्ध में गुडुफर का समय निश्चित करना चाहते हैं×। परन्तु प्रत्नलिपितत्त्व के फल के अनुसार यह असम्भव है। सिक्कों के अतिरिक्त ईसा के शिष्य टामस के बनाए हुए "हैम प्रवाद" (Legenda Aurea—Golden Legend) नामक धर्मप्रचार सम्बन्धी ग्रन्थ में+ और "तख्ते-बहाई" नामक स्थान में मिले हुए किसी

---

* Ibid, Foot Note, 1.

† Indian Antiquary, 1908, pp. 47–48; साहित्य-परिषद्-पत्रिका, १४वाँ भाग, अतिरिक्त संख्या पृ० ३५.

‡ Journal of the Royal Asiatic Society, 1907, p. 1039.

× Bishop Medlycott's India and the Apostle Thomas, pp. 1–17.

+V. S. Smith's Early History of India, pp. 231–32.

संवत् के १०३ रे वर्ष के और गुदुफर के राजत्वकाल के २६ वें वर्ष में खुदे हुए एक शिलालेख में* गुदुफर का नाम मिला है। गुदुफर का चाँदी का कोई सिक्का अभी तक नहीं मिला। हाँ, कई धातुओं के मेल से और ताँबे के बने हुए उसके बहुत से सिक्के मिले हैं। उसके मिश्र धातुओं के बने हुए सिक्के सात प्रकार के हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोड़े पर सवार राजमूर्त्ति और दूसरी ओर खड़े हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति है †। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर ज्यूपिटर की मूर्त्ति के बदले में पालास की मूर्त्ति है ‡। इन दोनों प्रकार के सिक्कों पर यूनानी और खरोष्ठी दोनों अक्षरों में गुदुफर का नाम और उपाधि दी हुई है। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोड़े पर सवार राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर खड़े हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति है, किन्तु खरोष्ठी अक्षरों में— "अयतस पतरस दुध्रवर्मपुत्रस खनेगमस अस्पवर्मस" लिखा हुआ है ×। चौथे और पाँचवें प्रकार के सिक्कों पर दूसरी ओर खरोष्ठी अक्षरों में गुदुफर के नाम और उपाधि के बाद "सस" नामक एक राजा का नाम मिलता है। यह "सस" सेनापति

---

* Journal Asiatique, 8 me Serie, tom 15, 1890, pt 1, p 119, et la planche

† P M C, Vol 1, 146 Nos 1-7

‡ Ibid, p 150, No 38, I M C Vol 1, p 54 No 1

× P M C Vol 1, p 150, Nos 35-37.

अस्पवर्मा का भतीजा था; क्योंकि तक्षशिला के खँडहरों में मिले हुए चाँदी के एक सिक्के पर "महरजस अस्पभत पुत्रस प्रतरस ससस" लिखा हुआ है *। चौथे प्रकार के सिक्के सब बातों में पहले प्रकार के सिक्कों की तरह के ही हैं। अन्तर केवल इतना ही है कि चौथे प्रकार के सिक्कों में जिस ओर खरोष्ठी लिपि है, उसी ओर गुडुफर के नाम के बाद सस का नाम भी है †। पाँचवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोड़े पर सवार राजमूर्त्ति और दूसरी ओर विजया देवी को हाथ में लेकर खड़े हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति है ‡। छठे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोड़े पर सवार राजमूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में त्रिशूल लिए हुए महादेव की मूर्त्ति है ×। सातवें प्रकार के सिक्के छठे प्रकार के सिक्कों के समान ही हैं। अन्तर केवल इतना ही है कि सातवें प्रकार के सिक्कों में शिव के दाहिने हाथ में नहीं बल्कि बाएँ हाथ में त्रिशूल है +। साधारणतः गुडुफर के तीन प्रकार के ताँबे के सिक्के मिलते हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा का मस्तक और

---

* Journal of the Royal Asiatic Society, 1914, p. 980.

† P. M. C., Vol. 1, pp. 147–48, Nos. 8–19; I. M. C., Vol. 1, pp. 54–55, Nos. 2–6.

‡ Ibid, p. 55, Nos. 7–11; P. M. C. Vol. 1, pp. 148–49, Nos. 20–34.

× Ibid, p. 151, Nos. 40–44.

\+ Ibid, p. 152, Nos. 45–46.

दूसरी ओर पालास की मूर्त्ति है*। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा का मस्तक और दूसरी ओर विजया देवी की मूर्त्ति है†। ये दोनों प्रकार के सिक्के गोल हैं। तीसरे प्रकार के सिक्के चौकोर हैं और इनमें एक ओर घोडे पर सवार राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर गुदुफर का चिह्न या लांछन है‡। इसके अतिरिक्त गुदुफर के ताँबे के और भी कई दुष्प्राप्य सिक्के हैं जिनकी सूची मुद्रातत्त्वविद् ह्वाइटहेड ने तैयार की है×।

गुदुफर के उपरान्त अवदगश (Abdagases) नामक एक और राजा का राज्य हुआ था। यह गुदुफर का भतीजा था, पर अभी तक इस बात का पता नहीं लग सका है कि यह गुदुफर के कितने दिनों बाद सिंहासन पर बैठा था। किसी ऐतिहासिक ग्रन्थ अथवा शिलालेख में भी अब तक अवदगश का नाम नहीं मिला है। इसके दो प्रकार के मिश्र धातुओं के और एक प्रकार के ताँबे के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोडे पर सवार राजमूर्त्ति और दूसरी ओर ज्यूपिटर की मूर्त्ति है+। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक

* Ibid, p 151 Nos 39-41

† I M C, Vol 1 p 56, Nos 12-18, P M C Vol 1, p 152, Nos, 47-59

‡ Ibid, p 153

× Ibid

+ I M C, Vol 1 p 57, No 2, P M C Vol 1, pp 153-54, Nos 61-63

ओर घोड़े पर सवार राजमूर्त्ति और दूसरी ओर विजया देवी को हाथ में लेकर खड़े हुए ज्यूपिटर की मूर्त्ति है*। इन दोनों प्रकार के सिक्कों पर एक ओर यूनानी अक्षरों में अवदगश का नाम और उपाधि और दूसरी ओर खरोष्ठी अक्षरों में "महरजस रजतिरजस गदफर भ्रतपुत्रस अवदगश" लिखा हुआ है†। ताँबे के सिक्कों पर एक ओर राजा का मस्तक और दूसरी ओर विजया देवी की मूर्त्ति है। परन्तु उनमें खरोष्ठी लिपि में "गदफर भ्रतपुत्रस" विशेषण नहीं मिलता‡। इसके बाद अर्थाग्न (Orthagnes) या गुद्रण ×, सनवर + (Sanabares) पकुर ÷ (Pakores) आदि राजाओं के सिक्कों के आधार पर उन लोगों का अस्तित्व स्वीकार करना पड़ता है। अर्थाग्न या गुद्रण के साथ संभवतः गुडुफर का कोई सम्बन्ध था; क्योंकि इनके कई ताँबे के सिक्कों पर "गुदफरस गुद्रण" विशेषण है। = परन्तु अब तक यह निर्णय नहीं हुआ कि इस विशेषण का अर्थ क्या है।

---

* Ibid, p. 154, Nos. 64-65; I. M. C., Vol. 1, p. 57, No. 3.

† पहले प्रकार के सिक्कों में "रजतिरजस" के बदले "एतरस" लिखा है।

‡ I. M. C., Vol. 1, pp. 154-55, Nos. 66-71.

× Ibid, pp. 155-56; I. M. C. Vol. 1. pp. 57-58.

\+ B. M C., p. 113.

÷ I. M. C., Vol. 1, p. 58, Nos. 1-8; P. M. C. Vol. 1, pp. 155-57, Nos. 76-81.

= Ibid, p. 155, Note 1.

मोश्र, श्रय श्रादि पारद वशीय राजाओं के अध.पतन के समय उनके प्रादेशिक शासनकर्त्ताओं ने अपने नाम से सिक्के चलाना आरम्भ कर दिया था*। इनमें से जिहुनिय (Zeionises), आर्त के पुत्र खरउस्त (Kharahostes), हगान, हगामाष, राजुबुल वा राजुल और शोडास के सिक्के मिले हैं। इनमें से राजुबुल और शोडास के नामों का पता मथुरा में मिले हुए कई शिलालेखों से चलता है†। इन सब शिलालेखों के अक्षरों को देखने से साफ मालूम होता है कि राजुबुल और शोडास वास्तव में कनिष्क, हुविष्क और वासुदेव आदि कुषणवशीय राजाओं के पहले हुए थे और सभवत ईसा से पूर्व पहली शताब्दी के बाद हुए थे। जिहुनिय के चाँदी और ताँबे के सिक्के मिले हैं। चाँदी के सिक्कों पर एक ओर घोडे पर सवार राजमूर्त्ति और दूसरी ओर नगर देवता के द्वारा राजा के अभिषेक का चित्र है‡। इन सब सिक्कों पर दूसरी ओर खरोष्ठी अक्षरों में "मणिगुलस छत्रपस पुत्रस छत्रपस जिहुनिअस" लिखा हुआ है। जिहुनिय के दो प्रकार के ताँबे के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक

* Indian Coins pp 8–9

† Epigraphia Indica, Vol II, p 199, No 2, Ibid, Vol, IX, p 246, Cunningham, Archaeological Survey Reports, Vol XX, p 48, pl. V 4

‡ P M C Vol, 1, p 157, Nos 82–83, I M, C, Vol 1, pp 58–59, No I

ओर एक साँड़ और दूसरी ओर एक सिंह की मूर्त्ति है*। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथी और दूसरी ओर साँड़ की मूर्त्ति है†। खरउस्त के केवल ताँबे के सिक्के मिले हैं जो दो प्रकार के हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोड़े पर सवार राजमूर्त्ति और दूसरी ओर सिंह की मूर्त्ति है‡। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर सिंह की मूर्त्ति के बदले में देवमूर्त्ति है×। इन दोनों प्रकार के सिक्कों पर दूसरी ओर खरोष्ठी अक्षरों में "छत्रपस प्र खरउस्तस अटस पुत्रस" लिखा हुआ है। हगान, हगामाष, राजुवुल और शोडाश के सिक्के अधिक संख्या में मथुरा में ही मिले हैं; इसी लिये ये सब लोग मथुरा के छत्रप (Satrap) प्रसिद्ध हुए हैं। ताँबे के कई सिक्कों पर हगान और हगामाष दोनों के नाम एक साथ मिलते हैं+; और ताँबे के कुछ सिक्कों पर केवल हगामाष का ही नाम मिलता है÷; इन सब सिक्कों पर यूनानी लिपि के चिह्न नहीं मिलते। राजुवुल के मिश्र धातु के सिक्के मिले हैं

---

* Ibid, p. 59. Nos. 2-7; P. M, C., Vol. 1, p. 158. Nos, 84-90.

† Ibid, No, III.

‡ Ibid, p. 159, Nos, 91-92,

× Ibid, No, 93.

+ I. M. C. Vol. 1, p. 195, Nos. 1-6; Cunningham's Coins of Ancient India, p. 87.

÷ Ibid, I. M. C., Vol. 1, pp. 195-96, Nos. 1-10.

जिनमें ताँबा और सीसा दोनों धातुएँ हैं। मिश्र धातुओं के इन सिक्कों पर एक ओर राजा का मस्तक और दूसरी ओर पालास की मूर्त्ति है *। ताँवे के सिक्कों पर दोनों ओर देवी की मूर्त्ति है †। सीसे के सिक्कों पर एक ओर सिंह और दूसरी ओर हरक्यूलस की मूर्त्ति है‡। राजुवुल के सिक्कों पर एक ओर अशुद्ध यूनानी लिपि मिलती है। मथुरा में मिले हुए एक लेख से पता चलता है कि शोडास राजुवुल का पुत्र था×। शोडास के एक प्रकार के ताँबे के सिक्के मिले हैं। इनमें एक ओर किसी देवी की मूर्त्ति और दूसरी ओर लक्ष्मीकी मूर्त्ति है+। इन सब सिक्कों पर यूनानी अक्षरों के चिह्न नहीं मिलते।

मुद्रातत्त्वविद् लोग हेरअ (Heraos) ÷, हिरकोड (Hyrkodes)=, सपलेज (Sapaleiyes)**, सेइगाचारी

---

* P M C, Vol 1, p 166, Nos 130-32, I M. C, Vol 1, p 196, Nos 1-2

† Ibid, No 3

‡ P M C Vol 1, p 166, No 133

× Cunningham's Archaeological Survey Reports, Vol XX, p 48, Coins of Ancient India, p-87

+ I M C Vol 1, pp 196-97, Nos 1-6

÷ P M. C., Vol 1, pp 163-64, Nos 115-17, I M C Vol 1, p 94, No 1

= Ibid, pp 93-94, Nos 1-11, P M C., Vol 1, pp 164-65, Nos 118-28

** Ibid, p 166, I M C, Vol 1, p 94, Nos 1-2

(Phseigacharis) * आदि अनेक राजाओं के नाम सिक्कों की तालिका में प्रविष्ट करा देते हैं। परन्तु अब तक इस बात का कोई प्रमाण नहीं मिला है कि ये सब राजा भारतीय थे। इन लोगों के सिक्कों में केवल यूनानी भाषा और यूनानी अक्षरों का ही व्यवहार है। इसलिये संभवतः ये लोग शकस्तान अथवा फारस के शकजातीय राजा थे। पंजाब और अफगानिस्तान में एक प्रकार के ताँबे के सिक्के मिलते हैं। उनमें से अधिकांश सिक्कों पर केवल यूनानी अक्षर ही मिलते हैं †। लेकिन किसी किसी सिक्के पर यूनानी और खरोष्ठी दोनों वर्णमालाएँ मिलती हैं‡। इन सब सिक्कों पर राजा की केवल उपाधि मिलती है, नाम नहीं मिलता। रैप्सन ने इन्हें कुषण-वंशीय राजा बतलाया है ×। परन्तु विन्सेन्ट स्मिथ और ह्वाइट-हेड ने पारदवंशीय राजाओं की जो सूची दी है, उसी में इन सब सिक्कों का भी विवरण दिया है +। मुद्रातत्त्वविषयक ग्रन्थों में ये राजा नामहीन राजा कहे जाते हैं ÷।

---

* P. M. C. Vol. 1, p. 166, No. 129.

† Ibid, p. 160, Nos. 94–95; pp. 161–63, Nos. 100–12.

‡ Ibid, pp. 160–61, Nos. 96–99; I. M. C., Vol. 1, p. 61, Nos. 32–34.

× Indian Coins, p. 16.

+ I. M. C., Vol. 1, p. 59; P. M. C. Vol. 1, p. 160.

÷ Indian Coins, p. 16.

पाँचवाँ परिच्छेद

विदेशी सिक्कों का अनुकरण

(ग) कुषणवंशी राजाओं के सिक्के

पाश्चात्य ऐतिहासिक जस्टिन (Justin) लिख गया है कि ईसा से पूर्व दूसरी शताब्दी में भिन्न भिन्न शक जातियों के आक्रमण के कारण वाह्लीक (Bactria) और शक स्थान (Soghdiana) से यूनानी राजाओं का अधिकार उठ गया था। चीन देश के प्रथम हन् राजवंश के इतिहास से पता चलता है कि ईसा से पूर्व दूसरी शताब्दी में वाह्लीक पर आक्रमण करनेवाली बर्बर जाति का नाम इयूची था। यह जाति पहले चीन देश की उत्तर-पश्चिमी सीमा पर रहा करती थी। उसके पास ही हिंग नू नामक एक और पराक्रान्त जाति रहती थी। बाद में यही जाति पश्चिम में हन् (Hun) और भारत में हूण नाम से प्रसिद्ध हुई थी। ईसा से पूर्व सन् २०१ और १६५ में इयूची जाति को हिंग नू जाति ने हराया था, जिसके कारण उसे अपना पुराना निवासस्थान छोड़ना पड़ा था। इयूची लोगों ने पश्चिम की ओर भागकर वक्षु (Oxus) नदी के किनारे पर अधिकार किया था। चीन के राजदूत चाङ कियान ने ईसा से पूर्व सन् १२६ और १५५ के बीच में

किसी समय उन लोगों को वक्षु नदी के उत्तर किनारे पर देखा था। इसके थोड़े ही दिनों बाद इयूची लोगों ने वक्षु नदी पार करके वाह्लीक देश की राजधानी पर अधिकार कर लिया था। उस समय उन लोगों का अधिकार पश्चिम में पारद राज्य तक और पूर्व में काबुल की तराई तक था। उस स्थान पर ईयूची जाति छोटे छोटे पाँच राज्यों में विभक्त हो गई थी। इस घटना के प्रायः सौ वर्ष बाद इयूची जाति की कुई-शुयाङ् शाखा के अधिपति किउ चीउ किउ ने इयूची जाति की पाँचों शाखाओं को एकत्र करके हिन्दूकुश पर्वत के पूर्व ओर के कुछ प्रदेश पर अधिकार कर लिया था। जब ८० वर्ष वल अवस्था में किउ चीउ किउ की मृत्यु हो गई, तब उसके येनकाउ चिङताई ने भारत पर अधिकार करके अपने सेना पतियों को भिन्न भिन्न प्रदेशों पर शासन करने के लिये नियुक्त किया था। चीन देश के द्वितीय हन् राजवंश के इतिहास में भारत पर इयूची जाति के अधिकार का विवरण दिया हुआ है। जब पाश्चात्य विद्वानों ने आर्मेनिया देश के प्राचीन इतिहास में लिखे हुए कुषणवंश और चीन के इतिहास में लिखे हुए कुई-शुयाङ वंश का एक ही ठहराया, तब निश्चित हुआ कि काबुल से यूनानी राज्य उठानेवाला किउ चिउ किउ और सिक्कोंवाला कुजुलकदफिस या कुयुलकदफिस दोनों एक ही व्यक्ति हैं *।

*White Huns and Kindred Tribes in the History of the Northwest-Frontier. Indian Antiquary, 1905, pp. 75-76.

मुद्रातत्त्व के ज्ञाताओं का अनुमान है कि कुयुलकस, कुयुलकफस और कुयुलकदफिस तीनों नाम एक ही व्यक्ति के हैं*। किउ लिउ किउ का पुत्र येन्‌काउचिङ्‌ताई और सिक्कोंवाला विमकफिश वा Oo-mo Kadphises एक ही व्यक्ति हैं। विमकफिश वा विमकदफिस के उत्तराधिकारियों के सम्बन्ध में पुरातत्त्ववेत्ताओं में मतभेद है। रैप्सन, टामस, स्मिथ आदि विद्वानों के मतानुसार विमकदफिस का उत्तराधिकारी कनिष्क था और उसके बाद वासिष्क, हुविष्क और वासुदेव ने कुषण साम्राज्य का अधिकार प्राप्त किया था†। फ्लीट, कनेडी आदि पुरातत्त्ववेत्ता कहते हैं कि कनिष्क से वासुदेव तक के कुषण राजा कुयुलकदफिस से पहले हुए थे ‡। "शकाधिकार काल और कनिष्क" नामक निबन्ध में हमें इस विषय में फ्लीट और केनेडी का मत ठीक नहीं जान पड़ा, इसलिये हमने रैप्सन और स्मिथ का ही मत ग्रहण किया है ×।

मुद्रातत्त्वविद् लोग एकमत होकर यह बात मानते हैं कि

---

* I M C, Vol 1, p 173

† Journal of the Royal Asiatic Society, 1913, p 912, India Coins, pp 16-18, I M C, Vol 1, pp 65-69

‡ Journal of the Royal Asiatic Society, 1913, pp 969-71

× Indian Antiquary, 1908, p 50, साहित्य परिषद् पत्रिका १४ वाँ भाग, अतिरिक्त संख्या, पृ० १६।

कुषणवंशी राजाओं के सोने के सिक्के* तौल और आकार में रोम के सोने के सिक्कों के समान थे। रोम के सोने के सिक्के जूलियस सीजर के राजत्व काल से ही ठीक तरह से बनने लगे थे। केनेडी ने यह प्रमाणित करने की चेष्टा की है कि कनिष्क के सोने के सिक्के जूलियस सीजर के सोने के सिक्कों की अपेक्षा पुराने हैं और वे सिक्के बनाने की माकिदिनीय (Macedonion) रीति के अनुसार बने हैं। इसलिये कुषणवंशी सोने के सिक्के रोम के सोने के सिक्कों का अनुकरण नहीं हो सकते†।

कुयुल वा कुजुलकद्फिस के केवल ताँबे के ही सिक्के मिले हैं। उसके कई सिक्के हेरमय के एक प्रकार के ताँबे के सिक्कों के समान हैं। उन पर एक ओर राजा का मस्तक और दूसरी ओर हरक्यूलस की मूर्त्ति है; और यूनानी अक्षरों में हेरमय का नाम और दूसरी ओर खरोष्ठी अक्षरों में कुयुलकद्फिस का नाम है‡। इससे मुद्रातत्त्वविद् अनुमान करते हैं कि हेरमय को अपने राजत्व के अंतिम काल में कुषण राज्य की अधीनता स्वीकृत करने के लिये बाध्य होना पड़ा था। कुयुलकद्फिस के समय का खुदा हुआ कोई लेख अब तक नहीं मिला। चीन के ऐतिहासिकों की बातों के आधार पर कहा जा सकता

---

* Journal of theRoyal Asiatic Society, 1913, p. 941.

† Ibid, 1912, p. 999; 1913, p. 935.

‡ P. M. C , Vol. 1, pp. 178-179, Nos. 1-7, I. M. C., Vol. 1, pp. 33-34, Nos, 1-15.

है कि कुयुलकदफिस ने ईसवी पहली शताब्दी के प्रारम्भ में ही इयूची जाति की पाँचों शाखाओं को एकत्र करके काबुल पर अधिकार किया था। पहले स्मिथ ने कहा था कि कुयुल कदफिस ईसवी पहली शताब्दी के मध्य भाग में अनुमानत सन् ४५ में सिंहासन पर बैठा था*। परंतु पीछे से उन्होंने यह मत छोड़कर हमारा ही मत ग्रहण किया। टामस ने भी यही मत ग्रहण किया है†। क्योंकि उन्होंने यह माना है कि किउचिउकिउ ने ८० वर्ष की अवस्था में अनुमानत ईसवी सन् ४० में शरीर-त्याग किया था‡।

कुयुलकदफिस के नाम के छ प्रकार के ताँबे के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हेरमय का मस्तक और दूसरी ओर खड़े हुए हरक्यूलस की मूर्ति है। इनके दोनों ओर कुयुलकदफिस का नाम और उपाधि है ×। इस तरह के सिक्के सब प्रकार से हेरमय और कुयुलकदफिस दोनों के नामोंवाले सिक्कों के समान हैं। केवल यूनानी अक्षरों में हेरमय के नाम और उपाधि के बदले में कुयुलकदफिस का नाम और उपाधि दी है। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर

---

* I M C Vol 1, p 64

† Early History of India (3rd Edition) pp 250-251, Note 1

‡ Journal of the Royal Asiatic Society, 1913, p 629

× P M C Vol 1, p 179 Nos 8-15, I M C, Vol 1, pp 65-66 No 1-4

शिरस्त्राण पहने हुए राजा का मस्तक और दूसरी ओर माकिदिन देश की पैदल सेना की मूर्त्ति है*। तीसरे प्रकार के सिक्के रोम के सम्राट् आगस्टस के सिक्कों के समान हैं। उन पर एक ओर आगस्टस का मस्तक और दूसरी ओर उच्चासन पर बैठे हुए राजा की मूर्त्ति है†। चौथे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर साँड़ और दूसरी ओर ऊँट की मूर्त्ति है‡। पाँचवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर आगस्टस का मस्तक और दूसरी ओर यूनान देश की विजया देवी की मूर्त्ति है×। छठे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर अभय वा वरद आसन से बैठे हुए बुद्ध की और दूसरी ओर ज्यूपिटर की मूर्त्ति है+। ताँबे के इन सब सिक्कों पर जिस यूनानी भाषा का व्यवहार हुआ है, वह बहुत ही अशुद्ध है। कदफिस को Kadphizou अथवा Kadaphes लिखा है÷। खरोष्ठी अक्षरों में कदफिस के नाम के पहले वा पीछे "कुषणयवुगस ध्रमठदिस" लिखा है। इन सब सिक्कों पर कदफिस का नाम अलग अलग तरह से लिखा है:—

---

* Ibid, p. 66, No 5.

† Ibid, pp. 66-67, Nos, 6-15, P. M. C., Vol. I, p. 181. Nos. 24-28.

‡ Ibid, p. 180, Nos. 16-23; I. M. C; Vol. 1, p. 67, Nos, 16-24

× Cunnigham's Coins of the Kushans, p. 65.

+ P. M. C., Vol. 1, pp. 181-82, Nos. 29-30,

÷ Ibid, pp. 178-181.

(१) महरयसरयरयस देवपुत्रस कुयुलकरकफ्सस

(२) कुयुलकरकपस महरयस रयतिरयस

(३) महरजस महतस कुषण कुयुलकफ्स

(४) महरजस रजतिरयस कुयुलकफ्स*

(५) (महरजस रजतिरजस) कुजुलकलस कुषण यवुगस ध्रमठिदश†।

कुयुलकदफिस के पुत्र येन काउ त्रिट ताई या विमकद फिस के राजत्वकाल से सम्भवत कुषण राजा लोग सोने के सिक्के बनवाने लगे थे। विमकदफिस के सोने के कई बहुत बड़े बड़े सिक्के मिले हैं। ऐसे पाँच प्रकार के सोने के सिक्के देखने में आते हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा शिरस्त्राण और बहुत बड़ा परिच्छेद पहने हुए खाट पर बैठा है और दूसरी ओर महादेव हाथ में त्रिशूल लिए बैल के पास खड़े हैं। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा मुकुट और शिरस्त्राण पहने हुए मेज पर बैठा है और दूसरी ओर महादेव पहले की तरह बैल की बगल में खड़े हैं×। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर चौकोर क्षेत्र में राजा का मस्तक

---

* I M C, Vol 1, p,67, Note 1

† Journal and Proceedings of the Asiatic Society of Bengal, (New Series) Vol IX, p 81

‡ P M C, V0l 1, p 183 No 31

× Ibid, p 214, No ii, B M C, p 124, No 2

है* । चौथे† और पाँचवें‡ प्रकार के सिक्कों का विस्तृत वर्णन अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ। ये सब सिक्के डबल स्टेटर (Double Stater) कहलाते हैं। इन पर एक ओर यूनानी अक्षरों में Basileus Ooemo Kadphises और दूसरी ओर खरोष्ठी अक्षरों में—"महरजसरजतिस सर्वलोक ईश्वरस महिश्वरस विम कठ्फिसस" लिखा है। स्टेटर कहलाने-वाले सोने के छोटे सिक्कों पर एक ओर राजा का मस्तक और दूसरी ओर हाथ में त्रिशूल लेकर खड़े हुए शिव की मूर्ति है ×। तौल में इससे आधे और सोने के सबसे छोटे सिक्कों पर एक ओर चौकोर क्षेत्र में राजा का मुख और दूसरी ओर वेदी पर त्रिशूल है+ । विमकद्फिस का अब तक चाँदी का केवल एक ही सिक्का मिला है ÷ । ह्वाइटहेड का अनुमान है कि यह सिक्का नहीं है, बल्कि सोने वा ताँबे के सिक्कों की परीक्षा करने के लिये चाँदी का ढला हुआ साँचा है = । विमकद्फिस के एक प्रकार के ताँबे के सिक्के मिले हैं। उन पर एक ओर शिर-

* Journal and Proceedings of the Asiatic Society of Bengal, (New Series) Vol. VI, p. 564.

† Cunningham's Coins of the Kushans, pl. XV. 3.

‡ Ibid, pl, XV, 5.

× P. M. C. Vol. 1, p. 183, Nos. 32-33, I. M. C. Vol. 1, p. 68. Nos. 1-4.

+ Ibid, No. 5, P. M. C., Vol. 1, p. 184, Nos. 34-35.

÷ B. M. C. p, 126, No. 11.

= P. M. C. Vol. 1, p. 17 4.

त्राण और बहुत बडा परिच्छद पहने हुए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में त्रिशूल लेकर खडे हुए शिव की मूर्त्ति है। आकार के अनुसार इस प्रकार के सिक्कों के तीन विभाग किए गए हैं—बडे *, मझोले† और छोटे ‡। इनके अतिरिक्त विमकदफिस के सोने और ताँबे के दुष्प्राप्य सिक्के भी हैं जिनकी सूची ह्वाइटहेड ने तैयार की है ×।

हम पहले कह आए हैं कि अधिकाश पुरातत्त्व वेत्ताओं के मतानुसार कनिष्क विमकदफिस का उत्तराधिकारी था। भारत के अनेक स्थानों में कनिष्क के राज्यकाल के खुदे हुए शिलालेख और ताम्रपत्र मिले हैं। कनिष्क के नाम का एक शिलालेख रावलपिंडी के पास मणिक्याला नामक स्थान में एक स्तूप में मिला है +। बहावलपूर के पास सूईविहार नामक स्थान में कनिष्क के नाम का एक ताम्रपट्ट ÷ और पेशावर में एक बडे स्तूप के ध्वसावशेष में धातु का बना हुआ एक शरीर-निधान = (Relic Casket) मिला है। ये तीनों लेख

---

* Ibid, p 184, Nos, 36-46, I M C Vol 1 pp 68-69 Nos 6-12

† Ibid, p 185-Nos 47-48

‡ Ibid, Nos 49-52, I M C Vol I, p 69, Nos 13-16

× Ibid, Nos i-xiii

+ Journal Asiatique 9 me Serie Tome VII p 1, pl, 1-2

÷ Indian Antiquary Vol X, p 324, Vol XI p 128

= Annual Report of the Archaeological Survey of India, 1908-09, pp 48-49

खरोष्ठी अक्षरों में हैं। मथुरा में मिली हुई बहुत सी बौद्ध और जैन मूर्त्तियों के पादपीठ पर जो लेख हैं, उनमें कनिष्क का नाम और राज्यांक दिया हुआ है। ये सब मूर्त्तियाँ कनिष्क के पाँचवें से लेकर दसवें राज्यांक* के बीच में प्रतिष्ठित हुई थीं। कनिष्क के तीसरे राज्यांक में वाराणसी में प्रतिष्ठित एक बोधिसत्त्वमूर्त्ति के पादपीठ पर खुदे हुए लेख† से सिद्ध होता है कि उस समय वाराणसी कनिष्क के साम्राज्य में थी। बौद्ध धर्म्म के महायान मत के ग्रन्थों में और चीन तथा तिब्बत के इतिहासों में कई स्थानों पर कनिष्क का उल्लेख मिलता है। परन्तु उन सब ग्रन्थों में अब तक कोई ऐसा विश्वसनीय प्रमाण नहीं मिला जिससे कनिष्क का समय निर्दिष्ट हो सकता हो। कनिष्क के समय के सम्बन्ध में किसी समय पुरातत्त्ववेत्ताओं में बहुत अधिक मतभेद था। हमने जिस समय "शकाधिकारकाल और कनिष्क" नामक निबन्ध लिखा था, उस समय कनिष्क के अभिषेक काल के सम्बन्ध में कम से कम ११ भिन्न भिन्न मत प्रचलित थे‡। परन्तु अब उनमें से केवल दो मत प्रचलित हैं—

(१) कनिष्क ईस्वी सन् ७८ में सिंहासन पर बैठा था।

---

* Epigrapia Indica, Vol. X, app p. 3, No. 18; p. 4, Nos. 21-22, p 5, No. 23.

† Ibid, Vol. VIII, p. 176.

‡ Indian Antiquary, 1808, pp. 27-28.

यह हमारा मत है और स्मिथ, टामस आदि विद्वानों ने इसका समर्थन किया है * ।

(२) ईसा से पूर्व सन् ५७ में कनिष्क का अभिषेक हुआ था। यह फ्लीट, केनेडी आदि पंडितों का मत है† ।

सन् १९०६ में हमने उत्तर पश्चिम सीमान्त के आरा नामक स्थान में मिला हुआ एक खरोष्ठी लेख देखा था। वह कनिष्क के ४१वें राज्यांक का खुदा हुआ था‡। डाक्टर टामस × और डा० लूडर्स + का अनुमान है कि यह कनिष्क नाम के किसी दूसरे राजा का शिलालेख है। परन्तु हमने उसे पहले कनिष्क का ही माना है। इस अनुमान का कारण आगे चलकर यथास्थान दिया जायगा। यदि कनिष्क को शकाब्द का प्रतिष्ठाता मान लिया जाय, तो कहा जा सकता है कि उसने ईसवी सन् ७८ से १२० तक राज्य किया था। कनिष्क के सोने और ताँबे के बहुत से सिक्के मिले हैं। उन सिक्कों पर यूनानी और प्राचीन पारस्य भाषा का व्यवहार है। परन्तु दोनों भाषाएँ यूनानी अक्षरों में लिखी हैं। इन सब सिक्कों पर दूसरी ओर बहुत से यूनानी, बौद्ध और जरथुस्त्रीय देवताओं की मूर्त्तियाँ

---

* Ibid, pp 25-75, Journal of the Royal Asiatic Society 1913, p 627

† Ibid, 1912 p 1019, 1913, p 915

‡ Indian Antiquary 1908, p 58, pl 1

× Journal of the Royal Asiatic Society, 1913, p 639

+ Indian Antiquary, 1913, p 135

हैं*। भिन्न भिन्न जातियों के देवताओं का ऐसा अपूर्व समावेश शायद पहले कभी नहीं देखा गया था। रोम के सम्राट् हेलिय गावालस् ने जिस समय रोम साम्राज्य के भिन्न भिन्न प्रदेशों के देवताओं को रोम नगर के कैपिटल पर्वत-शीर्षवाले मन्दिर में कृष्णवर्ण पत्थर पमेसार के प्रति सम्मान प्रदर्शित कराने के लिये मँगवाया था, केनेडी का कथन है कि उस समय एक बार भिन्न भिन्न देशों और भिन्न भिन्न जातियों के देवताओं का इस प्रकार अपूर्व समावेश हुआ था†। कनिष्क के सोने के सिक्के दो प्रकार के हैं। पहले प्रकार के सिक्के पूरे स्टेटर और दूसरे प्रकार के सिक्के उनके चौथाई हैं। इन सिक्कों पर दूसरी ओर नीचे लिखे देवताओं की मूर्त्ति मिलती हैं‡।

(१) Ardochsho.

(२) Arooaspo.

(३) Athsho = आतेस (आतिश) = अग्नि।

(४) Boddo = बुद्ध।

(५) Helios = सूर्य।

(६) Hephaistos.

---

* Ibid, 1888, p. 89, Journal of the Royal Asiatic Society 1897, p. 322.

† Ibid, 1912, p. 1003.

‡ P, M. C; Vol. 1, p. 194.

(७) Manaobago

(८) Mao = माह = चन्द्र ।

(९) Miiro = मिहिर = सूर्य ।

(१०) Mithro=मिथ्र=मित्र=सूर्य ।

(११) Mozdooano

(१२) Nana

(१३) Nanaia

(१४) Nanashao

(१५) Oesho = अहीश = महेश ।

(१६) Orlagno

(१७) Pharro = अग्नि ।

(१८) Salene = चन्द्र ।

इन सब सिक्कों पर यूनानी अक्षरों और पारस्य भाषा में राजा का नाम और उपाधि दी हुई है। कनिष्क के तॉबे के सिक्के तीन प्रकार के हैं। पहले प्रकार के सिक्के सोने के सिक्कों के समान हैं, परंतु उन पर यूनानी अक्षरों और यूनानी भाषा में राजा का नाम और उपाधि दी है*। दूसरे प्रकार के सिक्के भी ऐसे ही हैं, परंतु उन पर यूनानी अक्षरों और पारस्य भाषा में राजा का नाम और उपाधि दी है†। तीसरे प्रकार के सिक्के

* Ibid, pp 186-87, Nos 53-60, I M C, Vol 1, pp 71-72, Nos 15-23

† Ibid, pp 72-75, Nos 24-78, P M C, Vol 1, pp 188-93 Nos 68-113.

कुछ अधिक दुष्प्राप्य हैं। उन पर एक ओर खड़े हुए राजा की मूर्त्ति के बदले में सिंहासन पर बैठे हुए राजा की मूर्त्ति है*। दूसरी ओर सोने के सिक्कों और पहले तथा दूसरे प्रकार के ताँबे के सिक्कों की तरह भिन्न भिन्न देवताओं और देवियों की मूर्त्तियाँ हैं। अभी तक इस बात का निर्णय नहीं हुआ कि इस तरह के सिक्कों पर किस भाषा का व्यवहार होता था।

कनिष्क के बाद कुषण साम्राज्य का अधिकार हुविष्क को मिला था। अब तक किसी प्रकार यह निश्चय नहीं हुआ है कि उसका राज्य कहाँ तक था। कुषण सम्वत् ३-१८ तक के खोदे हुए लेखों में कनिष्क का नाम मिलता है†। मथुरा के पास ईसापुर गाँव में मिले हुए एक शिलालेख में जो संवत् के २४ वें वर्ष खोदा गया था, वासिष्क नामक एक राजा का उल्लेख मिलता है‡। वासिष्क का अब तक कोई सिक्का नहीं मिला। कुषण संवत् के २८ वें वर्ष में खोदे हुए शिलालेख में जो मथुरा में मिला था, जान पड़ता है कि इसी वासिष्क का उल्लेख है×। परंतु कुषण संवत् के ३३ वें वर्ष से लेकर ६० वें वर्ष तक के खुदे हुए जो शिलालेख मथुरा में

---

* Ibid, p. 193, Nos. 114-15.

† Epigraphia Indica Vol. X, p. 93, No. 925; pp. 4-5, Nos. 18-23; Indian Antiquary, 1908, p 67, Nos. 4-6.

‡ Journal of the Royal Asiatic Society, 1910, p. 1311.

× Indian Antiquary Vol. XXXIII. p. 38, No. 8.

मिले हैं, उनमें केवल हुविष्क का ही उल्लेख मिलता है*। मथुरा के सिवा भारत के और किसी स्थान में हुविष्क का और कोई शिलालेख नहीं मिला। अफगानिस्तान में काबुल के उत्तर वारडाक नामक स्थान में मिले हुए शरीर निधान पर के लेख से पता चलता है कि वह कुषण सवत् के ५१ वें वर्ष में हुविष्क के राज्यकाल में स्तूप में स्थापित हुआ था†। इससे सिद्ध होता है कि अफगानिस्तान का कुछ अश भी हुविष्क के अधिकार में था। हुविष्क के सोने और ताँबे के बहुत से सिक्के मिले हैं। सोने के सिक्कों पर एक ओर राजा का मस्तक और दूसरी ओर यूनानी, हिन्दू और पारसी देवी-देवताओं की मूर्तियाँ मिलती हैं‡।

(१) Araeichsho

(२) Ardochsho

(३) Arooaspo

(४) Athsho = आतिश = अग्नि।

(५) Ckando Komara Bizago = स्कन्दकुमार विशाख।

---

* Epigraphia Indica, Vol X, app pp 8-11, Nos 38-56

† Ibid, Vol XI, pp 210-11

‡ I. M C, Vol 1, pp. 76-79, Nos 1-20, P M C, Vol 1, pp 194-97, Nos 116-36

(६) Ckando Komaro Bizago Maaceno = स्कन्द कुमार विशाख महासेन ।

(७) Erakil = Hercules.

(८) Hero.

(९) Maaceno = महासेन ।

(१०) Manaobago.

(११) Mao = माह = चंद्र ।

(१२) Miiro = मिहिर् = सूर्य ।

(१३) Miro + Mao = मिहिर और माह=सूर्य और चंद्र ।

(१४) Mithro = मित्र = सूर्य ।

(१५) Nana.

(१६) Nana + Oesho.

(१७) Nanashao.

(१८) Oachsho.

(१९) Oanindo.

(२०) Oesho = अहीश = महेश ।

(२१) Pharro = अग्नि ।

(२२) Riom.

(२३) Sarapo = शरभ ।

(२४) Shaophoro.

(२५) Uron = वरुण ।

हुविष्क के सोने के सिक्कों पर पहली ओर राजा का

मस्तक चार भिन्न भिन्न प्रकार से अंकित है * और उन पर यूनानी अक्षरों तथा प्राचीन पारसी भाषा में राजा का नाम और उपाधि दी है —

Shaonano Shao Ooeshke Koshano = शाहशाह हुविष्क कुषण=राजाधिराज कुषणवंशी हुविष्क।

साधारणत हुविष्क के पाँच प्रकार के ताँबे के सिक्के मिलते हैं। सभी सिक्कों पर दूसरी ओर भिन्न भिन्न देवी देवताओं की मूर्त्तियाँ हैं। केवल पहली ओर कुछ भेद है। पहले प्रकार के सिक्कों पर हाथी पर सवार हाथ में शूल और अंकुश लिए हुए और सिर पर मुकुट पहने हुए राजा की मूर्त्ति है †। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर पहली ओर खाट वा सिंहासन पर बैठे हुए राजा की मूर्त्ति है ‡। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर ऊँचे आसन पर बैठे हुए और मुकुट पहने हुए राजा की मूर्त्ति है ×। चौथे प्रकार के सिक्कों पर पहली ओर दक्षिण की तरफ

---

* I M C, Vol 1, pp 75-76, Numismatic Chronicle, 1892, p 98

† I M C, Vol 1, pp 79-81, Nos 21-46, P M C Vol 1, pp 198-202, Nos 137-172

‡ Ibid pp 202-03, Nos 173-85, I M C Vol 1 pp 82-83, *Nos 55-63*

× Ibid, p 82 Nos 47-54, P M C, Vol 1, pp 204-05, Nos 186-202

मुँह करके राजा बैठा हुआ है*। पाँचवें प्रकार के सिक्कों पर पहली ओर आसन पर बैठे हुए और बाँहें ऊपर उठाए हुए राजा को मूर्त्ति है†। इनके अतिरिक्त कनिंघम ने हुविष्क के ताँबे के कुछ दुष्प्राप्य सिक्के भी एकत्र किए थे‡।

हुविष्क के बाद वासुदेव (Bazdeo या Bazodeo) ने कुषण साम्राज्य का अधिकार पाया था। उसी समय से कुषण साम्राज्य की अवनति का आरम्भ हुआ था। मथुरा के सिवा और कहीं वासुदेव के खुदवाए हुए लेख नहीं मिले और न खरोष्ठी लेखों में वासुदेव का कोई उल्लेख मिलता है ×। इससे अनुमान होता है कि उस समय उत्तरापथ का पश्चिमांश और अफगानिस्तान कुषण राजाओं के हाथ से निकल गया था। कुषण सम्वत् के ७४ वें वर्ष से लेकर ९८वें वर्ष तक के खुदे हुए और मथुरा में मिले हुए शिलालेखों में वासुदेव का नाम मिलता है +। हुविष्क और वासुदेव के एक प्रकार के ताँबे के सिक्कों पर ब्राह्मी लिपि का व्यवहार मिलता है। हुविष्क के सिक्कों पर "गणेश" ÷ और वासुदेव के सिक्कों पर उसके

---

* Ibid, pp. 205-06, Nos. 203-05; I. M. C. Vol. 1, pp. 83-84, Nos. 64-76.

† P. M. C., Vol. 1, p. 206.

‡ Ibid, p. 207.

× Indian Antiquary, 1908, pp. 67-68.

+ Epigraphia Indica, Vol. X, App. pp. 1215, Nos. 60-77.

÷ I. M. C., Vol. 1, p. 81, Nos. 46.

नाम के शुरू के दो अक्षर* लिखे हैं। वासुदेव के सोने के सिक्कों पर केवल महादेव और नाना की मूर्त्ति मिलती है†। इन सब सिक्कों पर एक ओर अग्नि की वेदी के सामने खडे हुए शिरस्त्राण और वर्म पहने हुए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर महादेव अथवा नाना की मूर्त्ति है । उसके ताँबे के सिक्कों पर दूसरी ओर महादेव की मूर्त्ति ‡ और दूसरे प्रकार के सिक्कों पर उसके बदले में सिंहासन पर बैठी हुई देवी की मूर्त्ति है × ।

वासुदेव की मृत्यु अथवा राज्यच्युति के कुछ ही दिनों बाद, जान पडता है, कुषण साम्राज्य बहुत से छोटे छोटे राज्यों में विभक्त हो गया था। कनिष्क और वासुदेव के सिक्कों के ढग पर कनिष्क नाम के एक व्यक्ति ने और वासुदेव नाम के दो व्यक्तियों ने सिक्के बनवाए थे। ये लोग द्वितीय कनिष्क और द्वितीय तथा तृतीय वासुदेव कहलाते हैं । खरोष्ठी लेख का फिर से सम्पादन करते समय डा० लूडर्स ने कहा था कि यह कुषण वंश के कनिष्क नामक किसी दूसरे राजा के राज्य काल में खोदा गया था+ । उनके मतानुसार इस

* P M C Vol 1, p 214, Nos XII,

† Ibid, pp 208-09, Nos. 209-15, B M C, p 159

‡ P. M. C Vol 1, pp 209-10, Nos 215-26, I M C Vol 1, pp 84-86, Nos 8-34

× Ibid, p 86, Nos 35-43, P M C, Vol 1, pp 210-11, Nos 227-30

+ Indian Antiquary, 1913, p 135

द्वितीय कनिष्क ने वासिष्क के बाद पंजाब के पश्चिमी अंश पर अधिकार किया था। भारत के इतिहास का यह अंश अब तक अंधकारमय है। कुषण संवत् ३ से १० तक मथुरा में प्रथम कनिष्क का अधिकार था*। पंजाब का पश्चिमी अंश कुषण संवत् के १८ वें वर्ष में कनिष्क के अधिकार में था; क्योंकि उक्त संवत् में खुदे हुए मणिक्यलावाले स्तूप में मिले हुए एक शिलालेख में कनिष्क का उल्लेख है†। कुषण संवत् के २४ वें वर्ष में मथुरा में वासिष्क नाम के एक और राजा का राज्य था‡। संभवतः कुषण संवत् २८ तक मथुरा में उसी का राज्य था ×। कुषण संवत् ३३ से ६० तक मथुरा में हुविष्क का अधिकार था +। पंजाब के पश्चिमी प्रान्त में कुषण संवत् १८ के बाद उक्त संवत् ४१ तक किसी लेख में कुषणवंशी किसी राजा का उल्लेख नहीं है। डा० लूडर्स ने दो कारणों से कुषण संवत् ४१ में कनिष्क नामक दूसरे राजा के होने की कल्पना की है। पहला कारण तो यह है कि आरे के शिलालेख में कनिष्क के पिता का नाम दिया है। हमने उसे "वसिष्प" पढ़ा था ÷। परन्तु डा० लूडर्स के मत से वह

*Epigraphia Indica Vol. X, App, pp, 3-5.
† Journal Asiatique, 9 me Serle Tome, VII, p. 1.
‡ Journal of Royal Asiatic Society; 1910, p, 1311.
× Inidan Antiquary, 1904, p. 38.
+ Epigraphia Indica Vol. X, pp, 8-11.
÷Indian Antiquary, 1908, p, 58.

"वभेष्प" है*। डा० लूडर्स ने जो पाठ उद्धृत किया है, वह मूल के अनुसार नहीं है, क्योंकि इससे पहले किसी शिलालेख अथवा प्राचीन सिक्के में इस तरह का "ष्प" नहीं देखा गया। अशोक के शहबाजगढी†; और मानसेरा के अनुशासन में और यूनानी राजा झोइल के सिक्कों‡ में "ष्प" है। परन्तु आरे के शिलालेख के अक्षर के साथ अशोक के अनुशासन अथवा झोइल के सिक्के के अक्षर का कोई सादृश्य नहीं है। डा० लूडर्स का दूसरा कारण यह है कि मणिक्यालावाले शिलालेख क समय के बाद २३ वर्ष तक के किसी और शिलालेख में कनिष्क का नाम नहीं मिलता। परन्तु ये दोनों कारण ठीक नहीं जान पडते। पहली बात तो यह है कनिष्क के नाम के दो प्रकार के सोने के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्के बढिया बने हैं और उन पर केवल यूनानी अक्षरों का व्यवहार है। किन्तु दूसरे प्रकार के सिक्के पहले प्रकार के सिक्कों की तरह बढिया नहीं बने हैं और उन पर यूनानी तथा ब्राह्मी दोनों वर्णमालाएँ हैं। यदि दूसरे प्रकार के सिक्कों के साथ प्रथम वासुदेव के सिक्कों की तुलना की जाय, तो साफ पता लग जाता है कि कनिष्क के दूसरे प्रकार के सिक्के कभी प्रथम कनिष्क के सिक्के नहीं हो सकते; और साथ ही वे प्रथम वासुदेव के

* Ibid, 1913, p. 133

† Epigraphia Indica, Vol II, p. 455

‡ P M C Vol, 1, pp 65-8

बैठा था। द्वितीय कनिष्क और तृतीय वासुदेव के राज्यकाल के उपरांत कुषण राजाओं का अधिकार बहुत से छोटे छोटे खण्ड राज्यों में विभक्त हो गया था; क्योंकि उनके सोने के सिक्कों पर राजा के बाएँ हाथ के नीचे प्रायः कई ब्राह्मी अक्षर मिलते हैं। संभवतः ये सब अक्षर अधीनस्थ राजाओं के नामों के आदि के अक्षर हैं। मही, विरू और भृ* संभवतः महीधर, विरूटक और भृगु आदि करद राजाओं के नाम हैं। बाद के गुप्त सम्राटों के राजत्व काल में इसी स्थान पर अर्थात् राजा के बाएँ हाथ के नीचे समुद्र, चन्द्र, कुमार आदि गुप्त राजाओं के नाम दिए जाते थे। इस तुलना से पता लग जाता है कि कुषण वंश के अंतिम राजाओं के राजत्व काल में भिन्न भिन्न प्रादेशिक शासन-कर्ताओं वा सम्राटों ने सिक्कों पर अपना नाम लिखने की प्रथा चलाई थी। तीसरे वासुदेव की मृत्यु के समय अथवा उसके थोड़े ही दिनों बाद कनिष्क के वंश का राज्य नष्ट हो गया था अथवा बहुत ही थोड़ी दूर तक रह गया था। उसी समय प्रादेशिक शासकों अथवा सामन्तों ने अपने नाम के सिक्के चलाना आरम्भ कर दिया था। ऐसे सिक्कों पर राजा का नाम पहले की तरह राजमूर्त्ति के बाएँ हाथ के नीचे लिखा रहता है। भद्र, पासन, वचर्ण, सयथ,

---

* Journal and Proceedings of the Asiatic Society of Bengal, V01. IV, pp. 84-85.

सित, सेन या सेण और हू * आदि बहुत से राजाओं के नामों का पता चला है। ईसवी चौथी शताब्दी में किदर कुषण नामक एक जाति अथवा राजवंश ने अफगानिस्तान पर अपना अधिकार जमाया था। उसके सिक्के कुषण राजाओं के सिक्कों के ढंग पर बने हैं और उन पर राजा के बायें हाथ के नीचे राजा के नाम के बदले में जाति अथवा वंश का नाम किदर लिखा है†। कुछ सिक्कों पर किदर के बदले में "गडहर" लिखा है‡। इन सब सिक्कों पर दूसरी ओर राजा का नाम दिया है। किदर जाति या वंश के कृतवीर्य्य, सर्वयश, भास्वन्, शिलादित्य, प्रकाश, कुशल आदि राजाओं के सिक्के मिले हैं ×। सिजिस्तान या सीस्तान के प्रादेशिक राजा लोग बहुत दिनों तक सभी वासुदेवों के सिक्कों के ढंग पर सोने के सिक्के बनवाते थे +। ईसवी तीसरी और चौथी शताब्दी में पारस्य के राजा द्वितीय हुर्मजद – और प्रथम वराहरण = ने अपने नाम

---

* I M C Vol 1 pp 88-89

† Ibid pp 89-90

‡ Journal and Proceedings of the Asiatic Society of Bengal, Vol IV, p 92

× Ibid, pp 91-92

+ I M C, Vol 1, pp 91-92, Nos, 1-5 P M C, Vol 1, p 212 Nos 238-39

– P M C Vol 1, p 213, No 240

= Ibid, No 241

के इसी तरह के सिक्के बनवाए थे। उड़ीसा में कुषण राजाओं के ताँबे के सिक्कों के ढंग पर बने हुए एक प्रकार के ताँबे के सिक्के मिले हैं *; परन्तु ऐसे सिक्कों पर कुछ लिखा हुआ नहीं मिलता।

---

* I. M. C., Vol. 1, pp. 92-3, No. 1-9; Indian Coins, pp. 11 14.

छठा परिच्छेद

विदेशी सिक्कों का अनुकरण

(घ) जानपदों और गण राज्यों के सिक्के

ईसा से पूर्व तीसरी शताब्दी से ईसवी तीसरी या चौथी शताब्दी तक भारत के भिन्न भिन्न स्थानों में नगर या प्रदेश के अधिपति लोग अथवा साधारण तत्र के अधिकारी लोग चाँदी अथवा ताँबे के सिक्के चलाया करते थे। ये सिक्के विदेशी सिक्कों का अनुकरण होते थे, क्योंकि यद्यपि कहीं कहीं ऐसे सिक्कों का आकार चौकोर होता है, तो भी उन पर कुछ न कुछ लिखा रहता है। साधारणतः ऐसे सिक्के बहुत दुष्प्राप्य हैं और उनका समय निश्चित करना बहुत ही कठिन है। इस तरह के सिक्कों में से तक्षशिला के सिक्के सबसे अधिक प्राचीन हैं। प्रोफेसर रेप्सन का अनुमान है कि सबसे पहले तक्षशिला में सिक्के बनाने के लिये साँचे या ठप्पे (die) का व्यवहार हुआ था*। पहले सिक्कों के एक ही ओर ठप्पे लगाया जाता था†। सम्भवतः धातु के पूरी तरह से जमने के कुछ पहले ही उन पर ठप्पा लगाया जाता था। इसी लिये ऐसे सिक्कों के सब किनारे

---

* Indian Coins, p 14

† Coins of Ancient India, pl II

कुछ ऊँचे रहते हैं*। पन्तलेव और अगथुक्रेय के ताँबे के सिक्के (जिन पर ब्राह्मी अक्षर हैं) इसी तरह के सिक्कों के ढंग पर बने हैं†। इसके बाद तक्षशिला के सिक्कों पर दोनों ओर ठप्पा लगाया जाता था‡। प्रोफेसर रेप्सन का अनुमान है कि इस तरह के सिक्कों पर यूनानी शिल्प का चिह्न मिलता है×। तक्षशिला के सिक्कों पर कुछ लिखा हुआ नहीं मिलता+।

प्राचीन काल में अयोध्या के सिक्के ठप्पे से नहीं बनते थे, बल्कि साँचे में ढलते थे। उन पर भी कुछ लिखा हुआ नहीं मिलता÷। इसके बाद के सिक्कों पर ब्राह्मी अक्षरों में राजा का नाम लिखा हुआ मिलता है। ये सब सिक्के भी साँचे में ढले हुए हैं। अयोध्या के अधिकांश राजाओं के नाम के अंत में "मित्र" शब्द मिलता है=। पंचाल के प्राचीन सिक्कों पर भी

---

* Indian Coins, p. 14.

† Ibid.

‡ Coins of Ancient India, pl. III.

× Indian Coins, p. 14.

+ कनिंघम ने तक्षशिला में मिले हुए ताँबे के कुछ सिक्कों पर ब्राह्मी और खरोष्ठी अक्षरों में "नेकम" वा "नेगम" लिखा देखकर अनुमान किया था कि ये सिक्के तक्षशिला के हैं। Coins of Ancient India, pp. 63-64; परन्तु वास्तव में ये "कुलकनिगम" चिह्न हैं। देखो Indian Coins, p. 3, और पृष्ठ २१।

÷ Indian Coins p. 11.

= Coins of Ancient India, pp. 93-94.

इसी तरह मित्र शब्द का व्यवहार है। परन्तु अब तक यह निर्णय नहीं हो सका कि अयोध्या के राजाओं के साथ पञ्चाल के राजाओं का सम्बन्ध था या नहीं। मूलदेव, वायदेव, विशाख देव, धनदेव, सत्यमित्र, शिवदत्त, सूर्यमित्र, संघमित्र, विजय मित्र, माधव वर्मा, धर्ममतिमित्र, अयुमित्र, देवमित्र, दृढ़मित्र, कुमुदसेन और अजवर्मा * नामक राजाओं के सिक्के मिले हैं। इसी लिये ये लोग अयोध्या के राजा माने जाते हैं। इन लोगों के सिक्कों पर केवल ब्राह्मी अक्षरों का व्यवहार है।

युक्त प्रदेश के अलमोड़े जिले में मिश्र धातु के बने हुए एक नए प्रकार के सिक्के मिले हैं जो अन्यान्य भारतीय सिक्कों की अपेक्षा भारी हैं और जिन पर ब्राह्मी अक्षरों में शिवदत्त और शिवपालित नामक दो राजाओं के नाम लिखे मिलते हैं†। कई सिक्कों पर "महरजस अपलातस" लिखा है‡। कुछ लोगों का अनुमान है कि ये प्राचीन अपरात देश के सिक्के हैं। परन्तु अपलात किसी व्यक्ति का भी नाम हो सकता है। मध्य प्रदेश के सागर जिले के एरन नामक स्थान में एक प्रकार के बहुत पुराने ताँबे के सिक्के मिले हैं। प्रोफेसर रैप्सन के मत से इस तरह के सिक्के प्राचीन पुराण और नवीन ठप्पे से बने हुए

* I M C Vol 1, pp 148-51, Coins of Ancient India, pp 91-94

† Indian Coins, pp 10-11

‡ Coins of Ancient India, pp. 103-04

सिक्कों के मध्यवर्त्ती हैं*। कभी कभी ऐसे सिक्कों पर ब्राह्मी लिपि भी मिलती है। ताँबे के कुछ सिक्कों पर ब्राह्मी अथवा खरोष्ठी अक्षरों में 'राज्ञ जनपदस" लिखा रहता है †। इसका अर्थ अब तक निश्चित नहीं हुआ। मि० स्मिथ का अनुमान है कि राज्ञ शब्द का असली पाठ "राजन्न" अर्थात् "क्षत्रिय" है ‡। वराहमिहिर की वृहत्संहिता में गांधार और यौधेय जातियों के साथ राजन्य जाति का भी उल्लेख है ×। साँचे में ढले हुए ताँबे के कुछ सिक्कों पर ब्राह्मी अक्षरों में "काडस" भी लिखा रहता है +। बुहलर का अनुमान था कि "काट" या "काल" किसी विशिष्ट व्यक्ति का नाम है ÷।

प्राचीन कौशाम्बी के खँडहरों में साँचे में ढले हुए ताँबे के बहुत से सिक्के मिलते हैं। उनमें से अनेक सिक्कों पर कुछ भी

---

* Indian Coins p. 11.

† Ibid, p. 12.

‡ I. M. C., Vol. 1, pp. 179-80, इस जाति के एक सिक्के पर ब्राह्मी और खरोष्ठी अक्षर मिलते हैं।

× गान्धारयशोवति-
हेमताकराजन्यखचरगव्याश्च।
यौधेयदासमेयाः
श्यामाकाः क्षेमधूर्त्ताश्च॥
—वृहत्संहिता १४—२८ Kern's Edition p. 92

+ Coins of Ancient India p. 62.

÷ Iindian Coins p. 12.

लिखा नहीं रहता *। संयुक्त प्रदेश के इलाहाबाद जिले के पभोसा (प्राचीन प्रभास) गाँव के पास प्रभास पर्वत की एक गुफा के शिलालेख में राजा गोपालपुत्र वहसतिमित्र का उल्लेख है †। जिन सिक्कों पर कुछ लिखा है, उन पर वहसतमित्र, अश्वघोष, पवत और जेठमित्र आदि राजाओं का नाम मिलता है ‡। मथुरा के खँडहरों में से यूनानी और शक राजाओं के सिक्कों के साथ ताँबे के बहुत से प्राचीन सिक्के भी मिले हैं। इन सब सिक्कों पर बलभूति, पुरुपतत्व, भवदत्त, उत्तमदत्त, रामदत्त, गोमित्र, विष्णुमित्र, शेषदत्त, शिशुचन्द्रदत्त, रामदत्त, शिवदत्त, ब्रह्ममित्र और वीरसेन × आदि राजाओं के नाम और हगान, हगामाष और शोडास + आदि शक जातीय क्षत्रपों के नाम मिलते हैं। इन सब सिक्कों पर ब्राह्मी अक्षरों का व्यवहार है। केवल राजुवुल के सिक्कों पर यूनानी खरोष्ठी और ब्राह्मी तीनों वर्णमालाओं का व्यवहार है। संयुक्त प्रदेश के बरेली जिले में प्राचीन अहिच्छत्र के खँडहरों में ताँबे

---

* Coins of Ancient India, p 73

† Epigraphia Indica, Vol II, p 242

‡ Ibid, pp 74-75, I M C Vol 1, p 135, Nos 1-4

× Ibid, pp 192-94, Coins of Ancient India, pp 87-89

इलाहाबाद जिले के मंकार नामक स्थान में वीरसेन नामक किसी राजा का एक शिलालेख मिला है। उस पर खुदे हुए अक्षर ईसा से पूर्व पहली शताब्दी के हैं। Epigraphia Indica, Vol XI, p 85

+ देखो पृष्ठ ६६।

के बहुत पुराने सिक्के मिले हैं। इन सब सिक्कों पर जिन राजाओं के नाम मिलते हैं, उनके नाम के अन्त में "मित्र" शब्द भी है। ऐसे सिक्कों पर अग्निमित्र का नाम देखकर कुछ लोगों ने उन सिक्कों को पुष्पमित्र अथवा पुष्यमित्र के पुत्र अग्निमित्र के सिक्के माना है*। किन्तु मालव देश की वेत्रवती अथवा वेतवा नदी के किनारे विदिशा नगर में अग्निमित्र की राजधानी थी। विदिशा नगर से बहुत दूर अहिच्छत्र के खँड़-हरों में अग्निमित्र के नाम के सबसे अधिक सिक्के मिले हैं। इसलिये ताँवे के ऐसे सिक्के सुंगवंशी अग्निमित्र के सिक्के नहीं हो सकते। इसी प्रमाण के आधार पर कनिंघम उन राजाओं को सुंगवंशी मानने के लिये तैयार नहीं हुए जिनके ताँवे के सिक्के अहिच्छत्र के खँड़हरों में मिले हैं†। रामनगर अथवा अहिच्छत्र के खँड़हरों में इस तरह के सिक्के बहुत अधिक संख्या में मिले हैं। परन्तु संयुक्त प्रदेश के अनेक स्थानों में इस प्रकार के सिक्के प्रति वर्ष मिला करते हैं। इन सब सिक्कों पर राजा के नाम के ऊपर तीन चिह्न मिलते हैं‡। पुरातत्त्व-विभाग के भूतपूर्व सहकारी अध्यक्ष कारलाइल का मत है कि ये तीनों चिह्न बोधिवृक्ष, नाग लिपटे हुए शिवलिंग और छत्रभुक्त स्तूप हैं×। अहिच्छत्र प्राचीन पंचाल राज्य की

---

* Indian Coins, p. 13.

† Coins of Ancient India, p. 80.

‡ I. M. C., Vol, 1, p. 186.

× Ibid, Note 2.

राजधानी था। अहिच्छत्र में इस तरह के सिक्के बहुत संख्या में मिले हैं; इसलिये कनिंघम ने उन्हें पंचाल के माना है। पञ्चाल के सिक्कों में अग्निमित्र, भद्रघोष, इन्द्रमित्र, फाल्गुणीमित्र, सूर्यमित्र, ध्रुवमित्र, भानुमित्र मित्र, विश्वपाल, जयामित्र, अग्निमित्र, बृहस्पतिमित्र गुप्त नामक राजाओं के सिक्के मिले हैं। ये सब तौल में साधारणत २५० ग्रेन से कम नहीं हैं। क लिखा है कि अग्निमित्र का एक सिक्का तोल में २६ ग्रे अहिच्छत्र में अच्युत नाम के किसी राजा के ताँबे सिक्के भी मिलते हैं ×। हरिषेण रचित समुद्रगुप्त की से पता चलता है कि आर्यावर्त्त के अच्युत नामक कि का समुद्रगुप्त ने सर्वस्व नष्ट कर दिया था+। स्मिथ मान हैं कि समुद्रगुप्त ने जिस अच्युत को हराया था सिक्के उसी के हैं—। अच्युत के दो प्रकार के सिक्के पहले प्रकार के सिक्के सम्भवत ठप्पे के बने हैं और

---

* Ibid, pp 986-88, Coins of Ancient India p

† I M C Vol I, p 186, No 1 p 187 (Bhanumitra)

‡ Coins of Ancient India, p 83

× I M C, Vol 1, pp 185-86

\+ Fleet's Gupta Inscriptions, p 7

— I M C, Vol 1, pp 132-5, Nos 1-36

एक ओर रोमक सिक्कों की तरह राजा का मस्तक और दूसरी ओर चक्र वा सूर्य्य है* । दूसरे प्रकार के सिक्कों पर पहली ओर राजा का मस्तक नहीं है; परन्तु दोनों प्रकार के सिक्कों पर पहली ओर ईसवी चौथी शताब्दी के अक्षरों में राजा का नाम दिया है† ।

त्रिपुरी चेदि राजवंश की राजधानी थी । ताँबे के कई सिक्कों पर ईसा से पूर्व तीसरी शताब्दी के अक्षरों में यह नाम लिखा है‡ । उज्जयिनी के सिक्कों पर साधारणतः एक चिह्न मिलता है× । परन्तु कुछ दुष्प्राप्य सिक्कों पर ईसा से पूर्व दूसरी शताब्दी के अक्षरों में "उजेनिय" लिखा है+ । साधारणतः उज्जयिनी के सिक्कों पर एक ओर हाथ में सूर्य-ध्वज लिए हुए मनुष्य की मूर्त्ति और दूसरी ओर उज्जयिनी का चिह्न रहता है÷ । किसी किसी सिक्के पर एक ओर घेरे में साँड़= बोधिवृक्ष** अथवा सुमेरु पर्वत†† आदि चिह्न

---

* Ibid, p. 188, No. 1.

† Ibid, pp. 188–9, Nos. 2–10.

‡ Indian Coins, p. 14.

× I. M. C. Vol. 1, p. 152–5, Nos. 1–36.

+ Coins of Ancient India, p. 98.

÷ I. M. C. Vol. 1, pp. 152–53, Nos, 1–8, 12–18.

= bid, pp. 153–54, Nos. 10–11, 21–29.

** Ibid, pp. 154–55, No, 30–34.

†† Ibid, p. 155, No. 35.

अथवा लक्ष्मी की मूर्त्ति * मिलती है। उज्जयिनी के कुछ सिक्के चौकोर † और कुछ गोलाकार हे ‡।

विदेशी सिक्कों के ढग पर भारत की अनेक भिन्न भिन्न जातियों ने चाँदी और तांबे के सिक्के बनवाए थे। ऐसे सिक्कों पर साधारणत जाति का नाम लिखा रहता है और कभी कभी जाति के नाम के साथ राजा का नाम भी मिलता है। अर्जुनायन, कुनिन्द, मालव, यौधेय आदि भिन्न भिन्न जातियों के सिक्के मिले हैं। इनमें से अर्जुनायन जाति के सिक्के बहुत कम मिलते हें ×। कनिंघम ने लिखा है कि इस तरह के सिक्के मथुरा में मिलते हैं +। वराहमिहिर की बृहत्सहिता में त्रैगर्त, पौरव, यौधेय, आदि जातियों के साथ अर्जुनायन जाति का भी उल्लेख है –। इसी लिये आगरे और मथुरा के पश्चिम ओर वर्तमान भरतपूर और अलवर राज्य में अर्जुनायन जाति का प्राचीन निवासस्थान निश्चत हुआ है हरिषेण रचित

* Ibid pp 153-54, Nos 19-20

† Ibid, pp 152-53, Nos, 1-11

‡ Ibid, pp 153-55, Nos 12-36

× Ibid, p 160

+ Coins of Ancient India, pp 89-90

– त्रैगर्त्तपौरवाम्बष्ठ-
पारता वाटधानयौधेया।
सारस्वतार्जुनायन-
मत्स्यार्द्धग्रामराष्ट्राणि।
—बृहत्संहिता १६-२२ Kern's Ed. p 103

समुद्रगुप्त की प्रशस्ति में भी अर्जुनायन जाति का उल्लेख है* । ऐसे दो प्रकार के ताँबे के सिक्के मिले हैं । पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर खड़े हुए मनुष्य की मूर्त्ति और दूसरी ओर साँड़ की मूर्त्ति है† । दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक वेष्टनी या घेरा और दूसरी ओर बोधिवृक्ष मिलता है‡ । दोनों ही प्रकार के सिक्कों पर ब्राह्मी अक्षरों में "अर्जुनायनानां जय" लिखा रहता है ।

औदुम्बर या उदुम्बर जाति के सिक्के पंजाब के पूर्व ओर काँगड़े और गुरदासपुर जिले में और कभी कभी होशियारपूर जिले में भी मिलते हैं× । वराहमिहिर की बृहत्संहिता में कपिष्ठल जाति के साथ उदुम्बर जाति का भी उल्लेख है+ । विष्णु पुराण में त्रैगर्त्त और कुलिन्द गणों के साथ भी इस जाति का उल्लेख है ÷ । उदुम्बर जाति के चाँदी और ताँबे के सिक्के

* Fleet's Gupta Inscriptions, p. 8.

† I. M. C., Vol. 1, p. 166, No 1.

‡ Ibid, No 2.

× Ibid, pp. 160-61.

\+ साकेतककरुकालकोटि-
कुकुराश्च पारियात्रनगः ।
उदुम्बरकापिष्ठल-
गजाह्वयाश्चेति मध्यमिदम् ॥
—बृहत्संहिता १४-४, Kern's Edition, p. 88.

÷ देवला रैणवश्चैव याज्ञवल्क्याघमर्षणाः ।
उदुम्बराश्चाविष्णातास्तारकायणचंचला । हरिवंश ॥ १४-६६ ।

मिले हैं। चाँदी के सिक्कों पर उदुम्बर जाति के साथ धरघोष और रुद्रवर्म्मा नामक दो राजाओं का उल्लेख है। धरघोष के सिक्कों पर एक ओर कन्धे पर बाघ का चमड़ा रखे शिव या हरक्यूलस की मूर्त्ति और खरोष्ठी अक्षरों में "महदेवस रञ धरघोषस उदुम्बरिस" और "विश्पमित्र" लिखा है। दूसरी ओर घेरे में बोधिवृक्ष, परशुयुक्त त्रिशूल और ब्राह्मी अक्षरों में पहले की तरह जाति और राजा का नाम लिखा है*। रुद्रवर्म्मा के सिक्कों पर एक ओर साँड और दूसरी ओर ब्राह्मी अक्षरों में "रञ धमकिस रुद्रवर्मस विजयत" लिखा है†। कनिंघम ने रुद्रवर्म्मा, अजमित्र, महिमित्र, भानुमित्र, बीरयश और वृष्णि नामक राजाओं को उदुम्बर जाति के राजा लिखा है‡। स्मिथ और ह्वाइटहेड ने इसी मत को ठीक मानकर कलकत्ते और लाहौर के अजायबघरों के सिक्कों की सूचियों में भानुमित्र और रुद्रवर्मा को उदुम्बर जाति के राजा लिखा है×। परन्तु इन राजाओं के सिक्कों पर उदुम्बर जाति का नाम नहीं है, इसलिये यह समझ में नहीं आता कि इन लोगों ने क्यों उदु

---

* P M C, Vol 1, p 167, No, 136

† Ibid No 137

‡ Coins of Ancient India, pp 68–70

× I M C, Vol 1, p 166, Nos 2–4, P M C Vol 1, p 167, No 137

म्बर जाति के राजाओं में स्थान पाया है। वास्तविक दृष्टि से देखा जाय तो यह नहीं माना जा सकता कि धरघोष के अतिरिक्त उदुम्बर जाति के और भी किसी राजा के चाँदी के सिक्के मिले हैं। मुद्रातत्त्व के ज्ञाताओं का विश्वास है कि उदुम्बर जाति के ताँबे के सिक्के तीन प्रकार के हैं। परन्तु यह समझ में नहीं आता कि जिन सिक्कों पर उदुम्बर जाति का नाम नहीं मिलता, वे सिक्के क्योंकर उदुम्बर जाति के माने गए हैं। स्मिथ ने ताँबे और पीतल के बने हुए बहुत से छोटे छोटे गोलाकार सिक्कों को उदुम्बर जाति के सिक्के माना है; परन्तु उन्होंने इसका कोई कारण नहीं बतलाया। दो प्रकार के ताँबे के सिक्कों पर उदुम्बर जाति का नाम मिलता है। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथी, घेरे में बोधि वृक्ष और नीचे एक साँप है। दूसरी ओर दो-तल्ला या तीन-तल्ला मन्दिर, स्तम्भ के ऊपर स्वस्तिक और धर्म्म-चक्र है। ऐसे सिक्कों पर पहली ओर खरोष्ठी अक्षरों में उदुम्बर जाति का नाम भी है *। दूसरे प्रकार के सिक्के बहुत ही थोड़े दिनों पहले मिले हैं। सन् १९१३ में पंजाब के काँगड़े जिले में इस तरह के ३६३ सिक्के मिले थे†। ये सिक्के चौकोर हैं और

---

* Coins of Ancient India, p. 68

† Journal of Proceedings of the Asiatic Society of Bengal, Vol. X, Numismatic Supplement, No. XXIII, p. 247.

इनमें से प्रत्येक पर एक ओर ब्राह्मी में और दूसरी ओर खरोष्ठी में उदुम्बर जाति का नाम लिखा है। सिक्कों पर पहली ओर घेरे में बोधिवृक्ष, एक हाथी का अगला भाग और नीचे साँप है। दूसरी ओर एक मन्दिर, त्रिशूल और साँप है*। इनमें से कुछ सिक्कों पर धरघोष, शिवदास और रुद्रदास नामक उदुम्बर जाति के तीन राजाओं के नाम मिलते हैं†। इनमें से धरघोष का नाम तो पूर्व परिचित है, परन्तु शिवदास और रुद्रदास के नाम इससे पहले नहीं सुने गए थे। इन सब सिक्कों पर पहली ओर ब्राह्मी और दूसरी ओर खरोष्ठी अक्षरों में "महदेवस रञ्ञ धरघोषस वा शिवदसस वा रुद्रदसस उदुम्बरिस" लिखा रहता है‡।

कुणिन्द जाति वराहमिहिर के समय मद्र जाति के पास ही रहती थी ×। वृहत्संहिता में और एक स्थान पर कुलूत और सैरिन्ध गणों के साथ इनका उल्लेख मिलता है +। कुणिन्द

---

* Ibid, pp 249-50

† Ibid, p 248

‡ Ibid, p 249

× भावन्तोहृपानर्त्तो
  मृत्युमायाति सिन्धु सौवीरः।
  राजाच हारहौरो
  मद्रेशोऽन्यश्च कौणिन्द ॥
  —वृहत्संहिता १४।११ Kern's Edition, p 93.

\+ Coins of Ancient India, p 71

लोग शायद आजकल कुणेत कहलाते हैं। कुणिन्द जाति के बहुत से सिक्के मिले हैं। ये सिक्के दो भागों में विभक्त हो सकते हैं। पहले भाग के सिक्के प्राचीन हैं और उनपर ब्राह्मी तथा खरोष्ठी दोनों लिपियों का व्यवहार मिलता है*। इन पर पहली ओर एक स्त्री की मूर्त्ति, एक मृग, एक चौकोर स्तूप और एक चक्र मिलता है। दूसरी ओर सुमेरु पर्वत, बोधिवृक्ष, स्वस्तिक और नन्दिपाद हैं। इस तरह के केवल ताँबे के सिक्के मिले हैं। जिस समय ये सिक्के बने थे, उस समय अमोघभूति नामक एक राजा कुछ समय के लिये कुणिन्द जाति का अधिपति हो गया था। अमोघभूति के नाम के कुणिन्द जाति के चाँदी के कुछ सिक्के मिले हैं। ये सब प्रकार से उल्लिखित ताँबे के सिक्कों के समान ही हैं; परन्तु इन पर खरोष्ठी और ब्राह्मी अक्षरों में जो कुछ लिखा है, वह तो पढ़ा जाता है; पर ताँबे के सिक्कों पर लिखा हुआ बिलकुल नहीं पढ़ा जाता। अमोघभूति के सिक्कों पर एक ओर ब्राह्मी अक्षरों में "अमोघभूतिस महरजस राज्ञ कुणिन्दस" और दूसरी ओर खरोष्ठी अक्षरों में "रंच कुणिदस अमोघभतिस महरजस" लिखा रहता है†। अमोघभूति के अतिरिक्त कुणिन्द जाति के छत्रेश्वर नामक एक और राजा का नाम मिला है।

* I. M. C. Vol. 1, p. 168, Nos. 9–10.

† Ibid, pp. 167–68, Nos 1–8.

इसके केवल ताँबे के सिक्के मिले हैं*। कुणिन्द जाति के बाद के समय के सिक्के अमोघभूति के चाँदी के सिक्कों के समान ही हैं, परन्तु उनपर केवल ब्राह्मी अक्षरों का व्यवहार मिलता है†। एक प्रकार के सिक्कों पर तो कुछ लिखा हुआ ही नहीं मिलता‡।

बहुत प्राचीन काल से मालव जाति भारतवर्ष के उत्तर-पश्चिम प्रान्त में रहती है। सिकन्दर ने जिस समय पञ्चनद पर आक्रमण किया था, उस समय मालव जाति के साथ उसका युद्ध हुआ था×। वराहमिहिर की बृहत्सहिता में मद्र और पौरव जाति के साथ मालव जाति का भी उल्लेख है+। किसी समय यह जाति अवन्ति देश में निवास करती थी। इसी लिये प्राचीन अवन्ति या उज्जयिनी को बाद के इतिहास में मालव देश कहने लगे थे। अब भी युक्त प्रदेश अथवा पञ्चनद के अनेक स्थानों में मालवा और मालव नाम के बहुत से गाँव

---

* Ibid p 170 Nos, 36-37

† Ibid, pp 168-69, Nos 21-29

‡ Ibid, p 169, Nos 30-35

× Early History of India, 3rd Ed pp 94-7

\+ अम्बरमद्रकमालव-
पौरवकच्छारदण्डपिंगलका ।
माण्डव्यहूणकोहल-
शीतकमाण्डव्यभूतपुरा ॥

—बृहत्सहिता १४-२७ Kern's Ed p 92.

तथा नगर हैं। इस मालव जाति के बहुत से पुराने सिक्के राजपूताने के पूर्वी प्रान्त में मिले हैं *। कारलाइल ने जयपुर राज्य के नागर नामक स्थान में एक प्राचीन नगर के खँडहरों में से मालव जाति के ताँबे के ६००० सिक्के ढूँढ़ निकाले थे†। मालव जाति के सिक्के साधारणतः दो भागों में विभक्त होते हैं। पहले विभाग के सिक्कों पर केवल जाति का नाम लिखा है‡। ऐसे कुछ सिक्के गोलाकार और बाकी चौकोर हैं। दूसरे विभाग के सिक्कों पर मालव जाति के राजाओं के नाम भी मिलते हैं। ऐसे सिक्कों पर केवल ब्राह्मी अक्षरों का व्यवहार है और पुरातत्त्व के सिद्धान्तों के अनुसार कहा जा सकता है कि ये सिक्के ईसा से पूर्व दूसरी शताब्दी से लेकर चौथी शताब्दी तक प्रचलित थे ×। मालव जाति के सिक्के आकार में बहुत छोटे हैं। इनमें से पुराने सिक्के कुछ बड़े हैं और उनका व्यास आध इंच से अधिक नहीं है। ऐसे सिक्के तौल में साढ़े दस ग्रेन से अधिक नहीं हैं और सबसे छोटे सिक्के तौल में डेढ़ ग्रेन से अधिक नहीं हैं+ । स्मिथ का अनुमान है कि ये सिक्के संसार में सबसे अधिक छोटे आकार के हैं।

---

* Cunningham's Archaeological Survey Reports, Vol. VI, pp. 165–74, Vol. XIV, p. 149.

† I. M. C. Vol. 1, p. 162.

‡ Ibid, pp. 170–74.

× Ibid, p. 162.

+ Ibid, p. 163,

मालव जाति के पहले विभाग के सिक्कों में भिन्न भिन्न आठ उपविभाग मिलते हैं। पहले उपविभाग के सिक्कों पर दूसरी ओर सूर्य्य और सूर्य्य का चिह्न और पहली ओर कभी कभी घेरे में बोधिवृक्ष मिलता है*। दूसरे उपविभाग के सिक्कों पर दूसरी ओर एक घड़ा है†। तीसरे उपविभाग के सिक्कों पर पहली ओर घेरे में बोधिवृक्ष और दूसरी ओर घड़ा है। ऐसे सिक्के दो प्रकार के हैं—चौकोर‡ और गोलाकार×। चौथे उपविभाग के सिक्के चौकोर हैं और इन पर दूसरी ओर सिंह की मूर्त्ति है+। पाँचवें उपविभाग के सिक्कों पर दूसरी ओर साँड की मूर्त्ति है। ये भी दो प्रकार के हैं—गोलाकार– और चौकोर=। छठे उपविभाग के सिक्कों पर दूसरी ओर राजा का मस्तक है**। सातवें उपविभाग के सिक्कों पर इसकी जगह मोर की मूर्त्ति है††। आठवें उपविभाग के सिक्के बहुत छोटे हैं और उन पर दूसरी ओर सूर्य्य, नन्दिपाद,

---

* Ibid, pp 170-71, Nos 1-11

† Ibid, p 171, Nos 12-13

‡ Ibid, Nos 14-22

× Ibid, p 172, Nos 23-25

+ Ibid, Nos 26-36

– Ibid, p 173, Nos 40-57

= Ibid, p, 172, Nos 37-41

** Ibid, p 173 Nos 58-61

†† Ibid, p 174, Nos 62-63

सर्प आदि भिन्न भिन्न मूर्तियाँ और चिह्न मिलते हैं* । इन सब उपविभागों के किसी किसी सिक्के पर पहली ओर घेरे में बोधिवृक्ष भी मिलता है। मालव जाति के जो सिक्के मिले हैं, उनमें से पहले विभाग के सिक्कों पर "मालवानांजयः" अथवा "जय मालवानां जयः" लिखा है। दूसरे विभाग के सिक्कों पर जाति के नाम के बदले में मालव जाति के राजाओं के नाम मिलते हैं। अनुमान होता है कि ये सब नाम विदेशी भाषाओं के हैं†। कारलाइल ने ४० राजाओं के नामों के सिक्के ढूँढ़ निकाले थे‡। परंतु आजकल इनमें से केवल नीचे लिखे २० राजाओं के सिक्के मिलते हैं:—

१ भपंयन
२ यम वा मय
३ मजुप
४ मपोजय
५ मपय
६ मगजश
७ मगज
८ मगोजव
[illegible]
१० माशप
[illegible] मपक
[illegible] म[illegible]
[illegible]
१४ [illegible]
१५ [illegible]
१६ जामक

---

* Ibid, Nos. 64–67 B.
† Ibid, p. 162.
‡ Ibid, p. 163.

१७ जमपय — १६ महाराय
१८ पय — २० मरज*

जान पडता है कि इन नामों में से "महाराय" नाम नहीं है, उपाधि है। तांबे के कुछ छोटे सिक्कों पर कुछ भी लिखा नहीं मिलता। परन्तु बोधिवृक्ष और घट आदि जो सब चिह्न मालव जाति के सिक्कों पर मिलते हैं, उन्हीं चिह्नों को देखकर स्मिथ ने इन सिक्कों को भी मालव जाति के सिक्के ही ठहराया है†। कुणिन्द और मालव जाति की तरह बहुत प्राचीन काल से यौधेय जाति भी भारतवर्ष के उत्तम पश्चिम प्रान्त में रहती आई है। गिरनार पर्वत पर ईसवी दूसरी शताब्दी के मध्य भाग में खुदा हुआ महाक्षत्रप रुद्रदाम का जो शिलालेख है, उससे [illegible] ता है कि रुद्रदाम ने शक संवत् ७२ से पहले यौधेय [illegible] को परास्त किया था‡। बृहत्संहिता में गान्धार जाति के साथ यौधेय लोगों का भी उल्लेख है×। हरिषेण रचित समुद्रगुप्त की प्रशस्ति में लिखा है कि यौधेय जाति समुद्रगुप्त को कर दिया करती थी+। भरतपुर

---

* Ibid, pp 174-77, Nos 68-103

† Ibid, p 178, Nos 104-10

‡ Epigraphia India, Vol VIII, p 9

× Fleet's Gupta Inscriptions, p 8.

+ गाधारयशोवति
हैमताजरामन्यस घरगण्पाक्ष।

राज्य के विजयगढ़ नामक एक स्थान के शिलालेख में योधेय लोगों के अधिपति "महाराज महासेनापति" उपाधिधारी एक व्यक्ति का उल्लेख है*। पंजाब की बहावलपूर रियासत में रहने-वाली योहिया नामक जाति यौधेय लोगों की वंशधर मानी जाती है†। बहावलपुर राज्य में योहियावार नाम का एक प्रदेश भी है। यौधेय जाति के सिक्के पञ्जाब के पूर्व भाग में अधिक संख्या में मिलते हैं। शतद्रु (सतलज) और यमुना के बीच के प्रदेश में तो ये सिक्के बराबर मिला करते हैं। पंजाब के पास सोनपत नामक स्थान में यौधेय जाति के दो बार बहुत से सिक्के मिले हैं‡। यौधेय जाति के सिक्के साधारणतः तीन भागों में विभक्त होते हैं। पहले विभाग के सिक्के सबसे पुराने हैं। उन पर एक ओर साँड़ और स्तम्भ (?) और दूसरी

यौधेयदासमेयाः
श्यामाकाः क्षेमधूर्ताश्च ॥
—बृहत्संहिता १४।२८ Kern's Ed. p. 92.

त्रैगर्त्तपौरवाम्बष्ठ-
पारता वाटधानयौधेयाः।
सारस्वतार्जुनायन-
मत्स्यार्द्धग्रामराष्ट्राणि ॥
—बृहत्संहिता १६।२२ Kern's Ed. p. 103.

* Fleet's Gupta Inscriptions p. 252.

† Cunningham's Ancient Geography, p. 245.

‡ I. M. C., Vol. 1, p. 165; Coins of Ancient India, 76.

ओर हाथी की मूर्त्ति और नन्दिपाद चिह्न है*। पहली ओर ब्राह्मी अक्षरों में "यधेयन (यौधेयानां)" लिखा है। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर पद्म पर खडे हुए पडानन कार्त्तिकेय और दूसरी ओर बोधिवृक्ष, सुमेरु पर्वत, नन्दिपाद चिह्न और पडानन देवी (कार्त्तिकेयानी) की मूर्त्ति है। पहली ओर ब्राह्मी अक्षरों में यौधेय जाति के ब्रह्मण्यदेव नामक एक राजा का नाम मिलता है†। इस ब्राह्मी लिपि का पूरा पाठ अभी तक प्रकाशित नहीं हुआ है‡। किसी सिक्के पर "ब्रह्मण्य-देवस्य भागवत"× किसी सिक्के पर "स्वामिभागवत"+, किसी सिक्के पर "भागवत यधेयन"– और किसी सिक्के पर "भागवतो स्वामिन ब्रह्मण्य यौधेय"= लिखा है। किसी किसी सिक्के पर कार्त्तिकेय का नाम "कुमारस" भी लिखा है**। तीसरे प्रकार के सिक्के कुषणवंशी सम्राटों के सिक्कों के ढंग पर बने हुए जान पडते हैं††। उनपर एक ओर हाथ

---

* I M C, Vol 1, pp 180–181, Nos 1–7

† Ibid, pp 181–182, Nos 8–20

‡ Ibid, p 181, Note 1

× Ibid, No 8

+ Ibid No 12

– Rodger's Catalogue of Coins, Lahore Museum

= Coins of Ancient India, p 78

** I M C, Vol 1, p 182, Nos 15–17

†† Indian Coins, p 15

में शूल लेकर खड़े हुए कार्त्तिकेय और उनकी बाँई ओर मोर और दूसरी ओर खड़ी हुई देवमूर्त्ति है*। यह देवमूर्त्ति कुषणवंशीय सम्राटों के सिक्कों के मिहिर या सूर्यदेव की मूर्त्ति के समान ही है†। ऐसे सिक्कों के तीन विभाग हैं। पहले विभाग के सिक्कों पर संख्यावाचक कोई शब्द नहीं है‡; परन्तु द्वितीय और तृतीय विभाग के सिक्कों पर "द्वि"× और "तृ"+ लिखा है। इस तरह के प्रत्येक विभाग के सिक्कों पर ब्राह्मी अक्षरों में "यौधेयगणस्य जयः" लिखा है।

पद्मावती वा नलपुर (वर्त्तमान नरवर) किसी समय नागवंशी राजाओं की राजधानी था। पुराणों में नागवंशीय नौ राजाओं का उल्लेख है÷। इस वंश का गणपतिनाग समुद्रगुप्त से परास्त हुआ था=। गणपतिनाग, देवनाग आदि छः नागवंशीय राजाओं के सिक्के मिले हैं**। गणपति नाग का दूसरा

* मुद्रातत्त्व के ज्ञाता लोग इस सिक्के की पहली ओर हाथ में शूल लिये राजा की मूर्त्ति और उसकी बाईं ओर कुक्कुट की मूर्त्ति समझते हैं। परन्तु यह अधिकतर सम्भव है कि वह कार्त्तिकेय की मूर्त्ति हो और उसके बाएँ मोर हो। I. M. C., Vol. 1, pp. 182–83, No. 21–35.

† Ibid, p. 182 No. 21, reverse.

‡ Ibid, pp. 182–83, Nos. 21–26.

× Ibid, p. 183, Nos. 27–30.

+ Ibid, Nos. 31–35.

÷ Indian Coins p. 28.

= Fleet's Gupta Inscriptions, p. 7.

** Indian Coins, p. 28,

नाम गणेन्द्र था। उसके सिक्कों पर एक ओर ब्राह्मी अक्षरों में "महाराज श्रीगणेन्द्र" और दूसरी ओर घेरे में साँड की मूर्ति है *। देवनाग के सिक्कों पर एक ओर ब्राह्मी अक्षरों में "महाराज श्रीदेवनागस्य" लिखा है और दूसरी ओर एक चक्र है† ।

—·o·—

* I M C Vol, Vol 1, pp 178-79, Nos 1-15.
† Ibid, No 1

सातवाँ परिच्छेद

नवीन भारतीय सिक्के

गुप्त सम्राटों के सिक्के

ईसवी चौथी शताब्दी के प्रथम पाद में लिच्छवि राजवंश के जामाता घटोत्कच गुप्त के पुत्र प्रथम चंद्रगुप्त ने एक नया राज्य स्थापित किया था। सम्भवतः इस नए राज्य के सिंहासन पर चंद्रगुप्त के अभिषिक्त होने के समय से गौप्ताब्द और गौप्त संवत् चला था। गुप्त वंशीय सम्राटों के शिलालेखों में चंद्रगुप्त के पिता घटोत्कच गुप्त और पितामह श्रीगुप्त के नाम के साथ केवल महाराज की उपाधि है *। इससे अनुमान होता है कि वे लोग करद राजा अथवा साधारण भूस्वामी थे। श्रीगुप्त का अब तक कोई सिक्का नहीं मिला। घटोत्कच गुप्त के नाम का सोने का केवल एक सिक्का मिला है जो सेन्टपिटर्सबर्ग या लेनिनग्रेड के अजायबखाने में रखा है †। मुद्रातत्त्वविद् जान एलन के मतानुसार यह सिक्का सम्राट् प्रथम चंद्रगुप्त के पिता घटोत्कच गुप्त का नहीं है, बल्कि उसके बाद का

---

* Fleet's Gupta Inscriptions, pp 8,27,43,50,53.

† British Museum Catalogue of Indian Coins. Gupta Dynasties, p. 149.

है *। प्रथम चन्द्रगुप्त के नाम के एक प्रकार के सोने के सिक्के मिले हैं। उन पर पहली ओर चन्द्रगुप्त और उसकी स्त्री कुमार देवी की मूर्त्ति और चौथी शताब्दी के ब्राह्मी अक्षरोंमें "चन्द्रगुप्त" और "श्री कुमारदेवी" लिखा है। दूसरी ओर सिंह की पीठ पर बैठी हुई लक्ष्मी देवी की मूर्ति और "लिच्छवय" लिखा है†। मि० एलन का कथन है कि समुद्रगुप्त का वह सिक्का सब से अधिक संख्या में मिलता है, जिस पर हाथ में शूल लिए हुए राजा की मूर्त्ति है। ऐसे सिक्के बाद के कुषण राजाओं के सिक्कों के ढंग पर बने थे। चन्द्रगुप्त और कुमारदेवी की मूर्ति वाले सिक्के इस तरह के नहीं हैं। प्रथम चन्द्रगुप्त का अब तक कोई ऐसा सिक्का नहीं मिला जिस पर हाथ में शूल लिए हुए राजा की मूर्त्ति हो। इसलिये समुद्रगुप्त का हाथ में शूल लिए हुए राजमूर्त्ति वाला सिक्का चन्द्रगुप्त के इस तरह के सिक्कों के ढंग पर बना हुआ नहीं है। अत प्रथम चन्द्रगुप्त के सिक्कों की विशेषता देखते हुए इस बात का कोई सन्तोषजनक कारण नहीं मिलता कि उसके पुत्र समुद्रगुप्त ने बाद के कुषण राजाओं के सिक्कों के ढंग पर अपने सिक्के क्यों बनवाए थे‡। इन सब कारणों से मि० एलन का अनुमान है कि समुद्रगुप्त ने

* Ibid, p 1iv

† Ibid, pp 8-11, Nos 23-31, I M C, Vol 1, pp 99-100, Nos 1-6

‡ Allan, B M C p 1xv

लिच्छवि वंश में उत्पन्न होने और पिता चंद्रगुप्त तथा माता कुमार देवी के स्मरणार्थ सिक्के बनवाए थे * । गुप्तवंशीय सम्राटों के सिक्कों के संबंध में मि० एलन के ग्रंथ के प्रकाशित होने से पहले स्मिथ †, रैप्सन ‡ आदि प्रसिद्ध मुद्रातत्त्वविद् लोग इस तरह के सिक्कों को प्रथम चंद्रगुप्त के सिक्के ही मानते थे।

चंद्रगुप्त और कुमार देवी के पुत्र ने अपने खुदवाए हुए लेखों में अपने आपको "लिच्छवि दौहित्र" अथवा लिच्छवियों का नाती बतलाया है। समुद्रगुप्त ईस्वी चौथी शताब्दी के मध्य भाग में सिंहासन पर बैठा था। उसने सब से पहले आर्यावर्त्त के दूसरे राजाओं को नष्ट करना आरंभ किया था और रुद्रदेव, मतिल, नागदत्त, चंद्रवर्म्म, गणपतिनाग, नागसेन, अच्युत, नंदी, बलवर्मा आदि राजाओं के राज्य नष्ट किए थे। आर्यावर्त्त के अधिकृत हो जाने पर आटविक अर्थात् वनमय प्रदेशों के राजाओं ने उसकी अधीनता स्वीकृत की थी। सारे उत्तरापथ को जीतकर समुद्रगुप्त ने दक्षिणापथ को जीतने का उद्योग किया था। उसने अपनी राजधानी पाटलिपुत्र से चलकर मगध और उड़ीसा के बीच के वनमय प्रदेश के दो राजाओं को परास्त किया था। इन दोनों राजाओं में

---

* Ibid, p. lxviii.

† I. M C. Vol, 1, p. 95.

‡ Indian Coins p. 24.

से पहला दक्षिण कोशलराज महेंद्र और दूसरा महाकान्तार या भीषण वन का अधिपति व्याघ्रराज था । इसके बाद उसने कौरल देश के अधिपति मटराज को परास्त करके कलिंग देश की पुरानी राजधानी पिष्टपुर (आधुनिक पिट्टपुरम्) महेंद्रगिरि और कोट्टूर के किलों पर अधिकार किया था। कोट्टूर और पिष्टपुर के अधिपति स्वामिदत्त, एरण्डपल्ल के राजा दमन, काञ्चिनगर के अधिपति विष्णुगोप, अवमुक्त के राजा नीलराज, वेंगिनगर के अधिपति हस्तिवर्मा, पलक्क के राजा उग्रसेन, देवराष्ट्र के अधिपति कुबेर और कुस्थलपुर के राजा धनजय आदि दक्षिणपथ के सब राजा लोग समुद्रगुप्त के द्वारा परास्त हुए थे। समतट (दक्षिण अथवा पूर्व वग) डवाक (सम्भवत ढाका) कामरूप, नेपाल, कर्तृपुर, (वर्त्तमान कुमाऊँ और गढवाल) आदि सीमान्त राज्यों के राजा लोग और मालव, अर्जुनायन, यौधेय, मद्रक, आभीर, प्रार्जुन, शणकानीक*, काक, खरपरिक आदि जातियाँ उसे कर दिया करती थीं।

सारे उत्तरापथ में प्रति वर्ष समुद्रगुप्त के बहुत से सिक्के मिला करते है। अब तक समुद्रगुप्त के केवल सोने के सिक्के ही मिले हैं। प्रसिद्ध मुद्रातत्त्वविद् जान एलन ने इन सब सिक्कों को आठ भागों में विभक्त किया है —

---

* "बाँगालार इतिहास" प्रथम भाग, पृ० ४६।४७ ।

(१) हाथ में गरुड़ध्वज लिए राजमूर्त्ति युक्त

(२) हाथ में धनुषवाण लिए राजमूर्त्तियुक्त

(३) प्रथम चन्द्रगुप्त और कुमारदेवी की मूर्त्ति से युक्त

(४) हाथ में परशु लिए राजमूर्त्तियुक्त

(५) हाथ में चक्रध्वज लिए राजमूर्त्तियुक्त

(६) हाथ में वीणा लिए राजमूर्त्तियुक्त

(७) वाघ को मारते हुई राजा की मूर्त्ति से युक्त

(८) अश्वमेध के घोड़े और प्रधान महिषी की मूर्त्ति से युक्त

गुप्तवंशी सम्राटों के राजत्व काल में उन लोगों के नामों के सोने और ताँवे के सिक्कों का वहुत प्रचार था। यद्यपि गुप्त सम्राटों के सिक्के वाद के कुषणवंशो राजाओं के सिक्कों के ढंग पर वने थे, तथापि उन सिक्कों में शिल्प का यथेष्ट कौशल मिलता है *। गुप्तवंशी सम्राटों के सोने के सिक्कों में भारतीय शिल्प का चरम उत्कर्ष दिखाई देता है। कुमारगुप्त का कार्त्तिकेय की मूर्त्तिवाला सिक्का भारत के प्राचीन सिक्कों में कला-कौशल की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ है। समुद्रगुप्त के पुत्र द्वितीय चंद्रगुप्त ने सौराष्ट्र का शक राज्य नष्ट करके उक्त प्रदेश को गुप्त साम्राज्य में मिला लिया था। उस समय प्रादेशिक सिक्कों के ढंग पर चाँदी के सिक्के वनने लगे थे †। गुप्त सम्राटों के सोने के सिक्के पहले कुषण राजाओं के सोने के सिक्कों के ढंग पर

---

* Indian Coins p. 25.

† Allan, B. M. C. p. lxxxvi.

रोम देश की तौल की रीति के अनुसार बनते थे। बाद के सम्राटों के राजत्व काल में रोम की तौल की रीति के बदले में प्राचीन भारत की तौल की रीति का अवलम्बन होने लगा था। रोम की तौल की रीति के अनुसार बने हुए सोने के सिक्के तौल में १२४ ग्रेन हैं। परन्तु भारतीय तौल की रीति के अनुसार बने हुए सोने के सिक्के तौल में १४६० ग्रेन हैं। सम्भवतः कुछ दिनों तक दोनों प्रकार की तौल की रीति के अनुसार बने हुए सोने के सिक्के गुप्त साम्राज्य में प्रचलित थे और वे दीनार तथा सुवर्ण कहलाते थे। द्वितीय चन्द्रगुप्त और प्रथम कुमारगुप्त के दोनों प्रकार की तौल की रीति के अनुसार बने हुए सोने के सिक्के मिले हैं। स्कन्दगुप्त के राज्यकाल में केवल प्राचीन भारतीय तौल की रीति का ही व्यवहार मिलता है। द्वितीय चन्द्रगुप्त के राजत्व काल में मालव और सौराष्ट्र में गुप्त सम्राट लोग चाँदी के सिक्के भी बनवाने लगे थे। प्रथम कुमारगुप्त और स्कन्दगुप्त के राजत्व काल में उत्तरापथ में भी चाँदी के सिक्के बने थे। उत्तरापथ के चाँदी के सिक्के सौराष्ट्र के चाँदी के सिक्कों से भिन्न हैं *। गुप्तवंशीय सम्राटों के ताँबे के सिक्कों में भी शिल्पियों की विशेषता मिलती है।

समुद्रगुप्त के पहले प्रकार के सोने के सिक्के देखने से पहले तो यही जान पड़ता है कि इनपर हाथ में शूल लिए राजा की मूर्ति है। परन्तु वास्तव में ऐसे सिक्कों पर पहली ओर हाथ

* Indian Coins p 25

में ध्वजा लिए राजा की मूर्त्ति है* । राजा दाहिने हाथ से अग्नि-कुंड में धूप डाल रहा है और उसके बाएँ हाथ में ध्वज और दाहिनी ओर गरुड़ध्वज है । राजा के बाएँ हाथ के नीचे एक अक्षर के ऊपर दूसरा अक्षर लिखकर राजा का नाम दिया है। दूसरी ओर सिंहासन पर बैठी हुई लक्ष्मी की मूर्त्ति और "परा-क्रमः" लिखा है । पहली ओर राजा की मूर्त्ति के चारों ओर उपगीति छंद में

"समरशतविततविजयी
जितारिपुरजितो दिवं जयति"

लिखा है । † ऐसे सिक्कों के दो विभाग हैं । पहले विभाग के सिक्कों पर राजा के बाएँ हाथ के नीचे स
मु
द्र

लिखा है ‡; परंतु दूसरे विभाग के सिक्कों पर स मु द्र ... गु प्त

स	गु
मु	प्त
द्र	

लिखा है ×। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर दाहिने हाथ

* Allan, B. M. C. p. lxviii.

† Ibid, p. 1.

‡ Ibid, pp. 1-4 Nos. 1-13; I. M. C. Vol. 1, pp. 102-103. Nos. 6-21.

× Ibid, p. 103, Nos. 22-24; Allan, B. M. C. pp. 4-5 Nos. 14-17.

में बाण और बाएँ हाथ में धनुष लेकर खडे हुए राजा की मूर्त्ति है और बाईं ओर गरुडध्वज है। राजा के बाएँ हाथ के नीचे पहले की तरह स
मु
द्र
लिखा है और राजमूर्त्ति के चारों ओर उपगीति छन्द में

"अप्रतिरथो विजित्य क्षितिं
सुचरितैर्दिव जयति"

लिखा है।* दूसरी ओर सिंहासन पर बैठी हुई लक्ष्मी की मूर्त्ति और दाहिनी ओर "अप्रतिरथ" लिखा है। इस तरह के किसी सिक्के पर उपगीति छन्द में

"अप्रतिरथो विजित्य क्षितिम्
अवनिपतिर्दिव जयति"

लिखा रहता है†। तीसरे प्रकार के सिक्के प्रथम चन्द्रगुप्त और कुमार देवी के हैं। चौथे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथ में परशु लिए राजा की मूर्ति और उसकी दाहिनी ओर एक बालक की मूर्ति और राजा के बाएँ हाथ के नीचे पहले की तरह अक्षरों पर अक्षर देकर राजा का नाम लिखा है। दूसरी ओर हाथ में नालयुक्त कमल लिए सिंहासन पर बैठी हुई लक्ष्मी देवी की मूर्ति है और उसकी दाहिनी ओर "कृतान्त

---

* Ib'd, pp 6-7 Nos 18-22, I M C Vol 1, pp 103-04 Nos 25-28

† Allan, B M C, p 7.

परशुः" लिखा हुआ मिलता है *। इस तरह के सिक्कों के चार विभाग हैं। पहले विभाग में राजा के बाएँ हाथ के नीचे स
मु
द्र †

और दूसरे विभाग में स गु
मु प्त
द्र

लिखा है ‡। तीसरे विभाग के सिक्कों पर राजा के बाएँ हाथ के नीचे "कृ" लिखा है ×। चौथे विभाग के सिक्कों पर राजा और बालक की मूर्ति के बीच में पहले की तरह राजा का नाम लिखा है +। इस प्रकार के सिक्कों पर राजा की मूर्ति के चारों ओर पृथ्वी छन्द में

"कृतान्तपरशुर्जयत्य
जितराज जेताजितः"

लिखा है ÷। पाँचवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथ में चक्रध्वज लिए राजा अग्निकुण्ड में धूप फेंक रहा है और दूसरी ओर हाथ में फल लिए लक्ष्मी देवी खड़ी मिलती है। राजा के बाँएँ हाथ के नीचे "काच" और लक्ष्मी देवी की दाहिनी

---

* Ibid, p. 12.

† Ibid, pp. 12-14, Nos. 32-38; I. M. C. Vol, 1. p. 104, No. 29.

‡ Allan, B. M. C. pp. 14-15, Nos. 39-40.

× Ibid, p. 14, Nos. 37-38.

+ Ibid. p. 15; Ariana Artiqua, pp. 424-25 pl. xviii. 10.

÷ Allan, B. M. C. p. 12.

ओर "सर्वराजोच्छेत्ता" लिखा है। इसके अतिरिक्त राजमूर्ति के चारों ओर उपगीति छन्द में

"काचोगामवजित्य दिव
कर्मभिरुत्तमैर्जयति"

लिखा है *। छठे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा बाईं ओर खड़ा होकर दाहिनी ओर के बाघ पर तीर चला रहा है। बाघ के पीछे शशाकध्वज है। दूसरी ओर मगर की पीठ पर गंगादेवी की मूर्ति और शशाकध्वज है †। ऐसे सिक्कों के दो विभाग हैं। पहले विभाग में एक ओर "व्याघ्र पराक्रम" और दूसरी ओर "राजा समुद्रगुप्त" लिखा है ‡। परन्तु दूसरे विभाग के सिक्कों पर दोनों ही ओर "व्याघ्र पराक्रम" लिखा है ×। सातवें प्रकार के सिक्कों पर खाट पर बैठे हुए और हाथ में वीणा लिए हुए राजा की मूर्ति है और दूसरी ओर बेंत के बने हुए आसन पर बैठी हुई लक्ष्मी देवी की मूर्ति है। पहली ओर "महाराजाधिराज श्री समुद्रगुप्त" लिखा है, और राजा के पैर के नीचे "सि" और दूसरी ओर "समुद्रगुप्त" लिखा है +। ऐसे सिक्के दो प्रकार के हैं।

---

* Ibid, pp 15-17, Nos 41-47, I M C, Vol 1, p 100, Nos 1-2

† Allan, B M C p 17

‡ Ibid, No 48

× Ibid, p, 18 No 49

+ Ibid, pp, 18-20, Nos 50-45, I M C. Vol 1, pp 101-02, Nos 3-5

छोटे * और बड़े †। आठवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर पताका-युक्त यज्ञयूप में बँधे हुए यज्ञीय घोड़े की मूर्ति और दूसरी ओर हाथ में चँवर लिए प्रधान महिषी की मूर्ति और बाईं ओर एक शूल है। ऐसे सिक्कों पर घोड़े की मूर्ति के चारों ओर उपगीति छन्द में

"राजाधिराज पृथिवीमवित्वा
दिवं जयत्यप्रतिवार्यवीर्यः" ‡

अथवा "राजाधिराज पृथिवीं विजित्य
दिवं जयत्याहृतवाजिमेधः" ×

लिखा रहता है।

समुद्रगुप्त के बहुत से पुत्रों में से द्वितीय चन्द्रगुप्त ही सिंहासन के योग्य समझा गया था ÷। चन्द्रगुप्त के राज्य-काल में मालव और सौराष्ट्र गुप्त साम्राज्य में मिलाया गया था। "मालव के उदय गिरि पर्वत की गुफाओं में से शाब ने, जिसका दूसरा नाम वीरसेन था, शिव की पूजा के लिये एक गुफा उत्सर्ग की थी। वीरसेन अपने खुदवाए हुए लेख में कह गया है कि "राजा जिस समय पृथ्वी जीतने के लिये आया

---

* Ibid, Nos, 3–5, Allan, B. M. C. pp. 18–19, Nos 50–54.

† Ibid p. 20. No. 55., I. M. C. Vol. I, p. 102. No 5.

‡ Allan, B. M. C., p. 21.

× Journal and Proceedings of the Asiatic Society of Bengal, New series, Vol. X. p. 256.

÷ Allan, B. M. C., p. XXXV

था, उस समय वह (मैं) भी उसके साथ इस देश में आया था।" इससे सिद्ध होता है कि चन्द्रगुप्त ने स्वयं मालव और सौराष्ट्र पर आक्रमण किया था। साँची और उदय गिरि के तीन शिलालेखों से प्रमाणित होता है कि "द्वितीय चन्द्रगुप्त के राजत्व काल में ईसवी सन् ४०१ से पहले अर्थात् ईसवी चौथी शताब्दी के अन्तिम पाद में मालव पर गुप्त सम्राट् का अधिकार हुआ था।"

"मालव पर अधिकार होने के थोडे ही दिनों बाद सौराष्ट्र के शक जातीय प्राचीन क्षत्रप उपाधिधारी राजवंश का अधिकार नष्ट हुआ था। कुषण वंशीय सम्राट् प्रथम वासुदेव के राजत्व काल में अथवा हुविष्क और प्रथम वासुदेव के राजत्व काल के बीच के समय में उज्जयिनी के क्षत्रप चष्टन के पौत्र रुद्रदाम ने अन्ध्र के राजा द्वितीय पुलुमायिक को परास्त करके कच्छ, सौराष्ट्र और आनर्त्त देश में एक नवीन राज्य स्थापित किया था। रुद्रदाम के वंशधरों और वंश के अभिषिक्त राजाओं ने शक सम्वत् ३१० (ईसवी सन् ३८८) तक सौराष्ट्र देश पर राज्य किया था। महाक्षत्रप सत्यसिंह के पुत्र ने शक सम्वत् ३१० में अपने नाम के चाँदी के सिक्के बनवाए थे। गौत सम्वत् ९० से द्वितीय चन्द्रगुप्त ने सौराष्ट्र के शक राजाओं के ढंग पर अपने नाम के चाँदी के सिक्के बनवाना आरम्भ किया था। इससे अनुमान होता है कि शक सम्वत् ३१० और गौत सम्वत् ९० (ई० सन् ३८८ से ४०९ तक) के बीच के समय में महा

क्षत्रप रुद्रसिंह का अधिकार वा राज्य गुप्त साम्राज्य में मिलाया गया था *।"

द्वितीय चन्द्रगुप्त के पाँच प्रकार के सोने के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्के दो तरह के हैं। इनमें से प्रथम विभाग में चार उपविभाग हैं। इस विभाग के सिक्कों पर एक ओर बाएँ हाथ में धनुष और दाहिने हाथ में तीर लिए हुए राजा की मूर्त्ति है और उसके चारों ओर "देवश्री महाराजाधिराज श्रीचन्द्रगुप्तः" लिखा है। दूसरी ओर सिंहासन पर बैठी हुई लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति है और उसकी दाहिनी ओर "श्रीविक्रम" लिखा है †। पहली ओर अक्षर के ऊपर अक्षर देकर "चन्द्र" लिखा है। पहले उपविभाग में धनुष की डोरी राजा के शरीर की ओर है और राजा के शरीर तथा डोरी के बीच में "च

न्द्र"

लिखा है ‡। दूसरे उपविभाग में धनुष और डोरी के बीच में "चन्द्र" लिखा है ×। तीसरे उपविभाग में धनुष राजा के शरीर की ओर है और उसकी डोरी दूसरी ओर है। इनमें

* "बाँगालार इतिहास" प्रथम भाग पृ० ५०-५२।

† Allan B. M. C. p. 24.

‡ Ibid, Nos. 63-64.

× Ibid, p 25, Nos. 65-66.

धनुष की दाहिनी ओर राजा का नाम लिखा है *। चौथे उप-विभाग के सिक्के पहले उपविभाग के सिक्कों की तरह हैं। इनमें केवल दूसरी ओर लक्ष्मी देवी साधारण आसन पर बैठी हैं †। दूसरे विभाग के सिक्कों में भी चार उपविभाग हैं। पहले उपविभाग के सिक्कों पर राजा जमीन पर रखे हुए तर्कश में से तीर निकाल रहा है और दूसरी ओर लक्ष्मी देवी पद्मासन पर बैठी हैं ‡। दूसरे उपविभाग के सिक्के पहले विभाग के पहले उपविभाग के सिक्कों की तरह हैं। उन पर लक्ष्मी देवी सिंहासन के बदले में पद्मासन पर बैठी हैं ×। तीसरे उपविभाग के सिक्कों पर एक ओर दाहिनी तरफ राजा खड़ा है। उसके बाएँ हाथ में धनुष और दाहिने हाथ में तीर है और दूसरी ओर पद्मासन पर बैठी हुई लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति है +। चौथे उपविभाग के सिक्के सब प्रकार से तीसरे उपविभाग के सिक्कों की तरह हैं। केवल उनपर राजा के बाएँ हाथ के बदले में दाहिने हाथ में धनुष है ÷। दूसरे प्रकार के सिक्कों के दो विभाग हैं। पहले विभाग में पहली ओर "देवश्री महाराजाधिराज

---

* Ibid, Nos 67-68

† Ibid, p 26, No 69

‡ Ibid, pp 26-27, Nos 70

× Ibid, pp 27-32, Nos 71-99

+ Ibid p 32, No 100

÷ Ibid, p 33 No 101

श्री चंद्रगुप्तस्य"* और दूसरे विभाग के सिक्कों पर "देवश्री महाराज श्रीचंद्रगुप्तस्य विक्रमादित्यस्य" लिखा है †। दोनों ही विभागों के सिक्कों पर एक ओर खाट पर बैठे हुए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर सिंहासन पर बैठी हुई लक्ष्मी की मूर्त्ति है; और लक्ष्मी की मूर्त्ति की दाहिनी ओर "श्रीविक्रम" लिखा है। दूसरे विभाग के सिक्कों पर खाट के नीचे "रूपाकृति" लिखा है‡। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर अग्नि-कुण्ड के सामने खड़े हुए राजा की मूर्त्ति और उसके पीछे छत्र लिए हुए बालक अथवा गण की मूर्त्ति और दूसरी ओर पद्म पर खड़ी हुई लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति है। लक्ष्मी की मूर्त्ति की दाहिनी ओर "विक्रमादित्यः" लिखा है ×। ऐसे सिक्कों के दो विभाग हैं। पहले विभाग के सिक्कों पर राजा की मूर्त्ति के चारों ओर "महाराजाधिराज श्रीचंद्रगुप्तः" लिखा है +। दूसरे विभाग के सिक्कों पर इसके बदले में उपगीति छन्द में

"क्षितिमवजित्य सुचरितै-
र्दिवं जयति विक्रमादित्यः"

---

* Ibid, No. 102.

† Ibid, p. 34; I. M. C. Vol. 1. p. 104, No. 1.

‡ Journal of the Asiatic Society of Bengal 1891, pt. 1, p. 117.

× Allan B. M. C. p. 34; I. M. C. Vol. 1. p. 109, No. 52.

+ Ibid.

लिखा है *। चौथे प्रकार के सिक्कों पर सिंह को मारते हुए राजा की मूर्त्ति है। इसके चार विभाग हैं। पहले विभाग के सिक्कों पर एक ओर हाथ में तीर कमान लिए सिंह को मारते हुए राजा की मूर्त्ति है और दूसरी ओर सिंह पर बैठी हुई अम्बिका देवी की मूर्त्ति है। पहली ओर राजमूर्त्ति के चारों ओर वशस्थविल छद में

"नरेंद्रचद्र प्रथित (गुण) दिच
जयत्यजेयो भूविसिंहविक्रम "

और दूसरी ओर "सिंहविक्रम" लिखा है †। इस विभाग के सिक्कों के आठ उपविभाग हैं। पहले उपविभाग में एक ओर दाहिनी तरफ राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर अम्बिका देवी के हाथ में धान्य (?) का शीर्ष अथवा बाल है ‡। दूसरे उपविभाग क सिक्कों पर देवी के हाथ में धान्य की बाल के बदले पद्म है ×। इन दोनों उपविभागों में दूसरी ओर जमीन पर सिंह बैठा हुआ है; परन्तु तीसरे उपविभाग में सिंह अपनी पीठ पर अम्बिका देवी को लिए हुए दक्षिण ओरजा रहा है +। चौथे उपविभाग के सिक्कों पर पहली ओर राजा दाहिनी तरफ के बदले

* Allan, B M C pp 35-37, Nos 103-08, I M C Vol 1, p 109, No 55

† Allan, B M C p 38

‡ Ibid Nos 109-10

× Ibid p. 39, Nos 111-12

+ Ibid, p 40, I M C Vol 1, p 108, No 49

में बाईं तरफ खड़ा है*। पाँचवें उपविभाग के सिक्कों में लक्ष्मी देवी घोड़े को तरह सिंह की पीठ पर सवार है†। छठे उप-विभाग के सिक्कों पर अम्बिका देवी के हाथ में पद्म और पाश (?) है और राजा के पैर के नीचे सिंह की मूर्ति है‡। सातवें उपविभाग के सिक्कों पर पहली ओर दाहिनी तरफ और दूसरी ओर बाईं तरफ पद्म लिए हुए अम्बिका की मूर्त्ति है×। आठवें उपविभाग के सिक्कों पर पहली ओर सिंह की पीठ पर खड़े हुए राजा की मूर्त्ति है और सिंह घायल होकर भाग रहा है+। दूसरे विभाग के सिक्कों पर एक ओर खड़े हुए राजा की मूर्त्ति और घायल होकर गिरते हुए सिंह की मूर्त्ति है और दूसरी ओर बैठे हुए सिंह की पीठ पर बैठी हुई देवी की मूर्त्ति है। पहली ओर "नरेंद्रसिंह चंद्रगुप्तः पृथिवीं जित्वा दिवं जयति" और दूसरी ओर "सिंहचंद्रः" लिखा है ÷। पहली ओर के लेख का पाठ बहुत से अंशों में आनुमानिक है। तीसरे विभाग के सिक्कों पर एक ओर राजा की मूर्त्ति और भागते हुए सिंह की मूर्त्ति है और दूसरी ओर सिंह की पीठ

---

* Allan B. M. C. p. 39.

† Ibid, p 40, No. 113.

‡ Ibid, pp. 41–42, Nos. 114–16.

× Ibid, p. 42, Nos. 117–18.

+ Ibid, p. 43.

÷ Ibid, No. 119.

पर बैठी हुई देवी की मूर्त्ति है*। इस विभाग के दो उपविभाग हैं। पहले उपविभाग में "महाराजाधिराज श्री चद्रगुप्त" लिखा हैं, और दूसरी ओर बैठे हुए सिंह की पीठ पर हाथ में पाश(?) लेकर बैठी हुई देवी की मूर्त्ति है और उसकी दाहिनी ओर "श्रीसिंहविक्रम" लिखा है†। दूसरे उपविभाग में पहली ओर "देवश्री महाराजाधिराज श्रीचद्रगुप्त" लिखा है‡, और दूसरी ओर दाहिनी तरफ दौडते हुए सिंह की पीठ पर सवार देवी की मूर्त्ति है और उसकी दाहिनी ओर "सिंह विक्रम" लिखा है। चौथे विभाग के सिक्कों पर एक ओर हाथ में तलवार लिए हुए राजा की मूर्त्ति और भागते हुए सिंह की मूर्त्ति है और दूसरी ओर बैठे हुए सिंह की पीठ पर बैठी हुई देवी की मुर्त्ति है ×। पाँचवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घोडे की पीठ पर राजा का मूर्त्ति और दूसरी आर पद्मवन में बैठी हुई देवी की मूर्त्ति है। पहली ओर "परम भागवत महाराजाधिराज श्रीचद्रगुप्त" और दूसरी ओर "अजित विक्रम" लिखा है + ।

---

* Ibid p 44, No 120

† Ibid

‡ Numismatic Chronicle, 1910, p. 406

× Allan, B M C p 45

\+ Ibid, pp. 45-49, Nos 121-32, I M C, Vol 1, pp 107-08 Nos 37-41.

द्वितीय चंद्रगुप्त के चाँदी के सिक्के सौराष्ट्र के नए जीते हुए प्रदेश में चलाने के लिये बने थे। आगे के परिच्छेद में सौराष्ट्र के भिन्न भिन्न शताब्दियों के सिक्कों के साथ इनका विवरण दिया जायगा। उसके नौ तरह के ताँबे के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा का मस्तक और दूसरी ओर गरुड़ की मूर्त्ति है जिसके नीचे "महाराज चंद्रगुप्तः" लिखा है *। दूसरे प्रकार के सिक्कों के दो विभाग हैं। पहले विभाग के सिक्कों पर एक ओर अग्नि-कुण्ड के सामने खड़े हुए राजा की मूर्त्ति और उसके पीछे छत्रधारियों की मूर्त्ति और दूसरी ओर पंख और हाथोंवाले गरुड़ की मूर्त्ति है। गरुड़ की मूर्त्ति के नीचे "महाराज श्रीचन्द्रगुप्तः" लिखा है †। दूसरे विभाग के सिक्कों पर गरुड़ के पंख तो हैं, पर हाथ नहीं हैं ‡। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा की मूर्त्ति का ऊपरी भाग और दूसरी ओर गरुड़ की मूर्त्ति है जिसके नीचे "श्रीचंद्रगुप्तः" लिखा है ×। चौथे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा की मूर्त्ति का ऊपरी आधा भाग और दूसरी ओर गरुड़ की मूर्त्ति और "श्रीचंद्र-

---

* Allan, B. M. C. p. 52, No. 141.

† Ibid pp. 52–53, Nos. 142–143, I. M. C. Vol. 1, p. 109. No. 58.

‡ Allan, B M. C. p. 53, Nos. 144–47.

× Ibid, pp. 54–55, Nos. 148–59.

गुप्त" लिखा है*। पाँचवें प्रकार के सिक्के चौथे प्रकार के सिक्कों की तरह हैं। केवल राजा का बायाँ हाथ उसकी छाती पर है और दूसरी ओर गरुड वेदी पर बैठा है और उसके नीचे "चन्द्रगुप्त" लिखा है †। छठे प्रकार के सिक्के पाँचवें प्रकार के सिक्कों की तरह हैं। उनपर दूसरी ओर केवल वेदी नहीं है और राजा के नाम के पहले "श्री" ‡ है। सातवें प्रकार के सिक्के बहुत छोटे हैं। उनपर एक ओर राजा का मस्तक और दूसरी ओर सर्पधारी गरुड की मूर्त्ति है जिसके नीचे "चन्द्रगुप्त" लिखा है ×। आठवें प्रकार के सिक्कों पर पहली ओर "श्रीचन्द्र" और दूसरी ओर गरुड की मूर्त्ति है जिसके नीचे "गुप्त" लिखा है +। नवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर चन्द्रकला है और "चन्द्र" लिखा है और दूसरी ओर एक घडा है –।

"द्वितीय चन्द्रगुप्त की पत्नी का नाम ध्रुव देवी या ध्रुव स्वामिनी था। ध्रुवस्वामिनी के गर्भ से उसे कुमारगुप्त और

---

* Ibid, p 56 No 160

† Ibid, No 161

‡ Ibid, No 162

× Ibid, pp 57-59, Nos 163-81, I M C Vol 1, p 110, Nos 64-70

+ Allan B M C p 59, No 182

– Ibid, p 60, Nos 183-89, I M C Vol. 1, p 110, Nos 71-72

गोविंद नाम के दो पुत्र हुए थे। अपने पिता की मृत्यु के उपरांत कुमारगुप्त सिंहासन पर बैठा था"*। "प्रथम कुमारगुप्त के राजत्व काल के अन्तिम भाग में गुप्त साम्राज्य पर पुश्यमित्रीय और हूण जाति ने आक्रमण किया था। जब पुश्यमित्रीय सेनाओं से युद्ध में सम्राट् की सेना हार गई, तब युवराज भट्टारक स्कंदगुप्त ने बड़ी कठिनता से पुश्यमित्रीय लोगों को परास्त किया था। मध्य एशिया निवासी हूण जाति ने उसी समय मरुस्थल का निवास छोड़कर पश्चिम में रोमक साम्राज्य पर और पूर्व में गुप्त साम्राज्य पर आक्रमण किया था। ईसवी पाँचवीं शताब्दी के मध्य में गुप्त वंशीय सम्राट् लोग इन जंगली जातियों के आक्रमण से बहुत दुःखी हुए थे। गौप्त संवत् १३१ से १३६ (सन् ४५०—४५५ ईसवी) के बीच में किसी समय महाराजाधिराज प्रथम कुमारगुप्त की मृत्यु हुई थी। कुमारगुप्त के कई विवाह हुए थे और उसके सोने के सिक्कों पर राजमूर्त्ति के साथ दो पटरानियों की मूर्त्तियाँ मिलती हैं। इससे पुरातत्ववेत्ता लोग अनुमान करते हैं कि कुमारगुप्त ने वृद्धावस्था में किसी युवती से विवाह किया था और उसके बहुत आग्रह करने पर पहली पटरानी के जीवन काल में ही नव विवाहिता महादेवी को भी उसे विवश होकर पटरानी बनाना पड़ा था †"। कुमारगुप्त के नौ प्रकार के सोने

---

* "बाँगालार इतिहास" प्रथम भाग, पृ० ५३।

† "बाँगालार इतिहास" प्रथम भाग, पृ० ५८।५६।

के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्कों के सात उपविभाग हैं। पहले उपविभाग के सिक्कों पर एक ओर हाथ में धनुष बाण लिए हुए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में पाश लिए पद्मासन पर बैठी हुई देवी की मूर्त्ति है। पहली ओर राजा के बायें हाथ के नीचे "कु" और राजमूर्त्ति के चारों ओर उपगीति छंद में

"विजितावनिरवनिपति
कुमारगुप्तोदिव जयति"

और दूसरी ओर "श्रीमहेंद्र" लिखा है*। दूसरे उपविभाग के सिक्कों पर राजा के चारों ओर "जयति महीतलम कुमारगुप्त" लिखा है। इसकी दूसरी ओर देवी का हाथ खाली है†। तीसरे उपविभाग के सिक्कों पर देवी के हाथ में नाल सहित कमल है ‡। चौथे उपविभाग के सिक्कों पर पहली ओर "परमराजाधिराज श्रीकुमारगुप्त" लिखा है और दूसरी ओर देवी के हाथ में पाश और पद्म है ×। पाँचवें उपविभाग के सिक्कों पर पहली ओर राजा की मूर्त्ति के चारों ओर "महाराजाधिराज श्रीकुमारगुप्त" और राजा के बायें हाथ के नीचे अक्षरों पर अक्षर बैठाकर कु
मा
र

* Allan B M C, pp 61-62, Nos 190-91
† Ibid, pp 62-63, Nos 192-93
‡ Ibid, p 63
× Ibid, No 194, I M C, Vol 1, p 111, Nos 2-4

लिखा है *। छठे उपविभाग के सिक्कों पर राजा की मूर्त्ति के चारों ओर "गुणेशोमहीतलं जयति कुमार" लिखा है †। सातवें उपविभाग के सिक्कों पर पहली ओर "महाराजाधिराज श्रीकुमारगुप्तः" लिखा है और दूसरी ओर पद्मासन पर लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति है ‡। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथ में तलवार लेकर अग्नि कुंड के सामने खड़े हुए राजा की मूर्त्ति है और दूसरी ओर हाथ में पाश तथा पद्म लिए पद्मासना लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति है। पहली ओर उपगीति छंद में राजा की मूर्त्ति के चारों ओर

"गामवजित्य सुचरितैः
कुमारगुप्तो दिवं जयति"

और राजा की दाहिनी ओर "कु" और सिक्के की दूसरी ओर "श्रीकुमारगुप्तः" लिखा है ×। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर यज्ञ-यूप में बँधा हुआ अश्वमेध का घोड़ा और दूसरी ओर हाथ में चँवर लिए हुए पटरानी की मूर्ति है +। घोड़े के चारों ओर जो कुछ लिखा है, वह अभी तक पढ़ा नहीं गया। एक सिक्के पर "जयतिदिवं कुमार" ÷ और एक

* Ibid, p. 112, Nos. 8-10; Allan, B. M. C, p 64. No. 195.

† Ibid, p. 65, Nos. 196-97.

‡ Ibid, p. 66, Nos. 198-200.

× Ibid, pp 67-68, Nos. 201-02.

+ Ibid, p. 68.

÷ Ibid, No. 203.

दूसरे सिक्के पर घोड़े के नीचे "अश्वमेध" लिखा मिलता है*। दूसरी ओर "श्रीअश्वमेध महेन्द्र" लिखा है। इन सिक्कों के अतिरिक्त अब तक इस बात का और कोई प्रमाण नहीं मिला कि कुमारगुप्त ने अश्वमेध यज्ञ किया था। चौथे प्रकार के सिक्कों के दो विभाग हैं। पहले उपविभाग के सिक्कों पर एक ओर घोड़े पर सवार राजा की मूर्त्ति है। राजा दाहिनी ओर जा रहा है और उसके चारो ओर "पृथ्वीतल "दिवं जयत्यजित" लिखा है। अब तक यह पूरा पढ़ा नहीं गया। दूसरी ओर ऊँचे आसन पर बैठी हुई लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति और उसकी दाहिनी ओर "अजितमहेन्द्र" लिखा है। लक्ष्मी देवी के हाथ में नाल सहित कमल है†। दूसरे उपविभाग के सिक्कों पर लक्ष्मी देवी के दाहिने हाथ में पाश और बायें हाथ में नाल सहित कमल है। इस उपविभाग में पहली ओर राजमूर्त्ति के चारो ओर उपगीति छंद में—

"क्षितिपतिरजितो विजयी
कुमारगुप्तो दिवं जयति"

लिखा है‡। तीसरे उपविभाग के सिक्कों पर पहली ओर राजा के मस्तक के पीछे प्रभामण्डल है और दूसरी ओर लक्ष्मीदेवी हाथ में फल लेकर एक मोर को खिला रही हैं×।

---

* Ibid, p 69
† Ibid, p 69, No 204,
‡ Ibid, pp 70-71 Nos 205-09
× Ibid pp 71-73 Nos 210-218

दूसरे विभाग के दो उपविभाग हैं। दूसरे विभाग के पहले उपविभाग के सिक्कों पर घोड़े पर सवार राजा की मूर्त्ति के चारों ओर उपगीति छंद में

"गुप्तकुलव्योमशशि
जयत्यजेयो जितमहेन्द्रः"

लिखा है। ये सिक्के पहले विभाग के तीसरे उपविभाग के सिक्कों की तरह हैं *। दूसरे उपविभाग के सिक्कों पर एक ओर राजा घोड़े पर सवार होकर बाईं ओर जा रहा है और दूसरी ओर लक्ष्मीदेवी मोर को खिला रही हैं। ऐसे सिक्कों पर राजा के चारों ओर उपगीति छंद में

"गुप्तकुलामल चंद्रो
महेंद्रकर्म्माजितो जयति"

लिखा है †। पाँचवें प्रकार के सिक्कों के पाँच विभाग हैं। इन सब सिक्कों पर पहली ओर सिंह को मारते हुए राजा की मूर्त्ति है। पहले विभाग के सिक्कों पर एक ओर खड़े हुए राजा की मूर्त्ति और उसके चारों ओर उपगीति छंद में

"साक्षादिवनरसिंहो सिंह—
महेंद्रो जयत्यनिशं"

लिखा है। दूसरी ओर बैठे हुए सिंह की पीठ पर बैठी हुई अंबिका देवी की मूर्त्ति है और उसके बगल में "श्रीमहेंद्रसिंहः"

---

* Ibid, pp. 73–74, Nos. 219–25.

† Ibid, pp. 75–76, Nos. 226–30.

लिखा है *। दूसरे विभाग के सिक्कों पर एक ओर घोड़े पर सवार राजा की मूर्त्ति के चारों ओर उपगीति छंद में

"क्षितिपतिरजित महेन्द्र
कुमारगुप्तो दिव जयति"

लिखा है †। तीसरे विभाग के सिक्कों पर उपगीति छन्द में

"कुमारगुप्तो विजयी
सिंहमहेन्द्रो दिव जयति"

लिखा है और दूसरी ओर "सिंहमहेंद्र" लिखा है ‡। चौथे विभाग के सिक्कों पर वशस्थविल छद में

"कुमारगुप्तो
युधिसिंह विक्रम"

लिखा है ×। पाँचवें विभाग के सिक्कों पर इसके बदले में

"कुमागुप्तो
युधिसिंह त्रिक्रम"

लिखा है +। छठे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर मरे हुए बाघ पर खड़े हुए राजा की मूर्त्ति है और राजा एक दूसरे बाघ पर तीर चला रहा है। राजा की मूर्त्ति के चारों ओर "श्रीमा व्याघ्रबलपराक्रम" लिखा है। दूसरी ओर पद्मवन में खड़ी लक्ष्मी

* Ibid, pp 77-78 Nos 231-35
† Ibid, pp 78-79, Nos 226-27
‡ Ibid, p 79, Nos 238-39
× Ibid, p 80, Nos 240-41
+ Ibid, p 81 No 242

देवी एक मोर को खिला रही हैं और उनके बगल में "कुमार गुप्तोधिराजा" लिखा है *। ऐसे सिक्कों के दो विभाग हैं। पहले विभाग के सिक्कों पर पहली ओर राजा के नाम का पहला अक्षर नहीं है†। परन्तु दूसरे विभाग के सिक्कों पर राजा के बाएँ हाथ के नीचे "कु" लिखा है‡। सातवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा खड़ा होकर एक मोर को खिला रहा है और राजा के चारों ओर "जयतिस्वभूमौगुणराशि... महेंद्रकुमारः" लिखा है। दूसरी ओर परवाणि नामक मोर पर सवार कार्त्तिकेय की मूर्त्ति है ×। आठवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर दो स्त्रियों के बीच में राजा खड़ा है और राजा के एक ओर "कुमार" और दूसरी ओर "गुप्त" लिखा है। दूसरी ओर हाथ में पद्म लिये पद्मासना लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति है और उसकी दाहिनी ओर "श्रीप्रतापः" लिखा है +। नवें प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथी की पीठ पर राजा और उसके पीछे हाथ में छत्र लिये एक आदमी बैठा है और दूसरी ओर पद्म के ऊपर खड़ी हुई लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति है। लक्ष्मी के एक हाथ में नालसहित कमल और दूसरे हाथ में घट है ÷। इस तरह

---

* Ibid, p. 18.

† Ibid, No. 243.

‡ Ibid. pp. 82–83, Nos. 244–47; I. M. C, Vol. 1, p. 114, No. 36.

× Allan B. M. C. pp. 84–86, Nos 248–56.

\+ Ibid, p. 88

÷ Ibid, p. 88.

का केवल एक ही सिक्का मिला है। इस पर जो कुछ लिखा है, वह अभी तक पढ़ा नहीं गया। यह सिक्का हुगली जिले के महानाद गाँव में प्रथम कुमारगुप्त के एक और स्कन्दगुप्त के एक सोने के सिक्के के साथ मिला था* और अब वह कलकत्ते के सरकारी अजायब घर में रखा है†।

सौराष्ट्र और मालव में चलाने के लिये प्रथम कुमारगुप्त ने चाँदी के जो सिक्के बनवाए थे, उनका विवरण आगे के अध्याय में दिया गया है। ऐसे सिक्कों के ढग पर मध्य प्रदेश में भी चलाने के लिये एक प्रकार के चाँदी के सिक्के बनवाए गए थे। ऐसे सिक्कों के चार विभाग हैं। पहले विभाग के सिक्कों पर एक ओर राजा का मस्तक और ब्राह्मी अक्षरों में संवत् है। इन पर यूनानी अक्षरों का कोई चिह्न नहीं है। दूसरी ओर एक मोर और एक पद्म है और उनके चारों ओर उपगीति छंद में

"विजितावनिरवनिपति
कुमारगुप्तो दिव जयति"

लिखा है‡। दूसरे विभाग के सिक्कों पर दूसरी ओर पद्म नहीं

---

* बाँगलार इतिहास, प्रथम भाग, पृ० ६१; Proceedings of the Asiatic Society of Bengal, 1882, pp 91, 104

† I M C Vol 1, p 115, No 38

‡ Allan, B M C pp 107-08, Nos 385-90

है *। तीसरे विभाग के सिक्कों पर न पक्ष है और न मोर है†। चौथे विभाग के सिक्के तीसरे विभाग के सिक्कों की तरह हैं; परंतु उन पर लेख में "दिवं" के स्थान पर दिवि" मिलता है‡। प्रथम कुमारगुप्त के ताँबे के तीन प्रकार के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर खड़े हुए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर गरुड़ की मूर्त्ति है। गरुड़ की मूर्त्ति के नीचे "कुमारगुप्त" लिखा है ×। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर पहली ओर एक वेदी और उसके नीचे "श्री कु" और दूसरी ओर सिंह की पीठ पर बैठी हुई अम्बिकादेवी की मूर्त्ति है +। तीसरे प्रकार के सिक्के चाँदी के सिक्कों की तरह के हैं। उन पर एक ओर राजा का मस्तक और दूसरी ओर मोर बना है ÷। पहले प्रकार के ताँबे के एक सिक्के पर दूसरी ओर "श्रीमहाराजा श्रीकुमारगुप्तस्य" लिखा है =।

"महाराजाधिराज प्रथम कुमारगुप्त की मृत्यु के उपरान्त उनका बड़ा बेटा स्कंदगुप्त सिंहासन पर बैठा था। स्कंदगुप्त ने युवराज रहने की अवस्था में पुश्यमित्रिय और हूण

---

*Ibid, p. 108, Nos. 391–92.

† Ibid, pp. 109–10 Nos. 393–402.

‡ Ibid, No. 403.

× Ibid, p. 113.

+ I. M. C, Vol. 1, p. 120, No. 3.

÷ Ibid. p 116, No. 54.

= Ibid, No. 55.

लोगों को परास्त करके अपने पिता के राज्य की रक्षा की थी। कहा जाता है कि युवराज भट्टारक स्कन्दगुप्त ने अपने पितृकुल की विचलित राजलक्ष्मी को स्थिर करने के लिये तीन रातें जमीन पर सोकर बिताई थीं। पहली बार परास्त होकर ही हूण लोग उत्तरापथ पर आक्रमण करने से बाज नहीं आए थे। प्राचीन कपिशा और गांधार पर अधिकार करके उन लोगों ने एक नया राज्य स्थापित किया था" *। "ईसवी सन्‌ ४५७ में भी अन्तर्वेदी पर स्कन्दगुप्त का अधिकार था। उस समय से भीतरी विद्रोह और बाहरी शत्रुओं के आक्रमण के कारण गुप्त वंश के सम्राटों की शक्ति घटने लगी थी। प्रादेशिक शासकों ने बिना सम्राट् का नाम लिए ही लोगों को जमीनें देना आरम्भ कर दिया था। परिव्राजकवंशी हस्ती और सक्षोभ, उच्चकल्प के जयनाथ और सर्वनाथ और वलभीर धरसेन आदि सामान्य राजाओं के ताम्रलेख इसके प्रमाण हैं। ईसवी सन्‌ ४६५ के बाद हूण लोग फिर भारतवर्ष में आए थे और उन्होंने कई बार गुप्त साम्राज्य पर आक्रमण किए थे। देश-रक्षा के लिये बहुत दिनों तक युद्ध करके महाराजाधिराज स्कन्दगुप्त ने अंत में हूण युद्ध में ही अपने प्राण दिए थे"†।

स्कन्दगुप्त के दो प्रकार के सोने के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सोने के सिक्कों पर एक ओर हाथ में धनुष बाण लिए

---

* बाँगालार इतिहास, प्रथम भाग, पृ० ६२–६३

† बाँगालार इतिहास, पृ० ६४–६५

राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में पद्म लिए पद्मासना लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति है। पहली ओर राजा के बाएँ हाथ के नीचे स्क न्द और राजमूर्त्ति की दाहिनी ओर "जयतिमहीतलं" और बाईं ओर "सुधन्वी" लिखा है। दूसरी ओर लक्ष्मीदेवी की मूर्त्ति की दाहिनी ओर "श्रीस्कंदगुप्तः" लिखा है। ऐसे दो प्रकार के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्के तौल में १३२ ग्रेन * और दूसरे प्रकार के सिक्के १४६·४ ग्रेन हैं। दूसरे प्रकार के इन सिक्कों पर लेख भी अलग है। इन पर पहली ओर "जयतिदिवं श्रीक्रमादित्य" और दूसरी ओर "क्रमादित्य" लिखा है †। स्कंदगुप्त के दूसरे प्रकार के सोने के सिक्कों पर एक ओर राजा और लक्ष्मी की मूर्त्ति और दूसरी ओर पद्मासना लक्ष्मी की मूर्त्ति है। ऐसे सिक्कों पर जो कुछ लिखा है, वह पहले प्रकार के सिक्कों के लेख के समान ही है ‡। सौराष्ट्र और मालव में चलाने के लिये स्कंदगुप्त ने चाँदी के जो सिक्के बनवाए थे, उनका विवरण आगे के परिच्छेद में दिया जायगा। मध्य प्रदेश में चलाने के लिये चाँदी के जो सिक्के बने थे, वे दो प्रकार के हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा का मुख और ब्राह्मी अक्षरों में संवत् और दूसरी ओर मोर की मूर्त्ति और उसके चारों ओर "विजितावनिरवनिपतिर्जयति

---

* Allan, B. M. C. pp. 114–15, Nos. 417–21.

† Ibid, pp. 117–19, Nos 424–31.

‡ Ibid, pp. 116–17, Nos 422–23.

दिव स्कदगुप्तोय" लिखा है *। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर दूसरी ओर मोर के चारों तरफ "विजितावनिरवनिपति श्री-स्कदगुप्तो दिव जयति" लिखा है †।

"स्कन्दगुप्त की मृत्यु के उपरान्त उसका सौतेला भाई पुरगुप्त सिंहासन पर बैठा था। जान पडता है कि प्रथम कुमारगुप्त की मृत्यु के उपरान्त सिंहासन के लिये दोनों भाइयों में झगडा हुआ था, क्योंकि पुरगुप्त के पोते द्वितीय कुमारगुप्त की राजमुद्रा पर स्कन्दगुप्त का नाम नहीं है" ‡। बंगाली "बाँगालार इतिहास" के पहले भाग में लिखा है—"अब तक पुरगुप्त का कोई सिक्का या लेख नहीं मिला" ×। परन्तु ब्रिटिश म्यूजिअम में पुरगुप्त के नाम के सोने के कई सिक्के रखे हैं +। सोने के ऐसे सिक्के दो प्रकार के हैं। दोनों प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथ में धनुष बाण लिये राजा की मूर्त्ति और दूसरे हाथ में पद्म लिये पद्मासना लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति है। पहले प्रकार के सिक्कों पर राजा के बाएँ हाथ के नीचे पुर लिखा है +। पर दूसरे प्रकार के सिक्कों पर यह नाम नहीं है =।

---

* Ibid 129-32, Nos 523-46

† Ibid, pp 132-33, Nos 547-49

‡ बाँगालार इतिहास, प्रथम भाग, पृ० ६५

× ,, ,, पृ० ६६

+ Allan B M C, p 134

— Ibid,

= Ibid, pp 134-35 Nos 550-51

दोनों ही प्रकार के सिक्कों पर लक्ष्मी देवी की दाहिनी ओर "श्री विक्रमः" लिखा है। सोने के कई सिक्कों पर प्रकाशादित्य नाम के एक राजा का नाम मिलता है। सम्भवतः यही पुरगुप्त के सिक्के हैं। ऐसे सिक्कों पर एक ओर घोड़े पर सवार राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में पद्म लिए पद्मासना लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति है। घोड़े के नीचे "रु" अथवा "ऊ" और घोड़े के चारों ओर "विजित्यवसुधां दिवं जयति" लिखा है। दूसरी ओर लक्ष्मी देवी के दाहिने "श्री प्रकाशादित्यः" लिखा है *। "पुरगुप्त की स्त्री का नाम वत्सदेवी था। वत्स देवी के गर्भ से उत्पन्न पुत्र नरसिंहगुप्त अपने पिता की मृत्यु के उपरान्त सिंहासन पर बैठा था। कुछ लोगों का अनुमान है कि नरसिंहगुप्त ने मालव के राजा यशोधर्मदेव के साथ मिलकर उत्तरापथ में हूण साम्राज्य नष्ट किया था †।" नरसिंह गुप्त के एक प्रकार के सोने के सिक्के मिले हैं। उन पर एक ओर हाथ में धनुष बाण लिए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में पद्म लिए पद्मासना लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति है। पहली ओर राजा के बाएँ हाथ के नीचे न/र दोनों पैरों के बीच में "गो" और चारों ओर "जयति नरसिंह गुप्तः" लिखा है। दूसरी ओर लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति के दाहिने "बालादित्यः" लिखा है ‡। "नर-

---

* Ibid, pp. 135-36. Nos. 552-57.

† बाँगालार इतिहास, प्रथम भाग, पृ० ६७

‡ Allan, B. M. C., 137-39, Nos. 558-69. I. M. C., Vol. I, pp. 119-20, Nos. 1-6.

सिंह गुप्त की मृत्यु के उपरान्त उसका पुत्र द्वितीय कुमारगुप्त सिंहासन पर बैठा था *।" द्वितीय कुमारगुप्त के एक प्रकार के सोने के सिक्के मिले हैं। उन पर एक ओर हाथ में धनुष बाण लिए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में पद्म लिए पद्मासना लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति है। ऐसे सिक्कों के दो विभाग हैं। पहले विभाग के सिक्कों पर राजा के बायें हाथ के नीचे "कु" और लक्ष्मी देवी के दाहिने "क्रमादित्य" लिखा है †। दूसरे विभाग के सिक्कों पर पहली ओर राजा के बायें हाथ के नीचे "कु", दोनों पैरों के बीच में "गो" और चारों ओर "महाराजाधिराज श्रीकुमारगुप्तक्रमादित्य" लिखा है, और दूसरी ओर "श्रीक्रमादित्य" लिखा है ‡। तृतीय चन्द्रगुप्त द्वादशादित्य, विष्णुगुप्त चन्द्रादित्य और जयगुप्त प्रकाण्डयशा नाम के तीन राजाओं के सिक्के देखने से अनुमान होता है कि ये लोग भी गुप्त वंश के ही थे। परन्तु अब तक किसी लेख में उनका कोई उल्लेख नहीं मिला। इसी लिये यह निश्चय नहीं हो सका है कि गुप्त राजवंश के साथ उनका क्या सम्बन्ध था। सम्भवतः ये लोग द्वितीय कुमारगुप्त के वंशज थे ×। ईसवी सन्

* बाँगालार इतिहास, प्रथम भाग, पृ० ६८

† Allan, B M C p 140, Nos 570-71, I M C Vol 1, p 120, Nos 1-2

‡ Allan B M, C pp 141-43 Nos 572-87

× बाँगालार इतिहास, प्रथम भाग, पृ० ७१। मुद्रा तत्व के बहुत

१७८३ में कलकत्ते के पास काली घाट में तृतीय चन्द्रगुप्त और विष्णुगुप्त के बहुत से सिक्के मिले थे *। इन तीनों राजाओं के सिक्कों पर एक ओर हाथ में धनुष बाण लिए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में पद्म लिए पद्मासना लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति है। तृतीय चन्द्रगुप्त के सिक्कों पर राजा के बाएँ हाथ के नीचे "चन्द्र", दोनों पैरों के नीचे "भा" और चारों ओर "द्वादशादित्यः" लिखा है। दूसरी ओर "श्रीद्वादशादित्यः" लिखा है †। विष्णुगुप्त के सिक्कों पर राजा के बाएँ हाथ के नीचे "विष्णु", दोनों पैरों के बीच में "रु" और लक्ष्मी देवी के दाहिने "श्रीचन्द्रादित्यः" लिखा है ‡। जयगुप्त के सिक्कों पर राजा के बाएँ हाथ के नीचे "जय" और लक्ष्मी देवी के दाहिने "श्रीप्रकाण्डयशाः" लिखा है ×।

गौड़राज शशांक भी सम्भवतः गुप्तवंश का ही था +। शशांक के एक प्रकार के सोने के सिक्के मिले हैं। उन पर एक ओर बैल के बगल में बैठे हुए शिव की मूर्त्ति, दाहिनी ओर "श्रीश"

बड़े पण्डित जान एलन का अनुमान है कि तृतीय चन्द्रगुप्त और प्रकाशादित्य सम्भवतः स्कन्दगुप्त के वंशज थे और विष्णुगुप्त द्वितीय कुमारगुप्त के वंशज थे।

* Allan B. M C. pp. CXXIV—CXXV.

† Ibid, p. 144, Nos. 588-90

‡ Ib,di pp. 145-46. Nos. 591-605.

× Ibid, pp. 150-51, Nos. 613-514.

+ बाँगालार इतिहास, प्रथम भाग, पृ० ८३

और बैल के नीचे "जय" लिखा है। दूसरी ओर पद्मासना लक्ष्मी देवी की मूर्ति है। दो हाथी कलसों से उनके मस्तक पर जल गिरा रहे हैं और देवी के दाहिने "श्री शशाक" लिखा है *। कलकत्ते के अजायब घर में दो प्रकार के सोने के ऐसे दो सिक्के हैं जिन पर "नरेंद्र" नाम लिखा है। सम्भवत ये सिक्के भी शशाक के ही हैं। इन दो सिक्कों में से एक सिक्का यशोहर जिले के मुहम्मदपुर के पास अरुणखाली नदी के किनारे किसी जगह मिला था †। उसके साथ शशाक का भी सोने का एक सिक्का मिला था। उस पर एक ओर खाट पर बैठे हुए राजा की मूर्त्ति और उसके दोनों तरफ एक एक स्त्री की मूर्त्ति है, और दूसरी ओर पद्म के ऊपर खडी हुई लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति है और उनके पैरों के नीचे हंस की मूर्त्ति है। पहली ओर राजा के मस्तक के ऊपर "यम" और खाट के नीचे "ध" और दूसरी ओर "श्री नरेंद्रविनत" लिखा है ‡। दूसरे सिक्के के मिलने का स्थान मालूम नहीं है। उस पर एक ओर हाथ में धनुष बाण लिए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर हाथ में पद्म लिए पद्मासना लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति है। पहली ओर राजा के बाएँ हाथ

---

* Allan, B M C pp 147-48, Nos 606-12, I M C Vol, 1 pp 121-22, Nos 1-8

† Journal of the Asiatic Society of Bengal, Vol XXI, p 401, pl XII, Nos 9-12

‡ I M C Vol 1, p 112 Uncertains, No 1

के नीचे "यम", दोनों पैरों के बीच में "च" और दूसरी ओर "श्री नरेन्द्रविनत" लिखा है * ।

जयगुप्त † और हरिगुप्त ‡ के नाम का ताँबे का एक एक सिक्का मिला है । मुर्शिदाबाद जिले के राँगामाटी गाँव में रविगुप्त नाम के किसी राजा का सोने का एक सिक्का मिला है × । घटोत्कच नामक किसी राजा का सोने का एक सिक्का सेन्ट-पिटर्सबर्ग या लेनिनग्रेड के अजायबघर में रखा है + । अब तक यह निश्चय नहीं हुआ कि इन सब राजाओं का प्राचीन गुप्त वंश के साथ क्या सम्बन्ध था । गुप्त साम्राज्य नष्ट होने पर मध्य प्रदेश में प्रचलित गुप्त सम्राटों के चाँदी के सिक्कों के ढंग पर भिन्न भिन्न वंशों के राजाओं ने अपने सिक्के बनवाए थे । मौखरीवंशी, ईशान वर्म्मा ÷ और शर्ववर्म्मा = और शिलादित्य ** (सम्भवतः हर्षवर्द्धन) ने इस तरह के सिक्के बनवाए

---

* Ibid, p. 120. Uncertains, No. 1.

† Ibid, p 121. No. 1.

‡ Cunningham's Coins of Mediaeval India hl. 11. 6, p. 19.

× बाँगालार इतिहास, प्रथम भाग, पृ० ७४

+ Allan, B. M. C. p. 149.

÷ Journal of the Asiatic Society of Bengal, 1894. pt. 1. p. 193.

= Ibid.

** Journal of the Royal Asiatic Society, 1906. p.845.

थे। परिव्राजकवंशी महाराज हस्ती ने भी अपने नाम के चाँदी के कई सिक्के बनवाए थे। उन पर एक ओर "श्रीरणहस्ती" लिखा है और दूसरी ओर एक हाथी की मूर्ति है *।

इसके बाद बंगाल में गुप्त राजाओं के सोने के सिक्कों के ढंग पर एक प्रकार के सोने के सिक्के बने थे। उन पर जो कुछ लिखा है, वह पढ़ा नहीं जाता। इस प्रकार का एक सिक्का यशोहर जिले के मुहम्मदपुर गाँव के पास मिला था †। आज कल यह कलकत्ते के अजायबघर में है। बोगड़ा जिले में मिला हुआ इस प्रकार का एक सिक्का बलपुष्करणी के जमींदार श्रीयुक्त राय मृत्युञ्जयराय चौधरी बहादुर के पास है‡। ढाके × और फरीदपुर + में भी इस प्रकार के सिक्के मिले हैं। मुद्रातत्त्वविद् मि० जान एलन के मतानुसार ये सिक्के बंगदेश में ईसवी सातवीं शताब्दी में प्रचलित थे –। "सम्भवतः शशांक की मृत्यु के उपरांत माधवगुप्त और उसके वंशजों ने इस प्रकार के सिक्के चलाए थे" =।

---

* Indian Coins, p 28, I M C, Vol 1 p 118, Nos 1-5.

† Journal of the Asiatic Society of Bengal 1852 Vol XXI p 401, pl XII, 10, बाँगालार इतिहास, प्रथम भाग, पृ० ६७ चित्र ३१।४

‡ बाँगालार इतिहास, प्रथम भाग, पृ० ६७, चित्र ३१–५

× Journal of the Asiatic Society of Bengal New Series Vol VI p 141

+ Ibid

– Allan B M C p CVII 154, No 620-22

= बाँगालार इतिहास, प्रथम भाग, पृ० ६८

प्रथम गुप्त राजवंश

श्रीगुप्त
|
घटोत्कच गुप्त
|
१ प्रथम चन्द्रगुप्त=कुमारदेवी
|
२ समुद्रगुप्त=दत्तदेवी
|
कुवेरनागा=३ द्वितीय चन्द्रगुप्त=ध्रुवदेवी वा ध्रुवस्वामिनी

रुद्रसेन = प्रभावती (वाकाटक वंशी राजा)
|
दिवाकरसेन

विक्रमांक वा विक्रमादित्य

?=४ प्रथम कुमारगुप्त=अनन्त देवी — महेन्द्रादित्य
|
५ स्कन्दगुप्त विक्रमादित्य

गोविन्दगुप्त (सम्भवतः यही मगध के गुप्त राजवंश के आदि पुरुष हैं।)

६ पुरगुप्त=श्रीवत्सदेवी
|
प्रकाशादित्य (?)
|
७ नरसिंहगुप्त बालादित्य=महालक्ष्मी देवी
|
८ द्वितीय कुमारगुप्त
|
तृतीय चन्द्रगुप्त द्वादशादित्य
|
विष्णुगुप्त चन्द्रादित्य
|
जयगुप्त प्रकाण्डयशा

द्वितीय गुप्त राजवंश

द्वितीय चन्द्रगुप्त
|
प्रथम कुमारगुप्त — गोविंदगुप्त अथवा कृष्णगुप्त

कृष्णगुप्त
|
हर्षगुप्त
|
प्रथम जीवितगुप्त
|
तृतीय कुमारगुप्त
|
दामोदरगुप्त
|
महासेनगुप्त
|
शशांकनरेन्द्रगुप्त — माधवगुप्त=श्रीमती देवी

माधवगुप्त=श्रीमती देवी
|
आदित्यसेन=कोणदेवी
|
देवगुप्त=कमलादेवी
|
विष्णुगुप्त=इन्द्रादेवी
|
द्वितीय जीवितगुप्त
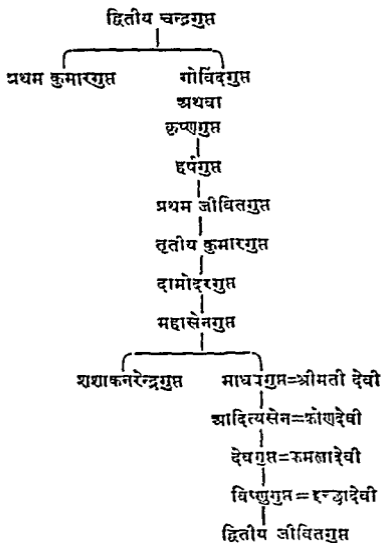
आठवाँ परिच्छेद

सौराष्ट्र और मालव के सिक्के

ईसवी सन् के आरम्भ में भारतीय यूनानी राजाओं के 'द्रम्म नामक सिक्कों के ढंग पर सौराष्ट्र के शक जातीय क्षत्रप लो अपने नाम से जो सिक्के बनाने लगे थे, उनके ढंग पर सौरा और मालव में ईसवी छठी या सातवीं शताब्दी त सिक्के बनते थे। ईसा से पूर्व पहली शताब्दी में अथ उससे कुछ ही पहले उत्तरापथ के शक राजाओं के एक शा कर्ता ने मालव और सौराष्ट्र में एक नवीन राज्य स्थ पित किया था। यह राज्य कुषण साम्राज्य के स्थापि होने से पहले स्थापित हुआ था। इस वंश के राजा ने राजा की उपाधि नहीं ग्रहण की थी। उनकी उपा "महाक्षत्रप" थी। महाक्षत्रप उपाधिवाले शक जातीय राजवंशों ने भिन्न भिन्न समय में सौराष्ट्र में अधिकार प्रा किया था। पहले राजवंश ने कुषण साम्राज्य स्थापित होने पहले और दूसरे राजवंश ने कुषण राजवंश के साम्राज्य नष्ट होने के समय सौराष्ट्र में अधिकार प्राप्त किया था। प्रथ राजवंश के केवल दो राजाओं के सिक्के मिले हैं। पहले रा का नाम भूमक था। इसके केवल तबे के ही सिक्के मिले हैं उन पर एक ओर सिंह की मूर्त्ति और दूसरी ओर चक्र है; अ

एक ओर खरोष्ठी अक्षरों में "छहरदस छत्रपस भूमकस" और दूसरी ओर ब्राह्मी अक्षरों में "क्षहरातस क्षत्रपस भूमकस" लिखा है *। भूमक का कोई शिलालेख या तिथियुक्त सिक्का अभी तक नहीं मिला; इसलिये उसके कालनिर्णय का समय भी अभी तक नहीं आया। नहपान के चाँदी के सिक्के मेनन्द्र के "द्रम्म" के ढग के हैं †। ऐसे सिक्कों पर एक ओर महाक्षत्रप का मस्तक और यूनानी अक्षरों में उसका नाम तथा उपाधि और दूसरी ओर चक्र (?), शर और वज्र और ब्राह्मी तथा खरोष्ठी अक्षरों में राजा का नाम तथा उपाधि दी है। खरोष्ठी अक्षरों में "रजो छहरतस नहपनस" और ब्राह्मी अक्षरों में "राज्ञो क्षहरातस नहपानस" लिखा रहता है ‡। नहपान के जामाता उषवदात अथवा ऋषभदत्त के बहुत से शिलालेख मिले हैं। इन लेखों में नहपान के राज्यांक अथवा किसी दूसरे संवत् के ४१ वें, ४२ वें और ४५ वें वर्ष का उल्लेख है ×। जुन्नार की एक गुफा में नहपान के प्रधान मन्त्री अयम के लेख में संवत् ४६ का उल्लेख है +। उषवदात और अयम के

* Rapson, Catalogue of Indian Coins in the British Museum, Andhras, Western Ksatrapas etc. pp 63-64, Nos 237-42

† Ibid, p cviii,

‡ Ibid, pp 65-67, Nos 243-51

× Epigraphia Indica, Vol VIII, p. 82

+ Archaeological Survey of Western India, Vol IV, p 103.

शिलालेखों में जिन अनेक वर्षों का उल्लेख है, पुरातत्ववेत्ता लोग उन्हें शक संवत् के मानते हैं; और इसके अनुसार ईसवी दूसरी शताब्दी के प्रारम्भ में नहपान का समय निश्चित करते हैं *। परन्तु प्रचीन लिपितत्व के प्रत्यक्ष प्रमाण के अनुसार नहपान को महाक्षत्रप रुद्रदाम का निकटवर्त्ती अथवा कनिष्क, वासिष्क, हुविष्क और वासुदेव आदि कुषणवंशी राजाओं का परवर्ती नहीं माना जा सकता। "नहपान ड शकाब्द" नामक प्रबन्ध में हमने इस बात को ठीक प्रमाणित करने की चेष्टा की है †। उषवदात के शिलालेखों में नहपान की उपाधि "क्षहरात क्षत्रप" मिलती है; परन्तु अयम के शिलालेख में उसकी उपाधि "स्वामी महाक्षत्रप" दी है ‡। नहपान के सिक्कों पर उसकी "क्षत्रप" वा "महाक्षत्रप" उपाधि नहीं मिलती। नहपान का ताँबे का केवल एक सिक्का कनिंघम को अजमेर में मिला था। उस पर एक ओर वज्र और तीर और ब्राह्मी अक्षरों में नहपान का नाम और दूसरी ओर घेरे में बोधि वृक्ष है ×। नहपान के राजत्वकाल के अन्तिम

---

* Rapson, B. M. C, p. cx; V. A. Smiths, Early History of India, 3rd Edition, pp. 209, 218.

† "नहपान और शकाब्द" नामक प्रबन्ध पुरातत्वविभाग के वार्षिक रिपोर्ट में प्रकाशित होने के लिये भेजा गया है। वह संभवतः १९१३-१४ ई० की रिपोर्ट में प्रकाशित हुआ होगा।

‡ Rapson, B. M. C. p. 65. Note 1.

× Ibid, p. 67, No. 252.

भाग में अथवा उसकी मृत्यु के उपरान्त अन्ध्रवंशी राजा गोतमीपुत्र शातकर्णि ने शकों के पहले क्षत्रप वंश का अधिकार नष्ट कर दिया था और नहपान के चाँदी के सिक्कों पर अपना नाम लिखवाया था। ऐसे सिक्कों पर एक ओर सुमेरु पर्वत और उसके नीचे साँप और ब्राह्मी अक्षरों में "राञो गोतमि पुत्रस सिरि सातकणिस" लिखा है। दूसरी ओर उज्जयिनी नगर का चिह्न है *। गोतमीपुत्र शातकर्णि के पोते अथवा किसी वंशज के राजत्वकाल में सौराष्ट्र देश अन्ध्र राजाओं के हाथ से निकल गया था। अन्ध्रवंश के गोतमीपुत्र श्रीयज्ञशातकर्णि ने सौराष्ट्र के सिक्कों के ढंग पर चाँदी के सिक्के बनवाए थे। उन पर एक ओर राजा का मुख और ब्राह्मी अक्षरों में "रञो गोतमिपुतस सिरियञ सातकणिस" लिखा है। दूसरी ओर उज्जयिनि नगर का चिह्न, सुमेरु पर्वत, साँप और दाक्षिणात्य के ब्राह्मी अक्षरों में " णप गोतम पुतप हिरुयञ हातकणिप" लिखा है †।

शक संवत की पहली शताब्दी के प्रथमार्द्ध में शक जातीय द्वितीय क्षत्रप वंश ने मालव और सौराष्ट्र पर अधिकार किया था। महाक्षत्रप चष्टन के पोते महाक्षत्रप रुद्रदाम ने मालव, सौराष्ट्र और कच्छ आदि देशों पर अधिकार करके बहुत बड़ा साम्राज्य स्थापित किया था। कच्छ में रुद्रदाम के राज्यकाल

* Ibid, pp 68-70, Nos 253-58

† Ibid, p 45, No 178

पुत्रस राज्ञो महाक्षत्रपस रुद्रदामस" * और दूसरे प्रकार के सिक्कों पर यही बात दूसरी तरह से लिखी है †। रुद्रदाम के पुत्र दामघ्सद के क्षत्रप उपाधिवाले तीन प्रकार के ‡ और महाक्षत्रप उपाधिवाले एक प्रकार के चाँदी के सिक्के मिले हैं ×। इन सिक्कों पर कहीं तो "दामघ्सद" और कहीं "दामजदश्री" नाम लिखा है। दामजदश्री के लड़के जीवदाम के समय से सौराष्ट्र के सिक्कों पर सम्वत् मिलता है। उन पर दिए हुए वर्ष शक संवत् के हैं। जीवदाम के सिक्कों पर शक संवत् १०० से १२० तक का उल्लेख है +। आंध्र राजाओं के मिश्र धातु के सिक्कों के ढंग पर जीवदाम ने पोटिन (Potin) नामक धातु के एक प्रकार के सिक्के चलाए थे। उन पर एक ओर बैल और यूनानी अक्षरों के चिह्न हैं और दूसरी ओर सुमेरु पर्वत, साँप आदि और ब्राह्मी अक्षरों में राजा का नाम और उपाधि लिखी है ÷। जीवदाम के बाद उसका चाचा रुद्रसिंह सिंहासन पर बैठा था। दूसरी शक शताब्दी के पहले और दूसरे दशक में रुद्रसिंह और जीवदाम में बहुत दिनों तक युद्ध हुआ था। इसी लिये उस समय के किसी वर्ष में जीवदाम

---

* Ibid pp, 78-79. Nos. 270-75.

† Ibid p. 79. Nos 276-80.

‡ Ibid. pp. 80-81, Nos. 281-85.

× Ibid, p. 82, Nos, 286-87.

\+ Ibid, p. 83.

÷ Ibid, p. 85. Nos. 293-94.

के साथ और किसी वर्ष में रुद्रसिंह के नाम के साथ "महाक्षत्रप" उपाधि का व्यवहार मिलता है * । काठियावाड के हाला जिले के गुडा नामक स्थान में एक शिलालेख मिला था जो रुद्रसिंह के राजत्वकाल में शक संवत् १०३ (ईसवी सन् १८१) का खुद हुआ था † । जूनागढ़ के पास एक गुफा में रुद्रसिंह के राज्यकाल का खुदा हुआ और एक शिलालेख मिला है ‡ । दूसरी शक शताब्दी के आरम्भ से चौथी शताब्दी के दूसरे दशक तक सौराष्ट्र के चाँदी के सिक्कों में किसी प्रकार का परिवर्त्तन नहीं दिखाई देता । सभी सिक्कों पर एक ओर राजा का मस्तक और यूनानी अक्षरों के चिह्न और दूसरी ओर सुमेरु पर्वत, सर्प इत्यादि और ब्राह्मी अक्षरों में राजा के पिता का नाम और राजा का नाम तथा उपाधि लिखी है । प्रत्येक राजा के सिक्के दो प्रकार के मिलते हैं । पहले प्रकार में राजा की उपाधि "क्षत्रप" और दूसरे प्रकार में "महाक्षत्रप" है । रुद्रसिंह के पोटिन के सिक्के जीवदाम के सिक्कों की तरह हैं × । जीवदाम के अतिरिक्त दामजदश्री का सत्यदाम नामक एक और लडका था । उसके क्षत्रप उपाधिवाले चाँदी के सिक्के मिले हैं + ।

* Ibid, pp 83-92

† Indian Antiquary, Vol X, p 157.

‡ Journal of the Royal Asiatic Society 1890, p 651.

× Rapson, B M. C pp 93-94, Nos 324-25

+ Ibid p 95

महाक्षत्रप रुद्रदाम के बड़े लड़के का लड़का जीवदाम था। उसके दूसरे लड़के को रुद्रसिंह ने सिंहासन से उतार दिया था। तब से बहुत दिनों तक सौराष्ट्र पर रुद्रसिंह के वंशजों का ही अधिकार रहा। बहुत दिनों बाद जब रुद्रसिंह का वंश नष्ट अथवा दुर्बल हो गया, सम्भवतः तब जीवदाम के वंशजों ने फिर सौराष्ट्र पर अधिकार किया था। रुद्रसिंह के बाद उसका बड़ा लड़का रुद्रसेन सिंहासन पर बैठा था। रुद्रसेन के सिक्कों पर शक संवत् १२१—१४४ का उल्लेख है *। बड़ौदा राज्य के उखामंडल प्रदेश के मूलवासर नामक स्थान में रुद्रसेन के राज्यकाल का शक संवत् १२२ (ई० सन् २००) का खुदा हुआ एक शिलालेख मिला है † और काठियावाड़ के उत्तर में जसधन नामक स्थान में रुद्रसेन के राज्यकाल का शक संवत् १२६ या १२७ (ईसवी सन् २०५ या २०६) का खुदा हुआ एक और शिलालेख मिला है ‡। रुद्रसेन के बड़े लड़के पृथ्वीसेन के क्षत्रप उपाधिवाले चाँदी के सिक्के मिले हैं ×। उन पर शक संवत् १४४ लिखा है। पृथ्वीसेन के छोटे भाई द्वितीय दामदजश्री ने इसके बहुत बाद क्षत्रप पद प्राप्त किया

---

* Ibid, pp. 96-105, Nos. 328-376.

† Journal of the Royal Asiatic Society. 1890. p. 652; 1899, pp. 380-81.

‡ Ibid, 1890, p. 652, Indian Antiquary, Vol. XII, p. 32.

× Rapson, B. M. C. p. 106, No. 377.

था। इन दोनों भाइयों के महाक्षत्रप उपाधिवाले सिक्के नहीं मिले हैं। इससे अनुमान होता है कि ये लोग सिंहासन पर नहीं बैठे थे। रुद्रसिंह का दूसरा बेटा सघदाम प्रथम रुद्रसेन के उपरान्त सिंहासन पर बैठा था। उसके चाँदी के सिक्के मिले हैं जिन पर शक सवत् १४४-४५ लिखा है *। सघदाम के बाद रुद्रसिंह का तीसरा बेटा दामसेन सौराष्ट्र के सिंहासन पर बैठा था। दामसेन के चाँदी के सिक्कों पर शक सवत् १४५ से १५८ तक लिखा मिलता है †। दामसेन के राज्य काल में पोटिन के बने हुए सवत्वाले सिक्कों पर राजा का नाम या उपाधि नहीं है ‡। दामसेन के राज्यकाल में उसके बडे भाई प्रथम रुद्रसेन के दूसरे बेटे द्वितीय दामजदश्री ने क्षत्रप की उपाधि प्राप्त की थी। द्वितीय दामजदश्री के क्षत्रप उपाधिवाले सिक्कों पर शक सवत् १५४-५५ लिखा है ×। दामसेन के चार बेटों के सिक्के मिले हैं। उनमें से वीरदाम के सिक्कों पर केवल क्षत्रप उपाधि मिलती है। उन सब सिक्कों पर शक सवत् १५६ से १६० तक का उल्लेख है +। शक सवत् १५८ से १६१ तक ईश्वरदत्त नाम के किसी दूसरे वश के राजा ने चाँदी के सिक्के बनवाए थे। उन सिक्कों पर

* Ibid, p 107 No 378

† Ibid, pp 108-112 Nos 379-401

‡ Ibid, pp 113-14, Nos 202-20

× Ibid, pp 115-16 Nos 421-25

+ Ibid, pp 117-21 Nos 426-59

उसकी महाक्षत्रप उपाधि और समय के स्थान पर उसके राज्यारोहण का वर्ष लिखा मिलता है; जैसे—"राज्ञो महाक्षत्रपस ईश्वरदत्तस वर्षे प्रथमे" अथवा "वर्षे द्वितीये" *। ईश्वरदत्त सम्भवतः आभीर जाति का था †। दामसेन के दूसरे लड़के यशोदाम ने ईश्वरदत्त के साथ एक ही समय में राज्याधिकार पाया था। उसके सिक्कों पर "क्षत्रप" और "महाक्षत्रप" दोनों ही उपधियाँ मिलती हैं। इन सब सिक्कों पर शक संवत् १६० और १६१ दिया हुआ है ‡। यशोदाम के बाद दामसेन के तीसरे लड़के विजयसेन ने सौराष्ट्र का राज्य पाया था। विजयसेन के सिक्कों पर "क्षत्रप" और "महाक्षत्रप" दोनों ही उपाधियाँ मिलती हैं। उन सिक्कों पर शक संवत् १६० से १७२ तक दिया हुआ है ×। विजयसेन के बाद दामसेन का चौथा बेटा तृतीय दामजदश्री सौराष्ट्र के सिंहासन पर बैठा था। उसके सिक्कों पर केवल "महाक्षत्रप" उपाधि मिलती है; और शक संवत् १७२ वा १७३ से १७६ तक दिया हुआ है +। तृतीय दामजदश्री के बाद दामसेन के बड़े लड़के वीरदाम का लड़का द्वितीय रुद्रसेन सौराष्ट्र के

---

* Ibid, pp. 124-25. Nos. 472-79.

† Ibid, p. CXXXIII.

‡ Ibid, pp. 126-28. Nos. 480-87.

× Ibid, pp. 127-36. Nos. 388-555.

\+ Ibid, pp. 137-40. Nos. 556-580.

सिंहासन पर बैठा था। उसके सिक्कों पर भी केवल "महाक्षत्रप" उपाधि मिलती है। उन पर शक संवत् १७८ (?) से १६६ तक दिया हुआ है *। द्वितीय रुद्रसेन के लड़के विश्वसिंह ने अपने पिता का राज्य पाया था। उसके सिक्कों पर "क्षत्रप" और "महाक्षत्रप" उपाधियाँ दी हैं, और शक संवत् १६६ से २०१ (?) तक दिया है †। विश्वसिंह के बाद उसके भाई भर्तृदाम ने राज्य पाया था और उसके सिक्कों पर दोनों उपाधियाँ हैं। उन सिक्कों पर शक संवत् २०१ से २१७ तक दिया है ‡। भर्तृदाम के लड़के विश्वसेन के सिक्कों पर केवल क्षत्रप उपाधि है। उसके सिक्कों पर शक संवत् २१६ से २२६ तक दिया है ×। जान पड़ता है कि शक संवत् २१६ से २७० तक (ईस्वी सन् २६४ से ३४८ तक) "महाक्षत्रप" उपाधिवाला कोई राजा नहीं था +। जान पड़ता है कि विश्वसेन के बाद दामसेन के वंश का अधिकार नष्ट हो गया था।

विश्वसेन के बाद स्वामी जीवदाम नामक एक साधारण मनुष्य के वंशजों ने सौराष्ट्र का सिंहासन पाया था। चष्टन के पिता घ्समोतिक की तरह जीवदाम की भी कोई राजकीय उपाधि नहीं मिलती। इसी लिये यह एक साधारण व्यक्ति

* Ibid, pp 141-46 Nos 581-626

† Ibid, pp 147-52 Nos 627-64

‡ Ibid, pp 153-61 Nos 665-718

× Ibid, pp 162-68 Nos 719-66

+ Ibid, p cxli

समझा जाता है * । परन्तु उसके नाम के स्वरूप से अनुमान होता है कि वह चष्टन का वंशधर था । विश्वसेन के बाद स्वामी जीवदम के पुत्र द्वितीय रुद्रसिंह ने सौराष्ट्र का सिंहासन पाया था । उसके चाँदी के सिक्कों पर "क्षत्रप" उपाधि और शक संवत् २२७ से २३० (?) तक मिलता है † । द्वितीय रुद्रसिंह के बाद उसका लड़का द्वितीय यशोदाम सिंहासन पर बैठा था । उसके चाँदी के सिक्कों पर "क्षत्रप" उपाधि और शक संवत् २३९ से २५४ तक मिलता है ‡ । शक संवत् २५४ से २७० के बीच में महाक्षत्रप उपाधिधारी स्वामी द्वितीय रुद्रदाम ने सौराष्ट्र का राज्य पाया था । उसका कोई सिक्का नहीं मिलता × ; परन्तु उसके लड़के तृतीय रुद्रसेन के सिक्कों पर "राजा", "स्वामी" और "महाक्षत्रप" उपाधि मिलती है + । उसका वंशपरिचय अभी तक नहीं मिला; परन्तु उसके नाम के स्वरूप से अनुमान होता है कि वह चष्टन का वंशधर था । रैप्सन का अनुमान है कि द्वितीम रुद्रदाम द्वितीय रुद्रसिंह के पिता स्वामी जीवदाम का वंशज था ÷ । द्वितीय रुद्रदाम के पुत्र तृतीय रुद्रसेन के चाँदी के सिक्कों पर उसकी महाक्षत्र

* Ibid, p. cxli.

† Ibid, pp. 170–74, Nos 767–93.

‡ Ibid, pp. 175–78 Nos. 794–811.

\+ Ibid, p. 178, cxliii.

× Ibid, p. 179.

÷ Ibid, p. cliii.

उपाधि और शक संवत् २७० से ३०० तक दिया है*। तृतीय रुद्रसेन से सीसे के बने हुए कई तिथियुक्त सिक्के मिले हैं। उन पर तिथि है और एक ओर वैल और दूसरी ओर सुमेरु पर्वत है†। तृतीय रुद्रसेन के बाद उसके पहले भान्जे सिंहसेन ने सौराष्ट्र का राज्य पाया था। सिंहसेन के चाँदी के सिक्कों पर उसकी "महाक्षत्रप" उपाधि और शक संवत् ३०४ से ३०६ (?) तक दिया है‡। सिंहसेन के बाद उसका लडका चतुर्थ रुद्रसेन सौराष्ट्र का अधिकारी हुआ था। ज्ञान पडता है कि वह शक संवत् ३०६ से ३१० तक सिंहासन पर था ×। चतुर्थ रुद्रसेन के बाद तृतीय रुद्रसेन के दूसरे भान्जे (?) सत्यसिंह ने सौराष्ट्र का राज्य पाया था। उसका कोई सिक्का नहीं मिलता +। परन्तु उसके पुत्र तृतीय रुद्रसिंह के सिक्कों पर उसकी "राजा", "महाक्षत्रप" और "स्वामी" उपाधि मिलती है। सत्यसिंह का पुत्र तृतीय रुद्रसिंह संभवत शक जातीय क्षत्रप वंश का अन्तिम राजा था। उसके चाँदी के सिक्कों पर महाक्षत्रप उपाधि और शक संवत् ३१० (?) मिलता है –।

समुद्रगुप्त के पुत्र द्वितीय चन्द्रगुप्त ने गौप्त संवत् ८२ से

---

* Ibid, pp 179-88, Nos 812-903

† Ibid, pp 187-188 Nos 889-903

‡ Ibid pp 189-90, Nos 904-06

× Ibid, p 19

\+ Ibid, p cxlix

— Ibid, pp 192-94 Nos 907-29

पहले मालव पर अधिकार किया था * और ईसी सन् ४१५ से पहले ही सौराष्ट्र पर से शकों का अधिकार उठ गया था। क्षत्रपों के सिक्कों के ढंग पर बने हुए द्वितीय चन्द्रगुप्त के चाँदी के सिक्कों पर संवत् की दहाई की जगह तो ६ मिलता है, परन्तु इकाई की जगह का अंक पढ़ा नहीं जाता †। इससे सिद्ध होता है कि गौप्त संवत् ६० से ६६ के बीच में चन्द्रगुप्त ने सौराष्ट्र पर अधिकार किया था; क्योंकि गौप्त संवत् ६६ में प्रथम कुमारगुप्त ने अपने पिता का राज्य पाया था ‡। द्वितीय चन्द्रगुप्त के चाँदी के सिक्कों में दो विभाग मिलते हैं। दोनों विभागों में एक ओर राजा का मुख, यूनानी अक्षरों के चिह्न और वर्ष और दूसरी ओर गरुड़ की मूर्ति और ब्राह्मी लिपि है। पहले विभाग के सिक्कों पर दूसरी ओर "परमभागवत महाराजाधिराज श्रीचन्द्रगुप्त विक्रमादित्यः" ×; और दूसरे विभाग के सिक्कों पर "श्रीगुप्तकुलस्य महाराजाधिराज श्रीचन्द्रगुप्तविक्रमांकस्य" लिखा है +। द्वितीय चन्द्रगुप्त के पुत्र सम्राट् प्रथम कुमारगुप्त के चाँदी के सिक्के दो प्रकार के हैं। पहलेवाले परिच्छेद में कहा जा चुका है कि पहले

---

* Fleet's Gupta Inscriptions, p. 25.

† Allan, British Museum Catalogue of Indian Coins, Gupta Dynasties, p. XXXIX.

‡ Fleet's Gupta Inscrtptions, p. 43.

× Allan B. M. C. pp. 49-51, Nos. 133-39.

\+ Ibid, p. 51, No. 140.

प्रकार के सिक्के मध्य देश में चलाने के लिये बने थे। दूसरे प्रकार के सिक्के मालव और सौराष्ट्र में चलाने के लिये बने थे। उन पर एक ओर राजा का मुख, यूनानी अक्षरों के चिह्न और ब्राह्मी अक्षरों में संवत् है। दूसरी ओर गरुड़ और ब्राह्मी अक्षरों में कुमारगुप्त का नाम और उपाधि है। वैसे सिक्कों के तीन विभाग हैं। पहले और तीसरे विभाग के सिक्कों पर दूसरी ओर "परमभागवत महाराजाधिराज श्रीकुमारगुप्तमहेन्द्रादित्य" * और दूसरे विभाग के सिक्कों पर "परमभागवत राजाधिराज श्री कुमारगुप्त महेन्द्रादित्य" † लिखा है। सौराष्ट्र और मालव में चलने के लिये बने हुए स्कन्दगुप्त के चाँदी के सिक्कों के तीन विभाग मिलते हैं। पहले विभाग के सिक्कों पर एक ओर राजा का मुख, यूनानी अक्षरों के चिह्न और ब्राह्मी अक्षरों में संवत् और दूसरी ओर गरुड की मूर्ति और ब्राह्मी अक्षरों में "पमभागवत महाराजाधिराज श्रीस्कन्दगुप्त विक्रमादित्य" लिखा है ‡। दूसरे विभाग के सिक्कों पर गरुड़ की मूर्ति की जगह एक बैल की मूर्ति है +। तीसरे विभाग के

---

* Ibid, pp 89-96, Nos 258-305, pp 98-107, Nos 321-84

† Ibid, pp 96-98 306-20 तृतीय विभाग के कई सिक्कों पर भी "महाराजाधिराज" के बदले में "राजाधिराज" उपाधि है। Ibid, pp 100-07 Nos 332-84

‡ Ibid, pp 119-21 Nos 432-44

+ Ibid, pp 121-22, Nos 445-50.

सिक्कों पर बैल की जगह एक वेदी है *। इस विभाग में तीन उपविभाग हैं। पहले उपविभाग में दूसरी ओर "परमभागवत श्रीविक्रमादित्यस्कन्दगुप्तः" लिखा है †। दूसरे उपविभाग में "परमभागवत श्रीविक्रमादित्यस्कंदगुप्तः" ‡ और तीसरे उपविभाग में "परमभागवत श्रीस्कन्दगुप्तः" × लिखा है। स्कन्दगुप्त के बाद सौराष्ट्र और मालव पर से गुप्तवंशीय सम्राटों का अधिकार उठ गया था। ईसवी पाँचवीं शताब्दी के अन्तिम भाग में बुधगुप्त नाम के एक राजा ने मालव का राज्य पाया था और शक राजाओं के सिक्कों के ढंग पर चाँदी के सिक्के बनवाए थे। चाँदी के इन सिक्कों पर गौप्त संवत् १७५ मिलता है और दूसरी ओर "विजितावनिरवनिपतिः श्रीबुधगुप्तो दिविजयति" लिखा है +। गौप्त संवत् १६५ के खुदे हुए और ईरान में मिले हुए एक शिलालेख में बुधगुप्त का उल्लेख मिला है ÷। अब तक यह निश्चित करने का कोई उपाय नहीं मिला कि बुधगुप्त का गुप्त राजवंश के साथ क्या संबंध था। गौप्त संवत् १९१ में खुदे हुए और ईरान में मिले हुए एक और शिलालेख में भानुगुप्त नाम के मालव के एक और राजा का उल्लेख है =।

* Ibid, p. 122.

† Ibid, pp. 122-24, Nos. 451-71.

‡ Ibid, pp. 124-29. Nos. 472-520.

× Ibid, p. 129. Nos. 521-22.

+ Ibid, p. 153, Nos. 517-19.

÷ Fleet's Gupta Inscriptions p. 89.

= Ibid, p. 92.

भानुगुप्त के बाद मालव पर हूण लोगों का अधिकार हुआ था। स्कन्दगुप्त की मृत्यु के उपरान्त गुजरात पर वलमी के मैत्रक-वंशी राजाओं का और सौराष्ट्र पर त्रैकुटक राजाओं का अधिकार हुआ था। मैत्रकवंशी राजा लोग गुप्त राजाओं के सिक्कों के ढंग पर अपने सिक्के बनवाते थे। उन पर एक ओर राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर एक त्रिशूल है। उन पर जो कुछ लिखा है, वह अभी तक पढ़ा नहीं गया*। त्रैकुट वंश के दहसेन और व्याघ्रसेन नामक दो राजाओं के सिक्के मिले हैं। दहसेन के सिक्कों पर एक ओर राजा का मस्तक और दूसरी ओर चैत्य, तारका और ब्राह्मी अक्षरों में "महाराजेन्द्रदत्तपुत्रपरमवैष्णवश्री-महाराजदहसेन" लिखा है†। सुरत के पास पर्दी नामक स्थान में एक ताम्रलेख मिला है। उससे पता चलता है कि दहसेन ने अश्व-मेध यज्ञ किया था और त्रैकुटक संवत् २०७ (कलचुरि, चेदि संवत् २०७=ईसवी सन् ४५६) में एक ब्राह्मण को एक गाँव दान दिया था‡। दहसेन के लड़के का नाम व्याघ्रसेन था। व्याघ्र-

* V A Smith, Catalogue of Coins in the Indian Museum Vol I, p 127, Nos III,—Rapson's Indian Coins p 27

† Rapson, British Museum Catalogue of Indian Coins, Andhras and W Ksatrapas etc pp 198-201 Nos 930-74

‡ Journal of the Bombay Branch of the Royal Asiatic Society, Vol, XVI, p 346

सेन के चाँदी के सिक्के दहसेन के सिक्कों की तरह हैं। उन पर दूसरी ओर "महाराजदहसेनपुत्रपरमवैष्णवश्रीमहाराजव्याघ्रसेन" लिखा है। * शक राजाओं के सिक्कों के ढंग पर बने हुए भीमसेन † और कृष्णराज ‡ नामक दो राजाओं के सिक्के मिले हैं। भीमसेन का एक शिलालेख मिला है ×; परन्तु उस का समय अथवा वंशपरिचय अभी तक निश्चित नहीं हुआ। पहले मुद्रातत्त्व के ज्ञाताओं का अनुमान था कि यह कृष्णराज राष्ट्रकूटवंशी द्वितीय कृष्णराज था +; परन्तु रैप्सन ने इस बात को नहीं माना है ÷। कृष्णराज के नाम के सिक्के बम्बई के नासिक जिले में मिलते हैं =। आगे के अध्याय में मालव में [illegible]ने हुए आंध्र राजाओं के सिक्कों का विवरण दिया गया है।

---

* Rapson, B. M. C pp. 202–03 Nos. 975–82.

† Rapson, Indian Coins, p. 27.

‡ Cunningham's Coins of Mediaeval India; p. 8, pl. I. 18.

× Cunningham, Archaeological Survey Reports, Vol, IX. p. 119. pl. XXX.

\+ Journal of the Royal Asiatic Society 1889, p. 138.

÷ Indian Coins. 27.

= Elliott, Coins of Southern India, p. 149.

सौराष्ट्र का द्वितीय राजवंश —
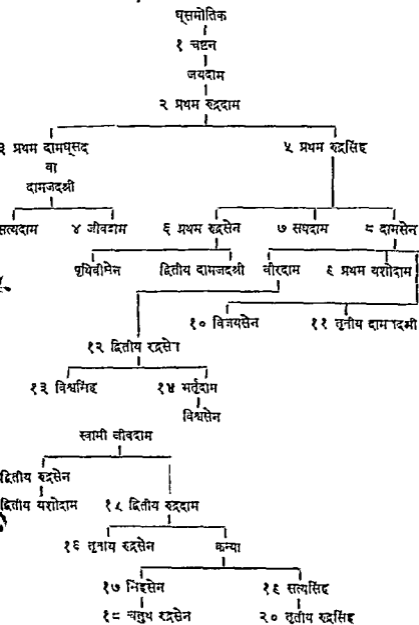
नवाँ परिच्छेद

दक्षिणापथ के पुराने सिक्के

दक्षिणापथ की तौल की रीति उत्तरापथ की तौल की रीति की तरह नहीं है। दक्षिणापथ में घुँघची के बीज के बदले में करंज या कंज के बीजों से तौल आरम्भ होती है। करंज का एक बीज तौल में ५० ग्रेन के लगभग होता है *। बहुत प्राचीन काल से ही दक्षिण में सोने के गोलाकार सिक्कों का प्रचार था। सोने के ये सिक्के "फणम्" कहलाते हैं। एक फणम् तौल में करंज के एक बीज के बराबर होता है †। सम्भवतः सबसे पहले फणम् लीडिया अथवा और किसी पश्चिमी देश के पुराने सिक्कों के ढंग पर बने थे। जिस प्रकार लीडिया देश के पुराने सिक्के गोलाकार सुवर्ण पिण्ड पर अंक-चिह्न अंकित करके बनाए जाते थे, इसी प्रकार फणम् भी बनाए जाते थे। बहुत पुराने फणम् गोलाकार सुवर्ण पिण्ड मात्र और देखने में इमली के बीज की तरह होते थे ‡। आगे चलकर अंकचिह्न अंकित करके

* Elliott's South Indian Coins p. 52 note.I.

† Ibid p. 53.

‡ Ibid; V. A. Smith, Catalogue of Coins in the Indian Museum Calcutta, Vol 1, p. 317, Nos. 1-8.

के लिये ये सुवर्ण पिण्ड चक्राकार हो गए *। इमली के बीज की तरह के सिक्के विजयानगर के राजाओं, पुर्त्तगीजों † और अँगरेज व्यापारियों ‡ ने बनवाए थे। ईसवी संवत् १८३५ में जब भारतवर्ष में सब जगह एक ही तरह के सिक्के चलने लगे, तब ऐसे सिक्कों का प्रचार उठ गया ×।

दक्षिणापथ के सिक्कों में अन्ध्र जातीय राजाओं के सिक्के सब से पुराने हैं। किसी समय अन्ध्र राजाओं का साम्राज्य नर्मदा के दक्षिणी किनारे से समुद्र तट तक था। इसी लिये मालव, सौराष्ट्र, अपरान्त आदि भिन्न भिन्न देशों में भी अन्ध्र राजाओं के भिन्न भिन्न देशों के सिक्के मिले हैं। अन्ध्र देश अर्थात् कृष्णा और गोदावरी नदी के बीच के प्रदेश में दो तरह के सिक्के मिले हैं। ये दोनों तरह के सिक्के भिन्न भिन्न समय में प्रचलित नहीं थे, क्योंकि पुडुमावि, चन्द्रशाति, श्रीयज्ञ और श्रीरुद्र आदि राजाओं ने दोनों प्रकार के सिक्के बनवाए थे। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर सुमेरु पर्वत और दूसरी ओर उज्जयिनी नगरी का चिह्न मिलता है। इन पर के लेखों के अक्षर स्पष्ट नहीं हैं +। इस प्रकार के पाँच अन्ध्र राजाओं के

---

* Ibid pp 323–25

† Ibid p 318, Nos 1–2

‡ Ibid, pp 319–20

× Ibid, p 311

+ Rapson, Catalogue of Indian Coins, Andhras W Ksatrapas, etc p lxxii

सिक्के मिले हैं :—

(१) वाशिष्ठीपुत्र श्रीपुडुमावि ।

(२) वाशिष्ठीपुत्र श्रीशातकर्णि ।

(३) वाशिष्ठीपुत्र श्रीचंद्रशाति ।

(४) गोतमीपुत्र श्रीयज्ञशातकर्णि ।

(५) श्रीरुद्रशातकर्णि * ।

दूसरे प्रकार के सिक्कों पर पहली ओर घोड़े, हाथी अथवा दोनों की मूर्त्तियाँ मिलती हैं। किसी किसी सिक्के पर सिंह की मूर्त्ति भी है। ऐसे सिक्कों का लेख बहुत ही अस्पष्ट है †। इन सिक्कों पर नीचे लिखे अंध्र राजाओं के नाम मिलते हैं :—

(१) श्रीचन्द्रशाति।

(२) गोतमीपुत्र श्रीयज्ञशातकर्णि ।

(३) श्रीरुद्रशातकर्णि ‡ ।

मध्य प्रदेश में पोटिन नामक मिश्र धातु के बने हुए एक प्रकार के सिक्के मिलते हैं। उन पर एक ओर हाथी की मूर्त्ति और दूसरी ओर उज्जयिनी नगर का चिह्न है ×। इस प्रकार के नीचे लिखे अंध्र राजाओं के सिक्के मिले हैं :—

---

* Ibid.

† Ibid, p. lxxiv.

‡ Ibid.

× Ibid, p. lxxx

(१) पुडुमावि।

(२) श्रीयज्ञ।

(३) श्रीरुद्र।

(४) द्वितीय श्रीकृष्ण *।

दक्षिणापथ के अनन्तपुर और कडप्पा जिले में एक प्रकार के सीसे के सिक्के मिले हैं। उन पर पहली ओर घोडा, सुमेरु पर्वत और बोधिवृक्ष मिलता है। ऐसे सिक्कों पर के लेख पूरी तरह से पढ़े नहीं गए हैं †।

चोडमडल के किनारे पर एक और प्रकार के सीसे के सिक्के मिले हैं। उन पर एक ओर एक जहाज और दूसरी ओर उज्जयिनी नगरी का चिह्न है ‡। ऐसे सिक्के सम्भवत अंध्र राजाओं के हैं, क्योंकि उनमें से एक सिक्के पर "पुडुमावि" नाम पढा गया है ×। मैसूर के उत्तर में सीसे के एक प्रकार के वडे सिक्के मिले हैं। उन पर एक ओर बैल और दूसरी ओर बोधिवृक्ष और सुमेरु पर्वत है। ऐसे सिक्कों पर "सदकणकडलाय महारठिस" लिखा है +। रैप्सन का अनुमान है कि ऐसे सिक्के अंध्र राजाओं के किसी महारठि (महाराष्ट्रीय ?)

---

* Ibid

† Ibid, p lxxxi

‡ Ibid

× Ibid, p lxxxii

+ Ib'd, pp lxxxii-lxxxiii

वंशी शासक के बनवाए हुए हैं *। कारवार जिले अर्थात् कनाड़ा प्रदेश के उत्तरार्द्ध में मिले हुए सीसे के कुछ घड़े सिक्कों पर चुटुकड़ानन्द और मुड़ानन्द नाम के दो राजाओं का नाम मिलता है। ऐसे सिक्कों पर एक ओर सुमेरु पर्वत और दूसरी ओर बोधिवृक्ष है †। महाराष्ट्र देश के दक्षिण भाग अर्थात् वर्त्तमान कोल्हापूर राज्य में एक प्रकार के सीसे के सिक्के मिलते हैं। ऐसे सिक्कों पर के लेख का अर्थ अभी तक साफ समझ में नहीं आया है। इनपर पहली ओर सुमेरु पर्वत और बोधिवृक्ष और दूसरी ओर कमान और तीर है। ऐसे सिक्कों पर तीन प्रकार के लेख मिलते हैं:—

(१) रञो वासिठीपुतस विड़िवायकुरस।

(२) रञो माढरिपुतस सिवलकुरस।

(३) रञो गोतमिपुतस विड़िवायकुरस ‡।

विड़िवायकुर और सिवलकुर इन दोनों शब्दों का अर्थ अभी तक निश्चित नहीं हुआ। रैप्सन का अनुमान है कि ये शब्द स्थानीय भाषाओं में लिखी हुई स्थानीय उपाधियाँ हैं ×। इस विषय में भी संदेह है कि ऐसे सिक्के अन्ध्र राजाओं के हैं या नहीं। श्रीयुक्त देवदत्त रामकृष्ण भाण्डारकर का अनुमान है कि

---

* Ibid, p. lxxxii.

† Ibid, p. lxxxiii.

‡ Ibid pp lxxxvi–lxxxvii.

× Ibid, p. lxxxvii.

ये अन्ध्र राजाओं सिक्के नहीं हैं *। पण्डितवर श्रीयुक्त सर रामकृष्ण गोपाल भाण्डारकर के मतानुसार ये सिक्के अन्ध्र साम्राज्य के भिन्न भिन्न प्रदेशों के शासकों के बनवाए हुए हैं† । अब तक इन तीनों प्रकार के सिक्कों का समय अथवा परिचय निश्चित नहीं हुआ। सोपारा और गुरजात में गोतमीपुत्र शातकर्णि और श्रीयज्ञशातकर्णि ने जो सिक्के बनवाए थे, उनका विवरण पिछले परिच्छेद में दिया जा चुका है।

मालव में अन्ध्र राजवंश के सबसे पुराने सिक्के मिले हैं। ये सिक्के अवन्ती नगर के सिक्कों के ढंग पर बने हैं और इन पर "रञो सिरिसातस" लिखा रहता है‡। नानाघाट की गुफा में श्रीशातकर्णि की पत्थर की मूर्त्ति के नीचे जिस प्रकार के अक्षरों में "रञो श्रीसातस" लिखा है ×, वह ठीक इन सिक्कों के लेख के अक्षरों के समान है +। प्राचीन लिपितत्व के अनुसार ऐसे सिक्के और शिलालेख ईसा से पूर्व दूसरी शताब्दी के मध्य भाग के बने और खुदे हुए हैं।

स्वर्गीय पण्डित भगवानलाल इन्द्रजी ने अपने एकत्र किए

---

* Journal of the Bombay Branch of the Royal Asiatic Society, Vol XXIII p 68

† Early History of Deccan, 2nd Edition p 20

‡ Rapson B M C p xcii

× Journal of the Bombay Branch of the Royal Asiatic Society, Vol XIII, p 311

+ Rapson, B M C p xciii

हुए सिक्के मरते समय लण्डन के ब्रिटिश म्यूजिअम को प्रदान कर दिए थे। उन सिक्कों में दो प्रकार के सिक्के मिलते हैं। उन सिक्कों पर के लेख का जो अंश पढ़ा जा सका है, उससे पता चलता है कि ये सिक्के भी अन्ध्र राजाओं के ही हैं। पहले प्रकार के सिक्के ईरान के पुराने सिक्कों की तरह हैं*। कनिंघम ने लिखा है कि इस प्रकार के सिक्के पुरानी विदिशा नगरी (वर्त्तमान वेसनगर) के खँडहरों में और वेस तथा बेतवा नदी के वीच के प्रदेश में मिलते हैं†। इसलिये रैप्सन का अनुमान है कि ये पूर्व मालव के सिक्के हैं‡। ऐसे सिक्कों के चार विभाग हैं। पहले विभाग के सिक्के पोटिन के बने हैं। उन पर एक ओर घेरे में बोधिवृक्ष, उज्जयिनी नगर का चिह्न, नन्दिपाद चिह्न और सूर्य का चिह्न है। दूसरी ओर हाथी की मूर्त्ति और स्वस्तिक चिह्न है×। दूसरे विभाग के सिक्कों पर पहली ओर हाथी की मूर्त्ति और दूसरी ओर घेरे में बोधि-वृक्ष और उज्जयिनी नगर के चिह्न हैं। इस विभाग के सिक्के ताँबे के बने हुए हैं+। तीसरे विभाग के सिक्कों पर पहली ओर सिंह की मूर्ति और नन्दिपाद चिह्न और दूसरी ओर घेरे में बोधिवृक्ष और उज्जयिनी नगर का चिह्न है। ऐसे सिक्के

---

* Ibid, p. xcv.

† Cunningham's Coins ol Ancient India, p. 99.

‡ Rapson, B. M. C. p. xcv.

× Ibid, p. 3, Nos. 5–6.

\+ Ibid, No 7.

भी ताँवे के बने हुए हैं * । चौथे विभाग के सिक्के पोटिन के बने हुए हैं। उन पर पहली ओर सिंह की मूर्ति और स्वस्तिक चिह्न है और ब्राह्मी अक्षरों में "रओसातकणिस" उलटी तरफ लिखा है। दूसरी ओर नन्दिपाद चिह्न के बीच में उज्जयिनी नगर का चिह्न और घेरे में बोधिवृक्ष है †। इन चारों विभागों के सिक्के चौकोर हैं। दूसरे प्रकार के सिक्कों के दो विभाग हैं। पहले विभाग के सिक्कों पर एक ओर हाथी की मूर्त्ति, शंख और उज्जयिनी नगर का चिह्न है। दूसरी ओर घेरे में बोधिवृक्ष है। ऐसे सिक्के पोटिन के बने हुए और गोलाकार हैं ‡। दूसरे विभाग के सिक्के ताँबे के बने हुए और चौकोर हैं। इसके सिवा उनकी और सब बातें पहले विभाग के सिक्कों की तरह हैं ×।

भिन्न भिन्न समय में अंध्र राजाओं का अधिकार भिन्न भिन्न प्रदेशों में था, इसलिये भिन्न भिन्न अंध्र राजाओं के बहुत से भिन्न भिन्न प्रकार के सिक्के मिला करते हैं। जिस समय जो प्रदेश अंध्र राजाओं के अधिकार में आया, उस समय अंध्र राजाओं ने उसी देश के सिक्कों के ढग पर अपने सिक्के बनवाए। जान पडता है कि ईसा से पूर्व दूसरी शताब्दी में मालव

* Ibid, p 4, No 8
† Ibid, Nos 9-11
‡ Ibid pp 17-19, Nos 59-75
× Ibid, p 19, No, 87

देश में अंध्र राजाओं का राज्य था। इसी लिये मालव में मिले हुए "श्रीसात" के नाम के सिक्के मालव के पुराने सिक्कों के ढंग पर बने थे। श्रीसात के नाम के सिक्के दो प्रकार के हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर हाथी और नदी के जल में तैरती हुई तीन मछलियों की मूर्त्ति है। ऐसे सिक्के सीसे के बने हुए हैं *। दूसरे प्रकार के सिक्के पोटिन के बने हैं। उन पर एक ओर हाथी की मूर्त्ति, घेरे में बोधिवृक्ष, सुमेरु पर्वत और मछली सहित नदी है। दूसरी ओर खड़े हुए मनुष्य की मूर्त्ति और उज्जयिनी नगर का चिह्न है †। मालव के पुराने सिक्कों के ढंग पर बना हुआ सीसे का एक सिक्का मिला है, जिस पर किसी राजा के नाम के आदि के दो अक्षरों को "अज" पढ़ा जा सकता है ‡। अन्ध्र देश के गोदावरी जिले में और एक सीसे की मूर्त्ति मिली है, उस पर एक ओर राजा के नाम के अन्त के दो अक्षरों को "वीर" पढ़ा गया है ×। पूर्व और पश्चिम मालव में मिले हुए छः प्रकार के जिन सिक्कों का पहले वर्णन किया गया है, उन पर साधारणतः "सातकणिस" लिखा है +। महाराष्ट्र देश के दक्षिण अंश में जो तीन प्रकार के सिक्के मिलते हैं, उनमें भी परस्पर कुछ प्रकार-भेद मिलता

* Ibid, p. 1, No. 1

† Ibid, No 2.

‡ Ibid, p. 2., No. 3.

× Ibid, No. 4

\+ Ibid, pp. 3–4.

है। वाशिष्ठीपुत्र विडिवायकुर के नाम के सिक्के दो प्रकार के हैं। पहले प्रकार के सिक्के सीसे के बने हैं। उन पर एक ओर सुमेरु पर्वत, घेरे में बोधिवृक्ष और स्वस्तिक और दूसरी ओर कमान और तीर है*। दूसरे प्रकार के सिक्के पोटिन के बने हैं। उन पर एक ओर सुमेरु पर्वत के ऊपर वृक्ष और नन्दिपाद चिह्न और दूसरी ओर कमान और तीर है†। माठरीपुत्र सिवलाकुर के नाम के सिक्के भी दो प्रकार के हैं। पहले प्रकार के सिक्के सीसे के बने हैं। उन पर एक ओर सुमेरु पर्वत के ऊपर बोधिवृक्ष और दूसरी ओर धनुष है ‡। दूसरे प्रकार के सिक्के पोटिन के बने हैं। उन पर एक ओर सुमेरु पर्वत के ऊपर बोधिवृक्ष और नन्दिपाद चिह्न और दूसरी ओर कमान और तीर है ×। गौतमीपुत्र विडिवायकुर के सिक्के भी दो प्रकार के हैं—सीसे + के और पोटिन के। पोटिन के बने सिक्कों के दो विभाग हैं। पहले विभाग में पहली ओर नन्दिपाद + और दूसरे विभाग में स्वस्तिक चिह्न = है। पश्चिम भारत में मिले हुए पोटिन के बने कुछ सिक्कों पर एक ओर

---

* Ibid, p 5, Nos 13-16

† Ibid p 6 Nos 17-21

‡ Ibid pp 7-9 Nos 22-30

× Ibid, p 9 Nos 31-32

+ Ibid pp 13-14 Nos 47-52

— Ibid, p 15, Nos 53-58

= Ibid, p 16

मछलियोंवाला चिह्न है*। मुद्रातत्त्व के ज्ञाताओं का अनुमान है कि ऐसे सिक्के ईसवी सातवीं शताब्दी से दसवीं शताब्दी तक प्रचलित थे†। ईसवी ग्यारहवीं शताब्दी में पाण्ड्य देश को चोल राजाओं ने जीत लिया था। इसी लिये उस समय के ताँबे के सिक्कों पर पांड्य राजाओं के दो मछलियोंवाले चिह्न के साथ चोल राजाओं का बाघवाला चिह्न भी मिलता है‡।

वर्त्तमान मैसूर का पश्चिमांश पहले कोङ्गु देश कहलाता था। मुद्रातत्त्व के ज्ञाताओं का अनुमान है कि दक्षिणापथ के धनुषवाले सोने और ताँबे के सिक्के इसी प्रदेश के हैं ×। हाथी की मूर्त्तिवाले एक और प्रकार के सोने के सिक्के हैं जो 'गजपति पागोडा' कहलाते हैं और जो इसी देश के सिक्के माने जाते हैं+। काश्मीर के राजा हर्षदेव ने इसी प्रकार के सिक्कों के ढंग पर अपने सिक्के बनवाए थे ÷। चन्द्रगिरि और कुमारिका

---

* Indian Coins, p 35.

† Ibid, p. 36.

‡ Ibid.

× Ibid.

+ V. A. Smith, Catalogue of Coins in the Indian Museum, Vol. I-p. 318. No. 1.

÷ दक्षिणात्यभवद्भङ्गिः प्रिया तस्य विलासिनः।
कर्णाटान् गुणटङ्कस्ततस्तेन प्रवर्त्तितः ॥
राजतरङ्गिणी—सप्तम तरङ्ग ६२६।

अन्तरीप के बीच का प्रदेश प्राचीन काल में केरल कहलाता था। प्राचीन काल में केरल राजाओं के नाम के सोने के सिक्के प्रचलित थे। ऐसा केरल एक ही सिक्का अब तक मिला है, जो लडन के ब्रिटिश म्यूजिअम में रखा है। उस पर दूसरी ओर नागरी अक्षरों में "श्रीवीरकेरलस्य" लिखा है *।

चोल राजाओं के दो प्रकार के सोने के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्के ईसवी ११वीं शताब्दी से पहले के बने हैं। उन पर चोल राजाओं के चिह्न 'व्याघ्र' के साथ चेर राजाओं का चिह्न मछली है †। इसलिये मुद्रातत्त्व के ज्ञाताओं का अनुमान है कि उन दिनों पाण्ड्य और चेर राजा लोग चोल राजाओं की अधीनता स्वीकृत करते थे। ईसवी ११वीं शताब्दी के आरंभ में चोल राजाओं ने प्राय सारे दक्षिणापथ पर अधिकार कर लिया था और सारा अडमन द्वीपपुञ्ज तथा सिंहल जीत लिया था। ईसवी सन् ११२२ के बाद चोलवंशी प्रथम राजा राजदेव ने एक नए प्रकार के सिक्के चलाए थे। उन पर एक ओर खडे हुए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर बैठे हुए राजा की मूर्ति है ‡। ईसवी सन् ११७० में चोलवंशी प्रथम कुलोत्तुंग ने सोने के एक प्रकार के बहुत

---

* Indian Coins, p 36

† Elliott, South Indian Coins p 152, G, No 151, pl IV

‡ Indian Coins, p 36.

छोटे सिक्के बनवाए थे *। चोल-विजय के उपरांत सिंहल के राजाओं ने चोल सिक्कों के ढंग पर एक प्रकार के सिक्के बनवाए थे। उन पर एक ओर खड़े हुए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर लक्ष्मी की मूर्त्ति है †। ऐसे सिक्के ईसवी सन् ११५३ से १२८६ तक प्रचलित थे। पराक्रमबाहु, विजयबाहु, लीलावती, साहसमल्ल, निश्शंकमल, धर्माशोक और भुवनैकबाहु के ताँबे के सिक्के इसी प्रकार के हैं ‡।

पल्लव लोग चोड़मंडल के पास के स्थान में रहा करते थे। उन लोगों के पुराने सिक्के अंध्र राजाओं के सिक्कों के ढंग पर बने हुए हैं। उन पर एक ओर बैल और दूसरी ओर वृक्ष, जहाज, तारका, केकड़ा और मछली मिलती है ×। पल्लव लोगों के सिक्कों पर जहाज देखकर मुद्रातत्व के ज्ञाता अनुमान करते हैं कि उन दिनों पल्लव लोग व्यापार के लिये विदेश जाया करते थे। पल्लव लोगों के बाद के समय में सोने और चाँदी दोनों धातुओं के सिक्के बनते थे। उन पर पल्लव राजाओं का चिह्न सिंह और संस्कृत अथवा कन्नड़ी भाषा में कुछ लिखा हुआ मिलता है +।

ईसवी सातवीं शताब्दी के बाद चालुक्यवंशी राजाओं का

* Indian Antiquary, 1896, p. 321, pl. II, 26–27.
† Indian Coins, p. 37.
‡ I. M. C. Vol. I, pp. 327–30.
× Indian Coins, p. 37.
+ Ibid.

राज्य दो भागों में बँट गया था। पूर्व की ओर चालुक्य राजा लोग कृष्णा और गोदावरी नदी के बीच के प्रदेश में राज्य करते थे और पश्चिम ओर चालुक्य राजाओं का राज्य दक्षिणापथ के पश्चिम प्रांत में था। दोनों शाखाओं के राजाओं के सिक्कों पर चालुक्य वंश का चिह्न वराह मिलता है *। पश्चिम के चालुक्य राजाओं के सिक्के सोने के तौल में भारी और संभवतः गोआ के कादम्बवंशी राजाओं के पद्मटंका नामक सोने के सिक्कों के ढंग पर बने हुए हैं। कलकत्ते के अजायब घर में जगदेकमल्ल अर्थात् द्वितीय जयसिंह का सोने का सिक्का रक्खा है †। पूर्व ओर अर्थात् वेंगी के चालुक्य राजाओं के सोने, चाँदी और ताँबे तीनों के सिक्के मिले हैं ‡। विषमसिद्धि अर्थात् कुब्जविष्णुवर्द्धन का चाँदी का सिक्का कलकत्ते के अजायब घर में रक्खा है ×। विशाखपत्तन जिले के येल्लमचिलि नामक स्थान में विष्णुवर्द्धन के ताँबे के कई सिक्के मिले थे +। इसी वंश के चालुक्यचंद्र या शक्तिवर्मा के सोने के कई सिक्के अराकान तट के पास चेदुबा द्वीप में

---

* Ibid

† I M C Vol 1, p 313, Nos 1-9

‡ Indian Coins, p 37 I M C Vol 1, p 312

× Ibid pp 312-18 Nos 1-5

+ Indian Antiquary, 1896, p 322, pl II 34

मिले हैं *। ऐसे सिक्के सोने के बहुत ही पतले पत्तर के हैं और उन पर राज्यारोहण का वर्ष लिखा है।

गोआ के कादम्बवंशी राजाओं के सोने के सिक्कों के बीच में एक पद्म रहता है। इसी लिये सोने के ऐसे सिक्के पद्मटंका कहलाते हैं †। ईलियट का अनुमान है कि ये सिक्के ईसवी पाँचवीं अथवा छठीं शताब्दी के हैं ‡। परंतु रेप्सन का कथन है कि इन सिक्कों पर जिन अक्षरों का व्यवहार है, वे अक्षर बहुत बाद के समय के हैं ×। कल्याणपुर के कलचुरि अथवा चेदि वंश के केवल एक ही राजा के सिक्के मिले हैं। उन पर एक ओर वराह अवतार की मूर्त्ति और दूसरी ओर नागरी अक्षरों में "मुरारि" लिखा है +। मुरारि संभवतः इस वंश के दूसरे राजा सोमेश्वरदेव का दूसरा नाम है ÷।

देवगिरि के यादववंशी राजाओं के सोने, चाँदी और ताँबे तीनों के सिक्के मिले हैं। सोने के सिक्कों पर एक ओर गरुड़मूर्त्ति और दूसरी ओर कनड़ी अक्षरों में राजा का नाम

---

* Ibid, 1890 p. 79; Proceedings of the Asiatic Society of Bengal, 1872, p. 3.

† Indian Coins, p. 38, I. M C. Vol. 1, pp 317–18. Nos. 1–6.

‡ Elliott's South Indian Coins, p. 66.

× Indian Coins. p. 38.

+ Elliott's South Indian Coins, p. 152, D; pl. III,87.

÷ Ibid, p. 78.

मिलता है* । चाँदी और ताँबे के सिक्के भी इन्हीं सिक्कों के ढंग पर बनते थे। मैसूर के द्वारसमुद्र नामक स्थान में यादव वंशी राजाओं के सोने और ताँबे के सिक्के मिले हैं। सोने के सिक्कों पर एक ओर सिंह की मूर्त्ति और दूसरी ओर कन्नडी भाषा का लेख है †। ताँबे के सिक्कों पर एक ओर हाथी की मूर्त्ति और दूसरी ओर कन्नडी भाषा का लेख है‡। द्वारसमुद्र के यादववंशी राजाओं के सिक्कों पर राजा के नाम के बदले में केवल उपाधि मिलती है, जैसे—"श्रीतल काडुगोण्ड" × अर्थात् तलकाडुविजयी। यह विष्णुवर्द्धन की उपाधि है। "श्रीनोणम्बवाडिगोण्डन्" + अर्थात् नोणम्बवाडिविजयी। वरंगल के काकतीय वंश के राजाओं के सोने और ताँबे के सिक्के मिले हैं। उन पर एक ओर बैल की मूर्त्ति और दूसरी ओर कन्नडी अथवा तेलगू भाषा का लेख है ─। ये सब लेख अभी तक पढ़े नहीं गए।

जब उत्तरापथ पर मुसलमानों का अधिकार हो गया, तब दक्षिणापथ के विजयनगर में एक नया साम्राज्य स्थापित हुआ था। विजयनगर के राजा लोग सन् १५६५ तक विल-

* Ibid, p 152 D, Nos 87-89
† Ibid, No 90-91
‡ Ibid, No 92
× Ibid, No 90
+ Ibid No 9'
─ Ibid Nos 93-95

कुल स्वाधीन थे और सोहलवीं शताब्दी के अंत तक दक्षिणापथ में पुराने आकार के सोने के सिक्के बराबर चलते थे। जब दक्षिणापथ के उत्तरी अंश को मुसलमानों ने जीत लिया, तब वहाँ दूसरे प्रकार के सिक्कों के प्रचलित हो जाने पर भी दक्षिणी अंश में पुराने आकार के सिक्के ही प्रचलित थे*। विजयनगर के तीन भिन्न भिन्न राजवंशों के सिक्के मिले हैं। पहले राजवंश के सिक्कों पर एक ओर राजा का नाम और दूसरी ओर विष्णु तथा लक्ष्मी की मूर्त्ति है†। दूसरे ‡ और तीसरे × राजवंश के सिक्कों पर दूसरी ओर केवल विष्णु की मूर्त्ति मिलती है।

---

* Indian Coins p. 38.

† I. M. C., Vol. 1, p. 323.

‡ Ibid, pp. 313-25.

× Ibid, p. 325.

दसवाँ परिच्छेद

सैसनीय सिक्कों का अनुकरण

जिस बर्बर जाति ने प्राचीन गुप्त साम्राज्य को ध्वंस किया था, वह "हूण" और पश्चिम में "हून" कहलाती है। संस्कृत साहित्य में उसका "श्वेत" "सित" या "हारहूण" के नाम से उल्लेख है। वराहमिहिर की बृहत्संहिता में पह्लव लोगों के साथ श्वेत हूणों का उल्लेख है *। जिन लोगों ने स्कन्दगुप्त के राजत्व काल में गुप्त साम्राज्य नष्ट किया था, वे लोग मध्य एशिया के रेगिस्तानवाले इन्हीं श्वेत हूणों की शाखा मात्र थे। श्वेत हूणों ने अनुमानतः सन् ४२० ई० से ५५६ ई० तक बराबर पारस्य के सैसनीय राजाओं के राज्य पर आक्रमण किए थे †। सन् ५५६ में जब तुरुष्क लोगों ने हूणों का बल तोड़ दिया, तब कहीं जाकर पारस्य के राजा लोग हूणों के आक्रमण से बच सके थे ‡। सैसनीय वंश का पारस्य का राजा येज़्देगर्द सन् ४३८ से ४५७ ई० के बीच में और फीरोज़ सन्

* गिरिदुर्गपह्लवश्वेतहूणचोलावगाणमरुचीनाः।
प्रत्यन्तधनिमहेच्छव्यवसायपराक्रमोपेताः॥
—बृहत्संहिता १६।३८ Kern's Ed p 106

† Indian Coins, p 28

‡ Ibid

४५७ से ४८४ ई० के वीच में हूणों से कई वार परास्त हुआ था। उसी समय भारत के सीमा प्रदेश के सैसनीय साम्राज्य के प्रदेशों पर हूण लोगों का अधिकार हो गया था *। जिस हूण राजा ने भारत में हूण राज्य स्थापित किया था, चीन देश के इतिहासकारों के मत से उसका नाम ले-लीह था †। मुद्रातत्त्व-वेत्ताओं के मतानुसार यह ले-लीह और काश्मीर का राजा लखन उदयादित्य दोनों एक ही व्यक्ति थे ‡। लखन उदयादित्य के चाँदी के कई सिक्के मिले हैं ×। हूण लोगों ने पहले गान्धार के किदारकुषण वंश के राजाओं को परास्त करके तव भारतवर्ष में प्रवेश किया था। गुप्त, कुषण और सैसनीय इन तीन भिन्न भिन्न वंशों के साथ उनका सम्वन्ध हुआ था, इसलिये उन लोगों ने तीनों राजवंशों के सिक्कों का अनुकरण किया था। हूण लोगों को सव से पहले पारस्य के सैसनीय वंश से काम पड़ा था। उन लोगों ने भारत की सीमा पर के सैसनीय साम्राज्य के प्रदेशों पर अधिकार करके लूट पाट में जो सैसनीय सिक्के पाए थे, वे कुछ दिनों तक विलकुल उन्हीं का व्यवहार करते थे +। हूण जाति के राज्यों में सैसनीय

---

* Journal of the Asiatic Society of Bengal, Old Series, 1904, pt. 1, p. 368.

† Indian Coins, p. 28.

‡ Journal of the Asiatic Society of Bengal, Old Series, 1904, pt. I, p. 369.

× Numismatic Chronicle, 1894, p. 279.

+ Indian Coins, p. 5.

सिक्कों का इतना अधिक प्रचार हो गया था कि आगे चलकर जब सिक्के बनाने की आवश्यकता पडी, तब सब जगह सेसनीय सिक्कों के ढग पर ही नए सिक्के बनने लग गए थे *। इस प्रकार भारतवर्ष में सैसनीय सिक्कों के ढग पर सिक्के बनने लगे। ऐसे सिक्कों पर एक ओर सैसनीय शिरोभूषण अथवा शिरस्त्राण पहने हुए राजा का मस्तक और दूसरी ओर पारस्य देश के अग्निदेवता की वेदी या कुण्ड मिलता है। भारत में हूण राजाओं के सिक्के ही सेसनीय सिक्कों के ढग पर बने हुए सब से पुराने सिक्के हैं। बाद के समय में, ईसवी ७ वीं अथवा ८ वीं शताब्दी में, पजाब के पश्चिमी भाग में एक नया सैसनीय राज्य स्थापित हो गया था। उस राज्य के राजाओं के सिक्के सैसनीय अवश्य हैं, परन्तु वे हूण राजाओं के सिक्कों की अपेक्षा नवीन हैं।

हूण राजाओं के सब से पुराने सिक्के सेसनीय चाँदी के सिक्कों की तरह छोटे हैं और उन पर सिजिस्तान या सीस्तान के कुषण राजाओं के सोने के सिक्कों की तरह यूनानी लिपि है †। बाद में यूनानी लिपि के बदले में नागरी लिपि का व्यवहार होने लग गया था ‡। ऐसे सिक्कों पर दूसरी ओर अग्निदेवता की वेदी के ऊपर हूण राजा का मस्तक भी बना करता था। मारवाड़

---

* Ibid, p 29

† Numismatic Chronicle, 1894, pp 276-77

‡ Indian Coins, p 29

में एक प्रकार के चाँदी के सिक्के मिलते हैं जो सैसनीय वंश के पारस्य के राजा फीरोज के सिक्कों के ढंग के हैं*। फीरोज सन् ४८८ ई० में हूण-युद्ध में मारा गया था। हार्नली †, रेप्सन ‡, स्मिथ × आदि प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ताओं के मतानुसार ये सब सिक्के हूण राजा तोरमाण के बनवाए हुए हैं। बाद की चार शताब्दियों में फीरोज के सिक्कों के ढंग पर गुजरात, राजपूताने और अन्तर्वेदी के राजाओं ने चाँदी के सिक्के बनवाए थे + । मालव में हूण राजा तोरमाण के बहुत से चाँदी के सिक्के मिले हैं। ये मालव के राजा बुधगुप्त के चाँदी के सिक्कों के ढंग पर बने हैं और इन पर संवत् ५२ लिखा मिलता है ÷ । अब तक यह निश्चित नहीं हुआ कि यह तोरमाण के राज्यारोहण का वर्ष है अथवा किसी संवत् का। तोरमाण के एक प्रकार के ताँबे के सिक्के मिले हैं। उन पर एक ओर सैसनीय राजाओं के मस्तक की तरह मस्तक बना है और उसके सामने ब्राह्मी अक्षरों में "त्र" लिखा है। दूसरी

---

* V. A Smith, Catalogue of Coins in the British Museum, p. 233

† Proceedings of the Asiatic Society of Bengal, 1889, p. 228.

‡ Indian Coins, p 29.

× I. M. C. Vol. I, p. 237.

+ Indian Coins p. 29

÷ Journal of the Royal Asiatic Society, 1889, p. 136; Cunningham's Coins of Medieval India, p. 20

और ऊपर की तरफ सूर्य का चिह्न है और उसके नीचे ब्राह्मी अक्षरों में "तोर" लिखा है*। तोरमाण के पुत्र मिहिरकुल के चाँदी के सिक्के सब प्रकार से सैसनीय सिक्कों का अनुकरण हैं †। मिहिरकुल के दो प्रकार के ताँबे के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर राजा का मस्तक है और उसके मुँह के पास "श्रीमिहिरकुल" अथवा "श्रीमिहिरगुल" लिखा है। दूसरी ओर ऊपर खड़े हुए बैल की मूर्त्ति है और उसके नीचे "जयतु वृष" लिखा है ‡। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर खड़े हुए राजा की मूर्त्ति और उसके बगल में एक ओर "षाहि मिहिरगुल" लिखा है और दूसरी ओर सिंहासन पर देवी की मूर्त्ति है ×। मिहिरकुल के एक प्रकार के सिक्के तोरमाण के सिक्कों पर बने हुए हैं +। पंजाब में नमक के पहाड़ के पास एक शिलालेख मिला है। उससे पता चलता है राजाधिराज महाराज तोरमाण के राज्यकाल में रोट्टजयवृद्धि के पुत्र रोटसिद्धवृद्धि ने एक विहार बनवाया था ÷। मध्य प्रदेश के सागर जिले के पेरिन नामक गाँव में वराह की एक मूर्त्ति मिली है। वराह की छाती पर तोरमाण के राज्यकाल

---

* I M C Vol I, pp 235-36, Nos 1-6

† Indian Coins, p 29

‡ I M C, Vol 1, p 236, Nos 1-9

× Ibid, p 237 No 10

+ Indian Coins p 30

÷ Epigraphia Indica, Vol 1 pp 239-40

का खुदा हुआ एक लेख है। उस लेख से पता चलता है कि तोरमाण के राज्य के पहले वर्ष में महाराज मातृविष्णु के छोटे भाई धन्यविष्णु ने वराह के लिये एक मन्दिर बनवाया था *। इसी शिलालेख से तोरमाण का समय निश्चित हुआ है। बुध-गुप्त के राज्यकाल में गौप्त संवत् १६५ में खुदे हुए शिलालेख से पता चल जाता है कि उस समय मातृविष्णु जीवित था †। परन्तु वराहमूर्त्ति के लेख से पता चल जाता है कि तोरमाण के राज्य के प्रथम वर्ष से पहले ही मातृविष्णु की मृत्यु हो गई थी। इसलिये तोरमाण के राज्यारोहण का पहला वर्ष गौप्त संवत् १६५ (ई० सन् ४८४) के बाद होता है। ग्वालियर के किले में मिहिरकुल का एक शिलालेख मिला है। वह मिहिर कुल के राज्य के १५ वें वर्ष में खुदा था। उस शिलालेख से पता चलता है कि उस वर्ष मातृचेट नामक एक व्यक्ति ने सूर्य का एक मन्दिर बनवाया था। इससे यह भी पता चल जाता है कि मिहिरकुल तोरमाण का पुत्र था ‡। ससनीय राजाओं के सिक्कों के ढंग पर बने हुए ताँबे और चाँदी के अनेक सिक्कों पर हिरण्यकुल ×, जर + वा जरि ÷, भारण वा

* Fleets Gupta Inscriptions, pp. 159-60.
† Ibid, p. 89.
‡ Ibid, pp 92-93.
× Numismatic Chronicle, 1894, p 282. Nos. 9-10.
+ Ibid, No. 11.
÷ Ibid, No. 12.

जाएण *, त्रिकोक † पूर्वादित्य ‡ नरेन्द्र × आदि राजाओं के नाम मिले हैं। परन्तु अब तक इन राजाओं का परिचय या समय निश्चित नहीं हुआ। इनमें से दो एक काश्मीर के राजा जान पड़ते हैं। काश्मीर में बने हुए तोरमाण और मिहिरकुल के सिक्कों का विवरण अगले अध्याय में दिया जायगा।

सैसनीय वंश के पारस्य के राजा फीरोज के सिक्कों के ढंग पर भारत में जो सिक्के बने थे, मुद्रातत्त्वविद् उन्हें दो भागों में विभक्त करते हैं। पहला विभाग उत्तर पश्चिम के सिक्कों का है +। फीरोज के सिक्कों का यही सबसे अच्छा अनुकरण है। इस विभाग में दो उपविभाग हैं। पहले उपविभाग के सिक्के बढ़िया – और दूसरे उपविभाग के सिक्के घटिया हैं =। परन्तु किसी उपविभाग के सिक्कों पर कुछ भी लिखा नहीं है। दूसरे विभाग के सिक्के पूर्व देश अथवा मगध के हैं। उन पर एक ओर राजा का नाम और दूसरी ओर पारस्य देश के अग्निदेवता की वेदी का अनुकरण मिलता है। पालवंशी प्रथम विग्रहपाल देव के सिक्के इसी प्रकार के

---

* Ibid, p 284
† Ibid, No 6
‡ Ibid, p 285
× Ibid, p 286
+ I M C Vol p 237
– Ibid, pp 237-38, Nos 1-14
= Ibid, pp 238-39 Nos 15-30

हैं *। उन पर पहली ओर "श्रीविग्रह" लिखा है। कुछ दिनों पहले मालव में श्रीदाम नामक किसी राजा के नाम के इसी तरह के सिक्के मिले थे †। गुर्जर प्रतीहार-वंशी प्रथम भोज-देव के चाँदी और ताँबे के सिक्के इसी प्रकार के हैं ‡। उन पर पहली ओर भोजदेव की उपाधि "श्रीमदादिवराह" है और उसके नीचे अग्निदेवता की वेदी का अस्पष्ट अनुकरण है। दूसरी ओर वराह अवतार की मूर्त्ति है। उत्तर-पश्चिम प्रांत के सिक्कों के ढंग पर गढैया या गढिया नाम के चाँदी और ताँबे के सिक्के १८ वीं शताब्दी तक बनते थे। ऐसे सिक्कों में चार विभाग मिलते हैं। प्रत्येक विभाग के सिक्कों पर एक ओर सैसनीय राजमूर्त्ति का अनुकरण और दूसरी ओर अग्निदेवता की वेदी का अनुकरण है। पहले विभाग के सिक्के सैसनीय चाँदी के सिक्कों की तरह क्षीणवेध और बड़े आकार के हैं ×। दूसरे विभाग के सिक्के अपेक्षाकृत बड़े हैं +। तीसरे विभाग के सिक्के मोटे और बहुत छोटे हैं ÷। चौथे विभाग

---

* Ibid pp. 239–40, Nos. 1–13.

† श्रीदाम के सिक्कों का विवरण सन् १९१२–१३ के पुरातत्व विभाग के वार्षिक कार्य विवरण में प्रकाशित हुआ है।

‡ I. M. C. Vol. 1, pp. 241–42, Nos. 1–10.

× Ibid, p. 240, Nos. 1–8.

\+ Ibid, Nos.9–12.

÷ Ibid, pp. 240–41, Nos. 13–23.

के सिक्के बहुत छोटे और बहुत हाल के हैं *। इन पर नागरी अक्षरों में कुछ लिखा मिलता है। परन्तु दूसरे किसी विभाग के सिक्कों पर लेख का नाम ही नहीं है।

रावलपिंडी के पास मणिक्याला का विख्यात स्तूप जिस समय खुद रहा था, उस समय सैसनीय सिक्कों के ढंग पर बने हुए चाँदी के दो सिक्के मिले थे †। इन दोनों सिक्कों में विशेषता यह है कि इन पर पहली ओर ब्राह्मी अक्षरों और दूसरी ओर पह्लवी अक्षरों में लेख है। पहली ओर ब्राह्मी अक्षरों में "श्रीहितिवि ऐरणच परमेश्वर श्रीवाहितिगीन् देवनारित" लिखा है ‡। इस लेख के प्रथमांश का अर्थ अभी तक निश्चित नहीं हुआ और उसके पाठ के संबंध में भी मत-भेद है। संभवतः ये सिक्के पंजाब के किसी विदेशी राजा ने बनवाए थे। तिगीन उपाधि से मालूम होता है कि यह राजा तुरुष्क जाति का था, क्योंकि तिगीन तुरुष्क भाषा का शब्द है। दूसरी ओर बाईं तरफ पह्लवी अक्षरों में "सफ्न् सफ् तफ्" लिखा है। दाहिनी तरफ "तरखान खोरासान् मालका" लिखा है ×। कनिंघम के एकत्र किए हुए इस प्रकार के और भी

---

* Ibid, p 241 No 24

† Journal of the Royal Asiatic Society, 1850, p 344

‡ I M C Vol 1, p 234, No 1, Numismatic Chronicle, 1894, p 291, No 9

× I M C Vol 1, p 234, No 1

कई सिक्कों पर एक ओर यूनानी अक्षरों के चिह्न हैं और दूसरी ओर ब्राह्मी अक्षरों में "श्री यादेवि-मानर्था" लिखा है*। वासुदेव नामक एक राजा के सिक्कों पर ब्राह्मी और पह्लवी दोनों लिपियाँ मिलती हैं। उन पर पहली ओर "सफ्वपुंतफ्" लिखा है। कनिंघम का अनुमान है कि इस पह्लवी लेख का अर्थ श्रीवासुदेव है। इस प्रकार के सिक्कों पर दूसरी ओर ब्राह्मी अक्षरों में "श्रीवासुदेव" और पह्लवी अक्षरों में "तुकान् जाउलस्तान सपर्दलख्सान" लिखा है†। ऐसे ही और एक प्रकार के सिक्कों पर नापकिमालिक नामक एक और राजा का नाम मिलता है‡। अब तक यह निश्चित नहीं हुआ कि नापकि के सिक्के भारतीय हैं अथवा पारसी ×। ऐसे सिक्कों पर पहली ओर पह्लवी अक्षरों में "नापकिमालिक" और दूसरी ओर दो एक ब्राह्मी अक्षरों के चिह्न हैं।

---

* Numismatic Chronicle, 1894, p. 289, No. 5.

† Ibid, p. 292, No. 10.

‡ I. M. C. Vol. 1, p. 235, Nos. 1–5.

× Indian Coins, p. 30.

ग्यारहवाँ परिच्छेद

उत्तरापथ के मध्य युग के सिक्के

(क) पश्चिम सीमान्त

गुप्त साम्राज्य के नष्ट होने के उपरान्त उत्तरापथ के भिन्न भिन्न प्रदेश कुछ दिनों के लिये हर्षवर्द्धन के अधिकार में आ गए थे। परन्तु हर्ष की मृत्यु के उपरान्त तुरन्त ही फिर वे सब प्रदेश बहुत से छोटे छोटे खंड राज्यों में विभक्त हो गए थे। ईसवी नवीं शताब्दी के आरम्भ में गौड राजा धर्मपाल और देवपाल ने उत्तरापथ में एकाधिपत्य स्थापित किया था, परन्तु वह भी अधिक समय तक स्थायी न रह सका। नवीं शताब्दी के मध्य में मरुवासी गुर्जर जाति के राजा प्रथम भोजदेव ने कान्यकुब्ज पर अधिकार करके एक नया साम्राज्य स्थापित किया था। ईसवी ग्यारहवीं शताब्दी के प्रथम पाद तक इस साम्राज्य के ध्वंसावशेष पर गुर्जर प्रतीहार वंशी राजाओं का राज्य था। इस वंश के पहले सम्राट् प्रथम भोजदेव के सिक्कों का विवरण पिछले परिच्छेद में दिया जा चुका है *। भोजदेव के पुत्र महेंद्रपालदेव का अब तक कोई सिक्का नहीं मिला। महेन्द्रपाल के दूसरे पुत्र महीपाल के सोने के कुछ

---

* दसवाँ परिच्छेद।

सिक्के मिले हैं। पहले वही सिक्के तोमर वंशी महीपाल के माने जाते थे। तोमर वंश का कोई विश्वसनीय वंशवृत्त अब तक नहीं मिला है और न अब तक इसी बात का कोई विश्वसनीय प्रमाण मिला है कि उस वंश में महीपाल नाम का कोई राजा था। इसलिये श्रीयुक्त राय मृत्युञ्जयराय चौधरी बहादुर का अनुमान है कि महीपाल के नाम के सोने के सिक्के महेन्द्रपाल के दूसरे पुत्र महीपालदेव के हैं *। गुर्जर प्रतीहार वंश के किसी दूसरे राजा का सिक्का अब तक नहीं मिला।

कुजुलकद्फिस, विमकद्फिस और कनिष्क आदि कुषण वंशीय सम्राटों ने पूर्व में जो विशाल साम्राज्य स्थापित किया था, उसके नष्ट होने पर कनिष्क के वंशजों ने अफगानिस्तान में आश्रय लिया था। उसके वंशधर ईसवी ग्यारहवीं शताब्दी तक अफगानिस्तान के पहाड़ी प्रदेशों में राज्य करते थे †। सातवीं शताब्दी में चीनी यात्री युवानच्वाङ् ने और दसवीं शताब्दी में मुसलमान विद्वान अब्बुलरेहान अलबेरूनी ने अफगानिस्तान के राजाओं को कनिष्क के वंशज लिखा था ‡। अलबेरूनी ने लिखा है कि इस राजवंश का एक मंत्री राजा को सिंहासन से उतारकर स्वयं राजा बन गया था ×। काबुल पहले

---

* ढाका रिव्यू, १९१५, पृ० २३६।

† Indian Coins, p. 32.

‡ Saghau's Albiruni, Vol. II, p. 13.

× Ibid.

इसी राजवंश का राजनगर था। मुसलमानों ने याकूब लाइस के नेतृत्व में हिजरी सन् २५७ (ई० सन् ८७०–७१) में काबुल पर अधिकार किया था*। इसके बाद उद्भाण्डपुर (वर्त्तमान नाम हुंड वा उंड) इस राजवंश की राजधानी बना था। कल्हण मिश्र की राजतरंगिणी में उद्भांडपुर के शाही राजाओं का उल्लेख है। कनिष्क के वंशधर तुरुष्क शाही वंश के कहलाते थे और मंत्री का वंश हिंदू शाही वंश कहलाता था। जिस मंत्री ने राजा को सिंहासन से उतारकर स्वयं राज्य पर अधिकार किया था, अलबेरूनी के मतानुसार उसका नाम कल्लर था †। राजतरंगिणी के अँग्रेजी अनुवादक सर आरेल स्टेन का अनुमान है कि राजतरंगिणी का लल्लियशाही और कल्लर दोनों एक ही व्यक्ति हैं ‡। कल्लर ने एक स्थान पर लल्लिय के पुत्र कमलुक का उल्लेख किया है ×। अलबेरूनी के ग्रंथ में इसका नाम कमलू लिखा है +। लल्लिय और कमलुक के सिवा कल्हण मिश्र ने भीमशाह ÷ और त्रिलोचनपालशाह =

---

* I M C Vol 1, p 245

† Saghau's Albiruni, Vol II, p 13

‡ Stein's Chronicles of the Kings of Kashmir, Vol 11, p 336

× राजतरंगिणी, पंचम तरंग, २३३ श्लोक।

+ Saghau's Albiruni Vol II, p 13

÷ राजतरंगिणी, षष्ठ तरंग, १७८ श्लोक, सप्तम तरंग, १०८१ श्लोक

= राजतरंगिणी, सप्तम तरंग, ४७—६६ श्लोक।

नामक उद्भांड के शाही वंश के दो राजाओं का उल्लेख किया है। भीमशाह काश्मीर के राजा क्षेमगुप्त की स्त्री दिद्दादेवी का दादा था। त्रिलोचनपाल शाही वंश का अन्तिम राजा था। उसके राज्य काल में गांधार का हिंदू राज्य नष्ट हुआ था। सन् १०१३ में त्रिलोचनपाल जब गजनी के महमूद से तोषी नदी के किनारे पर हार गया *, तब उसके पुत्र भीमपाल ने पाँच वर्ष तक अपनी स्वाधीनता स्थिर रखी थी। इसके बाद गांधार में हिंदू राजवंश का और कोई पता नहीं चलता। गांधार में शाही राज्य के नष्ट हो जाने के उपरान्त अलबेरूनी ने लिखा है—"यह हिंदू शाही राजवंश नष्ट हो गया है और अब इस वंश का कोई नहीं बचा। यह वंश समृद्धि के समय कभी अच्छे काम करने से पीछे नहीं हटा। इस वंश के लोग महानुभाव और बहुत सुंदर थे †।" कल्हण मिश्र ने राजतरंगिणी के सातवें तरंग में शाही राजवंश के अधःपतन के लिये पाँच श्लोकों में विलाप किया है—

गते त्रिलोचने दूरमशेषं रिपुमंडलम्।
प्रचंडचंडालचमूशलभच्छायमानशे॥
संप्राप्तविजयोऽप्यासीन्न हम्मीरःसमुच्छ्वसन्।
श्रीत्रिलोचनपालस्य स्मरञ्शौर्यममानुषम्॥
त्रिलोचनोऽपि संश्रित्य हास्तिकं स्वपदाच्युतः।

---

* I. M. C. Vol. I, p. 245.

† Saghau's Albiruni, Vol. II, p. 13.

सयत्नोऽभून्महोत्साह प्रत्याहर्तुं जयश्रियम् ॥
यथा नामापि निर्नष्ट शीघ्र शाहिश्रियस्तथा।
इह प्रासगिकत्वेन वर्णित न सविस्तरम् ॥
स्वप्नेऽपि यत्सम्भाव्य यत्र भग्ना मनोरथा।
हेलया तद्विदधतो नासाध्य विद्यते विधे * ॥

सर एलेक्ज़ेण्डर कनिंघम ने उद्भाण्डपुर के ध्वसावशेष का आविष्कार करके उसका विस्तृत विवरण लिखा था †। कनिंघम से पहले पजाब केसरी महाराज रणजीतसिंह के सेनापति जनरल कोर्ट ने ‡ और उनके बाद सन् १८८१ में सर आरल स्टेन ने × उद्भाण्डपुर का ध्वसावशेष देखा था। उद्भाण्डपुर में मिला हुआ एक शिलालेख कलकत्ते के अजायबघर में रखा है। काबुल अथवा उद्भांडपुर में शाही राजवश के पाँच राजाओं के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर बैल और दूसरी ओर एक घुडसवार की मूर्त्ति है। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर हाथी और दूसरी ओर सिंह की मूर्त्ति है। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर सिंह और दूसरी ओर मोर की मूर्त्ति है +। अतिम प्रकार का केवल एक ही

* राजतरगिणी, सप्तम तरग, ६३—६७ श्लोक।

† Cunningham's Ancient Geography, p 52

‡ Journal of the Asiatic Society of Bengal, Vol V, p 395

× Chronicles of the Kings of Kashmir, Vol II, p 337

+ I. M C Vol 1 p. 243

सिक्का मिला है। वह लंडन के ब्रिटिश म्यूज़िअम में रखा है और उस ,पर राजा का नाम "श्रीकमर" लिखा है *। यह संभवतः कमलू वा कमलुक का सिक्का है। हाथी और सिंह की मूर्त्तिवाले सिक्कों पर "श्रीपद्म", "श्रीवक्कदेव" और "श्रीसामंतदेव" नामक तीन राजाओं के नाम मिले हैं। ये सब सिक्के ताँबे के हैं। इस वंश के स्पलपतिदेव †, सामंतदेव ‡, वक्कदेव ×, भीमदेव +, और खुड़वयक ÷ के चाँदी के सिक्के मिले हैं। इन सब सिक्कों पर एक ओर बैल और दूसरी ओर घुड़सवार की मूर्त्ति मिलती है। स्पलपतिदेव के सिक्कों पर अंकों में संवत् दिया है =। मि० स्मिथ का अनुमान है कि यह शक संवत् है **। पहले अशटपाल या अशतपाल नाम का एक राजा उद्भांडपुर के शाही राजवंश का माना जाता था ††। परन्तु यह नाम पहले ठीक

* Cunningham's Coins of Mediaeval India, p. 62, No. 1.

† I. M. C. Vol. 1, pp. 246-47, Nos. 1-11.

‡ Ibid, pp. 247-48, Nos. 1-14.

× Ibid, pp 248-49, Nos. 1-5.

+ Cunningham's Coins of Mediaeval India, pp. 64-65. Nos. 17-18.

÷ I. M. C. Vol. 1, p. 249, Nos. 1-3.

= Numismatic Chronicle, 1882, p. 128, 291.

** I. M C Vol. 1, p. 245.

†† Cunningham's Coins of Mediaeval India, p. 6[illegible] Nos. 20-21, I. M. C. Vol. 1, p. 249, Nos. 1-2.

तरह से पढ़ा नहीं गया था। सम्भवत यह अजयपाल है *। उद्भाण्डपुर के शाही राजाओं के सिक्कों के ढग पर बाद में आर्यावर्त्त के अनेक राजवशों ने सिक्के बनवाए थे। इनमें से दिल्ली का तोमर वश प्रधान है। पहले कहा जा चुका है कि किसी विश्वसनीय सूत्र क आधार पर दिल्ली के तोमर वश का वशवृक्ष अब तक नहीं बना। जो राजा तोमर वश के माने जाते हैं, उनका अब तक कोई शिलालेख नहीं मिला। जयपाल, अनगपाल आदि जो राजा लोग मुसलमान इतिहासकारों के ग्रन्थों में महमूद के प्रतिद्वन्द्वी माने जाते हैं, उनमें से केवल अनगपालदेव के सिक्के मिले हैं। उन सिक्कों पर एक ओर बैल और दूसरी ओर घुडसवार की मूर्त्ति है। पहली ओर "श्रीअनगपालदेव" और दूसरी ओर "श्रीसामन्तदेव" लिखा है †। ऐसे सिक्के उद्भाण्डपुर के शाही सिक्कों के ढग पर बने हैं। कनिंघम ‡, स्मिथ × और रेप्सन + ने बिना प्रमाण अथवा विचार के जिन राजाओं को तोमर वशजात लिखा है, सम्भवत उनमें से अनेक तोमर वश के नहीं हैं। तोमर राजाओं का कोई शिलालेख अथवा ताम्रलेख अब तक नहीं

* Journal of the Royal Asiatic Society, 1908

† I M C Vol 1 p 259, Nos 1-7

‡ Indian Coins, p 31

× I M C Vol 1, p 256

+ Indian Coins, p 31

मिला; इसी लिये मुद्रातत्व में इस प्रकार का भ्रम फैला है। कनिंघम, स्मिथ, रेप्सन * आदि मुद्रातत्व के ज्ञाताओं के मत के अनुसार तोमर वंश के सोने के सिक्के गांगेयदेव के सोने के सिक्कों के ढंग के हैं। परन्तु उनके चाँदी अथवा ताँबे के सिक्के उद्भाण्डपुर के शाही राजवंश के सिक्कों के ढंग के हैं। इन लोगों के मत के अनुसार कुमारपाल और महीपाल के सोने के सिक्के और अजयपाल के चाँदी के सिक्के तोमर वंश के सिक्के हैं। कुमारपाल, महीपाल और अजयपाल को तोमर-वंशज नहीं माना जा सकता। पहला कारण तो यह है कि तोमर राजवंश का कोई विश्वसनीय वंशवृक्ष नहीं है। दूसरा कारण इससे भी कुछ बड़ा है। महीपाल के सोने के सिक्के उत्तरापथ में सब जगह, यहाँ तक कि सौराष्ट्र और मालव तक में, मिलते हैं। कुमारपाल और अजयपाल के सिक्के मध्य भारत और सौराष्ट्र में अधिक संख्या में मिलते हैं। महीपाल के नाम के एक प्रकार के मिश्र धातु के सिक्के मिलते हैं जो उद्भाण्डपुर के शाही राजवंश के सिक्कों के ढंग के हैं। परन्तु महीपाल के नाम के सोने के सिक्कों के अक्षरों का आकार मिश्र धातु के सिक्कों के अक्षरों के आकार की अपेक्षा प्राचीन है। इसलिये यह सम्भव नहीं है कि महीपाल, कुमारपाल और अजयपाल दिल्ली के तोमर वंश के राजा हों। इसी लिये श्रीयुक्त मृत्युं-

---

* Ibid.

† Ibid.

जयराम चौधरी के मतानुसार महीपाल के सोने के सिक्कों को प्रतीहार वंशी सम्राट् महेन्द्रपाल के पुत्र महीपालदेव के सिक्के मानना ही ठीक है *। मिश्र धातु के बने महीपाल के नाम के सिक्के किसी दूसरे महीपाल के सिक्के नहीं जान पड़ते। कुमारपाल और अजयपाल गुजरात के चालुक्यवंशी राजा थे और अजयपाल कुमारपाल का लड़का था †। मालव के अन्तर्गत ग्वालियर राज्य में महाराजाधिराज अजयपाल के राज्यकाल का विक्रम संवत् १२२६ (ई० सन् ११७२) का खुदा हुआ एक शिलालेख मिला है ‡। उसी जगह कुमारपाल के राज्यकाल में विक्रम संवत् १२२० (ई० सन् ११६४) का खुदा हुआ एक और लेख × और मेवाड़ राज्य के चित्तौर में विक्रम संवत् १२०७ (ई० सन् ११५०) का खुदा हुआ कुमारपाल के राज्यकाल का एक और शिलालेख + मिला था। जब कि मध्य भारत और मालव में कुमारपाल और अजयपाल के सिक्के अधिक संख्या में मिलते हैं और जब कि यह सब प्रदेश किसी समय चालुक्यवंशी कुमारपाल और अजयपाल के अधिकार में थे, तब यही सम्भव है कि कुमारपाल के सोने के और अजयपाल के चाँदी के सिक्के चालुक्य वंश के इन्हीं नामों

* ढाका रिव्यू, १६१५, पृ० ११६।

† Epigraphia Indica, Vol VIII, App I p 14

‡ Indian Antiquary, Vol XVIII, p 347

× Ibid, p 343

+ Epigraphia Indica, Vol II, p 422

के राजाओं के सिक्के हों। उद्भाण्डपुर के शाही राजवंश के सिक्कों के ढंग पर बने हुए अनंगपाल देव के मिश्र धातु के सिक्के मिले हैं। कनिंघम *, रेप्सन † और स्मिथ ‡ ने शाही राजाओं के सिक्कों के ढंग पर बने हुए मदनपाल के नामवाले मिश्र धातु के सिक्कों को गाहड़वाल वंश के चन्द्रदेव के पुत्र मदनपाल के सिक्के माना था। गोविन्दचन्द्र के सोने या ताँबे के सिक्के शाही राजाओं के सिक्कों के ढंग पर बने हुए नहीं हैं ×। इसलिये मदनपाल के नाम के मिश्र धातु के सिक्के गाहड़वाल वंश के मदनपाल के सिक्के हो भी सकते हैं और नहीं भी हो सकते। उद्भाण्डपुर के शाही राजवंश के सिक्कों के ढंग पर बने हुए सल्लक्षणपाल +, महीपाल ÷ और मदनपाल = के सिक्के सम्भवतः तोमर राजवंश के सिक्के हैं। तोमर वंश के उपरान्त चाहमान वा चौहान वंश के सोमेश्वर ** और उसके पुत्र पृथ्वीराजदेव †† ने दिल्ली का राज्य

---

* Cunningham's Coins of Mediaeval India, p. 87, No. 15.

† Indian Coins, p. 31.

‡ I M. C. Vol. I, p. 260.

× Ibid, pp. 260–61, Nos. 1–9.

+ I. M. C. Vol. I, p. 259, Nos. 1–2.

÷ Ibid, p. 260, Nos. 1–2.

= Cunningham's Coins of Mediaeval India, p. 87 No. 15.

** I. M. C. Vol. I, p. 261, Nos. 1–4.

†† Ibid, pp. 261–62, Nos. 1–9.

पाया था। इन लोगों ने भी शाही राजाओं के सिक्कों के ढग पर मिश्र धातु के सिक्के बनवाए थे। सल्लक्षणपाल, अनगपाल, महीपाल, मदनपाल, सोमेश्वर और पृथ्वीराज के सिक्कों की दूसरी ओर "असावरी श्रीसामन्तदेव" अथवा "माधव श्रीसा मतदेव" लिखा है। पृथ्वीराज की मृत्यु के उपरात सुलतान मुहम्मद बिन साम ने उद्भाण्डपुर के शाही राजाओं के सिक्कों के ढग पर मिश्र धातु के सिक्के बनवाए थे। उन पर एक ओर "श्रीपृथ्वीराज" और दूसरी ओर "श्रीमुहम्मद सामे" लिखा है*।

मुसलमान विजय के उपरात दिल्ली के सम्राटों ने तेरहवीं शताब्दी के अतिम भाग और चौदहवीं शताब्दी के पहले पाद तक उद्भाण्डपुर के शाही राजाओं के सिक्कों के ढग पर सिक्के बनवाए थे†। अल्तमश के पुत्र नसीरुद्दीन‡ के बाद से इस प्रकार के सिक्के नहीं मिलते।

काश्मीर के सब से पुराने सिक्के हूण राजाओं के हैं। काश्मीर के खिगिल, तोरमाण, मिहिरकुल और लखन बयादित्य के सिक्के मिले हैं। राजतरगिणी के अनुसार खिंगिल मिहिरकुल के बाद हुआ था ×। सिक्कोंवाला

* Cunningham's Coins of Mediaeval India, p 86, Nos 12

† H N Wright, Catalogue of Coins in the Indian Museum, Vol II, pt I, pp 17-33

‡ Ibid, p 33

× Chronicles of the Kings of Kashmir, Vol I, p ..

खिंगिल और कल्हण का खिंगिल दोनों एक ही जान पड़ते हैं। मुद्रातत्त्व के ज्ञाताओं के अनुसार तोरमाण और मिहिरकुल के पहले खिंगिल हुआ था *। इसका दूसरा नाम नरेन्द्रादित्य था †। खिंगिल के चाँदी और ताँवे के सिक्के मिले हैं। चाँदी के सिक्कों पर एक ओर राजा का मस्तक और "देवषाहि खिंगिल" लिखा है ‡। ताँवे के सिक्कों पर एक ओर मुकुट पहने हुए राजा का मस्तक और दूसरी ओर घड़ा है ×। घड़े के बगल में खिंगिल लिखा है। तोरमाण के सिक्के ताँबे के हैं और कुषण वंश के सिक्कों के ढंग के हैं। उन पर पहली ओर राजा का पूरा नाम "श्रीतुर्यमान" या "श्रीतोरमाण" मिलता है +। राजतरंगिणी के अनुसार प्रवरसेन मिहिरकुल का लड़का था। प्रवरसेन के समय से काश्मीर के राजाओं के सिक्का पर कुषण और गुप्तवंशी राजाओं के सोने के सिक्कों की तरह एक ओर खड़े हुए राजा की मूर्त्ति और दूसरी ओर लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति मिलती है ÷। प्रवरसेन,= गोकर्ण**

* Numismatic Chronicle, 1894, p.279.

† राजतरंगिणी, प्रथम तरंग, ३४७ श्लोक।

‡ Numismatic Chronicle, 1894, pp. 279–80, No. 11.

× V. A. Smith's Catalogue of Coins in the Indian Museum, Vol. I, p. 267.

+ Ibid, pp 267–98, Nos. 1–8.

÷ Ibid, pp. 268–73.

= Coins of Mediaeval India, p. 43, Nos. 3–4.

** Ibid, p. 43, No. 6.

प्रथम प्रतापादित्य *, दुर्लभ या द्वितीय प्रतापादित्य †, विग्रहराज ‡, यशोवर्मा ×, विनयादित्य या जयापीड + आदि राजाओं के सिक्के इसी प्रकार के हैं। इन सब सिक्कों पर लक्ष्मी की मूर्त्ति के बगल में राजा का नाम लिखा है। उत्पल वंश के सिक्कों पर राजा या रानी के नाम का आधा अंश पहली ओर और बाकी आधा दूसरी ओर लिखा रहता है – । प्रथम = और द्वितीय लोहर ** वंश के सिक्कों पर भी ऐसा ही है। द्वितीय लोहर वंश के जागदेव के सिक्के ही वर्त्तमान समय में मिले हुए काश्मीर के राजाओं के सिक्कों में से सब से अधिक नवीन हैं। ईसवी सन् १३३९ में शाहमीर नाम की एक मुसलमान रानी ने कोटा को परास्त करके काश्मीर में मुसलमानी राज्य स्थापित किया

---

* Ibid, p 44, No 9

† Ibid, p 44, No 10, I M C Vol I, p 268, Nos 1-8

‡ Ibid, p 267, Nos 1-3, Coins of Mediaeval India, p 44 No 8

× Ibid, No 11, I M C Vol I, pp 268-69 Nos 1-5

+ Ibid p 269, Nos 1-6, Coins of Mediaeval India, pp 44-45 Nos 13-14

– I M C, Vol I, pp 269-71

= Ibid, pp 171-72

** Ibid, pp 272-73

था * । उत्पल वंश के नीचे लिखे सिक्के मिले हैं:—

(१) शंकरवर्म्मा (ईसवी सन् ८८३-९०२)

(२) गोपालवर्म्मा (" " ९०२-०४)

(३) सुगन्धा रानी (ईसवी सन् ९०४-६)

(४) पार्थ (ई० सन् ९०६-२१)

(५) क्षेमगुप्त और दिद्दा (" ९५०-५८)

(६) अभिमन्यु गुप्त (" ९५८-७२)

(७) नन्दिगुप्त (" ९७२-७३)

(८) त्रिभुवन गुप्त (" ९७३-७५)

(९) भीम गुप्त (" ९७५-८०)

(१०) रानी दिद्दा (" ९८०-१००३)

प्रथम लोहर वंश के चार राजाओं के सिक्के मिले हैं:-

---

* Chronicles of the Kings of Kashmir, Vol. I, p. 13

† I. M. C. Vol. I, pp. 269-70, Nos. 1-4.

‡ Ibid, p. 270, Nos. 1-3

× Ibid, Nos. 1-4.

+ Ibid, Nos. 1-3.

÷ Ibid, Nos. 1-3.

= Ibid, No. 1.

** Ibid, Nos. 1-2.

†† Ibid, p. 271, No. 1.

‡‡ Ibid, Nos. 1-2.

(*) Ibid, Nos. 1-8.

(१) संग्राम (ईसवी सन् १००३–२८) *
(२) अनन्त (" १०२८–६३) †
(३) कलश (" १०६३–८६) ‡
(४) हर्ष (" १०८६–११०१) ×

द्वितीय लोहर वंश के तीन राजाओं के सिक्के मिले हैं—

(१) सुस्सल (ईसवी सन् ११११–२८) +
(२) जयसिंहदेव (" ११२८–५५) –
(३) जागदेव (" " ११६८–१२१४) =

ज्वालामुखी या काँगडे की तराई के राजा मुसलमानी विजय के उपरांत भी बहुत दिनों तक स्वाधीन बने रहे थे और सत्रहवीं शताब्दी के आरम्भ तक उद्भाण्डपुर के शाही राजाओं के सिक्कों के ढंग पर ताँबे के सिक्के बनवाया करते थे। काँगडे के सबसे पुराने सिक्कों पर एक ओर बैल की मूर्त्ति और सामन्त देव का नाम और दूसरी ओर घुड़सवार की मूर्त्ति है। ईसवी चौदहवीं शताब्दी के प्रथमार्द्ध में पीथमचन्द्र या पृथ्वीचन्द्र ने नए प्रकार के सिक्के चलाए थे। उनपर

* Ibid, Nos 1-7
† Ibid, p 272
‡ Ibid, Nos 1-6
× Ibid, Nos 1-6
+ Ibid, No 1
– Ibid, p 273, Nos 1-2
= Ibid, Nos 1-3

पहली ओर दो या तीन सतरों में राजा का नाम लिखा है और दूसरी ओर घुड़सवार की मूर्त्ति है *। काँगड़े के नीचे लिखे राजाओं ने पृथ्वीचन्द्र के सिक्कों के ढंग पर ताँबे के सिक्के बनवाए थेः—

(१) अपूर्वचन्द्र	(ईसवी सन् १३४५–६०)†	
(२) रूपचन्द्र	(" " १३६०–७५)‡	
(३) सिंगारचन्द्र	(" १३७५–९०)×	
(४) मेघचन्द्र	(" १३९०–१४०५)+	
(५) हरीचन्द्र	(" १४०५–२०)÷	
(६) कर्मचन्द्र	(" १४२०–३५)=	
(७) अवतारचन्द्र	(" १४५०–६५)**	
(८) नरेन्द्रचन्द्र	(" १४६५–८०)††	
(९) रामचन्द्र	(" १५१०–२८)‡‡	

---

* Ibid, p. 275, Nos. 1–5.

† Ibid, p. 276, Nos. 1–5.

‡ Ibid, pp. 276–77, Nos 1–8.

× Ibid, p. 277, Nos. 1–7.

+ Ibid, Nos. 1–5.

÷ Ibid, p. 277–78, Nos. 1–8

= Ibid, p. 278, Nos. 1–2.

** Ibid, Nos. 1–6.

†† Ibid Nos. 1–2.

‡‡ Ibid, No. 1.

(१०) धर्मचन्द्र (" १५२८-६३)*
(११) त्रिलोकचन्द्र (" १६१०-२५)†

इसके सिवा कनिंघम ने रूपचन्द्र ‡, गम्भीरचन्द्र ×, गुणचन्द्र +, ससारचन्द —, सुवीरचन्द्र = और माणिक्यचन्द्र** के सिक्कों के विवरण दिए हैं। प्राचीन नलपुर (वर्तमान नरवर) के राजाओं ने मुसलमान विजय के थोड़े ही समय बाद उद्भाण्डपुर के शाही राजाओं के सिक्कों के ढंग पर ताँबे के सिक्के बनवाए थे। मलयवर्मा और चाहडदेव के इसी प्रकार के सिक्के मिले हैं। मलयवर्मा के सिक्कों पर एक ओर घुड़सवार की मूर्ति है और दूसरी ओर दो या तीन सतरों में "श्रीमद् मलयवर्मदेव" लिखा है ††। चाहडदेव के सिक्के दो प्रकार के हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर घुड़सवार की मूर्ति और "श्रीचाहडदेव" लिखा है। दूसरी ओर बैल की मूर्ति और "असवरी श्रीसामन्तदेव" लिखा है‡‡। चाहड-

* Ibid, p 279, No 1
† Ibid, Nos 1-9
‡ Coins of Mediaeval India p 105, Nos 1-4.
× Ibid No 5
+ Ibid, p 106, No 19
— Ibid, No 20-22
= Ibid, p 107 No 25.
** Ibid, p 108
†† I M C Vol I, p 262, Nos 1-3
‡‡ Ibid, pp 260-63, Nos 1-7

देव के दूसरे प्रकार के सिक्के अभी हाल ही में पहले पहल मिले हैं। उन पर एक ओर घुड़सवार की मूर्त्ति और दूसरी ओर दो या तीन सतरों में "श्रीसं चाहड़देव" लिखा है *। त्रिलोचनपाल को परास्त करके महमूद ने नागरी अक्षरों और संस्कृत भाषावाले चाँदी के सिक्के बनवाये थे। इन सब सिक्कों पर एक ओर अरबी भाषा का लेख है और दूसरी ओर बीच में नागरी अक्षरों तथा संस्कृत भाषा में "अव्यक्तमेक महम्मद अवतार नृपति महम्मद" और चारों ओर "अयं टंकः महमूदपुर घटिते हिजरियेन संवत् ४१८" लिखा है †।

---

* सन् १९१४ में मालवे में मिले हुए ताँबे के ७६४ सिक्के परीक्षा के लिये कलकत्ते के अजायब घर में भेजे गए थे। उनमें दूसरे दो तीन राजाओं के साथ चाहड़देव के दूसरे प्रकार के सिक्के भी मिले हैं। इन सिक्कों पर विक्रम संवत् दिया है। सन् १९०८ में युक्त प्रदेश के झाँसी जिले में मिले हुए मलय वर्मा के सिक्कों पर भी इसी प्रकार विक्रम संवत् दिया है।

† Cunningham's Co'ns of Mediaeval Iudia, pp. 65-66, No. 21.

बारहवाँ परिच्छेद

उत्तरापथ के मध्य युग के सिक्के

(ख) मध्य देश

मुद्रातत्त्व के ज्ञाताओं का अनुमान है कि डाहल के राजा चेदिवंशी गांगेयदेव ने उत्तरापथ में एक प्रकार के नए सिक्के चलाए थे *। उनपर एक ओर दो पंक्तियों में राजा का नाम लिखा है और दूसरी ओर पद्मासना लक्ष्मी देवी की मूर्त्ति है। परन्तु यदि इस प्रकार के महीपाल देव के नामवाले सोने के सिक्के प्रतीहार वंशी महेन्द्रपाल के पुत्र सम्राट् महीपाल के सिक्के हों, तो यह अवश्य मानना पड़ेगा कि इस प्रकार के सिक्कों का प्रचार गांगेयदेव से पहले ही हो गया था। सम्भवतः गुजरात के प्रतीहारों के राज्यकाल में ही पहले पहल इस प्रकार के सिक्के बने थे। उद्भाण्डपुर के शाही राजाओं के सिक्के जिस प्रकार उत्तर पश्चिम प्रान्तों में मध्य युग में सिक्कों के आदर्श हुए थे, उसी प्रकार महीपाल अथवा गांगेयदेव के सोने के सिक्के भी मध्य देश में मध्य युग में सिक्कों के आदर्श हुए थे। मध्य देश में चेदि राजवंश ने बहुत दिनों तक राज्य किया था। परन्तु इस वंश के राजाओं में से केवल गांगेयदेव

---

* Indian Coins, p. 73

के ही सिक्के मिले हैं। उससे पहले के अथवा बाद के चेदि-वंशीय राजाओं में से किसी के सिक्के नहीं मिले। गांगेयदेव के सोने *, चाँदी† और ताँबे‡ के बने हुए सिक्के मिले हैं। तीनों धातुओं के सिक्के एक ही प्रकार के हैं। उनपर एक ओर दो पंक्तियों में राजा का नाम और दूसरी ओर चतुर्भुजा देवी की मूर्त्ति है। महाकोशल में चेदिवंश की दूसरी शाखा का राज्य था। इस राजवंश के तीन राजाओं के सिक्के मिले हैं। उन सिक्कों पर जाजल्लदेव, रत्नदेव और पृथ्वीदेव इन तीन राजाओं के नाम मिलते हैं। परन्तु इस राजवंश के खुदवाए हुए लेखों से पता चलता है कि इस वंश में जाजल्लदेव नाम के दो, रत्न-देव नाम के तीन और पृथ्वीदेव के नाम के तीन राजा हुए थे×। यह निर्णय करना कठिन है कि उनमें से किनके सिक्के मिले हैं। स्मिथ् का अनुमान है कि पृथ्वीदेव + और जाजल्लदेव के नाम के सिक्के द्वितीय जाजल्लदेव ÷ के हैं; और रत्नदेव के नाम के सिक्के तृतीय रत्नदेव के हैं =। उसके मतानुसार द्वितीय पृथ्वी-

* V. A. Smith, Catalogue of Coins in the Indian Museum, Vol. I, p 252, Nos. 1-9.

† Cunningham's Coins of Mediaeval India, p. 72. Nos. 4-5.

‡ I. M. C. Vol. I, p. 253. Nos. 10-12.

× Epigraphia Indica, Vol. VIII. App. 1. pp. 16-17.

+ I. M. C. Vol. I, p. 254.

÷ Ibid.

= Ibid p. 255.

देव ने ईसवी सन् ११४० से ११६० तक, द्वितीय जाजल्लदेव ने ई० सन् ११६० से ११७५ तक और तृतीय रत्नदेव ने ई० सन् ११७५ से ११९० तक राज्य किया था। जेजाकभुक्ति या जेजाभुक्ति के चन्द्रात्रेय अथवा चन्देलवंशी राजाओं के सोने और चाँदी के सिक्के मिले हैं। इस वंश के कीर्त्तिवर्म्मा, सल्लक्षणवर्म्मा, जयवर्म्मा, पृथ्वीवर्म्मा, परमर्दिदेव, त्रैलोक्यवर्म्मा और वीरवर्म्मा के सिक्के मिले हैं। जान पड़ता है कि कीर्त्तिवर्म्मा ने ई० सन् १०५५ से ११०० तक राज्य किया था *। यह भी जान पड़ता है कि उसके पुत्र सल्लक्षण वर्म्मा ने ई० सन् ११०० से १११५ तक राज्य किया था †। सल्लक्षण वर्म्मा का बड़ा लड़का जयवर्म्मा और उसका दूसरा लड़का पृथ्वीवर्म्मा दोनों ई० सन् १११५ से ११२९ के बीच में सिंहासन पर बैठे थे ‡। पृथ्वीवर्म्मा का पुत्र मदनवर्म्मा ई० सन् ११२९ से ११६३ तक जीवित था ×। मदनवर्म्मा के पोते परमर्दिदेव ने ई० सन् ११६७ से पहले राज्य पाया था +। यह चन्द्रात्रेयवंशी द्वितीय

---

* Ibid, p 253 कीर्त्तिवर्म्मा के राज्यकाल में विक्रमी संवत् ११५४ (ई० सन् १०९८) का खुदा हुआ एक शिलालेख मध्यप्रदेश के देवगढ़ में मिला है।

† यह अनुमान मात्र है।

‡ जय वर्मा के राज्यकाल में विक्रम संवत् ११७३ (ई० सन् १११७) का खुदा हुआ एक शिलालेख मध्य भारत के खजुराहो गाँव के एक मन्दिर में मिला है।

× Epigraphia Indica Vol VIII, App I, p 16

\+ Ibid Vol IV p 157

पृथ्वीराजदेव का समकालीन था और उससे परास्त भी हुआ था *। इसी परमर्द्दिदेव के राज्यकाल में कालिंजर के किले पर मुहम्मद बिन साम ने अधिकार किया था और चन्देल लोग भागकर पहाड़ी प्रदेशों में जा छिपे थे। परमर्द्दिदेव सन् १२०१ तक जीवित था †। जान पड़ता है कि परमर्द्दिदेव के बाद त्रैलोक्यवर्मा ने चन्देल राज्य पाया था ‡। वह ईसवी सन् १२१२ से १२४१ × तक जीवित था। त्रैलोक्य वर्म्मा के उपरांत उसका पुत्र वीरवर्मा सिंहासन पर बैठा था। वह सन् १२६१ + से १२८३ ÷ तक जीवित था। कीर्त्तिवर्म्मा =, परमर्द्दिदेव **, त्रैलोक्यवर्म्मा †† और वीरवर्मा ‡‡ के केवल सोने के सिक्के ही मिले हैं। सल्लक्षणवर्मा के सोने ×× और

* Ibid, Vol VIII. App 1 p 16.

† Journal of the Asiatic Society of Bengal, Vol. XVII. pt. 1. p 313.

‡ Cunningham, Archaeological Survey Report, Vol. XXI, p. 50.

× Indian Antiquary, Vol. XVII p 235.

+ Epigraphia Indica, Vol. I. p. 327.

÷ Ibid, Vol V. App. p. 35, No. 242.

= I M C Vol. 1, p 253, No. 1.

** Ibid, No. 1.

†† Ibid, No 1.

‡‡ Ibid, p. 254. No. 1.

×× Cunningham's Coins of Mediaeval India, p. 79, Nos. 14-15.

ताँबे* दोनों के सिक्के मिलते हैं। जयवर्मा † और पृथ्वीवर्मा‡ के केवल ताँबे ही के सिक्के मिले है। मदनवर्मा के सोने ×, चाँदी और ताँबे + तीनों धातुओं के सिक्के मिले हैं। इनमें से चाँदी के सिक्के, बहुत ही थोड़े दिन हुए, मिले हैं –। चन्देल-वंशी राजाओं के भिन्न भिन्न आकार के सोने और चाँदी के सिक्के मिले हैं =।

गजनी के सुलतान महमूद ने जिस समय उत्तरापथ पर आक्रमण किया था उस समय गुजरात के प्रतीहार राजाओं का विशाल साम्राज्य अपनी अंतिम दशा को पहुँच गया था। ई० ११ वीं शताब्दी के शेषार्द्ध में कान्यकुब्ज चेदिवंशी कर्णदेव के अधिकार में चला गया था। कर्णदेव के बाद गाहड़वाल-वंशी चन्द्रदेव ने कान्यकुब्ज पर अधिकार करके एक नया राज्य स्थापित किया था। चन्द्रदेव का अब तक कोई सिक्का नहीं मिला। उसके पुत्र का नाम मदनपाल या मदनदेव था। मदन-

---

* Ibid, No 16

† Ibid, No 17

‡ Ibid No 18

× I M C Vol I, p 253, Nos 1-3

\+ Cunningham's Coins of Mediaeval India p 79, No 21

– Journal of the Asiatic Society of Bengal, New Series, Vol X pp 199-200

= Coins of Mediaeval India, p 78

पाल ई० सन् ११०४ से ११०६ तक * कान्यकुब्ज के सिंहासन पर था। उद्भांडपुर के शाही राजवंश के सिक्कों के ढंग पर बने हुए एक प्रकार के मिश्र धातु के सिक्कों पर मदनपाल का नाम मिलता है। मुद्रातत्त्व के ज्ञाता लोग इस प्रकार के सिक्कों को गाहड़वालवंशी मदनपाल के सिक्के समझते हैं†। इस प्रकार के सिक्कों पर पिछले परिच्छेद में विचार हो चुका है ‡। मदनपाल का पुत्र गोविंदचंद्र ई० सन् १११४ से ११५४ तक कान्यकुब्ज के सिंहासन पर था ×। गोविंदचंद्र के सोने + और ताँबे ÷ के बहुत से सिक्के मिले हैं। ये सब सिक्के महिपालदेव अथवा गांगेयदेव के सिक्कों के ढंग पर बने हैं। इन पर एक ओर दो सतरों में राजा का नाम और दूसरी ओर चतुर्भुजा देवी की मूर्ति है। गोविंदचंद्र के सोने के सिक्के दो भागों में विभक्त हो सकते हैं। पहले विभाग के सिक्के खालिस सोने के बने हैं; परंतु दूसरे विभाग के सिक्कों में सोने के साथ चाँदी का भी मेल है। गोविंदचंद्र के पुत्र का नाम विजयचंद्र था। जान पड़ता है कि वह ईसवी सन् ११५५ से ११६९ तक =

---

* Epigraphia Indica, Vol. VIII. App. 1. p. 13.

† Coins of Mediaeval India, p 87, No. 15

‡ ग्यारहवाँ परिच्छेद।

× Epigraphia Indica, Vol. VIII. App. 1, p. 13.

\+ I. M. C. Vol. 1, pp. 260-61, Nos. 1-6 A.

÷ Ibid, p. 261, Nos. 7-10.

= Epigraphia Indica, Vol. VIII, App. 1, p. 13.

कान्यकुब्ज के सिंहासन पर था। विजयचंद्र का अब तक कोई सिक्का नहीं मिला। विजयचंद्र का पुत्र जयचंद्र ईसवी सन् ११७० * में सिंहासन पर बैठा था और ई० सन् ११९४ अथवा ११९५ में मुहम्मद बिन साम के साथ युद्ध करते समय मारा गया था। अजयचन्द्रदेव के नाम के एक प्रकार के चाँदी के सिक्के मिले हैं। कनिंघम का अनुमान है कि ये सिक्के जयचन्द्र के ही हैं †। गोविंदचंद्र के सिक्कों की तरह ये सिक्के भी महीपालदेव अथवा गांगेयदेव के सिक्कों के ढंग पर बने हैं। इनके अतिरिक्त गाहड़वाल वंश का अब तक और कोई सिक्का नहीं मिला। जयचन्द्र का पुत्र हरिश्चन्द्रदेव ईसवी सन् ११९५ से १२०७ तक ‡ कान्यकुब्ज के सिंहासन पर था। उसका कोई सिक्का अब तक नहीं मिला। जयचन्द्र को परास्त करके सुलतान मुहम्मद बिन साम ने मध्य देश में चलाने के लिये गाहड़वाल राजाओं के सिक्कों के ढंग पर सोने के सिक्के बनवाए थे। उन पर एक ओर नागरी अक्षरों में तीन सतरों में उसका नाम लिखा है और दूसरी ओर लक्ष्मी देवी की मूर्ति है ×। इस प्रकार के सिक्कों के दो विभाग मिलते हैं। पहले विभाग के सिक्कों पर:—

* Ibid, Vol IV p 121

† Coins of Mediaeval India p 87, No 17

‡ Journal of the Asiatic Society of Bengal, New Series, Vol VII pp 757-770

× Coins of Mediaeval India, p 86, No 12

(१) श्रीमह

(२) मद चिनि

(३) साम *

और दूसरे विभाग के सिक्कों परः—

(१) श्रीमद (ह)

(२) सीर मह (म)

(३) द साम †

लिखा है।

नेपाल के पुराने सिक्कों को देखकर ऐसा भ्रम होता है कि मानों वे यौधेय जाति के सिक्के हैं। संभवतः यह भ्रम इसलिये होता है कि ये दोनों प्रकार के सिक्के कुषणवंश राजाओं के सिक्कों के ढंग पर बने हैं ‡। मानांक, गुणांक, वैश्रवण, अंशुवर्म्मा, जिष्णुगुप्त और पशुपति इन छः राजाओं के सिक्के मिले हैं। इन में से पशुपति के अतिरिक्त बाकी पाँच राजाओं के नाम नेपाल की राजवंशावली में मिलते हैं। इन छः राजाओं में से मानांक के सिक्के सबसे पुराने हैं। उन पर एक ओर पद्मासना लक्ष्मी की मूर्ति और "श्री भोगिनी" लिखा है। दूसरी ओर खड़े हुए सिंह की मूर्ति और "श्रीमानांक"

---

* H M. Wright, Catalogue of Coins in the Indian Museum, Vol. II. pt. 1. p. 17, No. 1.

† Ibid, Nos. 2–3.

‡ Indian Coins, p. 32.

लिखा है*। नेपाल के शिलालेखों में मानाक का नाम मानदेव दिया है†। गुणाक के सिक्कों पर एक ओर पद्मासना लक्ष्मी की और दूसरी ओर हाथी की मूर्ति है। लक्ष्मी की मूर्ति के बगल में "श्रीगुणाक" लिखा है‡। वंशावली में गुणाक का नाम गुण कामदेव दिया है ×। वैश्रवण के सिक्कों पर एक ओर बैठे हुए राजा की मूर्ति और "वैश्रवण" लिखा है और दूसरी ओर बछड़े सहित गौ की मूर्ति है और "कामदेहि" लिखा है +। अंशुवर्म्मा के तीन प्रकार के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर परवाले सिंह की मूर्ति है और "अंशु वर्म्मा" लिखा है और दूसरी ओर बछड़े सहित गौ की मूर्ति है और "कामदेहि" लिखा है ÷। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर सूर्य्य का चिह्न है और "महाराजाधिराजस्य" लिखा

* Coins of Ancient India p 116 I M C Vol 1, p 253

† Indian Antiquary, Vol IX, pp 163-67

‡ Coins of Ancient India, p 116 pl XIII 2

× Hara Prasad Sastri, Catalogue of plam leaf and Selected paper Mss Durbar Library Nepal Introduction by Prof C. Bendall, p 21

+ Coins of Ancient India p 116 pl XIII 4
कनिंघम का अनुमान है कि वैश्रवण का वंशावली में कुबेर वर्मा नाम दिया है—Ibid, 115

÷ Ibid, p 116, pl XIII 4 I M C Vol I, p 283, No ?

है। दूसरी ओर एक सिंह की मूर्ति है और "श्र्यंशोः" लिखा है *। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर परवाले सिंह की मूर्ति है और "श्र्यंशुवर्म्मा" लिखा है और दूसरी ओर साधारण सिंह की मूर्ति और चंद्रमा का चिह्न है †। अंशुवर्म्मा के कई शिलालेख मिले हैं ‡। जिष्णुगुप्त के सिक्कों पर एक परवाले सिंह की मूर्ति है और "श्री जिष्णुगुप्तस्य" लिखा है। दूसरी ओर एक चिह्न है ×। जिष्णुगुप्त का एक शिलालेख भी मिला है +। पशुपति के तीन प्रकार के सिक्के मिले हैं। पहले प्रकार के सिक्कों पर एक ओर खड़े या बैठे हुए बैल की मूर्ति और दूसरी ओर सूर्य्य का अथवा और कोई चिह्न है ÷। दूसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर त्रिशूल और दूसरी ओर सूर्य्य का चिह्न है =। तीसरे प्रकार के सिक्कों पर एक ओर बैठे हुए राजा की मूर्ति और दूसरी ओर पुष्पयुक्त घट है **। इन

---

* Ibid, No. 3; Coins of Anceint India, p. 117, pl. XIII. 55.

† Ibid. pl. XIII 6; I. M. C, Vol. I., p. 283, No. I,

‡ Indian Antiquary, Vol. IX, pp 170-71; Bendall's Journey to Nepal, p. 74

× Coins of Ancient India, p. 117. pl. XIII. 7.

+ Indian Antiquary, Vol. IX, p. 171.

÷ Coins of Ancient India p. 117, pl. XIII. 8—11.

= Ibid. p. 111, pl. XIII. 12—13.

** Ibid, pl. XIII. 14—15.

सब सिक्कों पर दोनों में से किसी एक ओर राजा का नाम है। बुद्ध गया में पशुपति के दो एक सिक्के मिले हैं*।

बहुत प्राचीन काल में अराकान में भारतीय उपनिवेश स्थापित हुआ था। ईसवी सातवीं अथवा आठवीं शताब्दी में अराकान में भारतीय राजाओं का राज्य था। उनका और कोई परिचय तो अब तक नहीं मिला, परन्तु रम्याकर, ललिताकर, श्रीशिव आदि नाम देखकर जान पडता है कि अराकान के ये राजा लोग भारतीय ही थे। ये लोग चन्द्रवशी थे और ईसवी सन् ७८८ से ९८७ तक इनका राज्य था†। इनके सिक्कों पर एक ओर बैठे हुए बैल की मूर्ति और दूसरी ओर एक नए प्रकार का त्रिशूल मिलता है‡। इसी प्रकार श्रीशिव, यारिक्रिय ×, प्रीति +, रम्याकर, ललिताकर, प्रद्युम्नाकर और अन्ताकर + के भी सिक्के मिले हैं**।

---

* Cunnigham's Mahabodhi, p[1] XXVII H

† I M C, Vol I, p 331

‡ Ibid, p 331

× Ibid, No 1

\+ Ibid, Nos 2—6

— Ibid, No 7

** रम्याकर, ललिताकर और अन्ताकर के चाँदी के सिक्के श्रीयुत प्रद्युम्ननाथ महाशय के पास हैं। जान पड़ता है कि इस प्रकार के सिक्के पहले नहीं मिले थे।

विषयानुक्रमणिका

अ

फ

(१) अनाथपिण्डद का जेतवन खरीदना।

(१)

(२)

(१) बरहुत की स्तूप वेष्टनी पर का चित्र।

(२) बुद्ध-गया की वेष्टनी पर का चित्र।

(२) सबसे पुराने सिक्के—पुराण और कार्षापण।
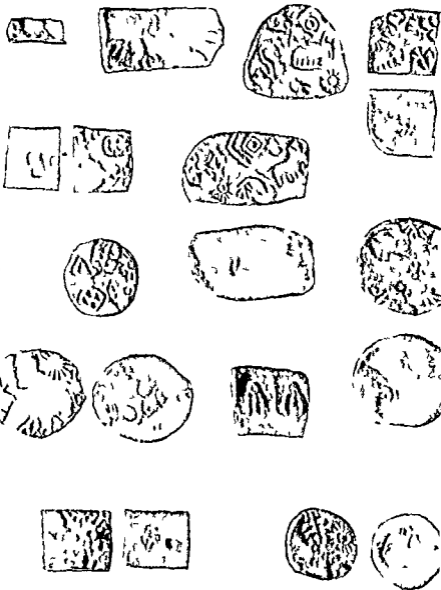
(३) प्राचीन भारतके विदेशी सिक्के ।

(४) यूनानी राजाओं के सिक्के ।

१ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९
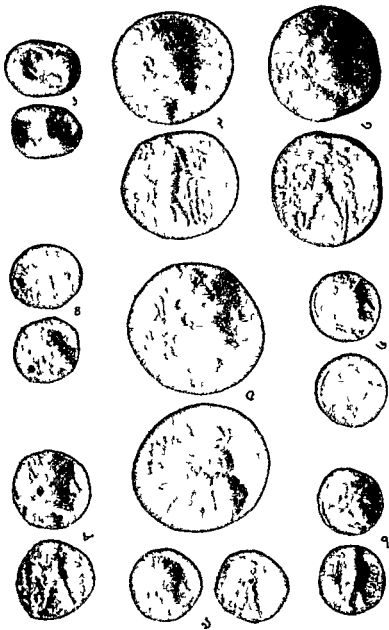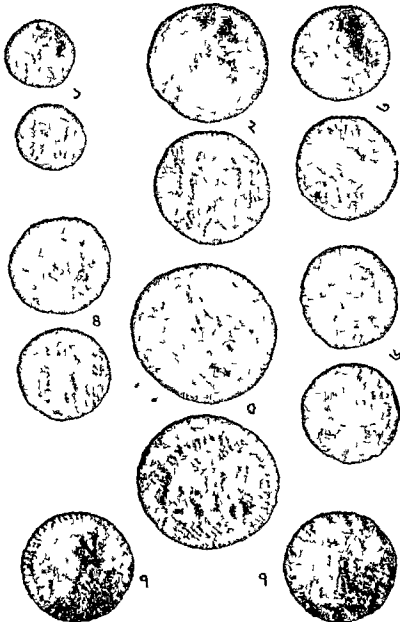
(५) यूनानी राजाओं के सिक्के।

(६) यूनानी राजाओं के सिक्के।

(७) यूनानी और शक राजाओं के सिक्के ।

१

२

३

४

५

६

७

८

९
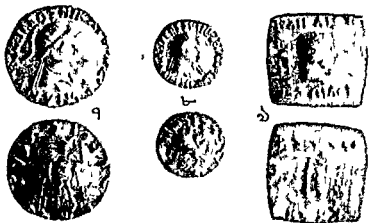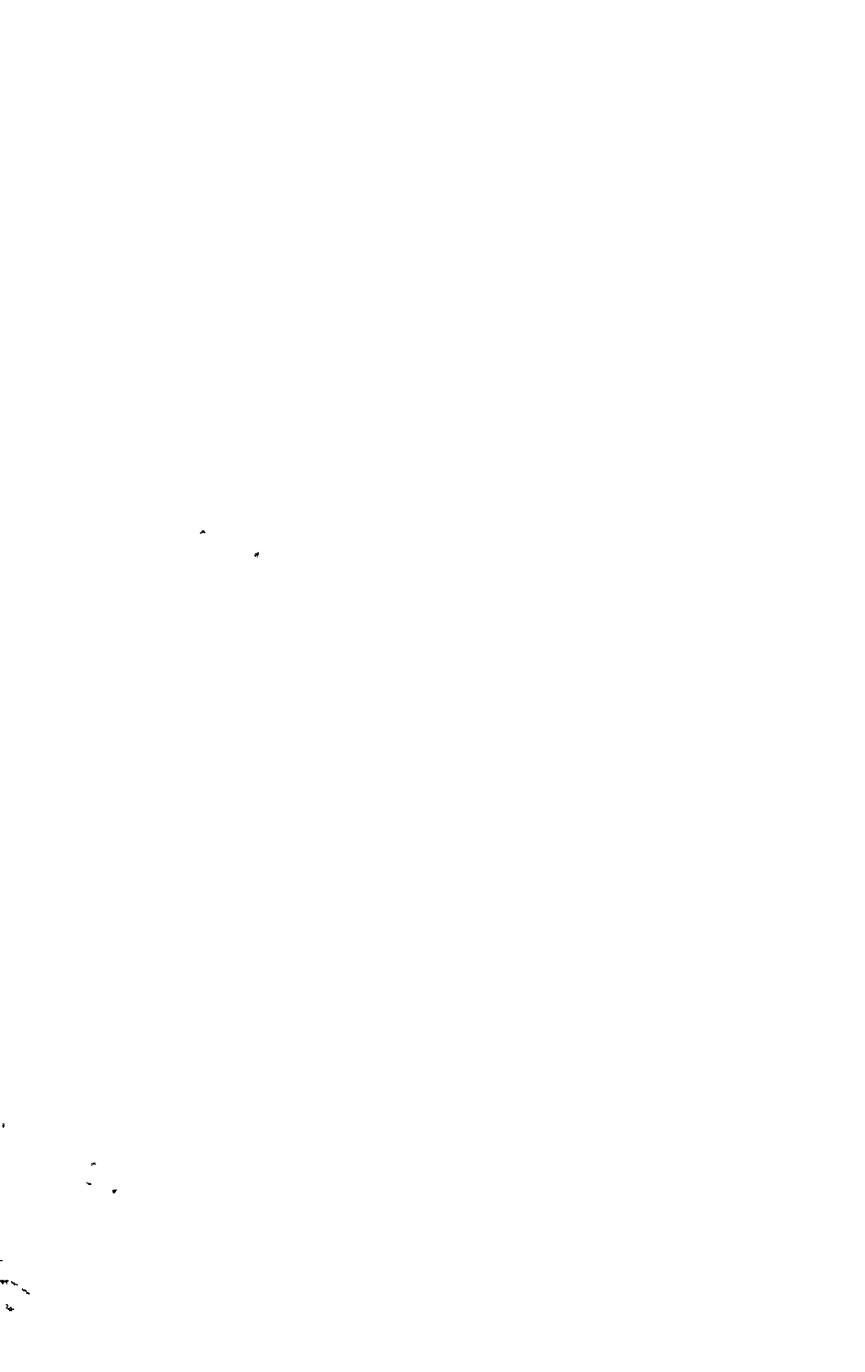
(८) शक जातीय और कुषण वंशीय राजाओं के सिक्के।
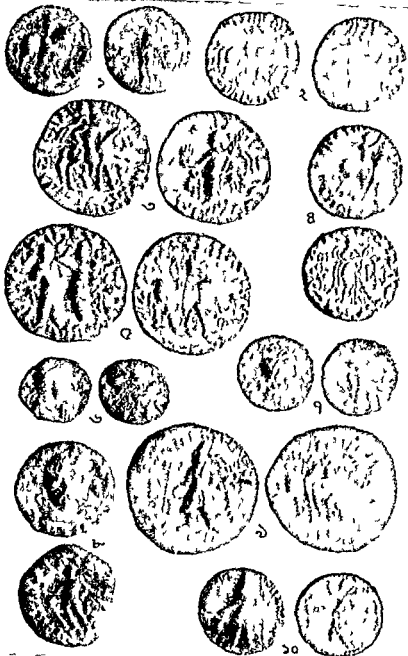
(१०) जानपदों और गणों के सिक्के।
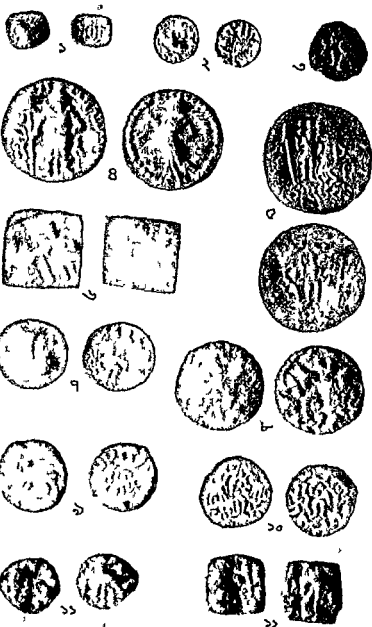
(११) जानपदों और गणों के सिक्के।
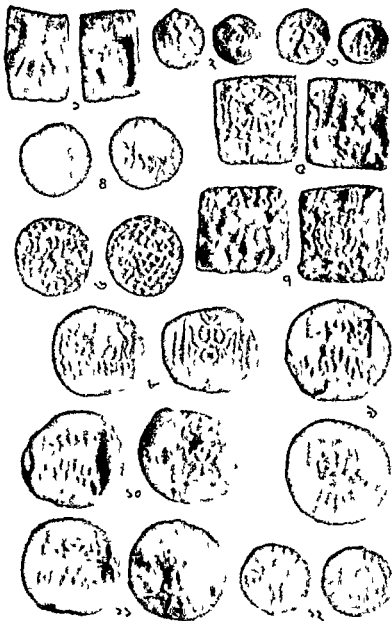
(१२) गुप्त वंशीय सम्राटों के सिक्के ।

(१४) गुप्त सम्राटों के सिक्कों के अनुकरण।

(१५) सौराष्ट्र और दक्षिणापथ के सिक्के ।
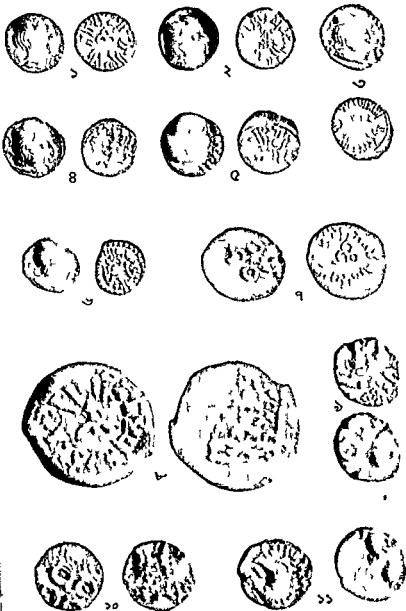
(१७) ससनीय सिक्कों के अनुकरण।
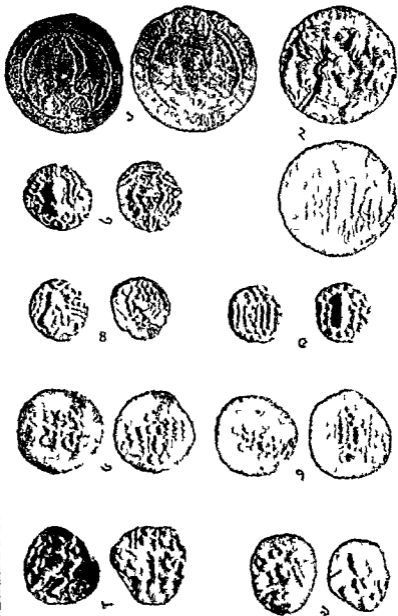
(१८) सिंहल और उत्तर-पश्चिम सीमांत के मध्य युग के सिक्के

(२०) नेपाल और अराकान के सिक्के।
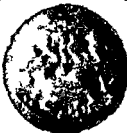
के साथ ही कराया जाता है।

इस प्रकार रक्त-संसर्ग, भोजन, और स्थान आदि के सम्बन्ध में उचित सावधानी कर के शताब्दियों के दूषणों का अन्त किया जा रहा है। धीरे धीरे इन गायों के एक एक विशेष वंश सुनिश्चित हो जायँगे।

इस सम्बन्ध की आशा-मयी सम्भावनाएं सुस्पष्ट हैं। यदि भारत वासी इन्हें स्वीकार करेंगे तो लाभ उठाएंगे।

पशुओं के प्रेमियों को एक बात जान कर कौतूहल होगा। वह यह कि भारत वर्ष को ऐसी गाय चाहिए जिससे दो काम सिद्ध हों। लेकिन, इसका मतलब दूध और मांस नहीं है, किन्तु दूध और कंधों में बल।

भारत वर्ष में मांस की दृष्टि से पशुओं की बिक्री कम है। लखनऊ में सन् १९२६ में गोमांस दो आने सेर के हिसाब से बिकता था। गाय का धार्मिक महत्त्व जो कुछ है उसके अतिरिक्त उससे तीन बातों की आशा की जाती है। एक तो यह कि वह दूध और मक्खन दे, दूसरी यह कि वह जलाने और लीपने के लिये गोबर दे, और तीसरी यह कि वह हल चलाने और गाड़ी खींचने के लिए बैल पैदा करे। दूध के साथ साथ मेहनत के लिये अच्छे बैल पैदा कराना दोनों बातें परस्पर विरुद्ध हैं। लेकिन किया क्या जाय? देश की ऐसी ही माँग है, और गवर्मेण्ट को विवश हो कर काम चलाने के लिए कहीं न कहीं समझौता करना ही पड़ता है।

सरकारी फ़ार्मों में मिश्र आदि देश के ऐसे विदेशी चारे उगाये जा रहे हैं, उनकी उन्नति पर बहुत ज़ोर डाला जा रहा है। और चारे को गड्ढे में भर कर रखने का उपयोग दिखलाया जाता है। सचित्र

व्यख्यान देने और चारा रखने के लिए, गहरे गढे बनाने के लिए, बाहर गावों में शिक्षा देने के लिये, लोग भेजे जाते हैं और नौजवान तथा अच्छे वश के साड ऋण या दान, के रूप में लोगों को दिये जाते हैं अथवा उनके हाथ बेचे जाते हैं।

लखनऊ, पूसा, बगलौर और अन्य सरकारी फार्मों मे जो अच्छे जानवर उत्पन्न होते हैं उनकी देख रेख ईमानदार अँग्रेज विशेषज्ञों की अधीनता म होती है। उत्कृष्टता, प्रबन्ध, सफाई, और साधारण व्यवहारिकता की दृष्टि से ये सरकारी फारम देखने योग्य हैं। लेकिन यह सब बातें भारतीय किसान के मस्तिस्क में नहीं घुसतीं। और जो शिक्षित और धनिक श्रेणी के लोग, किसानों को समझा और सिखा सकते हैं उनको न किसानों से कोई मतलब है और न पशुओं की कोई चिन्ता है।

भारतीय रियासतों के कुछ राजाओं को छोड कर, जिन्हों ने इग्लैण्ड से अपने पशुओं पर गर्व करना सीखा है, और देश भर में छिटके हुए थोडे से जागीरदारों के अतिरिक्त, पशु उत्पादन का काम बिलकुल ही अशिक्षित ग्वालों के हाथों में पडा हुआ है, जिनके पास न बुद्धि है, न पूंजी और न साहस।

मुझे इस बात का कोई भी प्रमाण नहीं मिला कि जन समूह उक्त परिवर्त्तनों के प्रति कुछ भी सहानुभूति रखता है। हां इस विषय में जनता का विरोध प्राय अवश्य देखने में आया है उदाहरण के लिए पशु सुधार की इच्छा से सरकार ने एक गाव, को एक अच्छा, सुन्दर साड़ दिया। लेकिन वह साड गाव वाले के अत्याचार के कारण बडी दुर्दशा की अवस्था में सरकार के पास लौटाया गया। जब एक मवेशी अस्पताल में

लाया गया और देखने ही से मालूम हो रहा था कि गांव वालों ने उसे न केवल भूखा रक्खा बल्कि निर्दयता-पूर्वक मार कर निःशक्त बना दिया था। उसकी एक टांग पर के घाव तो ऐसे थे कि उसके चंगे होने की आशा बहुत कम थी। जिस समय वह सांड़ अस्पताल में लाय गया मैं वहां मौजूद थी।

मैंने वहां के ब्रिटिश पदाधिकारी से पूछा—'आप इस पर क्या करेंगे ?'

उसने उत्तर दिया,-'सम्भवतः गांव के मुखिया को जुर-माना कर दूँगा। परन्तु, इससे बहुत कम लाभ होता है। यह मानवी स्वभाव है कि जिसके लिए दाम नहीं ख़र्च करना पड़ता, उसकी क़द्र कोई नहीं करता। और अपने पशुओं के सुधार के लिए ये लोग व्यय भी नहीं करते।'

और सुनिए। कौन गाय कितना दूध देती है इसका हिसाब रखना भी भारतीयों को पसन्द नहीं, क्योंकि ईश्वर की देन को नापना या तौलना अनुचित है। पंजाब के ग्वालों ने स्पष्ट कह दिया हम ऐसा नहीं कर सकते, यदि हम करेंगे तो हमारे बच्चे मर जायेंगे। ऐसे लोगों को पशु उत्पादन के सम्बन्ध में सावधानी और विचार-पूर्वक काम लेने को कौन कहे ?

उक्त समस्त बातों के अतिरिक्त दूध देने वाली गायों का ह्रास करने वाला एक कारण और है। कर्नाल में सरकार ने यह अच्छी तरह दिखा दिया है कि गांव में दूध तैयार कर के शहर में भेजना अधिक उपयोगी है, हज़ारों मीलों का अन्तर भले ही पड़े। कलकत्ते की सरकारी सहयोगिनी गोशालाओं ने पास के गाँवों से शहर में दूध लाने की सम्भावनाओं को भी दिखा दिया है। परन्तु भारतीय दूध बेचने वाले के लिए

यह सब बात वे मतलब है। वह ग्वाला दुधार गाय मोल लाता है बछड़े समेत शहर में लाकर उन्हें दूध देने की अवधि तक रखता है दूध की मियाद को बढ़ाने के लिये वह प्रायः गायों की बच्चेदानी तक पेट से निकाल कर फेंक देता है। और जब वे बेकाम हो जाती हैं तब कसाई के हाथ बेच देता है। इससे सर्वोत्तम गायों का संहार हो जाता है और देश की बड़ी क्षति होती है।

भारत वासियों का कथन है कि दूध न देने की अवस्था में शहर में गाय रखना उसके लिये कठिन है और वह उसे और कहीं रख नहीं सकता। इस कारण दूध देना बन्द होने के बाद वह गाय का संहार ही कर डालता है, उसको पालने में जितना व्यय होता है उसका अधिकांश नष्ट हो जाता है और उसके गुण उसी के साथ(१) चले जाते हैं।

मुसल्मानों का त्योहार ईद के दिन जब गाय की कुर्बानी करना वे अपना धर्म समझते हैं सारे भारत में दंगे की आशंका रहती है और गवर्मेण्ट को पहिले से ही उसके लिए सावधान रहना पड़ता है। उस समय हिन्दुओं में बड़ी उत्तेजना फैल जाती है तथा रक्त पात, संहार, और उपद्रव की सदा सम्भावना रहती है और क्यों न हो जब हिन्दू धर्म की जड़ पर उसके आराधकों के सामने ही म्लेच्छ उस पर कुठारा घात करें?

इस विषय में मि० गान्धी के ५ नवम्बर १९२५ के यंग इण्डिया में दी हुई निम्न लिखित समतोलक याने भारतीय विस वृत्ति का जितना परिचय देती है उतनी कोई बात नहीं।

(१) देखो बम्बाएं जर्नल आफ इण्डिया में प्रकट मिस्टर इस्वारियन डेयरी एक्सपर्ट का लेख भाग १० खण्ड १ जनवरी १९२२

'हम यह भूल जाते हैं कि जितनी गायों की क़ुर्बानी होती है उसकी सौ गुनी संख्या में व्यापार के लिए गायें मारी जाती हैं ये गायें अधिकतर हिन्दुओं की होती हैं और यदि हिन्दू गाय बेंचना बन्द कर दे तो कसाइयों का काम बन्द समझिए।"

उक्त अग्र लेख के छपने के चार सप्ताह बाद बंगाल और मध्य प्रान्त में व्यापारिक दृष्टि से मांस और चमड़े के लिए गायों के वध पर विचार करने वाली भारतीय उद्योग समिति (१) की रिपोर्ट से उद्धरण देते हुए मि० गान्धी इस विषय पर फिर लिखते हैं। समिति ने इस उद्योग के प्रति आसपास की हिन्दू जनता के भावों के सम्बन्ध में पूछताछ की:—

'क्या इन कसाई ख़ानों ने स्थानीय हिन्दुओं में किसी प्रकार की उत्तेजना उत्पन्न की है?'

गवाह उत्तर देता है,

'इन क़साई ख़ानों ने हिन्दुओं में रोष तो नहीं किन्तु लोभ का भाव अवश्य उत्पन्न किया है। आप को पता लगेगा कि म्यूनिसिपैलिटी के बहुत से सदस्य इन क़साई ख़ानों में हिस्सेदार हैं। ब्राह्मण और हिन्दू भी हिस्सेदारों में से है।' मि० गांधी आलोचना करते हुए बड़े दुःख के साथ लिखते हैं—'यदि संसार में कहीं भी नैतिक शासन है तो उसके सामने हमें कभी न कभी उत्तरदायी होना पड़ेगा।'

हिन्दू का मुसलमान के हाथ वध के लिये गाय बेचने का यह उदाहरण—उसी हिन्दू का जो मन्दिर के द्वार के बाहर मुसलमान के क़ुर्बानी करने पर मार काट करने को उतारू हो जाता है—ऐसे विषय को उठादेता है जिसके

(१) यंग इंडिया नवम्बर २६ १९२५ पृ० ४१६

सम्बन्ध में कुछ और जाँच करना आवश्यक है।

हम पश्चिम वाले प्राय यह समझने की गलती करते हैं कि किसी शब्द या विचार से जो मानसिक चित्र हमारे सामने उपस्थित होता है वही भारतीयों के सामने भी आता होगा। अंग्रेजी भाषा म भारतीयों की दक्षता के कारण हमारी यह गलती और पक्की हो जाती है। हम यह समझते हैं कि उनकी भाषा और उनके भाव म अन्तर नहीं है। उदाहरण के लिए वे कहते हैं कि वे प्राणी मात्र के प्रति दया और प्रेम का भाव रखते ह। अमरीका में व्याख्यान देते हुए वे इस दशा म हिन्दुओं के कोमल संस्कारों की चर्चा करते हैं और हमारी अनाध्यात्मिकता पर तथा प्राणी मात्र के अन्दर जीव के अस्तित्व का न समझ सकने पर खेद प्रकट करते हैं।

लेकिन, यदि आप इन शब्दों से यह समझें कि भारतवर्ष में औसत दर्जे का हिन्दू प्राणियों के प्रति कुछ साधारण सहृदयता का भाव भी दर्शाता है तो आप बड़ी भूल करते हैं।

बंगलोर के गवर्मेण्ट फार्म के एक बहुत बुद्धिमान् ब्राह्मण फोरमन से मैंने एक दिन कहा,—'मुझे खेद है कि भारतवर्ष भर में तुम लोग प्राय सब बैलों का और कुछ गायों का भी, उनकी पूँछ मरोड़ कर बहुत कष्ट देते हो। उस बैल गाड़ी में जुते हुए बैलों को देखो। उनके पूँछ का प्रत्येक जोड़ टूटा हुआ है। तुम्हें मालूम ही होगा कि इससे बहुत तकलीफ होती है। प्राय पूँछ टूट जाती है।'

युवक ब्राह्मण ने निरपेक्ष भाव से उत्तर दिया—'हा, यह सत्य है कि हम वैसा करते हैं। लेकिन यह बहुत आवश्यक है। जब तक पूँछ मरोड़ी न जाय जानवर तेज चलते ही नहीं।'

कलकत्ते के हवड़ा पुल पर घंटों खड़े होकर आप बैल-गाड़ियों का आना-जाना देखिए, आप को कोई बैल ऐसा न मिलेगा जिसकी पूँछ पर मिरोड़ के निशान न पड़ गये हों। गाड़ीवान को पूँछ हाथ में थामे और मरोड़ते हुए चलने में छड़ी से मारने की अपेक्षा सरलता होती है यदि आप बैलगाड़ी पर चढ़ें, और गाड़ीवान आप के ठीक सामने हो तो आप देखेंगे कि बैल की चाल को तेज़ करने का एक और उपाय उसे मालूम है—यह अपनी छड़ी या पैर के अंगूठे को उसके अण्ड कोषों में घुसेड़ना है।

इस अत्याचार का विरोध केवल विदेशी लोग करते हैं। यह भारतवर्ष की पहेलियों में से है कि जिन लोगों का सारा काम बैलों ही से चलता है वे भी उसे भूखा रख कर, किन्तु बहुत अधिक लाद कर उसके प्राण तक ले लेते हैं। इन बेचारों को जिनके सिर से लेकर पूंछ तक चारों ओर मार पड़ती रहती है, जिनका सारा शरीर दागा हुआ होता है, मद्रास की ढालू पहाड़ियों पर भी चढ़ना पड़ता है। फल यह होता है कि ये दम तोड़ देते हैं यदि कोई अङ्गरेज़ पदाधिकारी इस अत्याचार को देखता है तो वह इस पर कुछ कार्य्यवाही करता है। परन्तु, अङ्गरेज़ तो देश में थोड़े ही हैं। रहे हिन्दुस्तानी सो उनमें से जिनके हृदय पर भूख और असहाय पशुओं के क्लेश के इस करुणा-जनक दृश्य का कुछ प्रभाव पड़ सकता है उनकी संख्या और भी कम है।

भारतवर्ष के अनेक भागों में 'फूका' की प्रथा जारी है। इसका उद्देश्य यह होता है कि गाय का दूध बढ़े और अधिक दिनों तक मिलता रहे। फूका कई तरह से किया जाता है। परन्तु प्रायः एक छड़ी द्वारा जिस पर फूस बंधा रहता है, गाय की

गुह्येन्द्रिय में उत्तेजना उत्पन्न की जाती है। इससे गाय को बड़ा कष्ट होता है और वह वन्ध्या भी हो जाती है। किन्तु, इसकी कुछ परवाह नहीं की जाती, क्योंकि जब वह बच्चे देना बन्द कर देगी तब कसाई के यहाँ बेच डाली जायगी। मि० गाँधी ने सिद्ध किया है कि कलकत्ते की १०,००० (१) गायों में से ५,००० के साथ प्रति दिन यह व्यवहार किया जाता है।

'पियरी' (२) नाम से प्रसिद्ध एक रंग के सम्बन्ध में जिसे भारतवासी बहुत पसन्द करते हैं मि० गाधी ने एक विशेषज्ञ के लेख से उद्धरण दिया है।

'गाय को कुछ चारा पानी आदि न देकर केवल आम की पत्तियां खिलाने से उसके पेशाब में से एक रङ्ग निकलता है जिसकी बाजार में बहुत बड़ी माँग है। ऐसा करने पर गाय बचती नहीं। वह कष्ट के साथ मर जाती है'।

दूध देने वाली गाय प्राय अपने बछड़े के साथ शहर में लाई जाती है। हिन्दू ग्वाले बछड़े को नहीं चाहते और अधर्म होने के कारण मार भी नहीं सकते। इस दशा में पाप और व्यय दोनों से बचने का एक उपाय निकाल लेते हैं। देश के किसी किसी भाग में वे चौथाई या आधा प्याला भर दूध बछड़े को पीने को दे देते हैं क्योंकि उनका विश्वास है कि जो बछड़े को गाय से विलग करेगा वह आगामी जीवन में कष्ट भोगेगा। उतना दूध देने से ग्वाला की आत्मा तो सुरक्षित हो जाती है, किन्तु उतने में बछड़े का काम नहीं चलता, और जहाँ जहाँ दूध दुहाने के लिए माँ जाती है उस के साथ साथ लड़खड़ाता हुआ वह भी जाता है। जब वह मर जाता है

(१) यङ्ग इण्डिया, ६ मई, १९२६ पृ० १६६-७ (२) यङ्ग इण्डिया ६ मई, १९२६

नव ग्वाला उसकी खाल में भूसा आदि भर कर उसे सी देता है, टाँगों की जगह चार लकड़ियां लगा देता है, और दूसरे दिन दूध दुहाने को जाते समय उसे कंधे पर रक्खे जाता है। ग्राहक के यहां दूध दुहने के लिए खड़े होने पर वह गाय के सामने उसी नकली बछड़े को रख देता है, जिस से वह दूध दे। दूध के बड़े कारखानों में तो यह सब भी करने की आवश्यकता नहीं रहती। नव-जात बछड़े गाड़ियों पर लाद कर उस स्थानों में फैंक दिये जाते हैं जहाँ दूसरी रद्दी चीज़ें पड़ी रहती हैं और वहीं अन्त में वे समाप्त हो जाते हैं।

भैंस भारतवर्ष में बहुत उपयोगी पशु है जैसे फिलिपाइन्स टापू में 'कारावाओ'। दिल्ली की अच्छी से अच्छी भैंसे ६,००० से लेकर १०,००० पाउण्ड तक साल भर में दूध देती हैं, जिसमें ७'५ प्रति शत से लेकर ९ प्रति शत तक घी निकलता है। भैंसा हल और गाड़ी जोतने के लिए बहुत उपयोगी होता है। लेकिन यह जानवर ख़र्चीला और बड़ा होता है। इसलिए, दूध बेचने वाले भैंस के बच्चे को सीधे ही भूखों मार डालते हैं। यंग इंडिया(१) में इस प्रथा के अनेक रूपों के सम्बन्ध में अनेक प्रमाण संग्रह किये गये हैं। इन में से एक इस प्रकार है:—

भैंस के बच्चे सड़कों पर भूखे मरने के लिए छोड़ दिये जाते हैं। जब वे शिथिल होकर गिर पड़ते हैं तो ट्रैम, मोटर अथवा अन्य गाड़ियों से कुचल जाते हैं। ये बेचारे प्रायः रात को घर से बाहर कर दिये जाते हैं, जिससे भैंस का पूरा दूध बेचा जा सके।

यदि यह नहीं किया जाता तो बच्चा खूँटे पर बिना कुछ

(१) यंग इंडिया १६ मई, १९२६ पृष्ठ १६७

भोजन आदि के तब तक बँधा पड़ा रहता है जब तक वह मर नहीं जाता।

भैंस को गरमी भी बहुत सताती है, और इसको धूप में अरक्षित दशा में न छोड़ना चाहिए। इसलिए 'यंग इंडिया' के एक दूसरे विशेषज्ञ का कथन है—'भूख के मारे निर्बल भैंस का बच्चा घर के सब से अधिक धूप वाले भाग में खूँटे से बाँध दिया जाता है। ग्वाले की ये हिकमत उसे मार डालने के लिए काम में लाई जाती हैं।'

शहर के ग्वालों की चर्चा छोड़ कर अब मि० गान्धी गाँव के ग्वालों और पशु पालकों का चित्र इस प्रकार खींचते हैं।

गुजरात में तो दूध देना बन्द करने के बछड़ा मार डाला जाता है। दूसरे प्रान्तों में वह जंगल में छोड़ दिया जाता है जहाँ जंगली जानवर उसे मार डालते हैं। बंगाल में वह प्रायः जंगल में बाँध दिया जाता है, और उसे भोजन नहीं दिया जाता। फलतः वह या तो भूखों मर जाता है या वन्य पशुओं द्वारा खा लिया जाता है। और फिर भी इस काम के करने वाले उन लोगों में से हैं जो जानवर को मारने न देंगे चाहे वह कितने ही कष्ट में क्यों न हो।'

यहाँ उन गायों की दुर्दशा का स्मरण हो जाता है जो रोगिणी अशक्त वृद्धा और अनुपयोगी होने पर गाँव के बाहर निकाल दी जाती हैं, वहाँ भूख के मारे शिथिल और दुर्बल हो जाती हैं और अन्त में भूखे कुत्ते उन्हें मार कर खा जाते हैं।

इन कुत्तों को प्रत्येक पाश्चात्य यात्री ने भारत भर में रेल के स्टेशनों पर देखा होगा। इन कुत्तों के शरीर में हड्डियाँ

(१) यंग इंडिया ६ मई १९२६।

ही दिखाई पड़ती हैं, और घाव भरे रहते हैं। इनकी आँखों में डर चालाकी घृणा और दुःख दिखाई पड़ेगा। ये देश भर में निरन्तर बढ़ती हुई संख्या में मिलेंगे। ये रेल की गाड़ियों के नीचे से निकलते हुए नरक के भयंकर स्वप्न से दिखाई देते हैं। नगरों में ये गायों और बकरियों से बाज़ारों के कूड़ा-खानों में मैला खाने में प्रतिद्वन्द्विता करते हैं ये कुत्ते प्रायः शहरों में रात को घूमने वाले पागल गीदड़ों के काटने और रोग आदि की अधिकता के कारण पागल हो जाते हैं।

और हिन्दू विश्वास के अनुसार इनका कोई प्रबन्ध नहीं हो सकता। उनका बच्चे पैदा करना बन्द नहीं किया जा सकता और न उनकी संख्या घटाई जा सकती है। उन्हें छूना अपवित्र है, इस कारण उनके घाव आदि की दवा भी नहीं हो सकती।

इस सम्बन्ध में 'यंग इण्डिया' (१) के पृष्ठों में एक रोचक विवाद छिड़ा था। जिस घटना से ऐसा हुआ वह ऐसे ६० पागल कुत्तों का मारा जाना था जो अहमदाबाद के एक मिल-मालिक के कारख़ाने के पास एकत्रित हो गये थे। हिन्दू होने पर भी स्वयं मिल मालिक ने उन्हें मारने की आज्ञा दी थी। इस समाचार से नगर में बहुत असन्तोष फैला। हिन्दू हय मैनिटैरियन लोग ने इस प्रश्न के सम्बन्ध में मि० गान्धी की सम्मति माँगी और पूछा कि:—

'जब हिन्दू मत अन्य प्राणियों के वध की मनाही करता है तब क्या आप पागल कुत्तों का मारा जाना उचित समझते

१ यंग इण्डिया, अक्टूबर और नवम्बर १९२६। ११ नवम्बर १[illegible] के अङ्क में अहमदाबाद के सिविल अस्पताल में पागल कुत्तों के काटने के निम्न लिखित संख्याएं थीं। जनवरी से दिसम्बर १९२५-१११७ जनवरी से सितम्बर १९२६—९९०

हैं। जो कुत्तों को मारता है और जिसके कहने से ऐसा होता है क्या दोनो पाप के भागी नहीं हैं। अहमदाबाद म्यूनिसिपैलिटी शीघ्र ही उन कुत्तो को जिनका कोई स्वामी नहीं है वधिया कराने वाली है क्या धर्म इसकी इजाजत देता है कि जानवरों को वधिया किया जाय ?"

मि० गाधी का निम्न लिखित उत्तर हिन्दुओं के विचारों पर यथेष्ट प्रकाश डालता है —

'हिन्दू मत किसी भी प्राणी की हत्या को पाप बताता है, इसमें सन्देह नहीं, हिन्दू मत का यह भी कहना है कि यज्ञ के लिए वध करना हिंसा नहीं है। यह बात पूर्ण सत्य नहीं है लेकिन जो अनिवार्य्य है वह पाप नहीं समझा जा सकता, यहा तक कि दैनिक कृत्यों में यज्ञार्थ अनिवार्य्य, हिंसा की न केवल इजाजत ही दी है बल्कि उसे प्रशसनीय तक ठहराया है। लेकिन जो व्यक्ति अपनी देख रेख में रहने वाले प्राणियों की रक्षा के लिए उत्तर-दायी है और जिसमें योगी की शक्ति नहीं है, किन्तु एक पागल कुत्ते को मारने का सामर्थ्य है उसके सामने ऐसे मौके पर धर्म संकट उपस्थित हो जाता है। यदि वह कुत्ते को मारता है तो पाप करता है। यदि वह नहीं मारता तो महा पाप करता है। इस दशा में वह छोटा पाप करना ही पसन्द करता है। इसलिए यह बडे खेद की बात है कि अहिंसा के इस पवित्र देश में फालतू कुत्तों की यह समस्या इतना विकराल रूप धारण करे। पागल तथा पागल होने वाले कुत्तो को मारने में पाप हो सकता है फालतू कुत्तों को भोजन दे कर बढने देना भी पाप है, और पाप होना भी चाहिए।'

अहिंसा के उस देश में किसी भूखे कुत्ते को टुकड़ा देना

अथवा उसका अन्त करके उसे कष्ट-मुक्त कर देना उन पापों में से है जो बहुत कम किये जाते हैं।

पागल कुत्तों को मार डालने की स्वीकृति दे कर मि०गांधी ने हिन्दू जनता में अपने विरुद्ध घोर विरोध और असन्तोष का भाव उत्पन्न कर लिया है जिससे वे स्वयं घबरा उठे हैं।

और चूँकि वर्त्तमान परिस्थिति में क्योंकि उससे पशु को बधिया करना धर्म्म के विरुद्ध है, पुनर्जन्म के निश्चित क्रम में बाधा पड़ती है। इसलिए भारत वर्ष की अन्य अनेक विपद्राओं की तरह कुत्तों की विपत्ति भी अनन्त वृत्ताकार में घूमती रहती है। उसका कोई इलाज ही नहीं।

उन्नीसवा परिच्छेद

दयाभाव

मि० गांधी के लेखक महोदय दुःख के साथ लिखते हैं—'हम गाय की रक्षा का तो दम भरते हैं और उनके नाम पर मुसलमानों से लड़ते हैं और अवस्था यह है कि हमारी रक्षा मुसलमानों की कुर्बानी से भी गई बीती है।(१) हम आध्यात्मिकता का गर्व करते हैं और वास्तविक दशा यह है कि पशुओं के प्रति हमारे हृदय में सहृदयता और दयालुता का शोचनीय अभाव है।(२) महारानी विक्टोरिया के शासन सम्भालने के कुछ ही समय बाद पशुओं के प्रति निर्दयता रोकने के लिए पहले बार कानून बना था। लेकिन जब तक लोकमत अनुकूल न हो तब तक ऐसे कानूनों का कोई प्रभाव नहीं और गांधी का पत्र अकेला अरण्य रोदन सा कह रहा है। यदि लोगों में दया भाव नहीं है। यदि भारत वासियों में से ही नियुक्त होने वाली पुलीस के कर्मचारी इस कानून को मूर्खता पूर्ण, सम्भवतः अधार्मिक कानून समझते हैं, जिसका सब से बड़ा गुण उनके लिये यह है कि उन्हें अपनी जेब भरने का सुअवसर मिले और यदि उच्च श्रेणी के लोगों में भी कोई भाव नहीं है तो गवर्मेण्ट का उद्देश्य पूरा होने में बाधा पड़ेगी ही।

जानवरों पर अत्याचार रोकने वाले कानून भारत में सदा

(१) यंग इंडिया, मई ६, १९२६ वी० जी० देसाई पृ०१६०

(२) यंग इंडिया अगस्त २६, १९२१, पृ०३०२,

गवर्मेण्ट की ओर से ही पेश किये गए हैं भारतीय अथवा प्रान्तीय सरकारों में जहाँ कहीं पशु रक्षा के क़ानून बने हैं उनका सदा निर्वाचित भारतीय प्रतिनिधियों ने या तो प्रबल विरोध किया है या उदासीनता दिखलाई है।

भयंकर गरमी के मौसिम में दोपहर के समय भैंसे को बे तरह लाद कर गाड़ी चलाना रोकने के लिए १६ मार्च सन् १९२६ में बंगाल लेजिस्लेटिव कौन्सिल में गवर्मेण्ट की ओर से क़ानून पेश किया गया था। कलकत्ते—की सड़कों पर भैंसों पर यह अत्याचार देखना पाश्चात्यों को असह्य हो गया था। लेकिन इस उपयोगी क़ानून का भी कलकत्ते के प्रमुख भारतीय व्यापरियों ने विरोध किया था। उन्हें वह अपने व्यापार में बाधक दिखाई देता था, और उनके विरोध के होते हुए क़ानून पास हुआ। 'फ़ूका' की प्रथा को रोकने के लिए गवर्नर जनरल ने और उनके बाद प्रान्तीय गवरनरों ने कठोर क़ानून बना दिये हैं। 'फ़ूका' प्रथा के प्रति एक अँगरेज के उद्गारों को मि० गांधी ने यंग इंडिया(१) में प्रकाशित किया है। इस अनुचित रस्म के प्रति यदि हिन्दुओं में कुछ विरोध भाव है भी तो वह कार्य्य रूप में परिणत होने के लिए काफ़ी नहीं है।

सन् १९२६ में बम्बई प्रान्त की सरकार ने बम्बई की व्यवस्थापिका सभा में बम्बई नगर के पुलीस ऐक्ट में इस आशय का एक संशोधन(२) पेश किया कि पुलीस को ऐसे जानवरों को मार डालने का अधिकार होना चाहिये। जो अपनी बीमारी और अथवा चोट आदि के कारण अस्पताल ले जाने के योग्य न हों। पशु-पालकों के हित की दृष्टि से इस संशोधन में इतनी

(१) यंग इंडिया, मई १३, १९२३ पृ०१७४
(२) सन् १९२३ का बिल नः ५

शु जाइश कर दी गयी थी कि यदि वे उपस्थित न हों, अथवा पशु के मारे जाने पर सहमत न हों तो पशु को मार डालने के पहले पुलीस कर्मचारी गवर्नर द्वारा नियुक्त पशु विशेषज्ञ के अनुमति पत्र प्राप्त कर ले। रोग-ग्रस्त और मरणोन्मुख गायों तथा बछड़ों का सड़कों पर मरने के लिये छोड़ देने की जो आदत भारतीयों में पड़ गयी है उसके लिए इस प्रकार के कानून की बहुत आवश्यकता है। ये पशु धीरे धीरे दुर्बल हो जाते हैं और इनमें चलने फिरने की शक्ति नहीं रह जाती और किसी न किसी गाड़ी के पहिए से कुचल कर अन्त में मर जाते हैं।

बम्बई सरकार के इस प्रस्ताव पर जो बहस हुई उससे भारतीय विचार शैली पर बहुत प्रकाश पड़ेगा। इसलिए उस बहस के कुछ उद्धरण यहां दिये जाते हैं। मि० एस० एम० दैव (१) नाम के एक सदस्य ने कहा —

'इस प्रस्ताव का सिद्धान्त भारत वासियों की दृष्टि में घृणित है यदि आप इसी तरह की स्थिति में मनुष्य को गोली से नहीं मारते तो पशुओं के प्रति निर्दयता रोकने के नाम पर आप पशुओं को क्या मारते हैं? यदि यह प्रस्ताव स्वीकृत हो गया तो सड़कों पर लड़ाई झगड़े होने का डर है।'

अब पश्चिमी सिन्ध के श्रीयुत बी० जी० पहलजनी (२) की बात सुनिए—

'इस प्रस्ताव में घोड़े, कुत्ते, और गाय आदि में कोई अन्तर नहीं किया गया है। पशु विशेषज्ञ के अनुमति पत्र प्राप्त करके पुलिस द्वारा किसी भी जानवर को मार डाल सकता है। कौंसिल के सरकारी सदस्यों को जानना चाहिए कि कोई

(१) बम्बई व्यवस्थापिका सभा में बहस सरकारी रिपोर्ट १९२६ भाग १७ खण्ड ७ पृ० ५३५-८० (२) उपरिउ पृ० ५४०

हिन्दू गाय को नष्ट नहीं होने दे सकता। चाहे, वह किसी दशा में भी क्यों न हो। बहुत से पिंजरापोल (१) हैं जिनमें रोगी पशुओं की सेवा होती है। इस प्रस्ताव में यह फ़र्ज़ कर लिया गया है कि पशुओं में आत्मा नहीं होती और जीने लायक न रह जाने पर उन्हें मार डालना चाहिए। आत्मा के सम्बन्ध में हिन्दुओं के विचार पाश्चात्यों से सर्वथा भिन्न हैं इस प्रकार के प्रस्ताव से हिन्दुओं के धार्मिक भावों को आघात पहुँचेगा।'

'इस पर सरकारी सेक्रेटरी श्री युत ए० माण्ट गोमरी (२) कहते हैं :—

'मैं नहीं सोच सकता कि माननीय महोदय जो कहते हैं उसे हृदय से कहते हैं। क्या यह कोई अच्छा दृश्य है कि बिचारे जानवर टूटे हुए पैरों सहित अंतड़िया निकली हुई और रक्त से लथपथ बम्बई की सड़कों में दिखाई पड़ें? सहृदयता इसी में है कि इस तरह के जानवरों का कष्ट समाप्त हो। यह मनुष्यता के विरुद्ध है कि इस तरह के पशुओं को क्लेश सहने दिया जाय।' और यदि उन्हें न हटाया जाय तो सम्भव है रास्ते ही में उनके टुकड़े टुकड़े हो जायँ।,

लेकिन अधिकांश भारतीय इस क़ानून के विरोधी थे, और कहते थे कि इससे जनता रुष्ट होगी। श्रीयुत आर. सी, सोमन(३) का कहना है कि इसमें व्यय की ज़रूरत है, क्योंकि गवर्मेण्ट को पुलीस की सहायता में कुछ पशु विशेषज्ञ नियुक्त करने का अधिकार प्रस्ताव से मिलता है। सोमर महाशय इस व्यय

---

(१) पशुओं के पागल खाने (२) बम्बई व्यवस्थापिका सभा में बहस १०५८१ (३) पूर्वोक्त बहस मार्च २, १९२६ पृ० ५८३

को अनुचित समझते हैं। उनका कथन है —

'यदि कोई उदार पशु विशेषज्ञ पुलीस पदाधिकारियों की सहायता करने के लिए आगे बढ़ें तो ठीक है। लेकिन यदि नये पद बनाये जायं और उनका खर्च प्रजा को देना पड़े तो मैं इस प्रस्ताव का विरोध करता हूं।'

अन्त में भाग्य को प्रधान मान कर बहस समाप्त की जाती है। खेड़ा के सदस्य राव साहब डी० पी० देसाई(१) कहते हैं —

'इस समय जो कठिनाई उपस्थित है उसका कारण दया-सम्बन्धी दो विभिन्न आदर्शों का संघर्ष है। प्रस्तावकों का ख्याल है कि रोग ग्रस्त पशु को जो अच्छा नहीं हो सकता मार देना बहुत अच्छा है। किन्तु हमारा मत है कि जो कुछ होता है ईश्वर की प्रेरणा से होता है।'

तीन महीने बाद, जब कानून फिर सामने आया तो भारतीय मत को अपने पक्ष में करने की चेष्टा करते हुए गवर्मेण्ट के चीफ सेक्रेटरी जे० ई० बी० हाटसन(२) ने कहा —

"इस प्रस्ताव का एक मात्र सम्बन्ध केवल उन पशुओं से है जो सड़कों अथवा अन्य सार्वजनिक स्थानों में रुग्ण और पीड़ा की अवस्था में पड़े रहते हैं और जिनके लिए कुछ उपचार नहीं किया जा सकता। ऐसे पशुओं के मालिक उन्हें हटा ले जाने अथवा पिंजरापोल इत्यादि में भिजवाने को स्वतन्त्र हैं। जो जानवर रोग-ग्रस्त होने की अवस्था में बम्बई की सड़कों पर घंटों उपेक्षित पड़े रहते हैं और अन्त में जिन्हें मृत्यु ही शान्ति देती है। उन्हीं पर इस कानून के अधिकारों

(१) बम्बई व्यवस्थापिका सभा में बहस माघ २,१९२६, पृ० ५८०

(२) बम्बई व्यवस्थापिका सभा में बहस मार्च, १८ मार्च १९२६ पृ० ३०१

का उपयोग हो सकेगा। बम्बई जैसे बड़े नगर में जहाँ हर श्रेणी के लोग आया-जाया करते हैं, ऐसे जानवरों के पड़े रहने तथा आहें भरने से देखने वालों को भी कष्ट होता है।' इस क़ानून का उद्देश्य केवल यह है कि आने जाने वालों को इस हार्दिक पीड़ा से बचाया जावे।

लेकिन हिन्दुओं के विचार इस से भिन्न नहीं होते। वही पुरानी दलीलें दुहराई जाती हैं। बम्बई सरकार के कृषि-विभाग के मंत्री माननीय अली मुहुम्मद खाँ, देहलवी 'किसानों के हित से प्रेरित होकर' इस पर कहते हैं:—

'कौन्सिल की गत बैठक में कहा गया था कि कोई भी जीवधारी न मारा जाय। हाथियों, बनैले सुअरों, और चूहों को, किसानों के हित की दृष्टि से न मारने के लिए इस कौन्सिल के अन्दर इससे पूर्व सरकार के विरोधी सदस्यों ने मुझे दोषी ठहराया था। लेकिन जब किसी जीवधारी को मारने का ही प्रश्न है तो मेरे विचार में हाथी की आत्मा सुअर की आत्मा से, और सुअर की आत्मा चूहे की आत्मा से बड़ी होती होगी। यदि पूर्वोक्त सिद्धान्त कृषि विभाग के लिए भी लागू कर दिया जाय तो मैं ने जिन जानवरों का नाम लिया है उन्हें मारने की मनाही करनी पड़ेगी। किन्तु, इसका परिणाम यह होगा कि देश के किसानों का बड़ा भारी नुक़सान होगा। मेरा तो कहना यह है कि बम्बई की सड़कों पर के निराश्रय पशुओं और जंगलों और खेतों के इन जीवधारियों में कोई अन्तर नहीं है।'

भारतवर्ष में ७२ प्रति शत से अधिक संख्या किसानों की है। उनके प्रति भारतीय राजनीतिज्ञों की मनोवृत्ति भी कृषि-विभाग के उक्त मंत्री की कृषक हितेच्छा के प्रभाव से उस

समय प्रकट हो गई। राव साहब डी० पी० देसाई ने उलट कर कहा कि'—

किसानों को ही भारतीय समाज की समूची जनता समझ लेना ठीक नहीं है यदि किसान यह समझते हैं कि कृषि के लिए हानिकारक पशुओं का वध किया जाय तो यह न समझना चाहिए कि उनके इस मत से सम्पूर्ण हिन्दू समाज सहमत होगा और मेरी समझ में इस सभा में उस मत को अधिक महत्त्व न देना चाहिए।'

उस दिन की शेष कुल बहस में केवल सरकार के प्रयत्न की व्यर्थ आलोचना और उसमें दोष ढूढ़ने की चेष्टा की गई। केवल बम्बई प्रान्त के मध्य भाग के एक मुसलमान सदस्य मौलवी रफीउद्दीन अहमद ने ही कुछ नये विचार उपस्थित किये। उन्होंने कहा(१)—

किसी भी श्रेणी की भारतीय प्रजा के भावों को आघात पहुँचाने की तनिक भी इच्छा सरकार की नहीं है। इस कानून को छोड़ कर यदि किसी दूसरे उपाय से उद्देश्य सिद्ध हो सके तो उसे स्वीकार करने में गवर्मेण्ट को आपत्ति नहीं हो सकती, वह तो प्रसन्न ही होगी। जहाँ तक मैं जानता हूँ—और इस सभा में मैं काफी समय तक रह भी चुका हूँ—सरकार ने हमारे भावों का सदैव खयाल रक्खा है और इसके लिए मैं उसकी प्रशंसा करता हूँ। इस कौंसिल में अनेक अवसरों पर हिन्दुओं और मुसलमानों ने संयुक्त विरोध कर के सरकार की गलतियों को दिखलाया है और सरकार ने उन्हें मान भी लिया है। यहाँ छू छे मस्तिष्क को लेकर आने से कोई लाभ नहीं है, कोई दूसरा उपाय बताइये। समालो-

(१) अगस्त ५, १९२६

चना करना तो सरल है, हमारे कर्त्तव्य की इति श्री उसी से नहीं होती, प्रस्तुत उपायों से अधिक उपयोगी उपाय बताइये! जिन्हों ने आपत्तियाँ उपस्थित की हैं उन सब से मैं प्रार्थना करता हूँ।... ..सरकार उचित बात को सुनने के लिए तैयार है।'

एक हिन्दू ने गरम हो कर टोका—'क्या आप को गवर्मेंट की ओर से बोलने का अधिकार प्राप्त है?'

इसका उत्तर मिलता है—

'जिस किसी से कौंसिल का सम्बन्ध है उस प्रत्येक व्यक्ति की ओर से बोलने का अधिकार मुझे प्राप्त है। मैं फिर कहता हूँ, यह आपत्ति सर्वथा अनुचित है।'

परन्तु इसका कुछ फल नहीं हुआ। इसके विपरीत, एक हिन्दू सदस्य ने गम्भीरता से कहा कि यदि संयोग से कोई मुसलमान पशु-विशेषज्ञ के पद पर नियुक्त हुआ और उसने किसी बीमार गाय के वध की आज्ञा दे दी तो नगर के हिन्दू और मुसलमानों में झगड़ा हो जायगा।

अन्त में ६ भारतीयों और २ अँगरेज़ों की एक उपसमिति बनाई गई। भारतीयों में हिन्दू, मुसलमान, और पारसी सभी थे। यह मामला इसी उपसमिति को विचारार्थ सौंपा गया।

इस क़ानून के दूसरी बार पेश किये जाने के समय सरकार के चीफ़ सेक्रेटरी मिस्टर हाट्सन ने इस टिप्पणी के साथ समिति की रिपोर्ट उपस्थित की कि 'अपने देश-भाइयों को दुख न पहुँचाने की समिति ने इतना अधिक ध्यान रक्खा कि क़ानून की, उपयोगिता बहुत अधिक घट गई। संशोधित क़ानून फिर पेश हुआ परन्तु इस बार गाय, बैल, और मन्दिरों के आस पास की जगह इस क़ानून के प्रभाव-क्षेत्र से बाहर

रक्खे गये। मन्दिरा के आस पास चाहे कुछ भी क्यों न हो। फिर भी किसी भी प्रकार का रचनात्मक प्रस्ताव उपस्थित किये बिना ही हिन्दुओं का विरोध जारी है। हिन्दू सदस्यों का अनुरोध है कि कानून बने परन्तु कुछ काल के बाद, और इस सम्बन्ध में कुछ भी कार्यवाही करना सरकार के लिए बुद्धिमानी नहीं होगी। उनके मतानुसार पशुओं के कष्ट (१) इतने अधिक नहीं हैं कि सहानुभूति को व्यवहारिक रूप दिया जाय। पुलीस के हिन्दू कर्म्मचारियों को पशुओं को गोली न मारनी पड़े, क्योंकि यह काम हिन्दू धर्म्म के विरुद्ध है और यदि मुसल्मान कर्म्मचारी भी चाह तो वे भी इस कार्य्य से मुक्त किये जायँ, एक साहब ने यह भी कहा कि भारतीय पदाधिकारी आग्नेय अस्त्र चलाने में पूर सिद्ध हस्त नहीं होते और ब्रिटिश अफसरों को, जिनका निशाना ठीक बैठता है यह काम सौंपा जाय। इस अन्तिम सम्मति को प्रकट करते हुए बम्बई नगर के हिन्दू सदस्य मि० सर्वे कहते हैं

'मरणासन्न पशु को उस असहायावस्था में वध(१) करने की निर्दयता हम में नहीं है। हम इसे वीरता नहीं समझते।'

इस प्रकार, कम से कम इस बार गवर्मेण्ट गाय की उसके पूजकों से रक्षा नहीं कर सकी। मूल कानून का मुख्य उद्देश्य गाय पर उपकार करना था। किन्तु कानून में से गाय ही का नाम निकल कर कानून पास हो गया। फिर भी सरकार ने बड़े धैर्य और साहस से काम लिया। उसके नक का कुछ न कुछ प्रभाव भारतीय मत पर पड़ा। और इस दृष्टि से कि जिस सिद्धान्त का इस प्रस्ताव से सम्बन्ध है वह आत्मा के मोक्षपथ पर आरूढ हिन्दुओं के दिमागों के लिए

१ बम्बई व्यवस्थापिका सभा में बहस अगस्त ५, १९२३, पृ० ७११

सर्वथा विदेशी है। जो कुछ भी सफलता मिली वही बहुत है।

सन् १८९० में गवर्नर जनरल की कौंसिल ने पशुओं पर अत्याचार रोकने के लिये एक क़ानून पास किया जिस में पाँचवीं धारा में यह क़ैद रक्खी कि कोई जानवर अनावश्यकता क्रूरता से न मारा जाय। सन् १९१७ में यह आवश्यक समझा गया कि पांचवी धारा की मंशा अधिक स्पष्ट कर दी जाय और इस प्रकार बकरे के मारने वाले अथवा उसका चमड़ा अपने पास रखने वाले दण्डनीय हों। प्रान्तीय सरकारों ने भी ये ही क़ानून बना लिये हैं। और फिर भी, ये ही दण्डनीय कार्य्य देश में बराबर किये जा रहे हैं। जीते बकरों की खाल का खींचना तो अब भी जारी है। ज़िन्दा बकरे से उतारी हुई खाल बकरे को मार कर निकाली हुई खाल को अपेक्षा अधिक फैल सकती है और अधिक दाम में बिकती भी है।

इस बात की अधिक चर्चा करने की विशेष आवश्यकता नहीं है। सन् १९२५ में बिहार और उड़ीसा प्रान्त में ज़िन्दा बकरों की खाल खींचने के अपराध में ३४ अभियोग पुलीस द्वारा अदालत में लाये गये। लेकिन भारतीय जजों ने साधारण जुर्माने किये उनके दे दिये जाने के बाद अभियुक्तों ने फिर दुबारा वही काम करके अधिक रुपये वसूल कर लिए। प्रान्त के पुलिस विभाग की रिपोर्ट में लिखा है। लोगों को दण्ड का डर बहुत कम है और मालूम होता है कि जितने लोगों पर मुक़द्दमा चलाया गया उनसे अपराध करने वालों की संख्या कहीं अधिक थी। इस प्रकार की बहुत सी खालें अमरीका को भेजी गई हैं।

ब्रिटेन उदाहरण उपस्थित कर के और शिक्षा देकर लग-

उपलियां

भग तीन चौथाई शताब्दी से प्रतिकूल और अनुपयुक्त भूमि में अपने दया सम्बन्धी विचारों के प्रचार में लगा हुआ है। इस दिशा में तथा अन्य अनेक दिशाओं में भी सम्भवत बल-प्रयोग द्वारा अगरेज अधिक प्रत्यक्ष परिणाम उत्पन्न कर सकते थे। लेकिन उनकी शासन सम्बन्धी नीति यह है कि जब तक सिद्धान्त हृदयङ्गम न हो जायं तब तक इस प्रकार बल प्रदर्शन द्वारा ऊपरी रजामन्दी प्राप्त कर लेने से कोई लाभ नहीं है। जो लोग अपनी स्त्रियों ही के साथ वर्बर लोगों का सा व्यवहार करते हैं उनसे यह आशा करना व्यर्थ है कि वे मूक पशुओं पर दया करेंगे।

पशु-जाति के लिए यह भी एक दुर्भाग्य की बात है कि पशुओं के प्रति निर्दयता रोकने का काम भी ब्रिटिश पार्लियामेंट द्वारा स्वीकृत सुधारों के अनुसार एक भारतीय मंत्री के हाथ में सौंप दिया गया है। मूक जीवधारियों को इन सुधारों के प्रयोग का मूल्य अपने शरीर के रूप में देना पड़ेगा।

बीसवां परिच्छेद

अपने मित्रों के घर

भारतवर्ष में बहुत दिनों तक डाक्टरी करने वाले एक बूढ़े पशु-विशेषज्ञ का कथन है कि 'यह देश पशुओं की दृष्टि से संसार भर में सब से अधिक निर्दय है।' शायद यह कहना अधिक उचित होगा कि थोड़े से जैनियों को छोड़ कर शेष भारतीय जिस ढंग से धर्म्म को मानते हैं उससे उनमें वह दया-भाव नहीं जाग्रत होता है जो हमारे पाश्चात्य देशों में पाया जाता है।

स्वयं मि० गाँधी लिखते(१) हैं:—

'जहाँ गौ की पूजा होती है वहाँ तो पशु-समस्या खड़ी ही न होनी चाहिए। लेकिन हमारी गौ पूजा में अज्ञान और अन्ध-विश्वास प्रवेश कर गया है। हमें उतने ही पशु रखने चाहिए जितने का हम भरण पोषण कर सकें। मैं पहले ही कह चुका हूँ कि गौ-रक्षा समितियों को यह, प्रश्न अपने हाथ में ले लेना चाहिए।'

गौ-रक्षा-समितियाँ गौ-शाला चलाती है। ये चन्दे से चलती हैं और धनी हिन्दू व्यापारी इन्हें अनन्त आर्थिक सहायता देते हैं। एक अनुभवी हिन्दू कर्मचारी ने एक बार मुझसे कहा कि 'यदि गवर्मेन्ट भारतवर्ष में गौ-वध बन्द कर देने का वादा करे तो उसे जितने रुपये की आवश्यकता हो मिल सकता

---

(१) यंग इण्डिया फ़रवरी २६, १९२५

है यद्यपि साथ ही साथ मुसलमानों के साथ उसे युद्ध भी करना पडेगा।'

गायकी रक्षा करनेसे लोग विश्वास करते हैं कि उनपर देवता विशेष प्रसन्न होंगे। फिर भी कसाई के हाथ अपनी अच्छी गाय बेचने से एक हिन्दू आत्मा को कोई कष्ट नहीं होता क्योंकि वह समझता है कि गाय को मैं थोडे ही मारूंगा, यह काम तो कसाई करेगा।

फिर क्या है, उससे तुम्हें जो रुपया मिलता है उसी के एक अंश से कसाई खाने की निकृष्ट गायें मोल लेकर गौशाला में भेज दो और पुण्य भी कमा लो। इस प्रकार नकद और नारायण दोनों की तुम्हें प्राप्ति होगी।

बहुत सी गोशालाओं और पिंजरापोलों में मैं स्वयं गई हूं। गोशालाएं सिर्फ गायों के लिये होती हैं, पिंजरा पोल सब पशुओं के लिये। इन गोशालाओं और पिंजरा पोलों को देखकर मुझे आश्चर्य होता है कि जो लोग उनके ऊपर इतना धन खर्च करते हैं अथवा जो पशुओं को उनके हवाले कर देते हैं। अथवा जो मि० गांधी की तरह इन गोशालाओं और पिंजरापोलों का जोरों के साथ पक्ष लेते हैं, वे कभी किसी गौशाला के अन्दर जाकर भी देखते हैं या नहीं। मैं ने पहली बार इन संस्थाओं का हाल एक यूरोपियन पशुप्रेमी से सुना था, जो कि बहुत दिन तक भारत में रह चुका था। उसने मुझसे कहा कि,—

'जो हिन्दू पुण्य कमाने के लिये किसी कसाई से खरीद कर गोशाला में भेजता है वह सदा निर्बल और रोगी गाय खरीदता है, क्यों कि इस तरह की गाय सस्ती मिल जाती है। गोशाला में गाय भेजते समय वह उसके पोषण के लिये

काफ़ी धन साथ साथ जमा नहीं करता। यदि वह कुछ धन जमा भी करता है तो गोशाला का कर्मचारी उन में से अधिकांश स्वयं उड़ा जाता है। इन गौशालाओं में गायों को भयंकर कष्ट होता है। हाल में एक गोशाला के अन्दर मैं ने एक बूढ़ी गाय को असहाय पड़े हुए देखा। उसके चूतड़ों में कीड़े पड़े हुए थे और उसे खा रहे थे। उस गाय के मरने में अथवा यूं कहना चाहिये कि कीड़ों के उसे खाते खाते भीतर तक पहुँचने में दस दिन लगे होंगे। इन दस दिन तक वह इसी तरह असहाय सिसकती रही होगी। मैं ने गोशाला के रक्षक से पूंछा, "क्या तुम इस गाय के लिये कुछ नहीं कर सकते? उसने जवाब दिया, क्यों? मैं क्यों कुछ करूं? काहे के लिये करूं?"

दूसरा मनुष्य जिसने मुझे इस विषय में सूचना दी एक अमरीकन पशु विशेषज्ञ था। वह भी भारत में रहता था और अत्यन्त योग्य व्यवहारिक मनुष्य था। उसने मुझसे कहाः—

'मुझसे कुछ गोशालाओं में जाकर सलाह देने की प्रार्थना की गई। महायुद्ध के बाद से जो राजनैतिक अशांति इस देश में पैदा होगई है उसके कारण बहुत से हिन्दोस्तानी अब अंगरेज़ अफ़सरों की बात ही नहीं सुनते, इसलिये मुझे आशा थी कि चूंकि मैं अमरीकन हूँ, वे मेरी सलाह से लाभ उठावेंगे। किन्तु जहां कहीं मैं गया मैंने यह देखा कि गोशालाओं में या तो ज़ान बूझ कर बेईमानी की जाती है या घोर कुप्रबन्ध है। सब जगह मैंने यह देखा कि जो पशु इन गोशालाओं में कैद करके रखे गए हैं उनकी जान वा उनके स्वास्थ्य की कोई भी परवाह नहीं करता। मेरी सलाह को किसी ने पसन्द नहीं किया। जब उन्होंने यह देखा कि मैं उनकी उन बुराईयों का समर्थन

करने के लिये तय्यार न था तो उन्होने मुझे बुलाना ही छोड दिया।'

इसके बाद में एक प्रसिद्ध धर्माचार्य आगरे के दयाल बाग के गुरु (राधास्वामी) से मिली। उन्होंने मुझसे कहा कि,—'मै दो गोशालाओं म जा चुका हूँ। दोनो बार बिना सूचना दिये हुए गया। जो दृष्य मैंने वहा पर देखे वे इतने भयकर थे कि उसके बाद दो दिन तक मैं भोजन नहीं कर सका।'

अन्त में मैंने एक ऐसे भारतवासी की गवाही ली जो कि यूरोप म पशुओं की वृद्धि करने, और दूध आदिक उत्पन्न करने का काम सीख चुका है और जा इस समय एक जिम्मेवारी के पद पर है। उसने मुझसे कहा कि, 'यह पिजरापोल केवल पशुओं को घेर कर रखने के बाडे हैं। इसके बाद उसने बताया कि, 'हिन्दुओं का धर्म केवल यह कहता है कि पशुओं का पिजरापोलों में बन्द कर दिया जावे और बस, इसके बाद कुछ करने की आवश्यकता नहीं है। वहा पशुओं की कोई परवाह नहीं करता और पशुओं को बडी यातनाए सहनी पडती हैं। धनाढ्य व्यापारी और साहूकार प्रति वर्ष मनों रुपया इन पिजरापोलों के ऊपर खर्च करते हैं, किन्तु यह सब धन याती लोग उडा लेते हैं या नष्ट होता है। अधिकाश पिजरापोल म पशुओं की जो हालत होती है वह उससे भी कहीं अधिक खराब होती है जिस हालत में वे पशु गलियों में मेला खाते फिरते थे और किसी गाडी इत्यादि के पहिये से कटकर अपने जीवन के कष्टों से मुक्त हो जाते थे। पिजरा पोलों अन्दर इनकी स्थिति अत्यन्त बुरी हो जाती है। उनकी हड्डिया निकल आती हैं वे पडे रहते हैं। पिजर पोलों के कर्मचारी न तो जानते हैं कि पशुओं की किस तरह रक्षा

की जाती है न उन्हें इसका कोई अनुभव होता है और न शिक्षा दी जाती है। पिंजरा पोलों पर जो विपुल धन व्यय किया जाता है वह पशुओं के लिये व्यर्थ नहीं किया जाता! भारत में कुछ अच्छे पिंजरा पोल भी हैं। किन्तु उनकी संख्या बहुत ही कम है!'

मैंने स्वयं जो सबसे पहले गोशाला देखी वह मध्य भारत के एक नगर में थी। फाटक के ऊपर एक सुन्दर चित्र खिंचा हुआ था जिसमें वन के अन्दर नीले रंग के कृष्ण सफेद गायों को अपनी बांसुरी सुना रहे थे।

चारों तरफ़ ऊंची दीवारें थीं। अन्दर कुछ दूरी पर एक बड़ा सुन्दर बाग़ीचा था, जिसमें फलों के वृक्ष और तरकारियों की क्यारियां भरी हुई थीं इनके बीचों बीच एक सुन्दर बंगला था, जिसमें गोशाला के रक्षक महोदय रहते थे। बाग़ीचे के एक ओर गायों की जगह थी। जहां गाएं बंधी हुई थीं वहां न कोई वृक्ष था न कोई झाड़ी और न किसी तरह की छाया, केवल मोटे मोटे मट्टी के ढेलों से भरा हुआ एक मैदान था जिसमें वर्षा के समय भयंकर कीचड़ हो जाती होगी जो पशु उसमें बंधे हुए थे उनमें से किसी किसी की तो हड्डियां बिलकुल बाहर निकली हुई थीं। कुछ पड़े सिसक रहे थे इतने निर्बल थे कि खड़े न हो सकते थे। अनेक पशुओं के बड़े बड़े घाव थे और उनके चूतड़ों या खुली हुई पसलियों पर बैठकर पक्षी अपनी चोंचों से उनके घाव कुरेद रहे थे। कुछ की टांगें टूटी हुई थीं और उनके हिलने जुलने में इधर उधर लटकती थीं। बहुत से जानवर बीमार थे। इसमें सन्देह नहीं सभी भूख से मर रहे थे!

सांड़ों की हालत भी इतनी ख़राब थी जितनी गायों की।

ये साड़ भी गायों के बीच में खड़े हुए थे। पास ही एक छोटा सा कटघरा था जिसमें लगभग २५० छोटे छोटे बछड़े ठुसे हुए थे। ये बछड़े मेरे आने की आवाज सुनकर बड़ी करुणा के साथ चिल्लाने लगे। मैंने देखा कि उनकी भूरी भूरी आंखें निकली हुई थीं उनके पेट पिचके हुए थे, उनकी टांगें लड़खड़ा रही थीं मैंने पूछा कि उन्हें खाने को क्या दिया जाता है। गोशाला के नौकर ने मुझसे साफ साफ कहा कि प्रत्येक बछड़े को एक छोटा चाय का प्याला दूध का रोज दिया जाता है जब तक कि वह मर न जाय, और सौभाग्य से बछड़ा आम तौर पर जल्दी मर भी जाता है बाकी का दूध गोशाला का रक्षक बाजार में बेच डालता है।

इसके बाद मैंने यह पूछा कि एक गाय को प्रति दिन क्या खाना दिया जाता है। मुझे नाज की एक कोठी दिखाई गई जो पांच फुट लम्बी तीन फुट चौड़ी और दो फुट गहरी रही होगी उसमें छाटा नाज और भूसा मिलाकर भरा हुआ था। प्रत्येक पूरे जानवर को इसमें से पाव भर रोज दिया जाता था और सिवाय थोड़ी सी सूखी कुट्टी के और उन्हें कुछ भी खाने को न दिया जाता था। उस कुट्टी में भोजन सामग्री बिलकुल नहीं होती किन्तु वह कुछ दिनों तक पशुओं को जीवित रख सकती है। इन गायों के लिये न कोई चरागाह थी और न किसी तरह का घास का प्रबन्ध था यह सब गाय बैल और बछड़े जिस तरह मैंने उन्हें देखा उसी तरह खड़े खड़े या पड़े पड़े दिन बिताते थे जब तक कि मृत्यु उन्हें छुटकारा न दे।

एक गाय के केवल तीन पैर थे। पछली टांग घुटने से नीचे इस कारण काट डाली गयी थी क्योंकि कि वह गाय दूध दुहने के समय लात मारती थी।'

दूसरी गोशालाओं में मैंने ऐसे पशु भी देखे जो अलौकिक जन्तुओं की रचना करने के लिए स्वयं दंगल बना दिए गये थे। इस काम के लिए वे लोग किसी एक बछड़े के पैर को काट कर दूसरे के शरीर पर कहीं भी लगा देते हैं और इन्हें स्वाभाविक बना कर तमाशे के रूप में रुपये के लिये दिखाते फिरते हैं। कटे हुए शरीर वाला बछड़ा यदि रक्त के बहने से न सड़ने से मर न जाय तो लेकर किसी गोशाले में भेज दिया जाता है। इस कार्य के प्रति लोगों में किसी प्रकार का असन्तोष भी नहीं जान पड़ता।

अहमदाबाद नगर के मध्य में, गांधी जी के सुन्दर और सुखपूर्ण निवास स्थान से, जहां वे गोशाला और पिंजरा पोल के समर्थन में लेख लिखते हैं, थोड़ी ही दूर पर मैंने एक विशाल पिंजरापोल देखा जिसका वर्णन कर के अब मैं पाठकों की भावुकता को और आघात नहीं पहुँचाना चाहती। उसमें मैंने जितने जानवरों को देखा मुझे आशा है वे इस समय तक मृत्यु की सुखप्रद गोद में पहुँच चुके होंगे।

बम्बई में एक संस्था है। इसका नाम है—'दी असोसियेशन फार सेविंग मिल्च कैटिल फ्राम गोइंग टू दी बम्बे स्लाटर हाउस'। इसका काम है दुधार गायों को कसाई खाने में जाने से बचाना। इसे देख कर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। यही एक मुझे एकमात्र अपवाद मिला। इसमें अधिकतर भारतीय व्यापारी सम्मिलित हैं। इसकी हाल की रिपोर्ट(१) पढ़ने योग्य है।

इस रिपोर्ट में बताया गया है कि १ अप्रैल, १९१९ से ३१ मार्च

(१) श्री घटकोपर सार्वजनिक जीवदया खाता द्वारा अपील। ७५, महावीर बिल्डिङ्ग, बम्बई।

१९२४ तक के भीतर २,२६,२५७ गायें बम्बई शहर में काटी गई और ६७,५८३ गायों और भैंसों के बछड़े गोशालों में इतने सताये गये कि वे मर गये।

रिपोर्ट में अङ्क देते हुए गाय, बैल, भेड़, और बकरे सभी को न मारने की प्रार्थना की गई है। इसके बाद दूध की कमी के प्रश्न पर लिखा गया है —

'हम हिन्दू गाय की रक्षा करने का दम भरते हैं। यदि यह बात सच होती तो भारतवर्ष में दूध की नदियां बहती होतीं। परन्तु यह बात सच नहीं है। गाय की रक्षा करने वाले बम्बई में दूध उतना ही महँगा है जितना गोभक्षक लन्दन या न्यूयार्क में। अच्छा दूध मिलना किसी भाव भी कठिन हो गया है। इससे बच्चों की मृत्यु संख्या तथा बड़ों की मृत्यु संख्या दोनों भयंकर रूप से बढ़ गई है।'

उक्त संस्था के पास बम्बई से कुछ दूर दूध का एक कारखाना भी है। वहाँ बड़ी सफाई और सुव्यवस्था के साथ गायें रक्खी जाती हैं। वहाँ के सुपरिन्टेन्डेन्ट ने मुझ से कहा,—'यहाँ प्रति गाय को १५ पाउन्ड घास, आठ पाउन्ड अन्न और खरी प्रति दिन दी जाती है। जो गायें वहाँ पर थीं वे भूखी नजर नहीं आती थीं। कुल २७७ गायें वहाँ थीं और उनमें १३० क्वार्ट दूध रोजाना होता था। यह दूध १३० परिवारों में बिकता था और इससे प्रतिदिन ८ पाउन्ड १४ शिलिङ्ग की आमदनी होती थी। यहाँ नई गाय मोल भी मिल सकती थीं, परन्तु शर्त यह था कि खरीदने वाला उन्हें फिर कसाई के हाथ न बेचे कार्य्य कर्त्ताओं में सभी भारतीय थे। और वे अपने कार्य्य में दिलचस्पी ले रहे थे। उन में जो प्रधान थे उन्होंने मुझसे कहा'—

'यदि यह स्थान केवल व्यापारिक होता तो वहां बहुत से पशु, जिनका व्यापार के लिए उपयोग नहीं हो सकता, यहां न होते हमें कसाईखाने से पशु मोल लेने पड़ते हैं, परन्तु जहां पहले हम सस्ती और निकम्मी गाय मोल लेते थे वहां अब बढ़िया मोल लेना सीख गए हैं। इसके अतिरिक्त गोशाला में व्यापारिक भाव भारतवर्ष में एक नई बात है अभी तक हमारे कारण किसी दूसरे ग्वाले का काम नहीं छिना है, और न शहर में गो वध की कुछ अधिक कमी हुई है। परन्तु, आगे चल कर ऐसा होने की हमें आशा है। हमारे कार्य्य कर्त्ताओं में से दो तीन कृषि विद्या के उपाधि धारी हैं जिन्होंने पशु उत्पादन और दूध सम्बन्धी सरकारी संस्थाओं में शिक्षा प्राप्त की है और वे पशु समस्या को समझते हैं। यह बात आप को भारत वर्ष के किसी दूसरे गो शाला या पिंजरापोल में नहीं मिलेगी। हम लोग वैज्ञानिक रक्षा में विश्वास रखते हैं।'

'अमरीका के गो रक्षकों की दृष्टि से यह संस्था भी अत्यन्त प्रारम्भिक और अनुन्नत थी, किन्तु भारतवासियों की वर्तमान स्थिति की दृष्टि से वह एक बड़ी चमकती हुई चीज़ थी। तथापि वहां भी यह देखकर दुख होता था कि जितने काम करने वाले वहां थे वे सब सुपरिन्टेन्डेण्ट के भाई भतीजे या रिश्तेदार थे। लेकिन इस गो शाला की स्थिति आरम्भ में अच्छी न थी। उसे ठीक स्थिति पर लाने वाला शुरू में एक ब्रिटिश शिक्षा प्राप्त और ब्रिटिश प्रधान की देख रेख में सरकारी सेवा में नियुक्त, भारतीय था और उसी के अनुरोध से उक्त समिति ने इस पथ को ग्रहण किया।

इधर यह परिस्थिति है उधर भारतीय राजनीतिज्ञ देश

में और विदेशों में सरकार (१) को लापरवाही का दोषी ठहराते हैं, कृषि और कृषक दोनों का तिरस्कार करते हैं और जब नाम कमाने की इच्छा होती है तब दूसरे प्रकार के गौशालाओं को कुछ चन्दा भेज दिया करते हैं।

---

(१) यंग इण्डिया मार्च १३, १९२६ पृ० ११४

इक्कीसवां परिच्छेद

घोर दरिद्रता का देश

हिन्दुस्तान का नवशिक्षित समुदाय अकसर अपने सतयुगी ज़माने की महिमा गाया करते हैं। इस समुदाय का कथन है कि प्राचीन समय में भारत धन धान्य से परिपूर्ण था। विद्या, शान्ति, स्वास्थ्य सौन्दर्य और समृद्धि से यह देश प्रफुल्लित था। सारे देश में सुख और शान्ति का राज्य था। इस समुदाय का विचार है की वर्त्तमान गवरमेण्ट ने सुखपूर्ण स्वाभाविक परिस्थिति का नाश कर दिया।

इस "सतयुगी" ज़माने के पक्ष में अकसर लोग निम्न-लिखित ढंग की दलीलें दिया करते हैं

"आप तो मानते हैं कि महाराज चन्द्रगुप्त राज्य करते थे। और उन्होंनेही सेलेक्यूस और सिकन्दर से युद्ध भी किया था। इनके राज्यकाल में चौदह वर्ष की कन्या कीमती ज़ेवरों से सुसज्जित निशङ्क और निर्भय हो कर आजा सकती थी। उस समय पूर्ण शान्ति थी, न दरिद्रता थी, न दुष्काल और न महामारी का ही कहीं प्रकोप उस समय होता था। जब से अंग्रेजी राज्य आया इसने हमारे "सतयुग" का सर्वनाश कर दिया।"

कभी यह समुदाय उस पौराणिक समय का सुन्दर चित्र खींच कर यह दिखाता है कि उस समय साइन्स और फिलासफी का प्रचार था और हर तरफ कृषकों का जीवन समृद्ध शाली था। कहीं दावा कर वह पूछा जाता है कि क्या आप उस सतयुगी समय का कोई भी चित्र इस समय दिखा-

सकते हैं। नहीं दिखा सकते ! यदि यह परिस्थिति आज नहीं पाई जाती तो साफ जाहिर है कि अंगरेजों ने उस का नाश कर दिया। लेकिन यह लोग भूलजाते है कि चन्द्रगुप्त के समय अंगरेजों के आने से १६०० वर्ष पहले का है। चन्द्रगुप्त का वंश पुराणों के किस्सों मे लीन हो गया इस वंश में से केवल अशोक का ही व्यक्तित्व इतिहास के पृष्ठों में कुछ दृष्टिगोचर होता है। इस के बाद सीदियन और तुर्क लोग उत्तर के पहाड़ों के दर्रों से उत्तरी हिन्दुस्तान में आते है। और इस क्षेत्र में अपनी राजधानियां कायम करते हैं। और हिन्दू जाति धीरे धीरे काल के व्यतीत होने पर अपने विजेताओं को—सीदियन और तुर्कों को—अपने में हजम कर लेती है।

ईसा की चौथी और पांचवी सदी में हिन्दू कला और इतिहास का बहुत विकास होता है। यह गुप्त राजाओं का काम कहलाता है। कुछ दिनों के बाद उत्तरीय दर्रो की रक्षा करने वाली शक्ति का ह्रास होने लगता है और फिर मध्यएशिया से जंगली लोगों का समूह हिन्दुस्तान पर टूटता है। श्वेतहूणों का भयंकर समूह हिन्दुस्तान में घुस इस देश के धन की लालच के लिये उत्तरीय सीमा पर आक्रमण करने के समय का इन्तज़ार करते हैं। जब समय पाते हैं, यह लोग टूट पड़ते हैं और सिवाय सामाजिक संगठन के देश की सारी बातों का सर्वनाश कर देते हैं।

छटी शताब्दी के आरंभ में उत्तरीय भारत जिसे हिन्दुस्तान कहते है हुणा लोगों के अधीन हो चुका था। और हुणा के लगातार आक्रमण ने उस समय की सारी बातों का ऐसा पूर्णतया नाश कर दिया था कि उस समय के इतिहास का ज्ञान न तो किसी कुटुम्ब के या किसी वंश के परम्परागत

कथाओं से ही प्राप्त किया जा सकता है।

सीदियन और तुर्कों के समान इन लोगों को भी हिन्दुओं ने धीरे धीरे हज़म करलिया। हिन्दू धर्म जिसे इस समय बुद्ध-धर्म ने पराजित सा कर दिया था, फिर अपने पुराने प्रभाव को प्राप्त हो गया और सारे देश में फैल गया। इसके विखरे हुए सिद्धान्तों ने और इसके लाखों भयंकर देवताओं ने अपना असर दिखाया। इस के वाद सातवीं सदी में चन्द वर्षों को छोड़ कर कोई भी समय ऐसा नहीं हुआ जबकि उत्तर या दक्खिन में इस देस में राजनैतिक एकता के कायम करने का या मुसतकिल राज्य स्थापित करने की कोई भी कोशिश की गई हो। इसके विपरीत विध्वंसकारक शक्तियाँ दिन वदिन वढ़ती गईं।

सातवीं शताब्दी के मध्य से पाँच सौ वरस वाद तक उत्तर भारत में सिवाय छोटी छोटी रियासतों और राजाओं में पारस्परिक युद्ध के और कोई विशेष वात नहीं हुई। इस समय के राजे एक दूसरे के खिलाफ़ वरावर लड़ते रहे। एक दूसरे पर आक्रमण करते थे, दूसरे को राज्यच्युत करता था, लड़ाई होती थी राजा मारे जाते थे कई आक्रमणकारी का नाश होता था। कहीं वह विजयी होकर अपने दुशमन का सर्वनाश कर देते थे। हर एक अपनी अपनी शक्ति के वढ़ाने का उद्योग करता था और उत्तरीय और मध्यभारत राजाओं के पारस्परिक विद्वेष और कलह का शिकार था।

इस दरम्यान में दक्षिणी भारत विलकुल इन झगड़ों से अलग रहा। इसकी पहाड़ियाँ और इसके घने जंगल इसकी उत्तरीय आक्रमणकारियों से रक्षा करते रहे। कृष्णवर्ण तामिल जाति आर्यरक्त से अप्रभावित इस देश में रहती थी। इनकी

लड़ाइयाँ इनकी अपनी थी और इनके देवता भी इनके अपने थे। और जिस समय हिन्दू प्रचारक समुद्र तट के मार्ग से इनके देश मे दाखिल हुए तो तामिल देवताओं को अपने धर्म में शामिल करके इन लोगों ने तामिल जाति को भी हिन्दू जाति के अन्तर्गत कर लिया।

तामिलियों की कला अपनी अलेहदा है इसे इन्होंने स्वयं अच्छी तरह उन्नत किया था। इस भाग में कम से कम एक राज्य तो ऐसा था जहाँ इन्होंने ग्राम्य शासन का एक विस्तृत और दिलचस्प नमूना दुनिया के सामने पेश कर दिया था। लेकिन बारहवीं सदी के आखीर तक इन लोगों की यह अवस्था भी बिलकुल नाश हो गई। अब इस बात के कहने की आवश्यकता नहीं कि उत्तर या दक्षिण के देशों में जहाँ युद्ध बराबर होते आये हो, जहा एक वश का राजानाश होता हो और दूसरे का प्रादुर्भाव होता हो वहाँ न तो म्युनिसिपल सस्थायें पैदा हो सकती हे न स्वतन्त्र नगर का विकास हो सकता हे। न प्रजातत्र कायम हो सकती है और न जनता में राजनैतिक ज्ञानही आ सकता है। हर एक प्रान्त निरकुश शासक की एडी के नीचे दबा हुआ निर्बल और नि शक्ति पड़ा रहा। जब तक एक निरकुश शासक रहा उसने अपनी प्रजा पर मनमाना शासन किया। थोडे दिनों के बाद दूसरा पैदा हुआ और उसने उसका खातमा। करके उसी प्रकार का अपना राज्य जमाया।

(?) इसके बाद वाले काल के सम्बन्ध में सक्षेप रूप से जान सकने के लिये सदा डॉ० डबलू होलडर नेसकी बनाई हुई पुस्तक "Peoples and Problems of India" पढनी चाहिये।

वह लिखते हैं "८०० सन इसवी में पहले २ अरव लोग आये और उन्होंने मुलतान और सिन्ध में राज्य स्थापित किये। १००० सन् में भयंकर समूह का आगमन हुआ। इस समय तातारी कौमें मुसलमान हो चुकी थीं और तुर्कों ने जो कि इन जातियों में सब से योग्य थी अपने जीवन का वह कार्य क्रम आरम्भ कर दिया था जिसका परिणाम पश्चिम में कुस्तुनतुनिया हुआ ९९७ इसवी में महमूद (जो एक तुर्की सरदार था) हिन्दुस्तान पर आ टूटा। इसका ख़िताव 'बुतशिकन' इस शख्स के वास्तविक गुणों का परिचय देता है। हरसाल यह शख्स हिन्दुस्तान पर आक्रमण करता रहा, शहरों और क़िलों पर क़ब्जा करता था। मन्दिर और मूर्तियों को तोड़ता था और इसलाम धर्म की घोषणा करता रहता था। और हरसाल वह लाखों और करोड़ों रुपये का लूटा हुआ माल अपने देश अफ़गानिस्तान में ले जाता था।

१००० सन से लेकर ५०० वर्ष तक भयंकर और लालची तुर्की, अफ़गानों और मुगलों का समूह एक दूसरे के बाद हिन्दुस्तान पर राज्य करने की अभिलाषा से आता रहा। इस शताब्दी के अन्त में बाबर ने १५२६ में मुगल साम्राज्य की बुनियाद डाली।और इसके बाद दो सौ वर्ष तक हिन्दुस्तान में आने वाले दर्रे बन्द रहे और बाबर के वंशज इन दर्रों की समुचित रूप से रक्षा करते रहे।

होलडरनेस ने दूसरी जगह लिखा है।

'मुगल साम्राज्य एसीआई निरंकुश शासन का एक साधारण नमूना था। यह व्यक्तिगत राज्य था हिन्दुस्तानियों के लिये इसका अर्थ यह था कि एक राजा के बजाय दूसरा राजा हो गया। किन्तु यह नवागन्तुक अपने साथ उत्तर की

शक्ति लाये थे। यह लोग काबुल की पहाड़ी के उसपार के दजलातट के रहनेवाले थे और इनको एसिया की अच्छी से अच्छी सैनिक कौमों से फौज के लिये सिपाही मिलते रहते थे, शारीरिक शक्ति और सहनशीलता में यह लोग यूरोप के नार्समनों और नारमनों के समान थे।

दक्षिण में इसलाम के वेग को रोकने के लिये विजयानगरम नामका एक हिन्दू राज्य पैदा हुआ। इसके शासक ने एक बहुत बड़ा शानदार शहर बसाया, जिसमें वह अनन्त विलास में अपना जीवन व्यतीत करता था। लेकिन इस राज्य में भी भारत के अन्य स्थानों के समान साधारण जनता के धन पर ही राजा और दरबारी सुखपूर्ण और शानदार जीवन व्यतीत करते थे। और साधारण जनता के नितान्त असहायता की वजह से ही ऐसे बड़े बड़े राज्य कायम रह सकते थे। इस पर भी हिन्दू राज्य की शान जल्दी ही नाश को प्राप्त हो गई। १५६५ ई० में आसपास के मुसलमान राजाओं के समूह के एक आक्रमण ने इस राज्य का सत्यानाश कर दिया। यहाँ के निवासियों का विध्वंस कर डाला और यह नगर पत्थरों का एक ढेर होकर रह गया। लेकिन पुराने मुगल राजाओं ने यहाँ के लोगों के धर्म पर हस्तक्षेप नहीं किया। अकबर ने तो एक राजपूत महिला से विवाह भी कर लिया। राजपूत सरदारों और ब्राह्मण विद्वानों को अच्छी अच्छी जगह दीं। लेकिन मुगल लोग हिन्दुस्तान में गैरों के समान ही राज्य करते रहे। यद्यपि यह लोग हिन्दुओं के योग्य पुरुषों को अपने शासन में शामिल कर के उनकी सहायता से अपना राज्य मजबूत करते रहते थे किन्तु इस बात का बराबर ख्याल रखते थे कि उन के देश के आये हुए मुसलमानों के हाथ

में वास्तविक शक्ति रहे।

१६७६ में शाहंशाह औरंगज़ेब ने मुग़ल राज्य की ऐसी नीति कर दी कि जिस के अनुसार हिन्दू जनता की मूर्ति पूजा क़ायम नहीं रह सकती थी।

इसके भयंकर शासन काल में हिन्दू मन्दिर और मूर्तियां ख़ूब तोड़ी गईं राजपूतों की वफ़ादारी को इससे बड़ा धक्का पहुँचा और जिससे दक्खिन की एक छोटी क़ौम मरहठों को विशेष असन्तोष पैदा हो गया। इसलिये जब औरङ्गज़ेब ने विशेष धन राज्य और शक्ति की लालच में दक्षिण की मुसलमानी राज्य पर भी आक्रमण किया, उस समय मरहठें बिगड़ गये और लूट मार मचादी। ५० वर्ष औरङ्गज़ेब के शासन के बाद मुग़ल राज्य इतना कमज़ोर हो गया कि उसकी मृत्यु पर मुग़ल साम्राज्य बिखर गया। और मरहठों को मौक़ा मिल गया कि लूट मार में जो तजुरबा हासिल किया था उसकी बिना पर वह भारत में एक शक्ति शाली राज्य क़ायम करे।

इस के बाद फिर वही हुआ जो इतिहास में बराबर होता आया था और जो बराबर होता रहेगा, उत्तर के दर्रे अरक्षित हो गये अर्थात् मुग़ल साम्राज्य के तहस नहस होने पर मध्य एशिया का दरवाज़ा खुल गया और मध्य एशिया का समूह आ टूटा। पहले ईरानी आये, इसके बाद अफ़गान, जिन्होंने १७६१ ई० में मरहठों को बहुत सख़्त शिकस्त दी और उन्हें मार कर उत्तरीय भारत से दक्खिन की पहाड़ियों में भगा दिया।

इन विक्षिप्त शताब्दियों के इतिहास में साधारण जनता का बहुत कम ज़िक्र आता है। इन शताब्दियों का इतिहास छोटे छोटे राजाओं और सरदारों का व्यक्तिगत इतिहास है।

उनके व्यक्तिगत जीवन का, उनके हौसले का, उनके धन का, चालबाजियों का, उनके युद्ध का और उनके पतन का ही हाल इस इतिहास में पाया जाता है। जहाँ २ कहीं झलक दिखाई देती हे वहाँ यही मालूम होता है कि जनता अधिकतर अपने निरकुश शासक की लालच की शिकार रही है चाहे यह निरकुश शासक हिन्दू रहा हो या मुसलमान। जो लोग समय समय पर बाहर से आकर इस देश में भ्रमण किया हे उन की किताबों से पता चलता हे कि यह देश भूखा, नग्न दरिद्रता का मारा हुआ, असयमित सिपाहियों के जुर्म से पीडित, अपनी मेहनत से पैदा किये हुए पेसे से जबरदस्ती वंचित किया जाता रहा है। महामारी और अकाल समय समय आकर इस एक कोने से दूसरे कोने तक बराबर सर्वनाश करते रहे हैं।

फ्रास, डच, पुरचगीज और स्पेन के सय्याहों ने अकबर और अकबर के बाद के समय में इस देश में उत्तर और दक्खिन में भ्रमण किया हे और अपने अपने अनुभव लिखे हैं। मुख्य मुख्य बातों पर सभी एक मत हैं।

उन्हों ने लिखा है कि दरिद्र लोग सर्वत्र अत्यन्त दरिद्र रहे हैं।

और अमीर लोगों का धन अरक्षित रहता था। साधारण डाकू और राज्य कर की गति इतनी अनिश्चित थी कि कब क्या हो जायगा कोई नहीं कह सकता था। पर दलित जनता हिन्दुओं की ही थी। शासक और कुलीन लोग जिन की सख्या बहुत कम होती थी करीब करीब सभी विदेशी होते थे चाहे वह तुर्क हो या ईरानी। इन लोगों के विषय व विलास की अतोषणीय वासना होती थी इन को यह भी

हौसला रहता था कि दरबारियों में इन में कोई शान में ज़्यादा न बढ़ सके इसलिये यह लोग बहुत विलासपूर्ण और दिखावे का जीवन व्यतीत करते थे। ओहदे और रसूख़ रिशवत से प्राप्त होता था। और लोग फ़िज़ूल ख़र्ची और शान का जीवन इसलिये व्यतीत करते थे कि उत्तरीय भारत में कमसे कम किसी बड़े आदमी के घर की सारी ज़ायदाद उस की मृत्यु पर सरकारी हो जाती थी।

अपनी शान क़ायम रखने के लिये बड़े से बड़े अफ़सर से लेकर छोटे से छोटे तक के वास्ते सिर्फ एक मार्ग था, वह यह कि वह किसान का रक्त चूसे। यह लोग इस लिये किसानों का रक्त चूसते रहते थे।

वानलिनशोटन जिन्होंने दक्षिणीय भारत में १५८० से १५९० तक भ्रमण किया है किसानों के बारे में लिखते हैं।

"किसान लोग इतने दरिद्र हैं कि चार पैसे के वास्ते वह कोड़े खाना बरदास्त कर लेंगे यह लोग खाते इतना कम है कि अगर कहा जाय कि यह लोग हवा पी कर रहते हैं तो अनुचित न होगा। इनके क़द छोटे होते हैं और यह शरीर से दुर्बल भी हैं।

जब पानी नहीं बरसता इन की आफ़त और भी बढ़ जाती है जानवरों के समान भोजन की तलाश में इधर उधर मारे मारे फिरते हैं और अपने बच्चों को एक रुपये से भी कम पर बेंच डालते हैं। भूख की अग्नि शान्त करने के लिये या तो लोग अपना शरीर बेंचकर गुलाम बन जाते हैं या मनुष्य का मांस खाकर अपनी भूख शान्ति करते हैं। दुष्काल से बचने के लिये उसके पास इससे दूसरा और कोई साधन भी नहीं है।"

अब्दुल हमीद लाहोरी ने अपनी किताब बादशाह नामे म लिखा है कि दक्खिन में १६३१ ई० के दुष्काल में मुरदे की पीसी हुई हड्डियों का मिला हुआ आटा बिकता था। दरिद्रता इस हद तक पहुँच गई थी कि आदमियों ने एक दूसरे को खाना शुरु कर दिया। और लोगों को अपने ही पुत्र के मास के खाने में कोई भी सकोच नहीं होता था। मुरदों की लाशों से सड़कें अक्सर रुक जाती थीं। डच ईस्टइण्डिया कम्पनी के एक प्रतिनिधि ने उसी वर्ष सूरत के दुष्काल के सम्बन्ध में लिखा है (menschen) en vee van hanger sturven दो वर्ष के बाद क्रिस्टोफर रीड ने ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी को रिपोर्ट दी थी कि मसलीपट्टम और भरमागाव में दुष्काल इतने जोरों का था कि "जिन्दा आदमी मुरदों को खा जाते थे और लोगो को गावों में सफर करते हुए डर लगता था कि कहीं ऐसा न हो कि कोई उन्हे मार कर खा जाय" पीटर मडे ने गुजरात के सम्बन्ध में उसी समय लिखा था कि दुष्काल से १० लाख से ज्यादा आदमी मर गये, अमीर और गरीबो में, इस का बराबर प्रभाव पडा स्त्रियाँ अपने बच्चों को भून कर खा जाती थीं। ज्योंही कोई स्त्री या पुरुष मरता था कि उस को टुकडे टुकडे कर डालते थे और खाजाते थे।

पीटर मडे का 'भ्रमण" नामकी पुस्तक के परिशिष्ट म इस प्रकार के प्रमाण काफी पाये जाते हैं। पुराने इतिहास भी इस का अनुमोदन करते है।

गुलामों के रखने म करीब करीब कुछ भी नही लगता था इसलिये बडे लोगों के घरों म इनकी सख्या बहुत ज्यादा होती थी। "बड आदमियों के हाथियों के पास सोने चादी की झालरे रहती थी लेकिन साधारण जनता के पास जाडों में अपनी

शरीर रक्षा के लिये काफ़ी कपड़ा भी नहीं मिलता था।" यह टेलर के वाक्य हैं।

व्यापारी लोग यदि समृद्ध शाली हुए तो आराम से जीवन व्यतीत करने की हिम्मत नहीं कर सकते थे और न अच्छा भोजन खाने पीने की ही हिम्मत कर सकते थे, अपने धन को इन्हें ज़मीन के अन्दर दफ़न करना पड़ता था क्योंकि अगर लोगों को ज़रा भी ज़ाहिर हो जाता कि अमुक आदमी धनी है तो डाकू लोग उन से ज़बरदस्ती कर के छीन ले जाते थे।

ग्रामनिवासी ही देश में एक ऐसा-तबक़ा था कि जो उप-जाऊ कहा जा सके। जो कुछ यह लोग बचाते थे, इन की साधारण आवश्यकताओं के लिये छोड़ कर सब का सब सरकार ले लेती थी। इसके बाद यह धन केवल एक मार्ग से खर्च होता था। विदेशियों शासकों का छोटा समूह ही इस से फ़ायदा उठाता था। जनता को कुछ नहीं मिलता था।

दो चार पुल थे और आदमियों के चलने से बैलगाड़ी के मिट्टी या कीचड़ में चलने से जो रास्ता बन जाता था वही उस समय की सड़क थी। न उस समय जनता की शिक्षा का कोई प्रबन्ध था और न कोई अस्पताल थे। मुकद्दमों की सफ़ाई देने के लिये कोई क़ानून उस वक्त नहीं पाया जाता था। अकसर कुछ राजे या वज़ीर अच्छी अच्छी स्कीमें बनाते थे लेकिन यह स्कीमें कागज़ के सफ़ों पर ही लिखी रह जाती थी और वास्तव में क्रियात्मक काम कुछ भी नहीं किया जाता था देश को आर्थिक दृष्टिसे उन्नति करने का कोई भी उपाय किसी ने भी नहीं सोचा। यदि किसी ने कुछ किया भी तो उसके उत्तराधिकारियों ने या तो उसका नाश कर दिया या उस को धीरे धीरे नष्ट हो जाने दिया।

अकबर के मृत्यु के १५ वर्ष बाद अर्थात १६२० ई० से हालैण्ड के एक निवासी फ्रान्सिस को पेलसेरट ने हिन्दुस्तान में रहना शुरु किया इसके बाद ७ वर्ष तक वह हिन्दुस्तान में रहे। इन्होंने अपने समय का जो हाल लिखा है वह बहुत कीमती और आश्चर्यजनक है। पेलसेरियट ने लिखा है।

"अगर किसानों से इतना निर्दयता का व्यवहार न किया जाय तो भूमि से बहुत काफी अन्न पेदा किया जा सकता है। अगर किसी गाँव से लगान देने के लिये काफी अन्न न पेदा हुआ तो शासक इसे या तो किसी को इनाम में दे देता है, या ग्राम निवासियों की स्त्रियां और बच्चे विद्रोह के बहाने बेंच डालते हैं। कुछ किसान इस जुर्म से बचने के लिये भाग जाते हैं और इस लिये जमीन वे योंही पड़ी रहती है और कुछ दिन में बंजर हो जाती है।

कानून तो कोई है ही नहीं। शासन बिलकुल ही निरंकुश है। कानून म ऐसी बातें पाई जाती हे जेसे हाथ के लिये हाथ काट डाला जाय, और आंख के बदले आंख फोड़ दी जाय, लेकिन बड़े आदमियों के ऊपर यह कानून नहीं आयद होता था। शासक से कोई यह पूछने की हिम्मत नहीं कर सकता था कि तुम इस तरह से क्यों शासन करते हो? इस तरह से क्या नहीं करते? हर एक शहर में अदालत पाई जाती है लेकिन जो व्यक्ति इन अदालत के जजों के सामने न्याय के लिये भेजा जाता है उससे अभागा और हो कौन सकता है। इन न्यायाधीशों की नजर लालच से मन्दपड़ जाती है। यह रिशवत के लिये गिद्ध समान नाक लगाये रहते हैं। गरीब की रोटी छीन कर खा जाने से ही इनका सन्तोष होता है। सब लोग खुल्लम खुल्ला रिशवत लेने को तैयार रहते है। नकद

दाम देने के विना न तो न्याय और न दया की आशा की जा सकती है। यह मर्ज सिर्फ जजों या न्यायाधीशों में ही नही पाया जाता वरन सर्वत्र विद्यमान है, क्या छोटा क्या बड़ा, छोटे से छोटे अफ़सर से लेकर बड़े से बड़े राजा तक धन की अतृप्त लालसा रखते हैं।

यह बात सब को मालूम हो जानी चाहिये कि बादशाह जहांगीर सिर्फ मैदान का और खुली सड़कों का ही राजा है क्योंकि बहुत सी जगहे ऐसी है जहां विना मजबूत सिपाहियों को साथ लिये हुए सफ़र करना ना मुमकिन है। बाज़ जगह तो बादशाह के विद्रोहियों को विना काफ़ी धन दिये आना जाना असंभव है। इन विद्रोहियोंकी संख्या बहुत काफ़ी है।

जैसे सूरत में राजपीपला के लोग शहर के अन्दर तक लूटते मारते चले आते हैं? अहमदाबाद, बुरहानपुर, आगरा दिल्ली, लाहोर और कई एक नगरों में चोर और डाकू दिन या रात को खुल्लम खुल्ला आक्रमण करते हैं। शासकों को चोर और डाकू रिशवत दे देते हैं और वह लोग मौके पर जनता की रक्षा के लिये कुछ नही करते क्योंकि इस देश में पैसा, आत्माभिमान से ऊंचा स्थान रखता है। यह लोग फ़ौज संगठित करने की बजाय अपने घरों को सुन्दर स्त्रियों से सुसज्जित करते है और संसार का सारा सुख इनके महल के चार दिवारियों मे मौजूद रहता हैं।

इसी लेखक ने बार बार बड़े और छोटे आदमियों के जीवन में भेद को दिखाते हुए बार बार लिखा है "एक ओर अमीर लोग बेहद अमीर हैं बड़े शक्ति शाली है और दूसरी ओर जनता बिलकुल पद दलित है और ग़रीब है और

इतनी दुखी हैं। इन आदमियों के घरों में नग्नदरिद्रता और असह्य यातना का राज्य कहा जा सकता है भाग्य में विश्वास होने के कारण और जातियों में विभाजित होने की वजह से जो प्रभाव जनता पर पडता है उसका बयान करते हुए वह लिखता है।'

"जनता शान्ति के साथ यह सब यातनायें बरदाश्त करती है और कहती है कि इससे अधिक सुख उनके भाग्य में नहीं हैं। कोई भी ऊंचे उठने की कोशिश नहीं करता क्योंकि ऊँचे उठने के साधनों का मिलना बहुत कठिन है क्योंकि कोई भी युवक अपने पिता के व्यवसाय के अलावा दूसरा व्यवसाय करने का अधिकारी नहीं और न वह अपने जाति के बाहर शादी विवाह ही कर सकता है। मजदूर के दो भक्षक हैं। एक तो कम मजदूरी, और दूसरा शासक अमीर, दीवान और अन्य शाही अफसरान। इन लोगों में अगर किसी को मजदूर की जरूरत पड़ती है तो मजदूर से कुछ नहीं पूछा जाता कि वह काम करने को तैयार है या नहीं। उसे पकड़ बुलाया जाता है, और अगर उसने आने में कुछ चूं चपड़ की तो वहीं उसकी कुटम्मस होती है और शाम को उसे बिना मजदूरी दिये भगा दिया जाता है या आधी मजदूरी देदी जाती है।"

'पेलसंर्ट के हिन्दुस्तान से चले जाने के बाद फ्रांस देश निवासी फेंसिस बरनियर हिन्दुस्तान में आया। वह वहाँ १६५६ से १६६८ तक रहा। उसने जो इतिहास लिखा है वह अन्य विदेशी मल्लाहों के इतिहास से मिल जाता है इसने शाहजहा औरंगजेब के जमाने में जो मनुष्य स्त्रियों तथा अन्य चीजों की अवस्था देखी है उसका वर्णन किया है लगान और कर के सम्बन्ध में बरनियर लिखता है।'

बादशाह देश की सारी ज़मीन का मालिक समझा जाता है। फ़ौजी लोगों को वह कोई तनख्वाह नहीं देता बल्कि उन्हें बिना कर के ज़मीन दे देता है।। शासक लोगों को भी तनख्वाह की बजाय और फौज को संगठित करने के लिये जमीन दी जाती है अकसर यह शर्त करली जाती है कि वह एक निश्चित रक़म सालाना बादशाह को देते रहें। इस तरह दे देने के बाद जो ज़मीन बचती है वह बादशाह अपने महल के कब्ज़े में समझी जाती है और वह इस ज़मीन को ठेकेदारों को दे देता है जो इसे प्रतिवर्ष मालगुजारी देते हैं।'

बङ्गाल इस लेखक के अनुसार दुनिया का सबसे सर सब्ज़ देश है लेकिन अन्य प्रान्तों के बारे में इसका मत है।

खेत कोई खुशी खुशी नहीं जोतता कोई आदमी ऐसा नहीं पाया जाता जो अपनी खुशी से सींचने वाली पानी की नालियों की मरम्मत करे। इसका परिणाम यह होता है कि सारा क्षेत्र बहुत बुरी तरह से जोता जाता है और सींचने के समुचित प्रबन्ध न होने कारण सारी भूमि उपज में क्षीण होती जाती है। किसान के सामने बराबर यह प्रश्न रहता है। "मैं क्यों मेहनत करूँ ? मेहनत करके अगर हमने कुछ पैदा भी किया तो लालची सरकारी अफसर न जाने कब आकर हमारा बचा हुआ धनधान्य अपहरण कर लें"। शासकों और मालगुजार दूसरी ओर यह सोचते है कि "हम क्यों इस देश की दुर्दशा पर चिंतित हों और इसे विशेष उपजाऊ बनाने के लिये हम अपना समय और अपनी शक्ति क्यों लगावें। एक क्षण में हमारी सारी जायदाद छिन सकती है और तब हमारी सभी कोशिशों से न तो हमें लाभ होगा न हमारे वंशजों को। हमारे लिये तो यही मुनासिब है कि जितना धन मिल सके हम

किसान से निकालते रहे चाहे वह भूखों मरे या भाग जाय। जिस समय इस जायदाद को छोडने का हुक्म मिलेगा हम इसे बजर छोड कर चले जायेंगे' इसी दूषित शासन प्रणाली का यह परिणाम हे कि देश के करीब करीब सब शहर यद्यपि वह आज उजड नहीं गये हैं तो उडने वाले नजर पड रहे हैं।'

दरबारों की शान कायम रखने के लिये और जनता को दबाये रखने के वास्ते विशाल फौज को संगठित रखने के उद्देश्य से देश का सत्यानाश किया जा रहा है"

इसके बाद भारत में यूरोपीय शक्तियों के आगमन का संक्षिप्त इतिहास बयान किया जाता है। अकबर जिस समय तख्तपर बैठा अर्थात १५५६ म पुर्चगाल के निवासी गोवा में जो पश्चिमी किनारे पर है अपना किला बना चुके थे। दक्खिन के मुसलमान बादशाहो से इन्होंने यह जमीन ले ली थी। यहा से परशियन खाडी, और अरब समुद्र के सारे व्यापार को यह अपने वश म रक्खे रहते थे। इस वक्त तक किसी दूसरी शक्ति ने इस देश में कही और अपना कदम नहीं जमा पाया था और न किसी अगरेज ने ही भारत में अपना कदम रखा था।

निर्दयता और व्यभिचार के कारण पुर्चगाल की शक्ति हिन्दुस्तान म क्षीण हो गई। १६ वीं सदी के आरम्भ म इस लिये गोवा को छोड कर पुरचगीजों के पास और कोई स्थान बाकी न बचा और इनकी शक्ति डचलोगो के पास आगई।

डच और अगरेज व्यापारी दोनों उस समय पूर्वीय व्यापार के लिये बहुत उत्सुक हो रहे थे। डच लोगो का दिलचस्पी ज्यादातर जावाद्वीप म थी इसलिये अगरेज लोग करीब करीब हिन्दुस्तान मे अकेले ही रह गये।

अंगरेज़ व्यापरियों ने महारानी इलीज़िबिथ और मुग़ल शाहंशाहों से चार्टर या रियायतें ले ले कर पश्चिमी किनारे पर व्यापारिक केन्द्र स्थापित कर दिये थे। इंगलैण्ड से निर्वासित अमरीकन जाति के पूर्वजों ने बोस्टन में जो बस्ती बसाई थी वह बङ्गाल की खाड़ी में अंगरेज़ों के क़ायम किये हुए केन्द्रों से पाँच वर्ष बाद की है। नौ वर्ष के बाद अँगरेज़ों ने स्थानीय हिन्दू राजा से एक जगह ली। और अँगरेज़ व्यापारियों की कम्पनी और राजा के दरम्यान जो समझौता हुआ उसके अनुसार अंगरेज़ों को यह अख्तियार मिल गया कि वह समुद्र के तट के एक विषम भूमि पर जो आज मद्रास है एक छोटा सा किला अपने व्यापार की रक्षा के लिये बना सकें। उस समय कम्पनी की ओर से इस स्थान का शासक बना कर यली हू येल नाम के एक बोस्टन निवासी को भेजा गया था उसने कनेकटीकट विश्वविद्यालय को जो धन दिया है वह उसने यहीं कमाया था। मद्रास के गवर्नर आज भी उसी मकान में रहते हैं और अब भी यलीहू येल की तस्वीर इस मकान में टंगी हुई है।

फ्रांस के व्यापारियों ने भी जिन्हें हिन्दुस्तान से व्यापार करने का १७ वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में बड़ा उत्साह था दक्षिणी किनारे पर कुछ स्थान हासिल किये। इन का व्यापार अंगरेज़ों के व्यापार का कभी भी मुक़ाबिला न कर सका। लेकिन चूंकि यूरोप में इनको और अंगरेज़ों के पारस्परिक विद्वेष पैदा होगये थे इसलिये उन्होंने अंगरेज़ों के खिलाफ़ और हिन्दुस्तानी राजाओं के ख़िलाफ़ अनेक षड्यंत्र रचे, जिसका परिणाम यह हुआ कि इनका अंगरेज़ों से युद्ध हुआ। जिस तरह से अमरीका में बसने वाले अंगरेज़ो ने भविष्य में

अपना अधिकार कायम करने के उद्देश्य से वहा के आदिम निवासियो की सहायता से फरासीसियों और आदिम निवासियों को लड कर परास्त किया वैसी ही हिन्दुस्तान में अंगरेजों ने हिन्दुस्तानियों की सहायता से फ्रांसीसियों और हिन्दुस्तानियों दोनों को लड कर परास्त किया, फरक सिर्फ यह है कि अमरीका में बसने वाले अँगरेजों ने तो वहा के आदिम निवासियो को कभी किसी किस्म के राजनीतिक अधिकार नहीं दिये बल्कि उन्हें लगलभग निर्मूल कर दिया। इसके विपरीत यहा के अंगरेजो ने हिन्दुस्तानियों की संख्या बढाई है और उनको धीरे धीरे राजनीतिक अधिकार देते हुए स्वराज के रास्ते पर ले जा रहे है।

अगरेजों और फ्रांसीसियों का युद्ध १७४६ म खुलम खुला शुरु होगया। फ्रांसीसियों ने अंगरेजो व्यापार के केन्द्र मदरास पर इसी सन में कब्जा कर लिया। इस तरह का अन्त सन् १७६१ म हुआ जबकि फ्रांसीसी लोगों ने बिना किसी शर्त के अपना मुख्य केन्द्र पॉडीचरी को अंगरेजों को देदिया और इस तरह अपने अस्तित्व का हिन्दुस्तान म खातमा कर लिया।

१८वीं शताब्दी में बहुत दिनों तक अगरेजों का कब्जा हिन्दुस्तान भर में चन्द मुरब्बा मीलों से ज्यादा नही था, कुछ जमीन मद्रास म थी, कुछ बम्बई में और दो तीन जगह और। इस दरम्यान में अगरेज लोग अपना ध्यान केवल व्यापार में ही लगाते थे और स्थानीय युद्ध या राजनीति में कोई दिलचस्पी नहीं लेते थे। लेकिन जब शाहंशाह औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात मुगल साम्राज्य बिगड गया और सारे देश म लूटमार का बाजार गरम होगया कम्पनी ने अपने

व्यापारिक केन्द्रों की रक्षा के लिये कुछ यूरोपीय सेना का संगठन किया और इसकी सहायता के लिये हिन्दुस्तानी सैनिक भी नौकर रखें।

इस के बाद यह बढ़ कर एक शासक मण्डली सी बन गई। १७८४ में पारलियामेण्ट के एक ऐक्ट के अनुसार कम्पनी की कार्यवाही अपने अधिकार में ले ली। जिस समय कम्पनी को उसकी सहायता के लिये ऐसी शक्ति मिल गई कम्पनी ने अपने कार्य को विस्तार देना शुरू किया और उस देश में जहाँ अराजकता का राज्य था शक्ति पैदा करने के उद्योग में लग गई।

इस कार्य की सिद्धि के लिये इस शासक मण्डली को अनेक शक्तियों का मुकाविला करना पड़ा। डाकुओं का समूह, लूटेरे सरदारों का गरोह, मुगल साम्राज्य के नौकरी से हटे हुए फौजी अफ़सर जो शहद की मक्खियों के समान व नये राज्य और नई लूट मार के फ़िराक में फिर रहे थे कम्पनी के मुकाविले में आये। इन को परास्त करने के अलावा कम्पनी के सामने एक बड़ा भारी कार्य यह भी था कि वह बची हुई राज्य शक्तियों से अनुरोध करे कि वह किराये के सैनिकों को फौज में भरती करके अपने पास के राजों पर आक्रमण करने की अपनी प्राचीन प्रथा को छोड़ दे। और इस नीति पर चलते हुए अकसर अंगरेज़ों को उस समय के राजाओं के अनुरोध पर ही देश के कुछ भागपर कब्ज़ा करना पड़ा और अपने प्रभावक्षेत्रमें लाना पड़ा; इस नीति के विकास के साथ साथ देश में राजनैतिक एकता की सम्भावना दिखाई देने लगी।

शान्ति पैदा करने का काम जब ठीक तौर से हाथ में आगया अंगरेज़ों ने सिविल संस्थाओं का, जनता को अधिकार

देने का, तथा क़ानून न्यायालय, आदि बनाने का काम शुरू कर दिये जो एक हज़ार वर्ष के इस देश में गायब हो गये थे। कम्पनी अभी तक व्यापारिक संस्था थी और मुख्य कार्य इसका व्यापार ही था लेकिन इसने जनता के हित का भार भी अपने ऊपर ले लिया था।

यह कम्पनी मानुषिक संस्था थी और करीब दो शताब्दियों के इस ने काम किया। इसलिये कोई आश्चर्य की बात नहीं कि इस काल में अयोग्य कार्य कर्ताओं द्वारा, या गलती से कभी कभी अनुचित बातें भी हुई हैं। इसके पदाधिकारी अभिमानी भी रहे हैं, वे समझ भी रहे हैं, कुछ अनिश्चित विचार के भी थे एक या दो इनमें नीच भी थे और धन की लालच से यह पतित भी हो गये थे। इनके दोषों पर बड़े बड़े व्यर्थ के आडम्बर रचे गये हैं।

लेकिन सब बातों का ख्याल करते हुए यह बात मानने म जरा भी सकोच न होना चाहिये कि कम्पनी के अफ़सरान बड़े योग्य पुरुष थे। ज्यों ज्यों जमाना गुजरता गया इंगलैंड के लोग अपनी जिम्मेदारी को महसूस करने लगे और लोगों के मतराजात पर ज्यादा ध्यान दिया जाने लगा। पारलियामेण्ट भी कम्पनी के कार्यों पर आलोचनाय करने लगी। और शासन-कला की सार्वभौमिक उन्नति के साथ इस देश के शासन म भी उन्नति होने लगी। देश के उद्धार के लिये जिस वीरता और परिश्रम पूर्ण नीति से इस कम्पनी ने काम लिया वह आवश्यक ही था। कम्पनी के दोष भी हो सकते हैं लेकिन यह मानना पड़ेगा कि उन्नति के लिये इसी ने दरवाजा खोला। और हिन्दुस्तान की कमबख्त जनता के सामने आशा की ज्योति को कम्पनी ने ही जागृत किया।

कम्पनी ने इस देश की अनेक भयंकरताओं का नास किया। गला घोंट कर मार डालने वाले ठगों का नाश करना, विधवाओं को ज़िन्दा जलाने की प्रथा को बन्द कराना, तथा कोढ़ियों को ज़िन्दा दफ़न करने के रवाज को रोकना, कम्पनी का ही काम था। और अगर हम कम्पनी के महत्त्वपूर्ण कारनामों का संक्षिप्त से संक्षिप्त वर्णन भी करें तब भी इन्साफ़ यही कहता है। हम १७८४ के पारलयामेन्टरी एक्ट के ८७ दफ़ा का ज़रूर उल्लेख करेंगे जिसके कि शब्द यह हैं।

"कम्पनी के अधिकार में आये हुए मुल्क का कोई भी निवासी, या उस मुल्क मे रहने वाली इंगलैण्ड के राजा की कोई भी रियाया, केवल अपने धर्म, जन्मस्थान, जाति, रंग या इन कारणों में से किसी कारण के विना कम्पनी के शासन में किसी भी उहदे या जगह से वंचित नहीं रहेगी।"

जातियो और उपजातियों की श्रंखला में वंधे हुए, कलह से पीड़ित, और निरंकुश शासकों की एड़ी के नीचे दवे हुए भारत में इस प्रकार की कार्रवाई वम्वई के गोले के समान साबित हुई। इस धड़ाके का प्रभाव यह भी हुआ कि पश्चिमीय विचारों ने इस देश में अस्थिरता पैदा कर दी। १८४५ में सिखों का विद्रोह और १८५७ में हिन्दुस्तानियों का ग़दर इसी प्रभाव के परिणाम थे। और १८५७ का गदर समाप्त होने पर इगलैण्ड यह महसूस किया कि समय आगया है कि कम्पनी द्वारा शासन करने के भोड़े तरीके को समाप्त कर दिया जाय और व्यापारियों के हाथ में इतने वड़े मुल्क का इन्तज़ाम न रखा जाय और हिन्दुस्तान की हुकूमत बराह रास्त राजराजेश्वर के हाथ में ले ली जाय।

१८५८ में यह तवदीली अमल में आ गई। दरिद्र, रुग्न

अर्ध नग्न भारत माता दूसरे दुनिया के सामने आ गई और उसकी अर्धी आखे उस नवीन झण्डे की ओर फिर गई जो अब उस के ऊपर लहरा रहा था। इस झण्डे के साथ साथ एक प्रतिज्ञा हमेशा से रही है और आज तक बराबर है लेकिन भारत माता उस प्रतिज्ञा पर जरा भी विश्वास नहीं करती। वह ऐसी प्रतिज्ञाओं पर विश्वास कैसे कर ही सकती है? सारे ऐतहासिक काल मे वह किसी न किसी की दासी या शिकार होती रही है वह कैसे विश्वास कर सकती है कि उसका अन्तिम स्वामी उसके लिय अपने साथ रचनात्मक सेवा, प्रजातन्त्रवाद, और सर्व साधारण की समता व एकता का उपहार लाया है।

— ० —

बाईसवां परिच्छेद

सुधार

ब्रिटिश भारत में जो शासन पद्धति इस समय पाई जाती है और जिसका शनैः शनैः भारत में विकास हो रहा है उसकी जड़ पिछली शताब्दी में लगाई गई थी और वह आज तक उन्नत होती चली आ रही है। किन्तु इस शासन पद्धति के वर्तमान अवस्था को जानने के लिये यह आवश्यक नहीं कि हम उस पर प्राचीन समय से ही नज़र डालें।

हिन्दुस्तान की इस समय मुख्य शासन ग्रेट ब्रिटेन की जनता है। अंगरेज़ी राजा और पारलियामेण्ट, इस जनता के प्रतिनिधि हैं। पारलियामेण्ट इण्डिया कौंसिल के सेक्रेटरी आफ़ स्टेट द्वारा हिन्दुस्तान पर शासन करती है। सेक्रेटरी आफ़ स्टेट का दफ्तर लंदन में है। किन्तु हिन्दुस्तान में मुख्य शासन समिति गवर्नर जनरल और उसकी कौंसिल है जिसको भारत सरकार भी कहते हैं।

गवर्नर जनरल या वायसराय की नियुक्ति राज राजेश्वर करते हैं, उनकी कौंसिल के सभासद की भी नियुक्ति यही करते हैं। इस कौंसिल में सात विभाग के सात प्रमुख होते हैं। सेना के प्रमुख सेनापति, होम मेम्बर, अर्थ मंत्री, रेलवे वा कामर्स के मंत्री, तथा शिक्षा, स्वास्थ्य, व कृषि, व्यापार, लेबर, व क़ानून के मंत्रिगण; इन सात मंत्रियों में से अन्तिम तीन मंत्री हिन्दुस्तानी होते हैं।

सार्वदेशिक शासन मशीन का दूसरा पुरज़ा व्यवस्थापक

सभाए हैं। जिस में दो भाग है कौंसिल आफ स्टेट, वा एसम्बली।

कौंसिल आफ स्टेट में ६० मेम्बर हैं जिसम ३४ चुनें हुए होते हैं। बाकी २६ में से २० से कम गवरमेण्ट अफसर और बाकी गेर अफसरान होते हैं जिनको वाइसराय मुकर्रर करता है।

एसम्बली में १४४ मेम्बर होते हैं, इसमें १०३ चुने होते हैं, बाकी ४१ मेम्बरान की नियुक्ति, वायसराय स्वय करते हैं। इन ४१ में से २६ गवरमेण्ट अफसरान होते हैं और बाकी छोटे २ समुदायों के प्रतिनिधित्व के लिये नियुक्त किये जाते हैं। इन दोनों व्यवस्थापक सभाओं मे हिन्दुस्तानियों का बहुत काफी बहुमत है और इन दोनों में इस तरह बनाए गये हैं कि हर एक प्रान्त का समुचित प्रतिनिधित्व हो सके।

ब्रिटिश भारत म १५ प्रान्त हैं। और हर एक का शासन भिन्न भिन्न है। मद्रास, बङ्गाल, बम्बई, सयुक्तप्रान्त, पञ्जाब बिहार व उडीसा, मध्यप्रान्त, बर्मा व आसाम बडे प्रान्त समझे जाते हैं और हर एक प्रान्त में एक गवर्नर और उसकी कार्यकारिणी शासन के लिये मुकर्रर है, यह कार्यकारणी छोटी व्यवस्थापक सभा की सहायता से शासन करती है जिसमें ७० फीसदी (बर्मा में ६० फीसदी) का चुनाव जनता करती है।

निर्वाचन इस तरीके से होता है कि भिन्न भिन्न जाति, समुदाय, का प्रतिनिधि व्यवस्थापक सभा में पहुँच सके। इन जातियों व समुदायों की प्रतिनिधि सख्या प्रत्येक प्रान्त के लिये भिन्न भिन्न है। मद्रास में निम्न लिखित है।

गेर मुसलमान (हिन्दू, जेन, बुद्ध आदि)	६५
मुसलमान	१३

हिन्दुस्तानी ईसाई ५
यूरोपियन (अंग्रेज़) १
एंग्लोइण्डियन १
ज़मींदार ६
यूनीवर्सिटी १
व्यापार ६

प्रत्येक प्रान्त में निर्वाचक कौन हों इसके भिन्न भिन्न नियम हैं। लेकिन ज़्यादातर ज़ायदाद की बिना पर राय देने का हक़ क़ायम किया गया है। इस तरह से हिन्दुस्तान में करीब ७० लाख आदमियों को राय देने का हक़ हासिल हो गया और बड़े बड़े प्रान्तों को भी यह अधिकार मिल गया है कि अगर वह चाहें तो अपने यहां की स्त्रियों को भी राय देने का हक़ दे दें। इस नये सुधार में सब से बड़ी बात यह है कि प्रान्तीय गवर्मेण्टों को अपने ऊपर स्वयं शासन कर लेने का कार्य बहुत हद तक सुपुर्द कर दिया गया है। इसकी मंशा यह है कि हिन्दुस्तानी लोग अपने ऊपर शासन करने के कार्य को सीख जांय। इस तरह से इन नौ बड़े सूबों में प्रान्तीय सरकार असल में दो हिस्सों में तकसीम हो जाती है। गवर्नर, उसकी कार्य कारिणी कमेटी और सरकारी अफ़सरान से मिलकर एक हिस्सा बनता है। गवर्नर और भिन्न भिन्न विभागों के मंत्रियों से मिलकर दूसरा हिस्सा बनता है। कौन्सिलों की मेम्बरी में अंग्रेज़ व हिन्दुस्तानी दोनों होते हैं। विभागों के मंत्रियों अर्थात् मिनिस्टरों को गवर्नर व्यवस्थापिका सभा निर्वाचित मेम्बरों में से नियुक्त करता है। वे मिनिस्टर व्यवस्थापिका सभा के सामने अपने कार्य के ज़िम्मेदार होते हैं। तमाम मिनिस्टर हिन्दोस्तानी होते हैं।

पहले जिस शासन को एक साधन से किया जाता था अब इन दो विभागों द्वारा होता है। एक को रिज़र्व (सुरक्षित) और दूसरे को ट्रान्स्फर्ड (परिवर्त्तित) विभाग कहते हैं। रिज़र्व विभाग का शासन प्रान्तीय गवर्नर और उसकी कार्यकारिणी के हाथ में होता है। ट्रान्स्फर्ड विभाग का शासन प्रान्तीय व्यवस्थापिका सभाके मिनिस्टरों द्वारा होता हैं। जिन विषयों को ट्रान्सफर्ड विभाग में शामिल कर दिया गया है उनका शासन वास्तव में अंग्रेज़ों ने हिन्दुस्तानियों को सुपुर्द कर दिया है। उद्देश यह है कि अगर इस तजर्बे में कामयाबी हो तो ट्रान्सफर्ड विषयों की सीमा बढा दी जाय और जहाँ जहाँ पर मिनिस्टर का काम ठीक तौर से न चला सके वहाँ गवर्नर और उसकी कार्यकारिणी उन विषयों का शासन अपने हाथ में ले ले। ट्रान्स्फर्ड विषय निम्न लिखित हैं—शिक्षा, सार्वजनिक स्वास्थ्य, आबपाशी और रेल्वे के काम को छोड़ कर सारा पब्लिक वर्क, व्यवसायों की उन्नति, आबकारी, कृषि, म्यूनिसिपेलटी और डिस्ट्रिक्ट बोर्डों का काम इत्यादि। रिज़र्व विषय निम्न लिखित हैं कानून और शान्ति का कायम रखना, देशकी रक्षा, अर्थ विभाग, और मालगुज़ारी'

प्रान्तीय व्यवस्थापक सभाओं के बारे में एक योग्य लेखक की राय है कि

'इन व्यवस्थापिका सभाओं का कानून बनाने का बहुत विस्तृत अधिकार है। प्रान्त का सालाना बजट मंजूरी के लिए इनके सामने पेश किया जाता है ट्रान्सफर्ड विषयों के सम्बन्ध में इनको रुपया देने न देने का पूरा अख्तियार हासिल है, लेकिन गवर्नर को भी यह अधिकार है कि अगर वह यह जरूरी समझे

कि रिज़र्वड विषयों के लिए रुपयों की ज़रूरत है तो वह उनके लिए रुपया दे दे चाहे कौन्सिल ना मंजूर ही क्यों न करती हो, गवर्नर को यह भी अख़त्यार है कि वह व्यवस्थापिका सभा में स्वीकृत किसी भी क़ानून को मंसूख़ कर दे या उसको गवर्नर जेनरल की मंजूरी तक मुल्तवी रक्खे। इसको एक साधारण अख़त्यार यह भी प्राप्त है कि रिज़र्वड विषय के सम्बन्ध में अगर वह कोई क़ानून ज़रूरी समझे तो उसे बिला कौंन्सिल की मंजूरी के क़ानून बना दे, इस असाधारण अधिकार को अभी तक केवल एक मर्तबा काम म लाया गया है। बड़ी व्यवस्थापिका सभा के सम्बन्ध में उसी योग्य लेखक की राय है।

"बड़ी व्यवस्थापिका सभा को पार्लियामेण्ट की मातहत में रहते हुए यह अधिकार है कि वह बृटिश भारत में रहने-वाले तमाम आदमियों के लिए, तमाम न्यायालयों के लिए, तमाम स्थानों और तमाम विषयों के सम्बन्ध में क़ानून बना सकती है। इसको यह भी अख़तियार है कि वह अंग्रेज़ अफ़सरों के बारे में, हिन्दुस्तानी रियासतों की रिआया के बारे में, और राजराजेश्वर के उन हिन्दुस्तानी रियासतों के बारे में भी जो बृटिश इन्डिया के बाहर रहते हैं तथा हिन्दुस्तानी सैनिकों के सम्बन्ध में क़ानून बना सके। लेकिन अगर यह एसेम्बली कोई ऐसा क़ानून बनाना चाहे जिसका असर सरकारी क़र्ज़ या माल गुज़ारी पर पड़ता है, मज़हब पर, फ़ौज़ के इन्तज़ाम पर, अन्य विदेशों के पारस्परिक सम्बन्ध पर या प्रान्तीय गवर्नमेण्टों के अधिकार में दिये हुए विषयों पर होता है उसके पेश करने के लिए गवर्नर जेनरल की सलाह लेनी ज़रूरी है।'

लेजिस्लेटिव एसेम्बली को रुपया मंजूर करने के बहुत अख्तियारात मिले हुए हैं। सालाना बजट दोनों बड़ी सभाओं के सामने पेश होता है। लेजिस्लेटिव एसेम्बली को मंजूरी ज्यादातर मदों में माँगी जाती है हालांकि कुछ मदें ऐसी भी हैं जिन पर राय नहीं ली जाती।

वाइसराय और सम्राट् को यह अख्तियार है कि वह किसी कानून को ना मंजूर कर दे। वाइसराय को यह अख्तियार है कि वह इन दोनों सभाओं की मंजूरी के बिना ही कोई कानून बना दे सम्राट् ही जिसे ना मंजूर कर सकता है। यह बातें असाधारण समय के लिए है। और केवल विशेष अवसर पर ही इस अधिकार को काम में लाया जायगा।

बृटिश भारत की मौजूदा गवर्नमेण्ट की मेशीनरी के बारे में इससे ज्यादा वर्णन आवश्यक नहीं।

जिस चीज को आजकल अमली या सुधार कहते हैं, कोई नई चीज नहीं है। यह वास्तव में अंग्रेजों की पुरानी स्कीम का विकसित स्वरूप है जिसका उद्देश्य यह है कि हिन्दुस्तानी लोग धीरे धीरे अपने देश के शासन में जिम्मेदारी के साथ भाग लेना सीख जायें। जिस समय जर्मनी के साथ युद्ध आरम्भ हुआ था उस समय हिन्दुस्तान में राजभक्ति के भाव हर एक कोने से प्रकट किये गये थे। बंगाल को छोड़कर बाकी सभी प्रान्तों और रियासतों ने धन और जन से सहायता की थी। इसका प्रभाव यह हुआ कि इंगलैण्ड में भी उसी प्रकार के भाव हिन्दुस्तानियों के प्रति पैदा हो गये थे। और हिन्दुस्तानियों की इस सहानुभूति और विश्वास के बदले में उन लोगों ने कुछ करना चाहा था, लेकिन पार्लियामेण्ट ने

आम्तव में क्वीन विक्टोरिया के सन् १८५८ की घोषणा में निर्धारित की हुई नीति का ही पालन किया। और जिस नीति पर १९१९ का कौन्सिल ऐक्ट बनाया गया था उसी नीति का अनुमोदन किया। १९१९ में जो क़ानून बनाया गया और जिसके अनुसार इस समय राज हो रहा है उसकी नीति निम्न लिखित —"भारतीय शासन के हर एक विभाग में हिन्दुस्तानियों को शनैः शनैः अधिकाधिक शामिल करना। स्वशासित संस्थाओं की धीरे धीरे उन्नति करना ताकि साम्राज्य का एक मुख्य अंग होते हुए ब्रिटिश भारत में प्रजातंत्रात्मक शासन क़ायम हो जाय।"

यह स्कीम अपने वर्त्तमान स्वरूप में आहिस्ता आहिस्ता बढ़ने वाले वृक्ष के समान शक्ति नहीं रखती। जैसे कोई वृक्ष किसी विलायती स्थान से लाकर लगा दिया जाय और कृत्रिम उपायों से उसको जीवित रखने का यत्न किया जाय उसी तरह यह सुधार स्कीम भी है। हिन्दुस्तान की भूमि के लिए यह स्कीम बिल्कुल असंगत है। अंग्रेज़ों ने उदारता की प्रबल प्रेरणा में इसे ज़बरदस्ती हिन्दुस्तानियों को दे दिया। हिन्दुस्तान की प्रान्तीय या बड़ी व्यवस्थापिका सभाओं में बैठकर एक अजनबी आदमी को ऐसा मालूम होता है कि मानों वह किसी शरारती छोटे बच्चों के समूह को किसी कमरे में खेलता हुआ देख रहा हो और जिनको संयोग से एक घड़ी मिल गई हो। यह बच्चे एक घड़ी के भीतर अपनी उँगली डालने के लिए लड़ रहे हों, और शोर मचा रहे हों। और यह चाहते हों कि उसकी बाल कमानी के साथ खेल करें। इनको घड़ी की क़ीमत का कोई अन्दाज़ा नहीं है और न यह वक्त की ही क़द्र करते हैं। और जब उनका गुरु उन्हें यह बतलाना चाहता है कि

उसमे चाभी किस तरह दी जाती है तो यह अधीर होकर नाराज हो जाते हैं।

अगर आप यह पूछे कि व्यवस्थापक सभाओं के मेम्बर अपना कर्त्तव्य किस हद तक पालन करते हैं तो इसके कहने में जरा भी संकोच नहीं कि उनका हर एक काम केवल दिखावा मात्र ही है। प्रजातन्त्रात्मक वाक्यों के प्रयोग में यह लोग बहुत निपुण जरूर हैं लेकिन वाक्यों के पीछे जो भाव है उन भावों से यह बिल्कुल ही वंचित होते हैं। निरंकुश शासन में प्रजातन्त्रात्मक भाव का पैदा होना बहुत असम्भव है और हिन्दुस्तान में अंग्रेजों के आने के पहले सिवाय निरंकुश शासन के और कोई शासन हुआ ही नहीं था। अंग्रेजों ने शिक्षा का प्रचार करके भारत में एक ऐसी श्रेणी पैदा कर दी है जो पहले हिन्दुस्तान में कभी पाई ही नहीं जाती थी अर्थात् मध्यवर्ग। लेकिन यही मध्यवर्ग के आदमी, ये ही वकील और डाक्टर आदि आज भी जाति पांति के झगड़े में, आवागमन के सिद्धान्त में, जो कि प्रजातन्त्र के सिद्धान्त के बिल्कुल प्रतिकूल है, इतने फँसे हुए हैं कि जितने इनके पूर्वज ५०० वर्ष पहले थे। 'जनता शब्द का प्रयोग यह केवल इसलिए करते हैं कि पश्चिमी राजनैतिक साहित्य में उसका बहुत प्रयोग पाया जाता है।'

इन निर्वाचित प्रतिनिधियों से तो गांव का मुखिया अपने कर्त्तव्य और शासन की जिम्मेदारियों को कहीं ज्यादा अनुभव करता है। देशी राजा को जनता पर शासन करने का कुछ पैतृक योग्यता होती है, उसमें दया भी हो सकती है और संभव है उसका उद्देश्य भी उचित न हो, लेकिन वह अपनी प्रजा को अपने हृदय में कोई न कोई स्थान अवश्य देता है।

अगर कोई अमरीका निवासी हिन्दुस्तान की व्यवस्थापक सभाओं की डगमगाती हुई किश्ती को चन्द रोज तक ही देखे तो उसे यह याद आ जावे कि आज से ७०० वर्ष पहले हमारे आध्यात्मिक और शारीरिक पूर्वजों ने इंगलिस्तान के अन्दर प्रजा के अधिकारों की नींव रक्खी थी उस समय उनके प्रजा प्रतिनिधियों की क्या हालत रही होगी। १९२६ के जाड़ों के अधिवेशन में मैंने दिल्ली में बड़ी व्यवस्थापिका सभा के व्याख्यानों को प्रायः सुना है। स्वराजी लोग घंटों और दिन दिन भर अपनी शक्ति व्यर्थ विघ्नकर कार्रवाइयों में व्यय करते थे। बाकी सभासद चुपचाप उदासीन बैठे रहते थे। सिवाय इसके कि कभी कोई स्पष्ट वक्ता उत्तर भारत का योधा जातियों में से कोई इन कार्रवाईयों पर, अपनी घृणा प्रकट कर देता था। किसी दल से भी कोई रचनात्मक कार्य सामने नहीं लाया गया। साधारण किन्तु अत्यावश्यक कानून का, जिसे गवर्नमेण्ट ने पेश किया स्वराजिस्ट व्याख्यानदाताओं ने घोर विरोध किया और गवर्नमेण्ट की मंशा पर विचित्र आक्षेप किये। उनकी बात में सिवाय बचपन और गालियों के और कुछ नहीं था। उनके कहने का तात्पर्य यही होता था, हम तुम्हारा विश्वास नहीं करते, तुम्हारा हृदय ख़राब है। हम तुम्हारे विदेशी कमबख्त गवर्नमेण्ट का ज़रा भी विश्वास नहीं कर सकते और बहुधा यह लोग ऐसी ऐसी भी बातें कहने लगते हैं कि अमरीका का सुप्रीम कोर्ट ब्रिटिश सम्राट् की आज्ञा को मानता है।

इसके जवाब में गवर्नमेण्ट के मेम्बरान जब खड़े हुए, हमेशा उन्होंने सभ्यता के साथ जवाब दिया। उनके चेहरे पर शिकन नहीं आई, उनके मनमें धैर्य था, परेशानी, क्रोध या

थकावट उनके पास नहीं आती थी और उन्हें यह बराबर आशा रहती थी कि जो विचित्र परिस्थिति उत्पन्न हो चुकी है वह ठीक हो जायगी।

एक दिन मैंने इसी विषय पर एसेम्बली के एक प्रसिद्ध सभासद से बातचीत की। यह हिन्दुस्तानी हैं, बड़े योग्य हैं और इंग्लैण्ड की सभ्यता यह उतने ही सच्चे दिल से घृणा करते हैं जितना कि कोई भी मेम्बर करता होगा।

मैंने इनसे कहा कि आपके साथी लोग गवर्नमेण्ट की शुद्ध हृदयता पर बड़ा भयंकर आक्षेप करते हैं। ये गवर्नमेण्ट को बेईमान समझते हैं और कहते हैं कि गवर्नमेण्ट हिन्दू और मुसलमानों को लड़ा रही है ताकि लड़ाई करा के वह अपना राज्य कायम रख सके। ये कहते हैं कि गवर्नमेण्ट हिन्दुस्तानियों के हितों को पैरों से कुचल रही है और हिन्दुस्तानियों के साथ भी अपमानजनक व्यवहार करती है और स्वार्थवश देश के धन को चूसती रहती या नाश करती रहती है।

उसने जवाब दिया कि ठीक है लोग इससे भी ज्यादा कहते हैं।

मैंने पूछा कि क्या ये लोग यह सब बातें दिल से कहते हैं उसने जवाब दिया हरगिज नहीं, इस सभा में एक भी ऐसा आदमी नहीं जो कुछ कहता है उसमें विश्वास रखता हो।

एक अमरीकन के लिए जिसके दिमाग में फिलिपाइन का तजुर्बा अभी ताजा है इस प्रकार की ऐतिहासिक पुनरावृत्ति को सुनकर बड़ा दुःख हुआ। और सम्राट का वह सन्देशा जो उन्होंने सुधार स्कीम के अनुसार कायम किये हुए कौन्सिलों के पहली बार खुलने के समय भेजा था याद आ गया।

आप लोगों पर जो कि नई कौन्सिलों में जनता के प्रति-

निधि हैं विशेष उत्तरदायित्व है। क्योंकि आप ही अपनी कार्रवाई की योग्यता तथा अपने निश्चयों की शुद्धता से दुनियां को यह दिखा सकते हैं कि जो व्यवस्थापक सम्बन्धी परिवर्तन इस समय किया गया है वह उचित ही था। आप लोगों पर ही यह ज़िम्मेदारी है कि आप अपने उन लाखों देशवासियों का ध्यान रक्खें जो अभी तक राजनैतिक जीवन में भाग लेने के योग्य नहीं बन सके हैं। आप लोगों का ही यह कर्त्तव्य है कि आप उनके उत्थान का प्रयत्न करें और उनके हितों की अपने ही हितों के समान रक्षा करें।

इन वाक्यों का उन लोगों पर क्या असर पड़ा जिनके लिए वह कहे गये थे। दरिद्र वृद्ध भारत माता और अपने दर्मियान में उन्होंने क्या सम्बन्ध अनुभव किया। इन्होंने अपने उद्देश्य की तरफ़ किस प्रकार की कर्त्तव्य परायणता दिखलाई और कहां-तक यह सिद्ध किया कि वह इससे अधिक रिआयतों के योग्य हैं।

बृटिश शासन का भारतीय इतिहास इस बात का प्रमाण है कि जब जब उन्नति के लिए जल्दी की गई है तो परिणाम अवनति ही हुआ है। पूरब यह नहीं चाहता कि सुधार के मामले में भी वह चंचल कर दिया जाय। यह बहुत ही दुर्भाग्य की बात थी कि उसका जन्म ठीक ऐसे अवसर पर हुआ कि जब मिस्टर गान्धी राजनीति में अपने भाग्य-हीन प्रगल्भ-चेष्टा का आरम्भ किया था और जब कि उन्होंने अपने असहयोग के बन्दूकों का पूरा निशाना लगा पाया। बंगाल और मध्य-प्रान्त में उनका प्रभाव इतना काफ़ी था कि कुछ दिनों के लिये इस सुधार-स्कीम का तजुर्बा किया ही नहीं जा सका। और यद्यपि वह प्रभाव हर एक जगह पर नहीं के

बराबर हो गया है लेकिन इसका कटु परिणाम अभी तक उन्नति मार्ग में बाधा डाल रहा है।

इस स्थान पर सुधार ऐक्ट पर कोई आक्षेप करने की आवश्यकता नहीं, किन्तु इतना कह देना उचित है कि इसकी जड में ही विघ्नकर अंश मौजूद है। सुधार की सारी बुनियाद यह है कि उसके अनुसार चुनने वाली जनता अपने प्रति निधियों द्वारा हर एक प्रान्त में मिनिस्टरों के ऊपर अपना अधिकार दिखाती है। कठिनाई इसमें यह है कि शाखा तो बन जाती है लेकिन जड ही गायब है। हिन्दुस्तान में निर्वाचक जनता है ही नहीं और न बहुत दिनों तक होने की आशा है। साथ ही साथ यह भी मानना पडता है कि भारत के चुने हुए प्रतिनिधि गण अपने कर्त्तव्य का बिल्कुल जानते ही नहीं।

निर्वाचक जनता न होने के कारण इस पुस्तक में पहले बतलाये जा चुके हैं। उनमें से एक मुख्य हेतु यह है कि ८ फी-सदी से कम आदमी पढ लिख सकते हैं। इस छोटी संख्या के करीब करीब सभी आदमी बडे बडे शहरों में रहते हैं। और जनता का बडा समुद्र इस विस्तृत देश में बडी दूर तक फैला हुआ है जहां पर न तो छपा हुआ कागज पहुँच सकता है न पहुँचता है।

वे पढे लिखे किसान, वे पढे-लिखे जमीन्दार, राजनैतिक तमाशा तक न पहुँचते हैं और न पहुँचने में दिलचस्पी रखते हैं। उनके आंख के सामने जो चीज नहीं पडती उसमें उनको कोई दिलचस्पी नहीं है। शहर के राजनीतिक या व्यवस्थापक सभा में गये हुए या जाने का हौसला रखने वाले लोग सिवाय निर्वाचन के समय इन लोगों के पास और कभी नहीं जाते। जिस समय अहिंसात्मक आन्दो-

लन हुआ था कुछ लोग गाँवों में गये थे इस उद्देश्य से कि बुरी बुरी खबरें सुना कर लोगों को विद्रोह के लिए तैयार करें। अभी जब लेजिस्लेटिव कौन्सिलों के स्वराजिस्ट मेम्बरों ने कौन्सिल से निकल आकर गवर्नमेण्ट की मेशिनरी को रोकना चाहा था उस समय जहां तक मुझे मालूम है किसी ने भी अपने निर्वाचकों से सम्मति लेने का कष्ट नहीं उठाया। निर्वाचकगण अभी इन लोगों के दिमाग़ में केवल नाम मात्र के लिए ही हैं, कई विशेष प्रभाव नहीं रखते।

जिन लोगों ने भारतीय सरकार और प्रान्तीय गवर्नमेण्ट की प्रगति पिछले छः साल में देखी है वह यह माने बग़ैर नहीं रह सकते कि जिन अंग्रेज़ी अफ़सरों को इस नये कानून के अनुसार शासन करने का कार्य सुपुर्द किया गया है उन्होंने इसको सफल बनाने में यथा शक्ति पूरी सच्चाई, ईमान्दारी से काम लिया है। इनको बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है और हिन्दुस्तानियों की तजर्बे और उन्नति की कमी को पूरा करने के लिए इनको बहुत धैर्य से काम लेना पड़ता है। किसी समय आशा की झलक दिखाई देती है, किसी समय नहीं दिखाई देती। इन शासकों में से एक ने मुझसे निम्न लिखित बात कही—"आप हम लोगों से मत बोलिये, चलने दीजिये। अगर आप पौधे को उखाड़ उखाड़ कर उसकी जड़ देखेंगे तो पौधा नहीं जम सकेगा। ज्यों ज्यों साल बीतता जाता है हमें लाभ होता है। जनता के लिए साल भर के लिए शान्ति हो जाती है। न्याय और कानून सुरक्षित रहते हैं।'

जितने दिनों तक हम इस तरह बिना किसी तूफ़ान के पैदा किये हुए आगे बढ़ेंगे उतने ही मिनिस्टरों को और कौन्सि-

लों को इस बात का मौका मिलेगा कि उन्हें यह मालूम हो जाय कि जब तक हम लोग उनका विरोध करते थे किसी उच्चतर नियम के आधार पर करते थे वह नियम ऐसा था जो व्यक्तिगत हौसलों और जातीय हितों से ऊँचा था।

व्यक्तिगत हौसले और जातीय हित इन दो शब्दों में भारत की उन्नति के भयंकर शत्रु मौजूद हैं। भारत और पश्चिम के दर्मियान इन्हीं कारणों से सहानुभूति का पैदा होना कठिन मालूम होता है। हम लोगों के लिए यह बिल्कुल स्पष्ट है कि सरकारी कर्मचारी, अपने निजी लाभ के लिए या अपने भाई भतीजों के बढाने के लिये प्रयत्न करे, बड़े लज्जा और अपमान की बात है। इसलिये जब कहा जाता है कि हिन्दुस्तानी लोग इस विचार के नहीं हैं तो हम उनमें नैतिक दम्भ और पतन की बू आने लगती है और चूंकि हम यह विश्वास नहीं होता कि इस विषय में हिन्दुस्तानियों का चरित्र इतना गिरा हुआ है इसलिये जब कभी हिन्दुस्तानियों को शासन के अधिकार दिये जाते हैं और उनकी ओर से इस तरह की कार्रवाइयाँ होती हैं तो हम उनके कारण अन्यत्र तलाश करने लगते हैं।

लेकिन अगर हम इसके वास्तविक कारण जानना चाहते हैं तो हमें हिन्दुस्तानी के दिमाग को समझना चाहिए। उसी समय हमें पता चल जायगा कि जो कठिनाइयाँ हिन्दुस्तानी अफसर के सामने आती हैं गोरे अफसर के सामने आती ही नहीं, और जनता की निष्पक्ष सेवा करने का उद्योग जैसा हिन्दुस्तानी के लिए निष्फल होने की सम्भावना रखता है, गोरे अफसर के सामने नहीं रखता। हिन्दू के लिए पहली बात उसके प्राचीन धर्म के अनुसार चली आई हुई

खिलाफ इतनी सख्त खींच कैसे दे पाई ?' इस हिन्दुस्तानी ने हँस कर कहा "कैसे दे पाई मैं क्यों न चिल्लाऊँ। जब जब मैं चिल्लाता हूँ तब तब हमें कुछ न कुछ मिल ही जाता है।"

इसलिए जब कभी हिन्दुस्तानी से कोई बात पूछी जाय, हिन्दुस्तान में या हिन्दुस्तान के बाहर तो हमें कभी यह न भूलना चाहिए कि हिन्दुस्तानी सचाई की कितनी कद्र करते हैं। आध्यात्मिक शब्दों में यह संभव है कि हिन्दुस्तानी बहुत श्रद्धालु, सत्य के जिज्ञासु हों, यह भी संभव है कि जिस विषय पर आप उससे बातें करें, वह उसके सम्बन्ध में आप के साथ बड़ी योग्यता से बातें करे लेकिन यह भी हो सकता है कि अपने स्पष्ट वाक्यों के दर्मियान वह कुछ ऐसी बातें भी कह जायँ कि जिसका प्रमाण नहीं मिल सकता और जो सत्य नहीं है। इस विशेष गुण को मैंने अक्सर हिन्दुस्तानियों में पाया। इसलिये मैंने एक प्रमुख बंगाली से, जो कि एक बहुत उदार मस्तिष्क नेता हैं, इस बात का ज़िक्र किया। उन्होंने कहा कि "हमारे महाभारत में सत्य को सब से ऊँचा स्थान दिया है लेकिन हम उस आदर्श से भ्रष्ट हो गये। क्योंकि हमें बहुत दिनों तक प्रतिकूल परिस्थिति में रहना पड़ा इसलिए अगर हम लोग झूठ बोलते हैं तो उसकी वजह यह है कि हम परिणामों का मुकाबला करते हुए डरते हैं।"

इसके बाद मैंने जनता के एक बड़े धार्मिक गुरू से इस की चर्चा की। इन्होंने मुझे एक बहुत उत्तम आध्यात्मिक उपदेश भी दिया था। उन्होंने जवाब दिया, कहा, सच क्या है ? सच और झूँठ तो अपेक्षित शब्द हैं। आप के कुछ आदर्श हैं। जिन बातों से आप को सहायता मिलती है उन्हें आप अच्छी कहते हैं जिस झूठ बोलने से भलाई होती है

उस झूठ को झूठ न कहना चाहिए। मैं शुभ गुणों में कोई अन्तर नहीं मानता। हर एक बात अच्छी है। कोई भी बात अपने मौके पर बुरी नहीं है। हमें आदमी की मशा देखनी चाहिए। उनका कार्य नहीं।"

आखिर मैंने इस मामले का एक युरोपियन के सामने पेश किया जो कि बहुत दिनों तक हिन्दुस्तान में रह चुके हैं और हिन्दुस्तानियों से बड़ी सहानुभूति रखते हैं। मैंने पूछा कि क्या बात है कि बड़े बड़े आदमी झूठ बातें कहते हैं और अपनी बात की पुष्टि के लिए प्रमाण देते हैं? जब मैं उन प्रमाणों की खोज करता हूँ तो मालूम होता है कि या तो उस प्रमाण का उस बात से कोई सम्बन्ध ही नहीं है और या मालूम होता है कि उनकी बात गलत है। उसने जवाब दिया कि इसकी वजह यह है कि हिन्दू जिस बात में विश्वास करना चाहता है उसे वह गलत नहीं समझता या वह यह समझता है कि सारा संसार मिथ्या है तो संसार के सम्बन्ध में जो कुछ कहा जाय वह मिथ्या है। इसलिए अपना मतलब निकालने के लिए अगर कोई हिन्दू झूठ बोल देता है तो उसका बहुत दोष नहीं है। और साथ ही जब कभी कोई हिन्दू कोई बात आप से ऐसी कहना चाहता है कि जिसमें उसका कोई मतलब है तो वह यह नहीं समझता कि आप इतना कष्ट उठायेंगे कि बात की जड़ और जड़ की जड़ में जायेंगे।

इसी तरह सन १९२६ व २७ के जाड़े में न्यूयार्क के एक प्रसिद्ध सम्पादक ने चन्द हिन्दुस्तानियों से जो कि उस शहर में व्याख्यान दे रहे थे पूछा, कि आप लोग हिन्दुस्तान की परिस्थिति के सम्बन्ध में इस कदर झूठी बातें क्यों कहते हैं! उसमें से एक ने जवाब दिया—इसलिए कहते हैं कि तुम अमरीकन

लोग हिन्दुस्तान के बारे में कुछ नहीं जानते हो और तुम्हारे मिशनरी लोग रुपया माँगने के लिए जब हिन्दुस्तान में आते हैं तो इतने साफ साफ हिन्दुस्तान की बुराइयों को बयान करते हैं कि हमारी हतक होती है। इसलिए हम उसकी कसर निकालने के लिए भूठ बोल देते हैं। अपने आध्यात्मिक शास्त्र के अनुसार अगर कोई हिन्दुस्तानी भूठ बोलते हुए पकड़ जाय तो उसके लिए शरम की बात नहीं है। अगर आप किसी हिन्दुस्तानी को भूठ बोलते हुए पकड़ लें तो उससे वह न तो परेशान होता है और न नाराज़ जैसे शतरंज की चाल चलने पर उसे कोई संकोच नही होता वैसे भूठ बोलने पर भी।

अगर निष्पक्ष हो कर हम देखे तो इस गुण और इस दृष्टि कोण और इन विचारों को देखकर हमें यह नतीजा न निकाल लेना चाहिए कि यह जाति निकृष्ट है। यह तो वास्तव में जैसे अंग्रेज़ और हिन्दुस्तानी के चमड़े में भेद है इस विषय मे भी उनका एक प्रकार का मतभेद ही मनाना चाहिए। लेकिन चूंकि आपस में व्यवहार करने में इस मतभेद का प्रभाव पड़ता ही है इस लिए अंग्रेज़ लोग हमेशा हिन्दुस्तानियों की इस विचित्रता का ख्याल रक्खे नहीं तो आपस के व्यवहार में व्यर्थ का संघर्षण पैदा हो जायगा।

———o———

तेईसवा परिच्छेद

देशी राजे

अभी तक इस वृटिश भारत पर ही विचार कर रहे भारतीय साम्राज्य पर नहीं जिसम वृटिश भारत और देशी रियासतें दोनों शामिल हैं। भारतीय साम्राज्य का क्षेत्रफल १८०५३३२ वर्गमील हे इसमें ३६ फी सदी हिन्दुस्तानी रियासतें हैं। वृटिश साम्राज्य में ३१८६४२४८० आदमी रहते हैं इसकी २३ फी सदी ७२००००० के करीब हिन्दुस्तानी रियासतों में रहते हैं। यह रियासतें छोटी भी हैं और बडी भी हैं। कोई तो २० वर्गमील की हैं और कोई इतनी बडी हैं जितनी कि इटली का देश। हर एक रियासत म एक राजा है और अगर राजा नाबालिग हुआ तो उसकी जगह पर रीजेन्ट या Administrator रहता हे। कुछ रियासतें हिन्दू हैं कुछ मुसलमान, कुछ सिख, अपनी अपनी इतिहास के अनुसार।

जब पार्लियामेण्ट १८५८ में हिन्दुस्तान का शासन अपने हाथ म लिया उस समय अपनी घोषणा में विक्टोरिया ने यह प्रतिज्ञा की थी कि इन रियासतों की सीमाएँ और वहाँ के राजाओं के शासनाधिकार सदा के लिए सुरक्षित रहेंगे। महाराणी ने यह सिद्धान्त कर दिया कि इंगलण्ड वह तो चाहताही नहीं कि रियासतों के ऊपर अपना अधिकार जमावे बल्कि वह यह भी नहीं चाहता कि एक रियासत दूसरी रियासतों से लडे। इसलिए महारानी ने घोषणा की थी कि—

"हम देशी राजाओं के अधिकार मर्यादा और मान की वैसी ही रक्षा करेंगी जेसी कि अपनी। और हम चाहते हैं कि देशी राजा और हमारी रिआया दोनों उस सामाजिक उन्नति और समृद्धि का बराबर उपयोग करें जो कि अच्छे शासन

और आन्तरिक शान्ति से ही मिल सकती है।"

वृटिश गवर्नमेण्ट और देसी रियासतों के दर्मियान सुलह नामे मौजूद हैं। इन दोनों का सम्बन्ध विजेता और पराजित का नहीं है। राजाओं का पूर्ण स्वतंत्रता है कि वह अपने देश को शासन पद्धति स्वयं निर्णय करें। स्वयं ही कर लगावें और अपनी रियासत में ज़िन्दगी और मौत के अख़तियारात जिस तरह चाहें वर्त्तें। इंग्लेण्ड का सम्बन्ध इन रियासतों से एक तो इस नीति पर निर्भर है कि इंगलैण्ड इन रियासतों के अन्दरूनी इन्तज़ामी मामलात में कोई दख़ल नहीं देता सिवाय ऐसी हालत में जब कि वहुत सख़्त ज़रूरत पड़ जाय। लेकिन अगर सुगमता से इन रियासतों में उन्नति पैदा की जा सके तो इंगलैण्ड उसके लिए तैयार रहता है। दूसरी वात यह है कि वह सारे देश के हितों की भी रक्षा का ख्याल रखता है। विदेशी राज्यों से तथा हिन्दुस्तानी रियासतों में जो कुछ सम्वन्ध होता है अगरेज़ी गवर्नमेण्ट के ज़रिये से ही हो सकता है। हर एक वड़ी स्वतंत्र देशी रियासत में एक अंगरेज़ पोलिटिकल अफ़सर जिसे रेज़ीडेण्ट कहते हैं रहता है। जो इन राजाओं को सलाह दिया करता है। कई छोटी रियासतें को मिलाकर उन के लिये एक सलाहकार नियुक्त किया जाता है और यह सलाहकार लोग वायसराय की गवर्नमेण्ट की राज्य नीतिक विभाग के मेम्वर होते हैं।

साल भर में एक वार वायसराय की अध्यक्षता में नरेन्द्र-मण्डल का अधिवेशन दिल्ली में नीति के निर्णय करने के लिये होता है यह सभा वड़ी ही शानदार होती है। लेकिन चूँकि इस सभा के अधिकांश अंग अपनी जगह पर स्वातन्त्रावलम्वी हैं इस सभा के साधारणतः कोई विशेष

कार्य नहीं होता लेकिन इस अधिवेशन के हो जाने से बहुत काफी लाभ होता है इस अधिवेशन से भिन्न भिन्न राजाओं के पारस्परिक सम्बन्ध में अधिकाधिक मधुरता और सुगमता पैदा होती है और इस बात की सम्भावना हो जाती है कि आवश्यकता पड़ने पर यह लोग मिल कर काम कर सकेंगे लेकिन दो या तीन बड़े बड़े राजे अभी तक इस मीटिङ्ग में नहीं आये, इस लिये कि ऐसी सभा में जाने से उनम से किसी न किसी को एक दूसरे के मुकाबिले में अपने अग्रपद और श्रेष्ठत्व को खोना पड़ेगा।

देशी रियासतों में जाने पर शासन पद्धति का पता चलाना बड़ा कठिन हो जाता है। महराज के मेहमान होने से खूब शानदार मेहमान दारी होती है साधारण मेजबान की तरह राजे महाराजे अपनी रियासत को दिखाते हैं और जो जो बातें उसमें अच्छी और प्रशसनीय है उन्हें सामने रखते हे प्राचीन महलों से लेकर अर्वाचीन समय के अनेक उन्नति शील कार्यों सौन्दर्य और मनोरञ्जकता से ही आदमी को कम छुट्टी मिलती है। और यह मौका ही नहीं मिलता कि कोई अपने मेजबान से यह मालूम कर सके कि उन के यहा शेष ही क्या क्या हैं।

लेकिन यह तो स्पष्ट है कि अनेक देशी रियासतों का इन्तजाम बहुत अच्छा है। बहुतसी रियासतों के इन्तजाम में कोई बुराई नहीं कुछ रियासते बहुत पिछडी है और कुछ ऐसी हैं जिनका इन्तजाम बुरा हे। इन कुशासित रियासतो में आपको "सतयुग" का दर्शन हो सकता हे तृणमणि म जेसे मक्षिका सुरक्षित बनी रहती हे "सतयुग' इन रियासतों म अभी तक मौजूद पाया जाता हे। इन रियासतों म राजाओं के दरबार की और जनता की दशा को देख कर ऐसा मालूम होता है गोया कोई अलिफलैला के किस्से पढ रहा हो एक तरफ तो क्रोध, द्वेष,

जगह पर बेकार आदमी रख दिये गये अस्पताल में कुत्ते रहने लगे; सारा प्रबन्ध गड़बड़ हो गया इन्साफ़ होना बन्द हो गया और रिशवत देकर प्राप्त किये हुए फैसलों के खिलाफ़ अपील करना असम्भव हो गया; क्योंकि बिना रिश्वत दिये हुए कोई कुछ भी सुनने को तैयार नही, जेब गरम करने से ही काम हो सकता था जनता को दबा दबा कर धन वसूल किया जाता था ताकि युवक राजा को अपनी फ़ज़ूल खर्ची और व्यभिचार में ख़र्च की कमी न पड़े।

यहां तक कि आखिरकार जनता अपने पुराने हितकर, रेज़ीडेण्ट के सामने आवे; और कहने लगे हम लोग बहुत चाहते थे कि राजा हमारे सिंहासन पर बैठे और हमारे ऊपर राज्य करे लेकिन हमें यह नहीं मालूम था कि वह कैसे राज्य करेंगे। अब हम लोगों से नहीं सहा जाता। साहेब फिर इन्तज़ाम अपने हाथ में लें जिससे हम लोग फिर पहले के ही समान आनन्द पूर्वक रहने लगे।

कुछ राजाओं के ज़ुलम और भयंकर करतूतों की कथायें अकसर सुनी जाती हैं। इन कथाओं की तह में कुछ सचाई भी होती है। लेकिन इन कथाओं को बिना प्रमाण के कभी भी न मानना चाहिये; क्योंकि गवरमेण्ट के खिलाफ़ हिन्दुस्तानी पत्र इस क़िस्म की बातों को फौरन लेकर सारे देश में बढ़ा बढ़ा कर और नमक मिर्च लगाकर फैला देते हैं। इन पत्रों को मौक़ा मिल जाता है कि गवरमेण्ट की इस प्रकार की असावधानी दिखा कर उस पर आक्षेप करे। जब कभी गवरमेण्ट हस्तक्षेप करती है उस समय यही पत्र "विदेशी निरंकुश शासन" कह कर शोर मचाने लगते हैं।

राज कुमारों को दुनिया में आते ही बड़ी बाधाओं का

सामना करना पड़ता है। सभी उनसे रियायतों के इच्छुक होते है और उस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये सबसे पुराना और सुगम उपाय यह होता है कि राजकुमार में विषय वासना फ़जूल खर्चा और मद की अपरिमित लालसा उत्पन्न करा दी जाती है। लेकिन कभी २ राजमाता अपने पुत्र की रक्षा करने के लिये सामने आजाती हैं। कभी यह भी होता है कि युवराज को शिक्षा के लिये इङ्गलेण्ड में भेज दिया जाता है या वह चीफ कालेज के किसी एक में पढने जाता है जहां उस पर बहुत अच्छे असर पड़ते हैं।

इन स्थानों पर रह कर उस पर एक अच्छा प्रभाव तो यह पड़ता है कि उस अपनी हैसियत के लोगों के साथ संसर्ग में आने का अवसर मिलता है। अपने घर पर रहते हुए या तो वह अपने से नीचों से मिलता जुलता है या अपने बुजुर्गों से। दूसरा प्रभाव यह पड़ता है कि यहां रहते हुए उसे मानसिक और शारीरिक काहिली से उठाया जाता है उसे प्रयत्न शील, और फुरती के खेल जैसे टेनिस खिलाया जाता है जिसे वह कालेज से वापस आने पर भी अपने यहां खेलता रहता है। अंगरेज हेडमास्टर की सहानुभूति भी उसके ऊपर कम प्रभाव नहीं डालती है यह अंगरेज हेडमास्टर उसको मौजूदा और आने वाली कठिनाइयों को समझाता है और उस के अन्दर धीरे धीरे यह विचार पैदा करने का प्रयत्न करता है कि एक नरेश की सच्ची शान और उसका सच्चा आदर्श अपनी प्रजा की सेवा करना है।

चन्द राजकुमारों पर शिक्षा का प्रभाव उनके जीवन के प्रौढावस्था तक बिलकुल जाता रहता है, लेकिन कुछ राज कुमारों के चरित्र में जो उन्नति आ गई है उस से देशी रियासतों के शासन में बहुत तरक्की हो रही है।

इस का एक स्पष्ट प्रमाण मैसूर की रियासत है। यह रियासत स्काटलैण्ड के बराबर है और इसमें ६० लाख आदमी के करीब रहते हैं। वर्तमान महाराज के पिता को अंगरेज़ों की अध्यक्षता में अपने कार्य चलाने की शिक्षा मिली थी, राज्याधिकार प्राप्त करने, पर महाराज ने एक अच्छे दीवान की सहायता से अपना शासन कार्य बड़ी योग्यता से आरम्भ किया और चलाया; १८९४ में गद्दी ना बालिग़ राजकुमार के लिये छोड़ कर यह स्वर्गवासी हुए। रीजण्ट की सहायता से राजमाता राजकुमार की नाबालगी के ज़माने में रियासत पर राज्य करती रही, राजकुमार को नई जिम्मेदारियों के लिये तैयार होने के लिये ट्रेनिंग में भेज दिया गया। १९०७ में युवराज को गद्दी मिली; उस समय से आज तक मैसूर के महाराज ने जिस तरह निस्वार्थ हाकर और योग्यता से शासन किया है वास्तव में सराहनीय है।

महाराज कट्टर हिन्दू है लेकिन एक ईरानी मुसलमान मिरज़ा इसमाईल, C.I.E. OS.E को अपने रियासत का दीवान बना कर महाराज ने इस बात का प्रमाण दिया है कि उन्हें अपने रियासत के कल्याण की कितनी इच्छा है। मैसूर के नगर को उसकी सायादार सड़कें, उसकी नफ़ीस सार्वजनिक इमारतें, उसके पार्क, बाग़, और उस की बिजली की रोशनी इत्यादि को देख कर स्वच्छ वा प्रकाशमान आदर्श नगर कहना पड़ता है। यहाँ बड़ा टेकनिकल कालेज है, विश्वाविद्यालय की विस्तृत इमारत है, जिसमें पुस्तकालय के लिये अलग इमारत बनी है, बड़ा अस्पताल है तथा अन्य इसी प्रकार की बड़ी व नफ़ीस इमारतें हैं। अवपाशी की स्कीम शीघ्र ही अमल में आनेवाली है। रियासत के धातु सम्बन्धी व्यवसाय, इसका कृषि, और अन्य ग्राम्य व्यव-

सायों और उद्योग धन्धों का अच्छी तरह से तरक्की दी जा रही है। पिछले सालमें कारीगर व मजदूर दोनों की मजदूरियां दुगनी हो गई हैं। राज्य प्रबन्ध के सम्बन्ध में रियाया की इच्छा को रियाया की प्रतिनिधियों द्वारा समय समय जानते रहना बहुत ही सफलता पूर्वक चल रहा है। और इस दिलचस्प विषय को इतने संक्षेप में समाप्त करने के पहले मैं यह बतादेना चाहती हूँ कि दो बड़े बड़े दोष इस रियासत से मिटाये जा रहे हैं।

पहली बात यह है कि एक फरमान निकाला गया है कि किसी जगह के दो उम्मेदवारों में से जगह उसी को दी जायगी जो अधिक योग्य होगा न कि उसको जिसकी जाति उच्च है। दूसरे यह कि रियासत के स्वास्थ्य को खराब देख कर महाराज ने दीवान के जरिये से उसके उपाय के लिये जो कुछ हो सकता है कर रहे हैं। राकफेलर फांडेशन, के अन्तर्राष्ट्रीय हेल्थ बोर्ड से इन्होने प्रार्थना की है कि वह मैसूर की सहायता करे जिससे वह हिन्दुस्तान का भारतीय (cynome) बनाया जाय। भारतीय साम्राज्य में यह अपने किस्म की दूसरी प्रार्थना है। इस प्रार्थना को बड़े आदर पूर्वक स्वीकार किया गया है। इसका परिणाम असाधारण दिल चस्पी का होगा।

हर एक राजा अपनी रियास्त की जरूरत के अनुसार फौज रखता है। हैदराबाद के निजाम जिनकी रियासत ८३,००० वर्ग मील की है २०,००० आदमियों की सेना रखते हैं। दतिया के महाराजा जिनकी रियासत ९११ वर्ग मील की है पैदल, व सात तोपों के तोपखाने की फौज पर कमान्ड करते हैं जहाँ बड़ी सेनायें हैं वहाँ पैदल, घोडसवार तोपखाना इत्यादि सभी का प्रबन्ध है।

इस स्थान पर मैं एक किस्सा बयान करती हूँ। यह किस्सा एक ऐसे व्यक्ति का बताया हुआ है जिसकी सच्चाई पर—

आज तक किसी को सन्देह नहीं हुआ है। यह किस्सा सन १९२० की तूफ़ानी समय का है जब सुधारों की वजहसे यह ख़बर ज़ोरों के साथ गरम थी कि अंगरेज़ हिन्दुस्तान छोड़ कर चले जाने वाले हैं। जिन्हों ने यह घटना बयान की वह अमरीकन है और हिन्दुस्तान के बारे में काफ़ी तजुरबा रखते हैं। यह एक प्रमुख महाराजा के यहाँ गये हुए थे, जिनका राज्य का प्रबन्ध बड़ा अच्छा है और जो व्यक्तिगत हैसियत से बड़े योग्य, और भलेमानुस हैं। महाराज के दीवान भी मौजूद थे, और यह तीनों सज्जन पुराने दोस्तों के समान बैठ कर बातें कर रहे थे।

दीवान ने कहा कि "महाराज का यह विश्वास नहीं है कि अगरेज़ लोग हिन्दुस्तान छोड़ कर जाने वाले हैं लेकिन सम्भव है कि इगलैण्ड के नये शासक ऐसा कर डालें। इस लिये महाराज अपनी फ़ौज दुरुस्त कर रहे हैं; गोला बारूद इकट्ठा कर रहे हैं और रूपया ढाल रहे हैं और अगर अँगरेज़ लोग चले गये तो तीन महीने के बाद बंगाल में न एक रूपया बचेगा और न एक क्वारी कन्या।

महाराज ने भी इस बात का अनुमोदन किया। इन के पूर्वज महाराष्ट्र थे।

स्वराजिस्ट लोग भूल जाते हैं कि ज्योंही गवरमेण्ट उन के हाथों में आजायगी, देशी राजे एक दम उनके सामने एक प्रबल शक्ति के समान मुकाबले को आजायेंगे। और उन्हें उन का एक एक का वैसेही सामना करना पड़ेगा जैसा एक सदी पहले करना पड़ता था। हिन्दुस्तानी फौज़ अगर संगठित भी बनी रही तो वह देशी राजा की आज्ञा मानेंगी व्यवस्थापक एसम्बली की नहीं जिसमें ऐसे आदमी हैं जिनका हिन्दुस्तान पर कभी भी प्रभाव नहीं रहा और जिनकी आज्ञा

हिन्दुस्तान ने कभी कभी भी नहीं मानी।

हिन्दुस्तानियों का दिमाग निरंकुशता के सांचे में ढला रहता है। युद्ध का अर्थ हिन्दुस्तान में यह होता है कि कोई नेता राजा हों और शूर लूटमार का मौका मिले। अगर उक्त नेता महाराजा बंगाल के ऊपर आक्रमण करते तो आसपास के लड़के सार जवान, इनके पीछे लग जाते।

राजाओं को अच्छी तरह मालूम है कि अगर हिन्दुस्तान से अंगरेज लोग चले गये तो उनमें से हर एक अपने रियासत को नई ज़मीन शामिल करना शुरू करदेगा। हर एक आदमी हथियार बन्द रहने पर विवश हो जायगा, हर एक अपनी रियासत की सीमा की रक्षा करने पर विवश हो जायगा, और आज कल के राज नैतिक नेता गण पहलेही दौला म गदा के लिये ऐसे गायब हो जायेंगे जैसे अग्नि की लव में भूसा।

लेकिन राजगण इस प्रकार की परिस्थिति नहीं चाहते। वह तो अंगरेजों की छत्र छाया म रहना चाहते हैं जिसमें रहते हुए उन्हें बड़ी बड़ी फौज रखने की जरूरत नहीं पड़ती उनको रेलरोड, सड़कें, बाजार, डाक, तार इत्यादि की सुविधायें प्राप्त हैं और अपनी रियासत की उन्नतिका उन्हें काफी मौका है। लड़ाई के जमाने में ये लोग बहुत वफादार रहे और साम्राज्य की रक्षा में इन लोगों ने धन व जन से बहुत उदारता के साथ सहायता दी, सारांश यह कि देशीराजाओं का समुदाय वीर सैनिकों और कुलवन्शजों का एक समुदाय है। जिन की इच्छा यह है कि इङ्गलैण्ड हिन्दुस्तान में सर्वोच्च शक्ति बनी रहे लेकिन वह यह बिल्कुल नहीं चाहते कि सुधार शासन के प्रतिनिधि के रूपमें उन्हें किसी हिन्दुस्तानी राजनीतिज्ञ से व्यवहार करना पड़े।

हिन्दुस्तानी राजनीतिज्ञ नेताओं को देशी रियासत के राजे

महाराजे बेहद घृणा की दृष्टि से देखते हैं और जब वह यह देखते हैं कि इङ्गलैण्ड जिस के वह मातहत है ऐसे लोगों से भी व्यवहार करने को तैय्यार हो जाती है जिन्हें वह गुस्ताख व अपने से छोटा समझते हैं उस समय उन्हें कुछ क्रोध भी मालूम होता है।

एक राजा ने मुझसे कहा कि हम लोगों ने तो इङ्गलैण्ड के सम्राट से सुलह की है। हिन्दुस्तान के राजाओं ने ऐसी गवरमेण्ट से कभी भी सुलह नहीं की जिस में बङ्गाली बाबू हो, इन लोगों से हम लोग व्यवहार करने को कदापि तैय्यार नहीं। जब तक अंगरेज़ हिन्दुस्तान में हैं अगर सम्राट की ओर से अंगरेज़ सज्जन आयेंगे तो जैसे मित्रों में होना चाहिये सब काम ठीकठीक होता रहेगा। अगर इंगलैण्ड चला गया तो हम लोग जानते हैं कि हिन्दुस्तान में क्या किया जा सकता है और राजाओं को क्या करना चाहिये।

दिल्ली में मेरे एक मित्र ने एक भोजका प्रबन्ध किया जिसमे होम रूल राजनितिज्ञों को निमंत्रित किया ताकि मुझे उन के विचारों से आगाही हो जाय। जो लोग आये वह मेरे मेज़बान के समान पश्चिमी शिक्षा प्राप्त बंगाली हिन्दू थे। इन लोगों ने बड़ी देर तक हिन्दुस्तान से अंगरेज़ों को निकाल देने की चर्चा चलायी और उस भविष्य का भी वर्णन किया जिसमें यह लोग स्वयं शासक होंगे। मैने पूछा कि आप लोग देसी राजाओं के साथ क्या बरताव करेंगे।

एक ने उत्तर दिया "हम सब को मिटादेंगे" और बाकी सभों ने गरदन हिलाहिला कर इसका अनुमोदन किया।

—:o:—

सरहद्दी निशाने बाज—संसार में सब से अच्छे
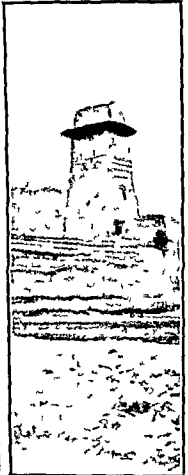
भाग पाच

उत्तरी प्रदेश

कोहाट नगर कोहाट दर्रे के द्वार की रखवाली करता है। उत्तरी पश्चिमी सीमा प्रान्त की रक्षा सम्बन्धी लम्बी कतार में यह एक छोटी चौकी है। यह बहुत ही घना बसा है। जो काम इसके सामने है उसके लिये यह बहुत ही उपयुक्त है। इसकी सड़कों पर नीले फूलों की क्यारियां हैं। बागों में भी नीले पौधों की क्यारियां हैं। अंग्रेज कहीं भी हों फूल उन्हें अवश्य मिलने चाहिये। नगर के चारो ओर कांटेदार तार लगे हैं। हर सौ कदम पर रोशनी रहा करती है और हथियार-बन्द सन्तरी पहरा देते हैं। प्रत्येक घर के प्रत्येक कोने पर सर्चलाइट लेम्प लगे रहते हैं और शाम होते ही जला दिये जाते हैं। घर के पास कोई पेड़, झाड़ी या और कोई ऐसी चीज नहीं रहने पाती जहां कोई चोर छिप सके। दिन ढलने के बाद किसी गोरी स्त्री को तार के बाहर जाने की आज्ञा नहीं मिलती। इस का कारण डर नहीं। केवल पुरानी घटनायें ऐसा करने के लिये बाधित करती हैं। यहां गोरी स्त्रियां बहुत थोड़ी हैं। जो हैं वे फौजी अफसरों की स्त्रियां हैं। वे बहुत ही शान्त हैं और अपने पति का साथ अन्त तक देती हैं।

यहीं क्या, सीमा प्रान्त के किसी स्टेशन में दिन रात का कोई क्षण संकट से खाली नहीं जाता है।

चौकी की आड़ में एक हिन्दुस्तानी बस्ती ऊँची और

कच्ची दीवारों से घिरी हुई है। बाज़ार, मस्ज़िद, मन्दिर अन्धेरे घरों के बीच में तंग और टेढ़ी गलियां हैं। इन ग... में बाज़ की सी तेज़ नाक वाले सरहद्दी लोग खाल के ... पहने हुए और बगलों में बन्दूकें लिये हुए बैलों और गधों के बीच से निकले चले जाते हैं। सैकड़ों छोटी छोटी दुकानें मेले के समान जान पड़ती है और अफ़ग़ान सीमा का परिचय देती हैं। मुस्लिम महिलाएं अपने छोटे छोटे पैरों में अजब चमकीले स्लीपरें पहिनती हैं इन स्लीपरों में एड़ी नहीं होती और पंजे की तरफ़ मोड़ होता है। ईरानी पलंगों पर सुहावना रंग होता है। सुन्दर गलीचे, कामदार और छपेहुए रेशमी और सूती कपड़े यहां मौजूद हैं। टीन, पीतल, तांबे और मिट्टी के बरतन भी यहां हैं। पहाड़ों से यहां पर लोमड़ी की सुन्दर खालें आती हैं। बोखारा से यहां लाल पट्ट आतें हैं। कुछ दुकानें गोश्त की है क्योंकि यह मुसलमानी देश है। यहां चावल, दाल और शक्कर भी बिकती है क्योंकि कुछ हिन्दू भी हिम्मत कर के यहां आ गये हैं। अपना माल बेचने के साथही वे रुपया भो उधार देतें हैं। इस लेन देन से वे धनी हो जाते हैं। कभी कभी वे शायद हद से ज़्यादा मालदार हो जाते हैं। और अपने को बहुत ज़्यादह सुरक्षित समझते हैं। क्योंकि बाज़ की सी नाक वाला मनुष्य रुपये पैसे के लेन देन में चाहे हिन्दुओं का मुक़ाबिला न कर सके पर अपनी दुकान के सामने उसकी तेज़ आंख से अत्यन्त साहसी मनुष्य को भी सावधान रहना चाहिये। इसके सिवा यह नोक़ीली नाक और तेज आंख वाला मनुष्य यहां अपने देश में है। पास ही सीमा प्रान्त की पहाड़ियों में उसके मुसलमान भाई ताक में छिपे रहते हैं। ये जंगली फ़िरके किसी को

अपना बादशाह या राजा नहीं मानते। डाका डालने के सिवा ये कोई दूसरा काम भी नहीं जानते हैं। हिन्दू महाजनों को भगा ले जाना ही तमाम माल इनका प्रधान मनोविनोद रहता है। उनकी विचित्र आवाज सुन सुन कर वे बड़े खुश होते हैं।

जो लोग बरसों से दिन रात यहां रखवाली करते हैं उनका कहना है कि दुनिया भरमें इन लोगों से अच्छे लड़ने वाले नहीं हैं। इनके पीछे की ओर अफ़ग़ानिस्तान है जो दबके हुए तेंदुए की तरह अपनी हरी हरी आखें हिन्दुस्तान पर शिकार के लिये लगाये रहता है। अफ़ग़ानिस्तान के पीछे और स्वयं काबुल में भालू की सी चाल के लोग भी इसी ताक में रहते हैं। वे जब मुर्दे परखते हैं इसी सीमा प्रान्तीय हमले के गीत गाते हैं जिससे पंजाब के मजबूत मुसलमानों की मदद से दक्षिण के मुसलमान भी उभड़ उठेंगे और हमेशा तक मुसलमान लोग हिन्दुओं पर राज्य करेंगे।

यही भालू पूछता है क्या तुम अपने बुजुर्गों से कमजोर हो? क्या तुम्हें अंग्रेज रोकते हैं? लेकिन देखो! मैं हिन्दुओं को उत्तर और दक्षिण में उनके खिलाफ उभाड़ कर दूसरी तरफ़ से उन्हें हैरान करता हूं। उनकी जन्म भूमि में मत भेद होने से अंग्रेजों का हाथ पहिले ही से ढीला हो चला है। मैं भालू तुम्हारे पीछे हूं। लूट मार पर जो एक नजर डालो! अपने पञ्जे घुसेड़ो और मारो।"

परिच्छेद चौबीसवां

तिनकों में आग की चिनगारियां

अगर छः करोड़ अछूतों को हिन्दुओं※ में गिनलें तो ब्रिटिश भारत की जन संख्या $\frac{3}{4}$ हिन्दू है। ब्रिटिश भारत का प्रायः $\frac{1}{4}$ भाग मुसलमान है। इन दोनों मज़हबों में बड़ा मतभेद है जिसके कारण समय समय पर फूट की आग भड़क उठती है।

यही भेद वर्तमान भारत की स्थिति में सब से बड़ी समस्या है। जब १८५८ में भारत की बागडोर मलका विक्टोरिया के हाथ आई तब भी यही समस्या थी।

अङ्गरेज़ी राज्य के पचास त्रर्ष के शासन में ये फूट छिपी रही पर इसका कारण अज्ञात है उसी पचास वर्ष में शासन भार सिविल सर्विस के अङ्गरेज़ो अफ़सरों के हाथ में था। ये कर्मचारी अपने कर्तव्य पालन में हिन्दू और मुसलमानों में किसी तरह का भेद नहीं करते थे और दोनों के हितों को समान रखते थे। इसलिये न्याय और रक्षा प्रतिदिन प्रत्येक को मिलने के कारण हिन्दू और मुसलमानों में ईर्षा और मतभेद के भाव बहुत कम जागृत होते थे।

सन् १९०६ ई० में विद्राह की आग तूफ़ान की तरह भड़क

※ १९२१ की भारतीय मनुष्य गणना से सिद्ध होता कि ३२ लाख ५० हज़ार सिक्ख और प्रायः ११ लाख जैनियों में बहुतों ने अपने को हिन्दू बतलाया, एक करोड़ दस लाख बुद्ध लोग भारतवर्ष के बर्मा प्रान्त में ही परिमित हैं।

उठी' मिन्टो मार्ले शासन आलोचना का सूत्र पात पार्लिया-मेन्ट में हुआ। जो इण्डियन कौन्सिल्स एक्ट के नाम से मशहूर है।

इस सुधार का फल यह हुआ कि मुसलमान डर गये। उन लोगों में जागृति का भाव उत्पन्न हुआ, । वे अपने को पृथक समझने लगे, वे सगठित न थे पर सदिग्ध अवश्य थे। उनका भाव भडकीला था और वे अपने अधिकारो के लिये उभर रहे थे। उन्होंने स्पष्ट देखा कि चुनी हुई धारा सभा मे यदि कोई लाभ है तो वह हिन्दुओं ही को होगा। मुसलमान शीघ्रही उससे अलग कर दिए जाएगे।

यह समस्या कैसे उत्पन्न हुई, यह समझने के लिये यह जानना आवश्यक है कि इस्लाम धर्म पहले पहल हिन्दोस्तान में विजेताओं द्वारा आया। प्रथम पाच सौ वर्ष में इसी इस्लाम धर्म की भुजा ने हिन्दोस्तान के एक बडे भाग पर शासन किया, इस शासन काल में राज्य-भाषा, फारसी थी, यह भाषा गद्य पद्य और कानून का भन्डार थी। लेकिन मुसलमान केवल कुरान पढ लेता था, और फारसी की कुछ कविता जान लेता था। वैसे उसे खुली हवा का जीवन पसन्द था। वह कलम या किताबों मे उस समय तक बहुत काम माथा पच्ची करता था। जब तक उसे कोई दूसरा इस काम के करने के लिये मिल सके, इसलिए जब कोई ब्राह्मण अपनी तीव्र बुद्धि और प्रबल स्मरण शक्ति के कारण फारसी का ज्ञान प्राप्त कर लेता था तो उसे उचित सरकारी नौकरी मिल जाती थी।

फल यह हुआ कि प्राय पांच शताब्दी तक ब्राह्मण लोग लिखा पढी का काम करते थे और मुसलमान लोग देश पर

शासन का काम करते थे।

इस्लाम के प्रबल शासन और ब्रिटिश सत्ता के हाथ में भारत का शासन पहुँचने में जो समय बीता है उसका संक्षिप्त इतिहास अलग दिया गया है। अन्तिम घटना से इक्कीस वर्ष पहिले—ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शासन काल में उस बीज का अंकुर जमा, जिसका कि हम यहाँ वर्णन कर रहे हैं।

इसी समय में कचहरी की भाषा फ़ारसी के स्थान में अंगरेज़ी हो गयी। भारतीय शिक्षा पर पश्चिमी प्रभाव पड़ने के कारण इस परिवर्तन का होना आवश्यक था, यह सीधी सादी बात थी। इसका परिणाम भी सीधा सादा ही है। कलकत्ता यूनिवर्सिटी कमीशन ने इस प्रकार प्रारम्भिक कार्य-वाही का वर्णन किया :—

'१८३७ ई० के क़ानून और १८४४ (पश्चिमी शिक्षा प्राप्त भारतीयों को पहले नौकरियाँ देना) के प्रस्ताव का प्रभाव हिन्दू भद्र लोग पर बड़ा गहरा पड़ा। इसी वर्ग से छोटे छोटे अफ़सर बहुत समय से नियुक्त होते रहे हैं। विदेशी भाषा सीखने का स्वभाव उन में बहुत पुराना है—फ़ारसी—इसी से उनको सरकारी नौकरी मिलती थी। अब उन्हों ने उसकी जगह अंग्रेज़ी सीख ली वास्तव में हिन्दुओं ही ने शिक्षा के नये अव-सरों से अधिक संख्या में लाभ उठाया।

मुसलमान स्वभावतः नये परिवर्तन का प्रबल विरोध करते थे, जो वास्तव में उनके लिए घातक था।

अभी तक फ़ारसी का ज्ञान उनके लिए बड़ा ही लाभ-दायक सिद्ध हुआ। उन्हों ने फ़ारसी सीखना न छोड़ा, यही उनके लिये सभ्यता की भाषा थी। इसके अतिरिक्त फ़ारसी

के साथ साथ अंग्रेजी का सीख लेना उनके लिए बड़ा भार था। यही नहीं वे मिशनरी लोगों के कारण यह समझते थे कि अंग्रेजी भाषा और ईसाई मत शिक्षा दोनों एक हैं और वे हिन्दुओं की अपेक्षा अपने लड़कों को ईसाई मत के प्रभाव में देखना कम पसन्द करते थे उनका अभिमान और उनकी धर्म भक्ति दोनों अंग्रेजी पढ़ने के विरुद्ध थी। वे इस आन्दोलन से अलग रहे।'

चाहे शिक्षित हो चाहे अशिक्षित, प्रत्येक मुसलमान एक ईश्वर में हृदय से विश्वास करता है 'ईश्वर केवल एक ही है' उसकी मस्जिदों में मूर्त्तियों का अभाव है। वह अपनी दैनिक प्रार्थना सीधे ही एक सर्वव्यापी अदृश्य शक्ति से करता है, और यद्यपि वह ईसाई धर्म को आदर की दृष्टि से देखता है उसे ईश्वरीय समझता है और ईसा का सत्कार करता है तो भी वह खुदा, मसीह और रूहुलकुद्स की त्रिआत्मा को एक असभ्य कुफ समझता है। वह अपने दीन को सब से बड़ा समझता है। वह यथा शक्ति अंग्रेजी पढ़ कर ईसाई धर्म के अपवित्र सिद्धान्तों के लिये अपने धर्म का दरवाजा खोल देना पसन्द नहीं करता है। दो परस्पर विरोधी समस्याओं के सामने आने पर इस्लाम ने अंग्रेजी शिक्षा से अपना हाथ अलग ही रक्खा, पर इसके परिणाम को भली भाँति न सोचा। जब तक अंग्रेजी अफसर भारतवर्ष के कस्बों और गाँवों में शासन करते रहे यह स्थिति छिपी रही। पर ज्यों ही मिन्टो मार्ले सुधारों का पर्दा खुला इस्लामी सरदारों ने अपनी तलवार पर हाथ रक्खा। बहुत दिनों म्यान में बन्द रहने के कारण इस तलवार पर जंग लग गया था। उन्होंने चारों तरफ अशुभ चिन्ह देखे।

बहुत असुविधा झेल कर मुसलमान लोग राजनैतिक क्षेत्र में फिर आगये। फिर भी देश के छोटे छोटे गांवों में इस आन्दोलन की पहुँच न हुई क्योंकि वहां अंग्रेज़ी अफ़सर ही सरकार का प्रतिनिधि होता है और हिन्दू मुसल्मानों में बराबर का न्याय करता था, जिससे कि वे दोनों पास पास शान्ति से रहते थे। फिर १६१६ ई० में १६०६ ई० के सुधारों का विस्तार हुआ। बहुत से अधिकार और शक्ति अंग्रेज़ों से हिन्दोस्तानियों को मिलीं। साथही सरकार की ओर से यह बचन भी दिया गया कि दस वर्ष के बाद विचार करके और सुधार दिये जावेंगे।

उस समय से आगे दो जातियों में केवल नाम मात्र की एकता रह गयी। उन गावों की बात अलग रही, जहां आंदोलनकारी नहीं पहुँच सकते थे। यह बनावटी एकता भी केवल अंग्रेज़ों के मौजूद होने के कारण बनी रही। और अब १६२६ का वर्ष निकट आ रहा है। दोनों जातियां एक दूसरे की घात में हैं।

कुछ समय तक महा युद्ध के बाद बहुत सी राजनैतिक गड़ बड़ी रही। केवल उस समय के नेताओं ने एकता का नाटक रचा। गांधी ने ख़िलाफत आंदोलन का स्वागत किया। इस आन्दोलन के जन्मदाता अली भाई थे। ये विचित्र लुटेरे हैं। इस कार्य से मिस्टर गांधी मुसलमानों से मिलकर अंग्रेज़ सरकार को आपत्ति में डालना चाहते थे। लेकिन ख़िलाफ़त आन्दोलन ही की अकाल मृत्यु हो गई। गांधी, अली भाई के एकता की गहराई को प्रकट करने के लिये नीचे की छोटी सी घटना काफ़ी है।

*मलाबार तट के ऊपर वाले पहाड़ों पर २० लाख

हिन्दुओं के बीच में मोपला लोग रहते हैं। ये पुराने अरबी सौदागरों और हिन्दोस्तानी स्त्रियों की सन्तान हैं। मोपला लोगों की संख्या प्राय १० लाख है। ये अत्यन्त साफ और सुथरे घरों में रहते हैं। उनके खुरदुरे चेहरे अक्सर बुद्धिमत्ता का परिचय देते हैं। मेरा निजी अनुभव है कि वे बड़े रोचक और पुरानी चाल के प्रेमी लोग हैं।

पर वे कट्टर मुसलमान हैं। वे अकसर जहाद करते रहे हैं। इन झगड़ों में उनकी एक मात्र इच्छा यह रहती है कि पहिले वे ज्यादा से ज्यादा काफिरों को कत्ल करें फिर किसी काफिर की गोली या छूरी से मारे जाकर स्वर्ग प्राप्त करें।

इन भोले भाले लोगों में १६२१ के झगड़ों में ऊपर की राजनैतिक गुट्ट ने अपने दूत विशेष सिद्धान्तो का प्रचार करने के लिये भेजे। इनसे कहा गया कि सरकार मुसलमानों के पाक मुकामो के खिलाफ अपना हाथ उठा रही है। शैतानी सरकार दीन की दुशमन है। शीघ्र ही सरकार हिन्दोस्तान से भाग जायगी और स्वराज्य स्थापित हो जायगा।

मस्जिद, मस्जिद, गाव, गाव, और नारियल के बगीचे, बगीचे में ये भड़काने वाले शब्द पहुँच गये। इन शब्दों का अर्थ कोरे दार्शनिक के लिये कुछ ही रहा हो पर भोले मोपला उन दिनों में लाखो भोले हिन्दुओं की तरह उनसे युद्ध का ही अर्थ समझे।

मसखरे अली भाइयों ने अलग कुछ ही कहा हो पर मिस्टर गान्धी एक बात भूल गये। वह बात यह थी कि मोपला स्वराज से यही अर्थ समझता था कि दुनिया में इस्लाम का राज्य हो। उस राज्य में और चाहे कुछ हो या न हो पर उस राज्य में कोई मूर्ति पूजक हिन्दू जीता न बचे।

इसलिये मोपला लोगों ने छिपे छिपे चाकू, भाले और छुरे आदि हथियार इकट्ठे कर लिये। १९२१ की २० अगस्त को भंडा फूट गया। शायद विद्रोहियों को ख़ुश करने के लिये आरम्भ में एक गोरा मार डाला गया। फिर उन्होंने अपनी दृष्टि हिन्दुओं पर डाली। पहिले उन्होंने सड़कों को घेर लिया। फिर तार काट डाले और रेलों को उखाड़ डाला। इस प्रकार उन्हों ने पहाड़ियों पर बिखरी हुई छोटी छोटी पुलिस चौकियों को पृथक कर दिया। फिर वे मुसलमानी राज्य स्थापित करने और अपने मन का स्वराज्य घोषित करने में लग गये।

उनके हिन्दू पड़ोसी उनसे दुगुने थे। पर उन्हें मोपला लोगों से जीतने की कोई आशा न रही। पहिले हिन्दू स्त्रियों का ख़तना किया गया। उन्हें ज़बरदस्ती इस्लाम धर्म की दीक्षा दी गई और वे मोपला घरों में डाल ली गई। हिन्दू मनुष्यों को कभी क़तल करने के पहिले इस्लाम धर्म स्वीकार करने को कहा जाता था। कभी ज़िन्दा ही खाल निकाल ली जाती थी। कभी वे एक दम काट डाले जाते थे और उन्हीं के कुओं में डाल दिये जाते थे। एक ज़िले (इरनाद ताल्लुका) में ६०० से अधिक पुरुष ज़बरदस्ती मुसलमान बना लिये गये और यह काम सभी पहाड़ों पर फैलने लगा।

जितनी जल्दी हो सका पुलिस और फ़ौज देश में फैला दी गई.इनके छः मास के कठिन परिश्रम से झगड़े शान्त किये गये, पर इसमें तीन हज़ार मोपला लोग खेत रहे। हिन्दुओं की गिनती अलग रही उनकी जायदाद नष्ट कर दी गई। उनके बहुत से कुटुम्ब बरबाद हो गये और बहुत से कैदियों पर मुक़दमा चलाने की तैयारी की गई पर इसमें अपराध दूसरों का था।

इस बीच में ख़तना किये गये हिन्दू देश में इधर उधर

घूमते रहने रहे और अपने भाइयो को त्रिनावनी देते रहे। एक शिक्षित अमरीकन निरीक्षक जो सयुक्त राष्ट्र अमरीका की सरकार की ओर से नियुक्त हुआ था दैव योग स इस समय इसी प्रदेश म आ पहुचा उसका कथन निम्न लिखित है —

मैंने इनको गाव गाव म और मद्रास प्रान्त के दक्षिण और पूर्व म देखा। बडे ही निर्दय ढग से उनका गनना किया गया और बहुत सी दशाओं म खून में जहर फैल जाने से अत्यन्त उनको कष्ट होता था। वे अपनी वेदना को चिल्ला चिल्ला कर कह रहे थे। वे अपने देवताओं से प्रार्थना करते थे कि स्वराज्य पर श्राप पडे और अङ्गरेज लाग देश में बने रहें, हमारे पीडित शरीरों को देखो—हम अपवित्र कर दिये गये और जात से बाहर हो गये। पर यह सब उन पापों के कारण हुआ जिन्होंने हमारे बाच में स्वराज्य का जहर फैला दिया। अगर एक बार अग्रेज लोग देश का छोड दें ता जो दुर्दशा उनक दशा हमारी हुई है वही तुम सब हिन्दू स्त्री पुरुषों की होगी।"

नरक के संकट वास्तव में उन लोगो पर पड रहे थे। ब्राह्मण पुजारी प्रति मनुष्य से शुद्धि सस्कार करने के लिये १०० या १५० रुपये माग रहे थे और बिना शुद्धि हुये इन बिचारों की आत्मा को मुक्ति नहीं मिल सकती थी।

इस सस्कार में उनकी आखों, कानों, मुह और नाक में गोबर भर दिया जाता था, फिर वह गो मूत्र से धो डाला जाता था। इसके बाद घी, दूध, दही दिया जाता था। यह बात तो सीधी साधी थी, पर यह केवल ब्राह्मण द्वारा ही मत्र और क्रिया के साथ हो सकती थी। जो दाम इस समय ब्राह्मण लोग इस क्रिया के लिये माग रहे थे, उसका देना इनमें से बहुतों की शक्ति के बाहर था इनकी पीडा इतनी असह्य थी,

कि अंग्रेज़ अफ़सरों को एक बार धर्म में हस्तक्षेप करना ही पड़ा, उन्हों ने ब्राह्मणों को समझाया, कि संख्या अधिक होने के कारण सबों का संस्कार करने की दक्षिणा प्रति मनुष्य से १२ रुपये से अधिक न लें।

मैंने इस अंतिम बात की जांच नहीं की है, पर मुझे सूचना देने वाला मनुष्य इस समय उसी स्थान पर था, और वह गवाही को बड़ी छान बीन करता था।

साधारण अत्याचारों को छोड़ कर इस आन्दोलन में अगर कोई बात विशेष रूप से मुसलमानी थी तो वह ज़बरदस्ती मुसलमान बनाने की थी। मोपला विद्रोह के छः महीने पहिले मलाबार से बहुत दूर संयुक्त प्रान्तमें चौरी चौरा की घटना हुई।

राष्ट्रीय स्वंय सेवकों की संस्था हालही में बनी थी, इसको कुछ न कुछ वेतन भी मिलता था और वह इन्डियन नेशनल कांग्रेस की कार्य कारणी समिति की आज्ञाओं को मनवाने में सेना का काम करती थी। यह कांग्रेस शुद्ध राजनैतिक संस्था है और उस समय मिस्टर गान्धी के अधिकार में थी।

१६२१ की चौथी फ़रवरी को राष्ट्रीय स्वयं सेवकों के पीछे एक बड़ी भीड़ हो ली। इनमें सरकार के विरुद्ध आन्दोलन की आग फैलायी गई थी इन लोगों ने चौरी चौरा में २१ पुलिस वालों को घेर लिया। इनमें अधिकतर कृषक और स्वयं सेवक थे। इनकी संख्या लगभग तीन हज़ार थी, इन लोगों ने थाने को घेर लिया, कुछेक को जान से मार डाला, शेष व्यक्तियों को घायल किया इन सबोंको एकत्रित किया, इनके ऊपर मिट्टी का तेल छोड़ दिया और उन्हें जीते जी जला दिया।

यह हिन्दुओं का हिन्दुओं के साथ व्यवहार था।

फिर सन् १९१९ ई० के उपद्रव में पंजाब में सरकार के विरुद्ध काम करने वाले कुछ मनुष्यों ने विदेशी स्त्रियों के साथ अत्याचार करने का एक विशेष आन्दोलन चलाया।

कहीं कहीं पर निम्न लिखित बातें दीवारों पर चिपका दी गई थीं —'महात्मा गान्धी की जय'। हम लोग भारत माता के पुत्र हैं' 'गान्धी जी! आप के बाद हम लोग अपनी मृत्यु पर्यंत लड़ेंगे।' 'अब आप किस बात की परीक्षा करते हैं'? 'यहां पर सतीत्व भंग करने के लिए बहुत औरतें हैं'। 'भारत भर में भ्रमण कीजिए और इन औरतों से भारत को साफ कर दीजिए।' इत्यादि, इत्यादि (सरकारी कमीशन की रिपोर्ट)

यह भारतवासियों का व्यवहार गोरे आदमियों के साथ था। यह अलंकारिक या अप्रसिद्ध भाषा नहीं है। यदि इन सब बातों के लिए समय दिया गया होता, यदि पंजाब की सरकार एक कमज़ोर आदमी के हाथों में होती तो भारत के इतिहास का एक असह्य पृष्ठ अवश्य लिखा गया होता। यहां पर केवल तीन ही उदाहरण दिए गये हैं परन्तु ऐसी कोडियों मिसालें उसी समय की और भी दी जा सकती हैं इन बातों के उल्लेख करने से मेरा यह अभिप्राय नहीं है कि मैं भारतवासियों को लज्जित करूं किन्तु केवल यह कि जब कोई राजनीतिज्ञ या सिद्धान्त प्रेमी जनता को उत्तेजित तथा आन्दोलित करता है, तब वह बड़े ही भयानक, प्रारम्भिक और जंगली भावों को उत्पन्न करता है जिसको वश में करना असम्भव हो जाता है।

बहुत से ग्रामों में हिन्दू और मुसलमान अब भी एक दूसरे के पास रहते हैं और जब तक कोई बाहरी आदमी उन्हें उत्तेजित न करे वे दिन बिताते हैं।

कभी कभी हिन्दू और मुसलमानों में द्वेष भी दिखलाई पड़ता है सन् १९२४ ई० में दिल्ली के पास बुलंदशहर में गंगा के अन्दर ख़तरनाक बाढ़ आगई थी और उसमें मनुष्य जानवर तथा गाँव के गाँव बह गये थे। नाव वाले एक हिन्दू थे। यही सब लोगों की रक्षा करते थे परन्तु इन्होंने एक भी मुसलमान को डूबते हुए नहीं बचाया।

मैंने इन में प्रेम भी प्रायः देखा। बंगाल के नदिया ज़िले में मुसलमानों के लड़कों के पढ़ाने के लिए एक ऐसा स्कूल है जिसका बहुत सा ख़र्च हिन्दू देते हैं और इन में परस्पर द्वेष नहीं है। दोनों ही अंगरेज़ डिप्टी कमिश्नर के कहने के अनुसार काम करते हैं।

लखनऊ में जो पार्क है उससे भी एक शिक्षा ग्रहण की जा सकती है। जब यह बनने लगा तो इस के बीच में एक हिन्दुओं का मंदिर आगया। जैसा कि सरकार प्रायः करती है, उसने मन्दिर को नहीं तुड़वाया।

तब मुसलमानों ने कहा—हमलोग भी इसी पार्क में नमाज़ पढ़ने के लिए जगह चाहते हैं।

इसलिए म्युनिसिपैलटी ने थोड़ी सी खुली जगह एक कोने में नमाज़ के लिए देदी। हिन्दू लोग मंदिर में पूजा करते थे, मुसलमान खुली जगह में नमाज़ पढ़ते थे। इस प्रकार दोनों ही आठ वर्ष तक प्रेम पूर्वक अपनी अपनी पूजा करते चले आए।

अब सुधार का प्रश्न उनके सामने आया और सुधार का फल यह हुआ कि उनके बीच भेद भाव उठ खड़ा हुआ।

लखनऊ मुसलमानी शहर है। इसके सब प्रसिद्ध मकान, मनुष्य तथा स्मारक आदि सब अवध की राजधानी के चिन्ह

हैं। इसलिए मुसलमानों ने अपने मन में सोचा कि अगर भारत का प्रबंध स्वयं भारत करने लगे तो लखनऊ का प्रबंध मुसलमानों को मिलना चाहिए।

इसमें सन्देह नहीं कि लखनऊ मुसलमानी शहर है परन्तु अब उसमें हिन्दू मुसलमानों से तिगुने हो गये हैं। हिन्दुओं ने परस्पर कहा—'अगर स्वराज्य मिले तो लखनऊ के मुसलमानों के नीचे हम लोग कैसे रहेंगे? इससे तो मरना ही अच्छा है।'

इसलिए हिन्दुओं ने संगठन करके अपना अधिकार जमाना चाहा। कदाचित इन झगड़ों में पहल ये ही आगे बढ़े। अब ये लोग रोज शाम को उस मंदिर के पास जमा होने लगे।

संध्या के समय मुसलमान नमाज पढ़ते हैं। आठ वर्ष से मुसलमान लोग उसी पार्क में नमाज पढ़ने चले आये थे। अब ये लोग हिन्दुओं की बाधाओं को नहीं सह सकते थे। इसलिए इन लोगों ने कहा—हिन्दुओं को एक ऐसा समय पूजा का निकालना चाहिए कि जिससे नमाज का समय पूजा के समय से न टकराये।

हिन्दुओं को मुसलमानों की यह बात बुरी लगी और मुसलमान लोग भी अब हिन्दुओं पर बिगड़ खड़े हुए। अब आग भड़क गई और दोनों धर्म के लोगों ने इस प्रश्न को लाठी से हल करने का निश्चय कर लिया। पार्क में भीड़ एकत्रित हो गई।

इस झगड़े में मुसलमानों ने चालाकी की, हिन्दुओं को मार-भगाया और यदि फौज न आ गई होती तो मंदिर को भी तोड़ डाला होता। इस प्रकार इस झगड़े का अंत हुआ, सब लोग घर भाग गये। परन्तु उनका मत-भेद और द्वेष बराबर बढ़ता गया।

इक्के दुक्के पर दोनों हमला करते रहे। फिर शहर में गोरी फ़ौज घूमने लगी। तीन चार दिनमें फिर शान्ति फैल गई।

व्यापार बंद हो गया, दुकान बंद थी, मनुष्य एक दूसरे का बायकाट कर रहे थे। इसी बीच में अंग्रेज़ कमिश्नर ने उन्हें शान्ति करने का विचार किया।

अब दोनों दल कमिश्नर के यहाँ एकत्रित होने लगे क्योंकि और कोई ऐसा स्थान ही नहीं था, जहाँ ये सलामती से एकत्रित हो सकते। वे सब कमिश्नर के यहाँ आते जाते थे परन्तु किसी दल ने इंच भर भी झुकने का विचार नहीं किया।

हिन्दू कहते थे,—'हम लोग सूर्यास्त के पांच मिनट पहले अवश्य ही पूजा का ढोल पीटेंगे।'

मुसलमान लोग बड़े ज़ोर से कहते थे,—वह नमाज़ का वक्त है। उस समय नमाज़ में बाधा मत डालो।

अन्त में कमिश्नर ने प्रत्येक जाति को ५ मिनट ज़बरदस्ती आगे पीछे किया। उसने हिन्दुओं से कहा,—सूर्यास्त के पहले दस मिनट तक मन्दिर में कोई बाजा न बजे।

और मुसलमानों से कहा,—'इस दस मिनट के शान्त समय में ही अपनी नमाज़ ख़तम करदो।'

दोनों ने इसे स्वीकार कर लिया। मुसलमानों ने कमिश्नर के यहाँ कहा था,—हम लोग हिन्दुओं की पूजामें बाधा नहीं देना चाहते हैं हम लोग केवल घन्टे घड़ियाल के शोर का विरोध करते हैं। कमिश्नर के यहाँ इस वादा विवाद में १५ घंटे लग गये। इसके बाद यह सभा बंद हुई। इतने में कमिश्नर के पास के कमरे में खाने की घन्टी बजी। इसी पर एक हिन्दू ने ज़ोर से कहा—ओह! यह मंदिर के घन्टे की आवाज़ मालूम होती है। क्या वह आवाज़ यहाँ तक आती है?

कमिश्नर ने जल्दी से कहा,—आजमा कर देखिये।

आज तक लखनऊ के हिन्दू, कमिश्नर के घंटे को मंदिर का घंटा समझ कर, उसके अनुसार पूजा करते हैं।

परन्तु वह अनुभवी अफसर यह नहीं समझता कि उन लोगों के झगड़े बन्द हो गये।

पच्चीसवां परिच्छेद

नबी की संतान

दिसम्बर सन् १९१६ में अखिल भारतीय मुसलिमलीग इण्डियन नैशनल कांग्रेस से मिल गई। हिन्दू, मुसलमान दोनों के हित एक होगये दोनों ने मिल कर स्वराज्य की इच्छा ज्ञापित की।

मापला विद्रोह की आग भविष्य के गर्भ में थी, लेकिन दोनो संस्थाओं के मेल ने मुसलमानों में आत्म रक्षा की आग भड़का दी। १९१७ के शीत काल में मिस्टर मानटेगू भारत मंत्री थे। वे भारतीय हितों और उनके मतों की जांच करने के लिये भारतवर्ष में शासन सुधार का प्रस्ताव लाये। दिल्ली में अनेक सभ्थ ओं ने अखिल भारतीय मुसलिम लीग का प्रतिरोध किया। प्रतिरोध की भाषा सीधी स धी था। सयुक्त प्रान्त की एक मुसलिम संस्थासे मुसलिम डिफेन्स ऐशाशियेशन ने कहाः—

स्वराज्य की वह मात्रा कि जिससे ब्रिटिश सरकार का न्याय प्रद भाव कम हावे, भारतवर्ष के लिये एक बड़ी भयङ्कर आपत्ति होगी।'

बङ्गाल की इण्डियन मुसलिम ऐसोसियेशन ने कहा कि, हिन्दुओं और मुसलमानों के अधिकांश लाग पिछड़े हुये हैं। उनके अनेक मत मतान्तरों, जातियों, संस्थाओं और हितों का का गहरा भेद है। भेद हिन्दुओं मुसलमानों को एक नहीं होने देते हैं, कई हाशियार आदमी उस झूठी एकता में विश्वास

नहीं कर सकता, जो नेशनल कांग्रेस और मुसलिम लीग में स्थापित को गई है × × ×।

*इंडियन मुसलिम एसोसियेशन का उस बुद्धिमत्ता पर विश्वास नहीं है। जिसके कारण भारतवर्ष में ब्रिटिश शासन ढीला हो जावे—।

इसी ब्रिटिश शासन पर हमारी शासन सम्बन्धी उन्नति की आशायें निर्भर हैं।'

*बिहार और उडीसा प्रान्त में मुसलमान हितो की रक्षा करने के लिये एक एसोसियेशन ने कहा—'हम दूरदर्शिता के उस अभाव का जोरो से खण्डन करते हैं। जो हमारे सहधर्मियों ने कांग्रेस की बातों को अपनाने में प्रकट किया, किन्हीं किन्हीं भागो में मुसलमानो को दबाने और धमकाने के चिन्ह प्रकट हो रहे हैं, उनके हितो की हिंसा भी की जा रही है। अंग्रेजी न्याय का प्रथम सिद्धान्त निष्पक्षता है। भिन्न भिन्न मत और जातियो के होते हुए भी अंगरेज शासक पक्षपात रहित होते हैं।' साउथ इण्डिया ईस्लामियाँ लीग ने मानटेगू महाशय को याद दिलाया कि हम बहुत थोडी सख्या में हैं। उन्होंने कहा 'हम देश के भिन्न भिन्न वर्गों में अंग्रेज़ी सरकार की न्याय प्रियता की क़दर करते हैं, और हम उन राजनैतिक आयोजनाओं के विरुद्ध हैं जो भारतवर्ष में अंग्रेजी सरकार के अधिकार को कम करने वाली हैं। पर हम उन राजनैतिक विकाशो के पक्ष में हैं जो धीरे धीरे जारी किये जाय।'

मदियलपेट मुसलिम अंजुमन ने जो मद्रास की एक मुसलिम शिक्षा सम्बन्धी सभा है मानटेगू महाशय से प्रार्थना की आप अपने शासन सुधार को अलग रखिये। उन्होने कहा कि—

भारत की भिन्न भिन्न जातियो में सिर्फ अंग्रेजी शासक

ही न्याय की तराज़ू ठीक रख सकते हैं। जब हमारे हितों और दूसरे सम्प्रदायों के हितो में भेद उपस्थित होता है तो हम अंग्रेज़ों ही से न्याय की आशा रखते हैं। सुधार चाहे जो कुछ किये जायें पर हमें विश्वास है कि हिन्दोस्तान में अंग्रेजी सत्ता को कमकरने के लिये कोई बात न की जायगी।'

बम्बई प्रान्त के मुसलमानों ने एक चिन्ता पूर्ण प्रार्थना की जिसका कुछ अंश यह हैः—'ये खुल्लम खुल्ला कहा जाता है कि अंग्रेज़ी नौकर शाही का शीघ्र ही लोप होने वाला है और उसके स्थान पर कौंसिलों में हिन्दोस्तानियों की बहुसंख्या हो जायगी। भूत काल में नौकर शाही के दोष कुछ हो रहे हो यह सबको मानना पड़ेगा, कि उसमें एक बड़ा भारी गुण यह है कि वह हिन्दोस्तान के दो बड़ी बड़ी क़ौमों में न्याय बराबर रखती है, और कमज़ोर की ज़बरदस्त के जुल्म से रक्षा करती है।'

मुसलमानी विचार के कारण एक दूसरी घोषणा में और भी अशुभ चिन्ह था। कुरान की व्याख्या करने वालों की संस्था उलमा कहलाता है। सन्देह के अवसरों पर ये लोग फ़तवा देते हैं जिनको कि इस्लामी जगत मानता है। मद्रास के उलमाओं का फ़तवा भारत मंत्री के सामने आया उनमें एक बयान इस प्रकार है। बहुत से देवताओं के मानने वाले नापाक हैं। इसलिये यदि हिन्दुओं की इच्छा के मुताबिक अंगरेज़ सरकार ने सलतनत की बाग हिन्दोस्तानियों के हाथों में दे दी तो मशरिकों (हिन्दुओं) के अधीन रहना मुसलमानों के लिये कुरान के ख़िलाफ़ होगा।

ट्रस्टी आफ़ दी सैय्यद मुहीउद्दीन
अमीरुन्निसा बेगमसाबा मस्जिद।

जिसे अल्लाह क्षमा कर देता है।

मुख्य मुख्य ब्रिटिश प्रान्तों में हिन्दू मुसलमानों की सख्या निम्न प्रकार है —

प्रान्त	हिन्दू	मुसलमान
मद्रास	८८ ६४	६ ७१
बम्बई	७१ ५८	१६ ७४
बगाल	४३ ७१	५३ ६६
सयुक्त प्रान्त	८५ ०६	१४ २८
बिहार उडीसा	८२ ८४	१० ८५
मध्य प्रान्त बरार	८३ ५४	४ ०५
आसाम	५४ ३४	३८ ६६
पजाब	३१ ८०	५५ ३३
उत्तरी पश्चिमी सीमा प्रान्त	६ ६६	९१ ६२

इस्लाम मत हर जाति में लडने की आदत डाल देता है, इस लिये ब्रिटिश भारत में जहा जहा मुसलमानों की सख्या बहुत ही कम है वहा भी वे आफत ढाने के लिये काफी हैं।

सदा से मुसलमान राष्ट्रीय होने की अपेक्षा अन्तर्राष्ट्रीय अधिक रहे हैं। आज हिन्दोस्तान भर में सब कहीं मुसलमान कहते हैं —'हम विदेशी, विजेता और योद्धा हैं। अगर हमारी सख्या थोडी है तो इसकी क्या चिन्ता है। आदमी होने चाहिये। सख्या से क्या मतलब? जब अग्रेज चले जायेंगे तो हिन्दोस्तान पर हम राज्य करेंगे। इस लिये इस समय हमारा कर्तव्य है कि हम जितना मौका मिले अपने को मजबूत बना लें।'

हिन्दू भी अपनी ओर से अपनी स्थिति दृढ करने का कोई भी अवसर जान बूझ कर जाने नहीं देते हैं। इसलिये जहाँ

कहीं हिन्दोस्तानियों के हाथ की बात होती है हर एक नौकरी अपने स्वधर्मियों और स्वजातियों को दी जाती है। हर एक फैसला उन्हीं के पक्ष में किया जाता है। हर एक पैसा उन्हीं के लिये ख़र्च किया जाता है। दूसरा पक्ष जी जान से उसके ख़िलाफ़ लड़ता है। गुण और दोष की ओर कोई ध्यान नहीं देता है।

ऐसी अवस्था से सभी विभागों में भारी रुकावट पड़ती है, पर न्यायालयों में और भी इसका गहरा प्रभाव पड़ता है।

हिन्दोस्तानी को मुक़द्दमेबाज़ी में आनन्द आता है। धार्मिक झगड़ों में अनेक बार अपील करने का अवसर मिलता है। अगर मुक़द्दमे को कोई हिन्दोस्तानी जज तय करता है ता एक न एक पक्ष निराश हो जाता है। जज चाहे न्याय का ही अवतार क्यों न हो दूसरा पक्ष यही समझता है कि वह अपने सहधर्मियों का पक्ष लेगा। हिन्दोस्तान के न्यायसिंहासन को कई निष्कलंक देशी जज शुशोभित कर चुके हैं। फिर भी हिन्दोस्तानी परम्परा से उसी जज को चाहता रहा है जो दोनों पक्षों से रिश्वत लेता है और अन्त में हारने वाले को रिश्वत लौटा देता है। गवाह मोल लेना एक साधारण बात है। कचहरी के सामने आप फिर लाने के लिये बैठे हुए गवाहों को देख सकते हैं। मद्रास के एक बैरिस्टर ने कहा 'सिद्धान्त के अनुसार ऐसा करना ठीक नहीं है पर व्यवहार मे मैं अपने विरोधी ही को किराये के गवाहों से लाभ उठाते नहीं देख सकता हूं यह हमारे यहां का रिवाज है'।

हिन्दू मुसलिम झगड़े के सामने सभी हार मानते हैं कोई अभागा चिल्लाता है कि, 'भला अपने देवताओं के विरुद्ध कैसे फैसला देगा ? क्या वह हमारे दुश्मनों के बीच में बैठ कर

कचहरी नहीं करता है ? इस लिये मुझे किसी अंग्रेज जज के सामने ले चलो जो इन बातों की कुछ भी परवाह नहीं करता है। वह ठीक ठीक फैसला देगा चाहे मैं सच्चा होऊं चाहे झूठा।

गत वर्ष संयुक्त प्रान्त के एक पुराने और अनुभवी मुसलमान डिस्ट्रिक्ट मेजिस्ट्रेट के सामने एक विचित्र मुकदमा आया। उसके जिले के कुछ पुलिस अफसर उसके सामने लाये गये कुछ मजहबी झगडा के दिनों में इन लोगों ने अपने कर्तव्य को पूरा नहीं किया जिससे कई लोगों की जानें चली गईं, ये कड़े दंड के भागी थे। लेकिन वे हिन्दू थे। इस लिये जज डरा कि शायद विधर्मी होने से मुझ पर पक्षपात का अपराध लगाया न जाय इस लिये उसने उन्हें इतनी हलकी सजा दी जिस से न्याय का गला घुट गया।

१९२६ के फरवरी मास की एक घटना और भी अधिक स्पष्ट है। एक पुराना असिस्टेन्ट इन्जिनियर (मुसलमान) एक अङ्गरेज की मातहती में नहर के मुहकमे में बहुत दिनों नौकरी कर चुका था। अचानक उसे एक हिन्दू की मातहती में काम करना पडा। यह नौजवान हाल ही में कालेज से निकला था और नये विचारों से भरा था। इसने पुराने मुसलमान नौकर को इतना तंग किया कि उससे न रहा गया।

इस लिये अपने लड़के को साथ लेकर पुराना मुसलमान एक बहुत बड़े अङ्गरेज़ अफ़सर के पास सलाह के लिये गया। सारी कहानी सुनकर लड़के ने कहा, 'साहब, अब आप मेरे वालिद की मदद नहीं कर सकते हैं बड़े शरम की बात है कि इतने दिनों नौकरी करने के बाद उनके साथ ऐसा बर्ताव किया जावे।'

अङ्गरेज़ से भी विना कहे न रहा गया। उसने कहा, 'महमूद, तुम तो हमेशा स्वराज चाहते रहे हो इससे तुम्हें पता लग गया होगा कि स्वराज से तुम्हें क्या लाभ है। कहो कैसा लगता है ? ।'

नौजवान ने उत्तर दिया, 'लेकिन मुझे अब डिप्टीकलेक्टरी मिल गई है। हाल ही मे मैं काम पर जाऊंगा तब जो हिन्दू मेरे हाथ लगेंगे उनकी ख़ुदा ही खैर करे !'

ब्रिटिश भारत में मुसलमानों की संख्या मुश्किल से एक चौथाई है पर यह संख्या बढ़ रही है। इस बढ़ती से मुसलमानों में अधिक सन्तान उत्पन्न करने और अधिक जीवित रहने की शक्ति सिद्ध होती है। उनका दिमाग़ तेज नहीं होता है। पर उनमें अक्सर घोड़े के से गुण पाये जाते हैं। वे अपने लड़कों को स्कूलो में भेजने की आवश्यकता अनुभव कर रहे हैं। समय और अवसर मिलने तथा सुरक्षित होने पर वे अपनी बाधाओं को भी दूर कर सकेंगे और देश के शासन में पूरा पूरा भाग लेने के लिये अपने को योग्य बना सकेंगे। इस समय यदि उन्हें हिन्दुओं से मिलना पड़ा तो उन्हें केवल एक ही मार्ग दिखाई देगा और वह है 'तलवार का मार्ग'।

यह बात एक क्षण के लिये भी नहीं भूलनी चाहिये कि जब मुसलमान तलवार उठायेंगे तो उसका हमला अलग अलग और जहाँ तहाँ ही न होगा।

तब तो उनकी रुकी हुई शक्ति का तूफ़ान सीमा प्रान्त की रक्षा करने वाली सेना के बांध को तोड़ कर एक लाइन में आगे बढ़ेगा। नक़्शेपर नज़र डालने से पंजाब की उत्तरी सीमा के पास प्रायः साढ़े तीन सौ मील लम्बा और २० से ५० मील तक चौड़ा प्रदेश दिखाई देता है। यह प्रदेश पश्चिमोत्तर

सीमा प्रदेश है। आगे इसी के बराबर और इसी के समानान्तर प्रदेश में स्वतन्त्र मुसलमानों के फिरके रहते हैं। यह बहुत अच्छे लड़ने वाले हैं। जब से सृष्टि का प्रारम्भ हुआ तब से डाका डालना इनका एक मात्र पेशा रहा है। इस के पीछे मुस्लिम अफगानिस्तान और मुसलमानी एशिया है। जहाद (धर्म युद्ध) का शब्द सुनते ही ये सब के सब विशाल जंगली इंजिन के समान लूट के काम में लग जायेंगे। किसी क्षण इस शक्ति को मैदान में लाने के लिये केवल एक शब्द की आवश्यकता है। सीमा प्रान्त की पतली फौलादी लाइन पर जो उस का दबाव निरन्तर पड रहा है उसका अनुभव उनही को हो सकता है जिन्होंने स्वयं देखा है।

बहुत कम हिन्दू राजनीतिज्ञ इसका अनुभव करते हैं। 'अफगान लोग इतने वर्षों तक हम से अलग रहे। अब वह हमारे बीच में क्यों आयेंगे यह बच्चों की सी बात है'। पर इन्हें अपनी स्थिति और अंगरेज सरकार के इतने वर्षों के संरक्षण का उसी प्रकार कुछ पता नहीं है जिसप्रकार समुद्र की तली में रहने वाली सीप को ऊपर की प्रचंड आंधियों के चलने का पता नहीं लगता है। पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त में ९५ फीसदी मुसलमान रहते हैं। इस प्रान्त को वर्तमान सरकार से सन्तोष है। प्रान्त में और धनाढ्य पंजाबी हैं जिनमें बहुत से हिन्दू हैं—दक्षिण में असंख्य ना झुकनेवाले हिन्दू हैं। दूसरी ओर भूखी और लड़ाकी मुसलमान कौम है। धनी हिन्दुओं को देख कर इनके मुंह में पानी भर आता है। और उनके हाथ खुजलाते हैं पश्चिमोत्तर सीमा प्रदेश में वर्तमान स्थिति से सन्तोष होना हिन्दोस्तान की शान्ति के लिये बड़ा ही लाभदायक है।

मैंने उस प्रान्त के बहुत से नेताओं से बात की। इस

विषय में सब का एक ही मत था। एक प्रतिनिधि के ही शब्द नीचे दिये जाते हैं। यह मनुष्य (कुछ पीढ़ियों पहिले) फ़ारसी नस्ल से उत्पन्न हुआ था। यह मनुष्य लम्बा पतला चील्ह के समान पैनी आँख और नाक वाला था। यह एक सरदार था। जब तक कोई ज़रूरी बात न हो वह स्वभाव से चुप रहने वाला मनुष्य था।

उसने कहा कि: —

'इस समय सारा प्रान्त सन्तुष्ट है, और किसी तरह का परिवर्तन नहीं चाहता है। दक्षिण की ओर वाले छोटे छोटे लोगों की बात अलग रहने दीजिये। हम उनको कभी मर्द नहीं कहते। हमारे उनके बीच में बहुत ही अधिक भेद है। इतना भेद हमारे और अंग्रेज़ों के बीच में नहीं है। अगर अँग्रेज़ चले जावें तो तुरन्त ही नर्क कुण्ड मच जायेगा। कुछ ही दिनों में बंगाली और उनके साथी लोग दुनिया से उठ जावेंगे। खुद मैं ही बड़ी खुशी से कुछ का काम तमाम कर सकता हूँ। अंग्रेज़ों के साथ सहयोग करने में ही हमारी भलाई है। उन्हों ने हमारे लिये सड़कें, तार और वहां अच्छा पानी दिया है जहां पहिले पानी था ही नहीं। उन्ही की हिफ़ाजत से अमन और इन्साफ़ होता है। उन्ही की बदौलत हमारा ख़ान्दान चैन से रहता है। वे हमारे बीमारों का इलाज करते हैं और हमारे बच्चों के लिये स्कूल खोलते हैं उन में आने के पहिले हमारे पास इन चीज़ों में से एक भी न थी। मैं आपसे पूछता हूं कि क्या हम लोग एक बुज़दिल, कमज़ोर और अपने पैदायशी दुश्मन के कहने से 'असहयोग" और "बहिष्कार" करने लगेंगे और अँग्रेज़ों को निकाल देंगे? जाहिलाना "असहयोग" से कुछ लाभ नहीं हुआ और नुक़सान बहुत सा हो गया।'

हिन्दोस्तान एक बडा मुल्क है उसे हमारी सयुक्त शक्ति की जरूरत है। इसमे मुसलमान, अङ्गरेज और हिन्दू भी शामिल हो सकते हैं। लेकिन अङ्गरेजो के बगैर हिन्दोस्तान में एक भी हिन्दू न रहने पावेगा। जिन्हें हम अपना गुलाम बना कर रखें उनको दूसरी बात है।

जिस समय कांग्रेस और मुसलिम लीग ने मिलकर स्वराज्य के लिये अपनी माग पेश की थी उसके आठ साल बाद २६ दिसम्बर सन् १६२७ को एक हिन्दू स्त्री कांग्रेस की सभानेत्री हुई। यह स्त्री पाश्चात्य जीवन और पाश्चात्य शिक्षा प्राप्त किये हुए थी उसने इस बार खेद पूर्वक कहा कि—

'हिन्दू और मुसलमानो का भेद दिनों दिन बढता जा रहा है। भिन्न भिन्न पेशो, नौकरियो और राजनैतिक अधिकारों के लिये अलग और अधिक मागे इस बात का प्रमाण है।'

कुछ दिनो बाद अखिल भारतवर्षीय मुस्लिम लीग की सभा हुई इसके सभापति सर अब्दुररहीम थे। उन्होंने अपने भाषण में कांग्रेस की घोषणा का उत्तर दिया। यह उत्तर इतना साफ है कि यह हिन्दुस्तान के इतिहास में एक नई घटना उपस्थित करता है। इसे विस्तार पूर्वक पढने से परिश्रम सफल हो जाता है।

'इगलिस्तान के प्रोटेस्टेन्ट और कैथलिक लोगों की तरह हिन्दू और मुसलमान केवल दो भिन्न भिन्न सम्प्रदायही नहीं हैं वरन वे दो प्रथक जातिया है। उनके जीवन का उद्देश्य, उनकी सभ्यता, उनकी सामाजिक रीतिया, उनका इतिहास और धर्म उन्हें बिलकुल अलग कर रहा है। उन दोनों को एक देश में रहते रहते एक हजार वर्ष हो चुके फिर भी वे दोनों मिल कर एक जाति न हुए।'

हिन्दुओं को आत्म रक्षा की शिक्षा देने के लिये और मुसलमानों को हिन्दू बनाने के लिये जो हिन्दूसंगठन का जन्म हुआ उसका हवाला देते हुए सर अब्दुर रहीम ने कहा :

'मुसलमान इन आन्दोलनों को इस्लाम के लिये सब से अधिक गम्भीर चुनौती समझता है ऐसी चुनौती ईसाइयों के क्रूसेडों ने भी नहीं दी थी, जिनका उद्देश उन मुकामों का छीनना था जिन्हें दोनों पाक समझते थे। वास्तव में कुछ हिन्दुओं ने खुल्लम खुल्ला मुसलमानों को भारत से उसी प्रकार भगानेकी बात कही है जिस प्रकार स्पेनवासियों ने मूर लोगों को स्पेन से भगाया था। पर हमारा निकलना हमारे दोस्तों के भी ताकत से बाहर है।

'अगर हम में से कोई हिन्दोस्तानी मुसलमान अफगानिस्तान, ईरान, मध्य एशिया में अथवा चीनी मुसलमानों, अरबों, तुर्कों के बीच में सफ़र करे तो उसे घर सा मालूम पड़ेगा और उसे कोई ऐसी बात न मिलेगी जिस का वह आदी नहो। इसके विरुद्ध हिन्दोस्तान में अगर हम गली की दूसरी ओर हिन्दू मुहल्लों में जावें तो समस्त सामाजिक बातों में हम बिल्कुल विदेशी जान पड़ते हैं।

'यह कहना सच नही है कि हम मुसलमान लोग हिन्दोस्तान में स्वराज देखना नहीं चाहते हैं। शर्त यह है कि सरकार मुसलमानों की भी उतनी ही उत्तर दायी हो जितनी कि हिन्दुओं की। नहीं तो, स्वराज, कामन वेल्थ आफ इण्डिया और होमरूल की बातमें हमें किसी तरह की दिलचस्पी नहीं है। लेकिन पहिले हमारे लिये यह अवश्यक है कि हम हिन्दू राज नीतिज्ञों की उन बेजा हरकतों को रोकें जो अंग्रेजी संगीनों की हिफ़ाजत में उनकी उदारता और धैर्य से अनुचित लाभ

उठाकर स्वराज प्राप्त करने के लिये देश में आपत्ति का बीज बो रहे हैं। वे स्वराज का पूरा अर्थ नहीं समझते हैं न वे इसकी जिम्मेवारी का भार ही कभी उठा सकेंगे।

समस्या इस प्रकार हल हो सकती है कि समस्त जनता—हिन्दू, मुसलमान, सिख, पारसी और ईसाई, किसान, मजदूर और हिन्दू अछूतों—की आर्थिक और मानसिक हालत इतनी उन्नत हो जावे और राजनैतिक शक्ति साधारण जनता में इस तरह बट जावे कि एक ही जाति अथवा पढ़े लिखे लोगों के ही हाथ में सारी शक्ति न बनी रहे। ऐसा होने पर भिन्न भिन्न जातियों के झगड़े भी दूर हो जावेंगे।

मैं लगभग ३५ वर्ष से, बैरिस्टर, जज और बंगाल की एग्जिक्यूटिव कौन्सिल के मेम्बर की हैसियत से रोज़ मर्रा शिक्षित अंग्रेजों के साथ रहा हूँ।

मैंने अपने जीवन के प्रत्येक भाग में अंग्रेजों से बहुत कुछ सीखा है। मैं अपने बहुत से उच्च देशवासियों के भी साथ रहा हूं। मुझे आशा है कि वे भी इस बात को स्वीकार करेंगे कि बहुत सी उन्नति की बातों की नींव अंग्रेजों ने ही डाली, सरकार के सम्बन्ध में मुझे एक भी ऐसा अवसर याद नहीं आता है जब किसी प्रश्न पर हम हिन्दोस्तानियों का एक मत होने पर अंग्रेजों ने उस का तिरस्कार किया हो। मैं ऐसे किसी देशवासी को नहीं जानता जिसने गम्भीरता पूर्वक यह बात कही है कि यहां के लोग अपने ही बूते पर ऐसा राज्य स्थापित कर सकें जो बाहरी हमलों से सुरक्षित हो। हम सबकी भलाई के लिये यहां अंग्रेजों का रहना आवश्यक है। भारतवर्ष के प्रति इंगलिस्तान को भारी कर्तव्य पूरा करना है। यह कर्तव्य इंगलिस्तान तभी पूरा कर सकता है जबकि वह सभी उपायों से भारतवर्ष को स्वाव

लम्बी और बलवान बना सके। इंगलिस्तान के सर्वोत्तम मनुष्य इस ऋण को जानते हैं। मैं नहीं जानता कि क्रान्तिकारियों के सामने कोई भी राजनैतिक कार्यक्रम है। अगर है भी तो उन्हों ने इसे प्रकट नहीं किया है। उनका वर्तमान उद्देश्य केवल अंगरेज़ी राज्य को उखाड़ने में ही मालूम होता है। हम क्रान्तिकारियों को अलग ही रहने दें। उनकी सफतला की ज़रा भी आशा नहीं है।

हम मुसलमान लोग जिनका पिछले तेरह सौ वर्ष का इतिहास यूरोप, अफरीका और एशिया में लड़ाइयां लड़ते हं बीता है उन आदमियों को अत्यन्त मूर्ख और पागल समझे बिना नहीं रह सकते जो कभी कभी बम फेंक कर य एक दो अंगरेज़ को पीछे से गोली से मार कर या हिन्दोस्तानी देहातियों को लूट कर, उभाड़कर और कष्ट देकर हिन्दोस्तान से अंगरेजों की सत्ता उखाड़ना चाहते हैं। हम मुसलमान लोग ऐसे लड़कों और मनुष्यों को राजनीति के रोग से पीड़ित समझते हैं। मार्के की बात यह है कि एक भी मुसलमान ने उनका साथ नहीं दिया। × × ×

"राजनैतिक उपाय ही किसी जाति को बनाने के लिये काफ़ी नहीं हैं। इस समय तो हमारी ज़बान में कोई एक नाम भी नही है जिससे हिन्दुओं, मुसलमानों और भारत के अन्य समस्त लोगों को पुकार सकें। न हमारी एक भाषा है, न केवल अगरेज़ों, न हिन्दुओं और न मुसलमानों के अलग काम करने से भारत के तीस करोड़ लोगों का उद्धार होगा। इसके लिये सब के संयुक्त प्रयत्नों की आवश्यकता है।'

सर अब्दुर रहीम की स्पष्ट बातों से हिन्दू नेता और उनके अख़बार बहुत चिढ़ गए। दोनों दलों में मतभेद और भी गहरा हो गया। इस बीच में भयानक परिणाम कुछ कु

प्रकट होने लगे। कलकत्ता में दगा होगया, वर्ष आरम्भ से १६२६ के ग्रीष्म तक ३१ लूटमार के दगे हुए। इसमें बहुतों की जान गई। यह स्पष्ट था कि हिन्दू और मुसलमान इस स्थिति की गम्भीरता को समझ गए। यह स्थिति उनके आपस के डरों से ही उपस्थित हुई थी। गाधी का पुराना दोषारोपण अब भी दुहराया जाता था कि अगरेज छिपे छिपे झगडा फैला रहे हैं। पर ये बातें आम तौर पर गरम दल के नाजिम्मेवार लोग कहते थे, जो इन बातों से किसी भाँति चिंतित न थे। और जिन्हें इस तरह के दङ्गों से बजाय हानि के लाभ ही लाभ था। दोनों दलों के विचारशील मनुष्य इस दोषारोपण को निर्मूल समझने लगे, और एक प्रबल तथा निष्पक्ष राज की आवश्यकता अनुभव करने लगे, जिससे वे सुरक्षित रह सकें। यह लाभ अँगरेजों की उपस्थिति पर ही निर्भर है जिस दिन अगरेज चले गये उसी दिन खूरेज़ी होने का डर है—

इण्डियन लेजिस्लेटिव असेम्बली की गरमी के दिनों में जो बैठक हुई उसमें विचारपूर्ण बातें कही गई। सय्यद मौलवी मोहम्मद याकूब ने २४ अगस्त को कहा—'मैं उन लोगों से सहमत नहीं हूँ जो सोचते हैं कि सरकार जातियों में झगडा फैला रही है और उन्हें उभाड रही है। मैं यह भी नहीं सोचता हूँ कि भारत की सरकार ने कभी किसी जाति का पक्ष लिया है।

'इस बात में मतभेद नहीं हो सकता कि जातीय भेद समस्त हिन्दोस्तान में फैल गए हैं × × × × जनाब, हम जातीय झगडों से भर पाए। स्थिति ऐसी भयानक हो गई है कि हम अपना जीवन आनन्द से नहीं बिता सकते हैं। न हमारे त्योहार ही हमको खुशी लाते हैं × × × क्या समय नहीं आ गया है कि हम सरकार से आगे बढ़ने और मदद करने की प्रार्थना करें, क्योंकि हम अपने आप यह सवाल हल करने में असमर्थ हैं।'

कुछ महीनों पहले इन शब्दों का कहना असम्भव था। लोग इनका प्रतिवाद करते। आज किसी ने भी उनका विरोध नहीं किया। यही नहीं मद्रास के कट्टर हिन्दू और हमारे पुराने मित्र दीवान बहादुर टी० रंगाचार्य्य उठे। पर उन्होंने विदेशी सरकार को दोषी नही ठहराया, वरन यह स्वीकार किया 'सच' सच ही है। हमें मनुष्यों के समान सच को सामने रखना चाहिये। मैं उस हार्दिक भाव का आदर करता हूँ जो मेरे मित्र आनरएबिल मौलवी मोहम्मद याकूब ने प्रकट किया है। वे इस लज्जा जनक स्थिति की वेदना को अनुभव करते हैं × × × और मैं भी उन्हीं के समान अनुभव कर रहा हूँ। मुझे खुशी है और समस्त देश यह जानकर खुश है कि लार्ड इरविन साहब ने इस बात को अपने हाथ में लिया है × × × जिस बात को हम हृदय से चाहते हैं उसको सरकारी और ग़ैर सरकारी सभी लोगों के सहयोग के बिना प्राप्त करना असम्भव है। मैं उन बहुसंख्यक लोगों को चाहता हूँ जो परिस्थिति को बदल देने में दिल से लगना चाहते हैं।

जैसा कि अब सब देखते हैं, असहयोग की नीति ने देश को कोई लाभ न पहुँचाया। "आत्मशक्ति के रहस्यमय युद्ध के प्रचारकों ने घृणा की भाषा का उपयोग किया और प्रेम के सिद्धान्तों का प्रचार करना चाहा स्वाभाविक फल यह हुआ कि लोग मार काट में लग गए। लोग अपने निजी, कुटुम्ब सम्बन्धी तथा जाति सम्बन्धी हितों को छोड़ कर एक न रह सके। और सब इस सच्चाई को समझ गए कि हिन्दू और मुसलमान कोई भी राष्ट्रीयता के भावों में विचार नहीं कर रहे हैं।

इस समय कुछ लोग इस सच्चाई को देख रहे हैं पर क्या वे इस सबको अपनी आँखों के सामने स्थिर रख सकते हैं? थोड़ी देर के लिये भी इस सबक़ से जो लाभ हुआ वह कम नहीं है।

छब्बिसवां परिच्छेद

पावत्रपुरी।

एडविन आरनोल्ड ने बनारस का बहुत ही सुन्दर वर्णन किया है। अन्य सैकड़ों मनुष्यों ने भी बनारस के बारे में लिखा है। यात्रियों ने बनारस के सुन्दर दृश्य के वर्णन में अपने कोष के सारे सुन्दर शब्दों का प्रयोग कर डाला है। वास्तव में नदी के सामने का दृश्य बहुत ही अधिक मनोहर है।

इसमें कुछ भी आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि वास्तव में दृश्य बड़ा ही आकर्षक है। इसका रंग ढंग मनोहर है। संसार के सर्वश्रेष्ठ तथा पवित्र स्थानों में यह एक है। इस का आरम्भ उन्नति के साथ बहुत घनिष्ट मालूम होता है।

बनारस हिन्दू संसार की पवित्र नगरी है। यहां मन्दिरों की संख्या अनन्त है और ये उन सब सीढ़ियों पर राज्य मुकुटों की तरह सुशोभित होते हैं जो पवित्र गंगा जी तक बनी हुई हैं। गङ्गा जी के सम्मान तथा स्वागत के लिए गेंदे के पीले पीले फूल उनपर चढ़ाए जाते हैं। यहां पर जो पूजा या स्नान करने आते हैं, उनमें से कुछ तो साधारण कपड़े ही पहने रहते हैं परन्तु कुछ बहुत ही अधिक चमकीले कपड़े का भी उपयोग करते हैं। इन में से कुछ गंगा जल से भरे हुए घड़े अपने सिर या कंधे पर ले कर ऊपर सीढ़ियों पर चढ़ते हैं। तब ये इस राइल के उस स्वप्न का स्मरण दिलाते हैं जिस में वह लोगों का संगीत सुना करता था। उस स्वप्न

में भी ये सब दाऊद के शहर की दीवारों पर चढ़ते समय गीत गाया करते थे।

मैं म्युनिसिपैलिटी के हेल्थ अफ़सर के साथ बनारस देखने गई थी। यह एक भारतवासी हैं। उन्हों ने अमेरिका में अध्ययन किया है। इन्हें राकफ़ेलर फाउंडेशन स्कालर्शिप मिलती थी। मैं बनारस का विस्तृत वर्णन नहीं करना चाहती। परन्तु कुछ थोड़ी सी बातों का उल्लेख करना आवश्यक है।

बनारस की स्थायी आबादी क़रीब २,००,००० है इस में के लगभग ३०,००० ऐसे ब्राह्मण हैं जिनका सम्बन्ध मंदिरों से है। इस के अतिरिक्त २,००,००० से लेकर ३,००,००० तक यात्री प्रति वर्ष बाहर दर्शन करने आते हैं। ग्रहण तथा और पर्वों पर ४,००,००० मनुष्य भी बनारस में पहुँच जाते हैं और फिर जल्दी ही चले भी जाते हैं।

टीका, बीमारी, महामारी, आदमियों के मरने तथा जीने के हिसाब तथा अन्य सफ़ाई के कामों में म्युनिसिपैलिटी सब मिलाकर क़रीब ३०,०००रु० वार्षिक ख़र्च करती है।

हेल्थ अफ़सर इस बात का ध्यान रखता है कि हैज़े का कोई रोगी शहर में न चला जाय। इसलिए शहर में घुसने के पहले ही वह इन्हें खोजने का प्रयत्न करता है। अगर कोई हैज़ा का रोगी शहर के भीतर पहुँच ही जाता है तो लोग उसकी बीमारी के गुप्त रखने का प्रयत्न करते हैं और जब बीमारी को छिपाना कठिन हो जाता है तब कहीं उसका पता चलता है। इसमें संदेह नहीं कि म्युनिसिपैलिटी बड़े बड़े अफ़सरों को बड़ी बड़ी तनख्वाहें देती है परन्तु इसके कुलियों तथा छोटे नौकरों को बहुत कम वेतन मिलता है। इसीलिए ये लोग उन रोगियों को भी दिक़ करके इनसे भी दाम वसूल

भारत की पवित्र आत्मायें

करने लग जाते हैं।

बनारस एक प्राचीन नगर है। इस के कुछ नाले सोलवीं या सत्रवीं शताब्दी में बने थे। ये कहाँ से निकलते हैं और कहाँ कहाँ होकर जाते हैं, कोई नहीं बतला सकता परन्तु इतना तो सब जानते हैं कि ये गंगा जी में जाकर गिरते हैं। ये पत्थर के बने हैं और कभी कभी तो ये सडकों या मकानों के नीचे भी निकल आते हैं। कभी कभी तो ऐसा भी हुआ कि इन नालों के मुँह मकान की दीवारों से बिना जाने बन्द हो गये हैं। ऐसा भी प्राय देखने में आता है कि घर का नाबदान गंदे पानी को सडक पर एकत्रित कर देता है। कभी कभी ये बन्द हो जाते हैं परन्तु बरसात में ये फूट निकलते हैं और बडे जोरों के साथ बहने लगते हैं।

बनारस का शहर एक लम्बे चौडे धरातल पर बसा है। यह धरातल नदी से लगभग ७० फीट ऊँचा है। नदी के किनारे लगभग तीन मील तक या तो सीढियाँ बनी हैं या पत्थर की दीवारें बनी हुई हैं। कभी कभी इन मकानों या जमीन के अन्दर का पानी ऊपर निकल आता है और इधर उधर घूमता घूमता मंदिरों के पास से निकलने लगता है और अन्त में यह पानी नदी में चला जाता है। कभी कभी यह पानी साधुओं, योगियों, तिलक लगे ब्राह्मणों तथा यात्री स्त्रियों के पास से हो कर बहने लगता और पवित्र पत्थरों के सौंदर्य को बिगाडता है।

सन् १९०० ई० में अगरेज़ सरकार ने नालियों का कुछ कुछ प्रबंध किया था और शहर में नल लगाने का प्रयत्न किया था। परन्तु धार्मिक जनता ने इसका घोर विरोध किया बनारस के दक्षिण में एक तालाब में पानी एकत्रित किया

जाता है तब छाना जाता है और तब शहर भर में भेजा जाता है। स्वयं म्यूनिसिपैलिटी का हेल्थ अफ़सर हर सप्ताह इसकी जांच करता है।

परन्तु बहुत भक्त लोग नल के इस स्वच्छ जल को नहीं पीते। और रोज़ स्वयं गंगाजी से स्नान करने वालों के बीच से घड़ा भर कर लाते हैं और पीते हैं। जब हेल्थ अफ़सर उन्हें ऐसा करने से मना करता है, तब वे उसे घृणा की दृष्टि से देखते हैं। ये उत्तर में कहते हैं—पानी साफ़ करने से गंगाजी की पवित्रता नष्ट हो जाती है परन्तु स्वयं गंगाजी को तो कोई अपवित्र नहीं कर सकता।

इन लोगों का विश्वास है कि जो गंगाजी में स्नान करेगा या उस के जल को पियेगा और पंडों को भी प्रसन्न करेगा उसके सब रोग अवश्य ही दूर हो जायँगे। इस विचार से भी लाखों रोगी बनारस आते हैं। इस के सिवाय जितने लोग बनारस में मरते हैं सीधे स्वर्ग पहुँच जाते हैं। इसलिए सैकड़ों असाध्य रोगी मरने के लिए भी बनारस आते हैं और कोई कोई गंगाजी में पैर रखकर मरने की प्रार्थना करते हैं। इस में संदेह नहीं कि इस संबंध की बहुत बातें सुन्दर हैं और बहुतों से आत्मा की उन्नति हो सकती है परन्तु इससे पबलिक की तन्दुरुस्ती बिगड़ने का बहुत डर है।

ख़ास स्मशान-घाट गंगाजी के किनारे पर तथा शहर के बीच में है। मेरे साथी ने कहा कि, 'संसार की कोई भी शक्ति इसे यहाँ से अलग नहीं कर सकती क्यों कि सब लोग इसी स्थान को इस संबंध में पवित्र समझने लगे हैं। इसलिए मैं केवल यह किया करता हूं कि शव अच्छी तरह से जल जाय।'

परन्तु किसी मुर्दे को अच्छी तरह से जला देने के लिए

बहुत लकडी की अवश्यकता पडती है और प्रत्येक आदमी उतनी लकडी या तो देना नहीं चाहता या दे नहीं सकता। और म्युनिसिपैलिटी भी सबों के लिए लकडी नहीं दे सकती गो कि अब इन सबों के प्रबंध करने वाले भारत वासी ही हैं।

मैंने हेल्थ अफसर से कहा,—'वह देखिए, उन कुत्तों ने उन कोयलों में से मनुष्य के मांस का टुकडा खोज लिया है'।

तब उन्होंने कहा,—'हाँ यह प्राय हुआ करता है। यहाँ पर प्राय ये लोग मुर्दों को अच्छी तरह से नहीं जलाते। रात में यों भी कम जलाते हैं। यदि उसे कुत्ता न पावे तो ये मांस के टुकडे स्नान करने वालों के बीच में से होकर इधर उधर तैरा करें। छोटे छोटे हिन्दुओं के लडके तो जलाए जाते ही नहीं। ये तो गंगाजी में फेंक दिए जाते हैं और इधर उधर तैरते फिरते हैं।'

गंगाजी के किनारे पाखाने नहीं होते। और बहुत आदमी गंगाजी के किनारा पर बालू में ही टट्टी फिर देते हैं। इस प्रकार ये ज्वर या हैजा को फैलाते हैं। इस प्रकार से केवल एक ही मनुष्य दस हजार आदमियों को रोगी बना सकता है। ये लोग नदी के किनारे पेशाब फिरते हैं और पानी छू कर गंगा के जल को भी अपवित्र बना देते हैं। जो लोग भक्त हैं वे उसी जल में स्नान करते हैं उसी को पीते हैं और अपने कपडों को उन्हीं किनारों पर सुखाते हैं।

इस प्रकार ये लोग भारत के हरएक हिस्से से यहाँ आते हैं और घडाभर कर पानी ले जाते हैं। परन्तु इसके साथ ही-साथ ये रोग के कीडों को भी अपने साथ ले जाते हैं और देश में फैलाते हैं।

इस सम्बन्ध में आकर्षक और सुन्दर मन्दिर भी काम

रहती हैं। इतना ही नहीं मक्खियाँ कुत्ते, गन्दे हाथ, गाय बैल तथा भेड़ और बकरियां इन्हें भी अधिक गन्दा बना देती हैं। इन्हीं के बीच में बीमार तथा धूल धूसरित लड़के इधर से उधर लुढ़का करते हैं और धुआं भी अपना काम करता ही रहता है।

आप को सदा यह भी ध्यान रखना चाहिए कि कहीं घर की दीवारों से टकरा न जाए क्योंकि कोटे घर के पैखाने तथा गन्दा पानी ऐसे नलों से बहा करते हैं जो प्रायः चूते रहते हैं। ये दीवारों में होकर भी बहते रहते हैं परन्तु कभी कभी बाहर भी निकल आते हैं।

मिस्टर गांधी पहले इङ्गलैंड में रहे थे और उनके विचारों और दृष्टि कोणों में इंगलैंड का बहुत ही अधिक प्रभाव पड़ा है। कदाचित् उससे भी अधिक प्रभाव पड़ा है जितना वह जानते हैं। मिस्टर गान्धी ने भी इस विषय में कई बार लिखा है।

उदाहरण के लिए २६ अक्तूबर सन् १९२५ ई० के यङ्ग इण्डिया में मिस्टर गान्धी ने लिखा है:—'कोई कोई भारत की जातीय बुराइयाँ इतनी भद्दी हैं कि उनका वर्णन नहीं हो सकता। तथापि इनकी जड़ इतनी गहरी है कि इनका सुधार किसी मनुष्य के लिये अत्यन्त कठिन है। जहाँ कहीं मैं जाता हूं यह गन्दापन और भी अधिक स्पष्ट तथा प्रकट हो जाता है किसी-न-किसी रूप में ये बुराइयाँ अवश्य ही ध्यान आकर्षित करती हैं। पंजाब और सिंध में तो स्वास्थ्य के साधारण नियमों की भी अवहेलना की जाती है। वहाँ पर घर तथा छतों को भी लोग गंदा कर देते हैं। इन सब कारणों से रोग के असंख्य कीड़े उत्पन्न हो जाते हैं और मक्खियों का एक देश ही बस जाता है। दक्षिण में तो लोग अपनी गलियों को भी गन्दा कर देते हैं।

उस मनुष्य के लिये जिसमें कुछ भी सभ्यता का प्रभाव पडा है प्रातःकाल गलियों से जाना कठिन हो जाता है क्योंकि बहुत लोग तो गलियों में दोनो ओर बैठ कर पैखाना फिरने लगते हैं। पैखाना तो ऐसे स्थानों में तथा एकान्त में फिरना चाहिए जहा प्राय मनुष्य न आते-जाते हों। बंगाल में भी प्राय यही बात पाई जाती है। एक ही तालाब में वे गदा कपडा कचारते हैं, बर्तन धोते हैं, जानवरों को पानी पिलाते हैं और स्वयं भी पीते हैं। इसपर यह कि ये लोग जाहिल यथा वे पढे नहीं है। इन में बहुत तो भारत के बाहर भी हो आए हैं। म्युनिसिपेलेटियों को इन प्रश्नों को हल करना चाहिए। यदि म्युनिसिपिलटी अपनी सारी शक्तियों का उपयोग करे तो इन सब बातों का सुधार कर सकती हैं। यदि उन्हें पर्याप्त शक्ति न हो तो वे अधिक शक्तिया भी प्राप्त कर सकती हैं केवल इच्छा की आवश्यकता है। मिस्टर गाधी ने और कहा है— इस में सरकार भी दोषी है। परन्तु हमारी सब गर्दगी का उत्तरदायित्व सरकारी कर्मचारियों के ऊपर नहीं है। यदि हम लोग सरकारी कर्मचारियो को इस के विषय में पूरी स्वतत्रता दे दें तो वे तलवार के जोर से हमारी आदतें छुडा दें।

इस सबध में मिस्टर गाधी का कौ कथन सर्वथा सच है। मैंने भी छोटे बडे सभी शहरों की म्युनिसिपेलटियो में यही हालत देखी है। उदाहरण के लिये हम मद्रास ले सकते हैं। यह भारतवर्ष का, आबादी के विचारसे तीसरा शहर है। इस शहर में पानी का ठीक ठीक प्रबध सन् १६१४ ई० में हुआ था।

मद्रास के आस पास के पहाडों में कई गाँव हैं। शहर में भेजने के लिये जो पानी जमा होता है वह बडा गदा होता है इस लिये जहा से पानी आता है वहा पर एक दिन में एक

करोड़ गैलन पानी छान कर साफ़ किया जाता है।

परन्तु मद्रास की आबादी इधर बहुत बढ़ गई है और यहाँपर जितने पानी से अच्छी तरह काम चल सकता है उतना पानी नही मिलता। किन्तु ४०,००,००० गैलन पानी कम हो जाता है। अभी पानी के लिए प्रबंध होने वाला है। कई अंगरेज़ों ने इस के संबंध में विचार भी प्रकट किये हैं और अब इसका उचित प्रबंध भी शायद हो जाय। परन्तु यहाँ के काम करने वाले म्युनिसिपल मेम्बर सब हिन्दोस्तानी हैं। इन लोगों ने एक सहल उपाय निकाल लिया है। ये लोग पहले १०,०,००,००० गैलन पानी को छानते हैं और तब उस में ४०,००,००० गैलन बिना छाना हुआ पानी मिला देते हैं और शहर में इस मिले हुए पानी को भेज देते हैं।

इन सब बातों से नतीजा निकालते समय हमें यह नहीं भूल जाना चाहिए कि जीवन के स्वभाव तथा किसी जाति के स्वभावों तथा विचारों के बढ़ने में उस से अधिक समय लगता है जितना अंगरेजी सीखने में। इसमें संदेह नहीं कि उस मनुष्य के गाँव के लोग भी जो भली भाँति अंगरेज़ी बोल भी सकते हैं। एक कुआ के खोदने में उन्हीं सब उपायों से काम लेते हैं जो उनके पुरखा हज़ारों वर्ष पहले किया करते थे। ये लोग कुए के स्थान को ढालू आदिक के विचार से नही चुनते। ये पहले एक बकरे पर एक डोल पानी छिड़क देते हैं। तब बकरा भागता है और आदमी उसके दौड़ते हैं। जहाँ पर बकरा पहले खड़ा होता है और गर्दन झाड़ता है, वहीं पर कुआँ खोदा जाता है, चाहे बकरा ख़ास गली के बीच ही में क्यों न खड़ा हो।

सत्ताइसवां परिच्छेद

संसार का भीषण भय

ब्रिटिश भारत में पांच लाख गांव मिट्टी के बने हुए हैं प्राय गाँवों के अधिक लोग एक ही स्थान से मिट्टी लेते, मैं और एक बडा भारी गडढा खोदते हैं और उसी गडढे ऊपर घर बनाते हैं।

जब पहले पानी बरसता है तब ये गडढे भर जाते हैं और एक तालाब का रूप धारण करते हैं। अब सब लोग उसी में नहाते हैं, कपडा छाटते हैं, बर्तन धोते हैं, जानवरों को भी उसी म धोते हैं, भोजन का पानी लेते हैं, पाखाना भी उसी के पास जाते हैं उसी को पीते भी हैं। उसका पानी बहता तो है ही नहीं। इस लिए उनमे मच्छर उत्पन्न हो जाते हैं और ज्यों ज्यों बर्सात के बाद उसका पानी भाफ बनकर उडता जाता है त्यों त्यो उसका पानी मोटा होना चला जाता है। कभी कभी तो यह बहुत ही सुन्दर दिखलाई देता हैं जब उसमें कुमुदनी की तरह चीजें दिखलाई पडती हैं। यह तालाब गाव में रोग के कीडे को फैलाता है इन मच्छरों से मलेरिया उत्पन्न होता है।

बगाल म माताए अपने बच्चों को भनभनाते हुए मच्छरों के बीच तालाब के किनारे में सुला देती हैं। ये माताए अपने बच्चों को क्यों जीते जी ही इन मच्छडों का शिकार होने देती हैं। इस लिये कि इन्हें बचाने से ईश्वर कुपित हो जायगा और इनका भला न करेगा।

सब से श्रेष्ठ तथा सुन्दरकाम जो कोई धनवान मनुष्य कर सकता है वह यह है कि वह अपने गाँव में एक नया तालाब खुदवा दे। सरकारी अफ़सर तो प्रायः इन तालावों के भर दिए जाने काही स्वप्न देखा करते हैं।

भारत में यह नहीं कहा जा सकता कि मलेरिया से कितने आदमी मरते हैं क्योंकि इस का हिसाब गाँव का चौकीदार ही रखता है और वह बहुत ही अधिक जाहिल होता है। साँप, प्लेग, हैज़ा या लाठी से जो लोग मरते है उन के अतिरिक्त और सब को उसे वह ज्वर से मरा हुआ लिखादेता है। परन्तु इस में तो लेश मात्र भी संदेह नहीं कि मलेरिया से भारत में हर साल कम से कम दश लाख आदमी मरजाते हैं।

मलेरिया की उत्पत्ति केवल तालावोंसे ही नहीं होती। उदाहरण के लिए बम्बई शहर के सामने का। पानी है। इस से संसार भरके मल्लाहों को भय रहता है। रेलवे में भी बहुत से ऐसे बाँध हैं जिन में से पानी निकलने का कोई अच्छा प्रबन्ध नहीं रहता। इनके लिए भी प्रबंध होना चाहिए। पंजाब तथा संयुक्त प्रांत में भी ऐसी बहुत सी जगहे हैं जैसे हिमालय की तराई जहां पानी रुकता है। अब इन में कृषि के लिए नहर बनने वाली है।

मलेरिया बहुत बड़ी ख़तरनाक और एक ऐसा भारत के लिए श्राप है जिस के लिये रुपया भी खर्च होता है। इससे केवल मनुष्यों को मृत्यु ही नहो होती बल्कि अनेकों की सामाजिक और शारीरिक दशा भी बिगड़ी जाती हैं। मलेरिया से और भी कई बीमारियाँ पैदा हो जाती हैं।

सरकार इस मलेरिया के मूलोच्छेद का प्रयत्न करती है

परन्तु इस में अधिकतर कर्मचारी हिन्दुस्तानी हैं। अतएव इस काम में उतनी उन्नति नहीं हुई है जितनी वास्तव में होनी चाहिए थी। तथापि इस सम्बन्ध में काम हो रहा है।

यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि अब भारत में भी कुछ लोग मलेरिया के मूलोच्छेद का प्रयत्न कर रहे हैं। इन में सब से प्रधान बगाल की एन्टी मलेरिया सभा है। यह भारतीय सस्था है और यह सभा लोगो की मलेरिया से रक्षा करने का प्रयत्न करती है। यह सभा गाव वालो को स्वास्थ्य रक्षा का उपाय बतलाती है। इस सभा के कर्ता-धर्ता रायबहादुर डाक्टर जी० सी० चट्टरजी, डाक्टर ए० एन्० मित्रा, और बाबू के एन० वैनर्जी हैं।

इस सभा का एक केन्द्र निम्रा है। ये लोग केवल मलेरिया के मूलच्छेद का ही उपाय नही करते किन्तु ये धन भी एकत्रित करते हैं और गाव वालो के पास अच्छे अच्छे डाक्टरो को भी दवाई करने के लिए भेजते हैं।

गावो में तालाबो के अतिरिक्त कुओ का होना भी आवश्यक है। कुएँ की साधारण गहराई की औसत २० से ४० फीट तक है। कुएँ इट के बनते हैं और उनके मध्यभाग में ऊपर जगत पर एक लकडी रख दी जाती है। उसी जगत पर बैठ कर गाव वाले अपने कपडे साफ करते हैं नहाते हैं, दाँत माँजते हैं, और मुँह धोते हैं। इस प्रकार इन का यह गदा पानी कभी कभी कुएँ म भी पड जाता है।

प्रत्येक आदमी कुए म से पानी खींचने के लिए अपना ही बर्तन लाता है। इन बर्तनो में से अधिक ही गदे और कुछ जहरीले भी होते हैं जैसा कि डाक्टर लोग कहते हैं। इन्हीं बर्तनो में ये लोग अपने कुटुम्ब के पीने के लिए पानी ले जाते हैं।

कोई भी आदमी एकही महीने में न्यूयार्क या सेनफ्रांसिसको पहुँच सकता है अतएव भारत से अमरीका में हैज़ा का जाना संभव है।

एक बार एक अमरीका के हेल्थ अफसर ने जो अब अन्तर्राष्ट्रीय-नौकरी में है कहा था कि जब भारत की वास्तविक दशा सब लोगों को मालूम हो जायगी तब ये लोग अन्तर्जातीय- परिषद् से कहेंगे,--'कृपया हमारी भारत की रक्षा कीजिए।'

बंगाल, का क्षेत्र फल जिसमें हैज़ा अधिक पाया जाता है ने ब्रासका के बराबर है। इसमें गांवो की आबादी ४,३५,-००,००० है और इसके गांवों की संख्या ८४,६८१ है। सन् १६-२१ ई० में ११५,६७ गांवो में हैज़े की बीमारी फैली हुई थी जिनमें ८०,५४७ आदमी मर गये। वास्तव में हैज़े की बीमारी २६ ज़िलों में फैली हुई थी।

उस साल ४,३५,००,००० मनुष्यों को टीका लगाने की बात सोचिये कि कितना कठिन काम है? इस पर भी हमें यह नहीं भूलना चाहिये कि हैज़े के टीका का असर केवल ६० दिन तक रहता है अधिक नहीं। ऐसी दशा में इतने गांवों में तमाम कुओं के अन्दर हैज़े के कीड़ों के मारने का काम कितना कठिन होगा और विशेष कर ऐसी दशा में जब हम सब गांवो को ऐसा करने के लिए मजबूर नही कर सकते किन्तु प्रार्थना ही कर सकते हैं। कभी तो गांव वाले केवल भाग्य भरासे ही बैठना पसद करते हैं और कभी कभी इन सब बातों का घोर विरोध कर बैठते हैं।

सन् १६२४-२५ के जाड़े में हैज़े के चिन्ह काश्मीर में दिखलाई देने लगे। भारत सरकार ने काश्मीर वालो का इस

सबध में चेतावनी दी । परन्तु काश्मीर वालों ने कहा—अभी तो हैजे का केवल प्रारम्भ है । अभी से इस सबध में प्रयत्न करने से क्या लाभ है ? नतीजा यह हुआ कि अप्रैल में बडी सखत हैजे की बीमारी आई और एक महीने के अन्दर तमाम रियासत के दो प्रति सैकडा आदमी मर गये । पजाब के किनारे के सब हेल्थ अफ़सर हिन्दोस्तानी थे । उनमें से केवल एकही अगरेज़ था । इस का फल यह हुआ कि काश्मीर तथा पजाब के कृषकों की बहुत अधिक मृत्यु हो गई । पिछले तीस वर्ष के अदर इस तरह की महामारी न हुई थी ।

मेले त्योहारों और तीर्थ, स्थानों में प्राय ,हैजा फैल जाता हैं । गत १२ वर्षों से सरकार इसका प्रबध करने लगी है और तब से इन स्थानों पर हेजे की बीमारी कम हो गई है । सरकार थोड़े दिनों के लिए टट्टिया खडी कर देती है पानी के लिये नल लगवा देती है, कुओं में दवाईया डाल देती है और रक्षकों तथा डाक्टरों को नियुक्त कर देती है । भविष्य के लिए काश्मीर की उक्त घटना स्मरण रखना चाहिए ।

हुक वर्म (Hook Wo m) नाम एक पेट का कीडा होता है । जिसके पेट में होता है । उसके जीवन और शरीर को नष्ट कर डालता है । यह मनुष्य को अपने या दूसरे के लिये बेकाम कर देता है । यह प्राय उन्हीं लोगों पर हमला करता है जो पैदल चलते हैं । इससे बचने के लिए उचित टट्टियों का प्रयोग करना और जूता पहना आवश्यक है ।

जैसा कि मिस्टर गाधी ने कहा है 'हिन्दू लोग पैखाने का उपयोग नहीं करते और बेमी पेसी जगह पाखाना कर देते हैं जिनसे उन्हें बडी हानि पहुँचती है' । मने ना यह भी देखा है कि किसी किसी शहर में हेल्थ अफसर ने बहुत अच्छा पैखाना

बनादिया है परन्तु लोग इन पैख़ानों का उपयोग नहीं करते। और पहले ही की तरह सड़क, कुंज, नालियां और स्वयं अपने सहनों का ही उपयोग करते रहते हैं।

इसका एक कारण यह भी था कि उस शहरों में काफ़ी मेहतर नहीं मिलते और मेहतर के सिवाय यह काम दूसरा नहीं कर सकता। इसके अतिरिक्त हिन्दुओं के धर्म के अनुकूल भी यह नही है। इसमें तो लेशमात्र भी संदेह नहीं कि गांव वाले तो अवश्य अपने गांव के चारों ओर के पासही के खेतों में ही टट्टी कर देते हैं और उन्हीं खेतों में ये बराबर घूमते-फिरते रहते हैं।

एक बार मद्रास के हिन्दोस्तानी हेल्थ अफ़सर डाक्टर आदिशेषनने कहा था,—'जब यहाँ के लोग पैख़ानों का उपयोग न करें और जूतों को भी न पहने (विशेष कर सनातनी हिन्दू और हिन्दू-स्त्रियाँ तो जूता पहनती ही नहीं) तो हूकवर्म कैसे बंद किए जा सकते है?'

यद्यपि इस रोग का इलाज़ पक्का, सरल और सस्ता है तथापि जो लोग घर पहुँचते अपनी वे परवाही से फिर रोग मोल ले लेंगे उनके इलाज़ पर जनता का धन ख़र्च करना अनुचित है।

यह अंदाज़ किया जाता है कि बंगाल के आदमी ६० फ़ी सदी और मद्रास के ८० फ़ी सदी इस रोग के शिकार होते हैं। इस संबध में डाक्टर एंड्रू ने लिखा है:—'भारत में कम से कम ४,५ ०,००,००० मज़दूर इस रोग से ग्रसित हैं। सन् १,६१५ ई० में हिसाब लगाया गया तो पता चला कि बंगाल के कृषक की औसत आमदनी दस रुपया मासिक है। अब मान लो कि ४,५०,००,००० रोगियों की सालाना

औसत आमदनी प्रति मनुष्य से रुपय हैं ता ये सब मिल कर ४,५०,००,०,०००० रु० वर्ष मे पैदा करेंगे। दारजिलिङ्ग के चाय के मैनेजर ने हिसाब लगाकर सिद्ध किया है कि कुलियों का इलाज करने से इनकी योग्यता २५ से ५० फी सदी तक बढ जाती है। मान लो कि भारत में केवल १० फी सदी अधिक योग्यता प्राप्त हो। तो भी ४,५०,००,००० रु० ४,६५,००,००,००० रु० हो जायगा।

सब से पहले भारत में प्लेग का आगमन सन् १८९६ ई० में चीन से हुआ। आज भारतवर्ष एक प्रकार से इस रोग का अड्डा है। सन् १८९६ से अब तक भारत में केवल प्लेग से १,१ ०,००,००० आदमी मर गये हैं। प्लेग में ७० फी सदी लोग मर जाते हैं जब प्लेग के साथ न्यूमोनिया हो जाती है तब तो रोगी का बचना असम्भव सा हो जाता है।

यदि प्लेग के रोकने का विशेष प्रयत्न न किया जाय तो यह अन्तर्राष्ट्रीय खतरे का रूप धारण कर लेती है। अन्तर्राष्ट्रीय हेल्थ अफसर लोग इस बात से अब भली भाँति परिचित हो गये है क्योंकि प्लेग अब उन स्थानों में भी हमला कर रहा है जहा पहले कभी नहीं सुनाई पडता था।

हैजे में तो एक आदमी से रोग दूसरे आदमी के यहा पहुँच जाता है। परन्तु प्लेग में ऐसा नहीं होता। प्लेग में तो बीमार-चूहों की सहायता से तथा बीमार—चूहों के द्वारा ही रोग फैलता है। कभी कभी पिस्सू भी इस रोग को फैलाते हैं। जब पिस्सू आदमी को काटता है तब वह एक प्रकार की जहरीली वस्तु मनुष्य के शरीर पर छोड देता है और तब वह आदमी नोच खसोट कर उस जहर को अपने शरीर के भीतर घुसेड देता है। बस! वह स्वयं अपने सत्यानाश का बीज बो

लेता है। जब किसी गांव में प्लेग आने का संदेह हो तो फ़ौरन उस गाँव को छोड़ देना चाहिए और शीघ्रही प्लेग का टीका लगवा लेना चाहिए।

यदि किसी देश के सब चूहे मार डाले जांय तो प्लेग की बीमारी दूर हो सकती है परन्तु भारत हिन्दुओं का देश है और धर्म के अनुसार यहाँ ऐसा नहीं हो सकता।

सब से बड़ा रोड़ा हेल्थ अफ़सरों के मार्ग में जनता ही अटकाती है। ये लोग भाग्य के भरोसे बैठे रहना अच्छा समझते हैं और स्वास्थ्य के बारे में कुछ भी ध्यान नहीं देते। कभी कभी कुछ ऐसे राजनैतिक लोग भी पाए जाते हैं जो गांवों में घूम घूम कर यही कहा करते हैं कि सब बुराइयों की जड़ सरकार ही है। कभी कभी तो इस का बहुत ही बुरा प्रभाव जनता पर पड़ता है यहाँ तक कि कभी कभी लोगों ने इनके भड़कावे में आकर सरकारी देशी डाक्टरों तक को मार डाला है।

अनेक उदाहरणों के देखने से कहीं कहीं लोग सरकार की आज्ञाओं के पालन करने का महत्व अब समझने लगे हैं। अब प्रायः यह देखा जाता है कि ज्योंही प्लेग आया, गाँव के लोग स्वयं बाहर निकल जाते हैं और चूहे मर जाते हैं। कुछ लोग तो अब टीका भी लगवाने लग गये है।

परन्तु ये लोग इतने अज्ञानी होते हैं कि कोई भी आन्दोलन-कर्ता इन्हें इस अच्छे मार्ग से सुगमता से विचलित कर सकता है यहाँ तक कि वे हत्यायें तक कर डालते हैं।

एक बार जब एक अंगरेज़ी लेडी डाक्टर ज़िले की सब से प्रतिष्ठित हिन्दोस्तानी औरत की दवाई करने गई तो उस हिन्दोस्तानी औरत ने कहाः—मैं अपनी जीभ तुम्हें क्यों दिख-

लाऊ जब दर्द उस से बहुत नीचे हैं। सभव है मुँह खोलने पर भूत उसमें चला जाय।'

एक बार यह भी देखा गया है कि जिले के मुख्य ज़मींदार ने अपने दस दिन के बच्चे के सामने जिसे दौरा पड रहा था, एक बन्दर बाधकर उस बन्दर को यातनाएं दीं इस लिये ताकि उसके बेटे के अन्दर का भूत डर कर भाग जाय।

ऐसी दशा में साधारण ग्राम वासियों को समझाना कठिन है।

मैं एक बार १९२६ के जाडे में एक पबलिक हेल्थ अफसर के साथ प्लेग पीडित गाव देखने गई थी। यह बनियों का गाँव था। ये बनिए आसपास के कृषकों के अन्न को खरीदते और बेचते थे। मैने देखा कि मटकों और कोठियों में अन्न भरा हुआ था और चूहे उनके चारो ओर डड पेल रहे थे। कुछ चूहे अब मरने भी लगे थे और दो आदमी भी मर गये थे। तब जिले के कमिश्नर ने उन्हें बाहर निकल जाने का हुकुम द दिया था।

अब ये सब-के-सब बाहर निकल गये और गाँव से कुछ सौ गज की दूरी पर फूस के झोपडा म ठहर गये और वहाँ पर ये बसंत और आफत के अन्त की प्रतीक्षा करने लगे। जब एक अंगरेज डाक्टर वहाँ आया, तब स्त्री पुरुष और लडके सब-के-सब उसके पास शिक्षा तथा राय लेने के लिए उसके चारो ओर एकत्रित हो गये

उन्होंने कहा—'साहब ! अगर हम लोग यहां पर भोजन बनाने के लिये चूल्हा बनाए, तब यदि हवा यहाँ आने तो चिनगारी उडकर झोपडों को भस्म कर देगी। तब हम लोग भोजन कैसे बनाए, कृपया इस का प्रबध कर दीजिए।'

साहब—'मिट्टी की उस मेंड़ के पीछे चूल्हा बनाओ।'
एक—'हाँ, साहब ने ठीक कहा।'
दूसरे—'साहब! अगर हम लोग इन घरों के बाहर बैठें और चोर घुस कर सब धन चुरा ले जाय तो हम लोग क्या करेंगे?
साहब—'अच्छा हो कि चोर वहाँ जाय और प्लेग से मरें। तुम लोगों को प्लेग से नहीं मरना चाहिए। दूर पर कोई चौकीदार रखलो।'
एक—'साहब चतुर है, ठीक कहता है।'
दूसरा—'साहब! उस खेमे में एक अपरिचित आदमी आया है जो हम लोगों के शरीर के भीतर दवाई डालना चाहता है। क्या वह दवाई अच्छी है? क्या हम लोग उसकी बात मान लें? दवाई का दाम क्या है?'
साहब—'उसे सरकार ने भेजा है। जीने के लिए दवाई आवश्यक है। इस का दाम कुछ भी नहीं है।'

इसके बाद सब लोग चुप हो गये। अन्त में गाँव के मुखिया ने कहा—'अच्छा हुआ साहब आ गये।'

तब उन्होंने मुझसे कहा—'मालूम होता है कि टीका लगाने के लिए वह इन लोगों से दाम माँगता रहा है। ये तो ऐसा किया ही करते हैं और जब ये रुपए नहीं देते तो वे कहने लगते हैं कि लोग टीका नहीं लगवाते। पुलिस और सोल्जरों के सिवाय हम लोग टीका के लिए किसी को विवश नहीं कर सकते। यह एक ख़तरनाक काम है।'

जो लोग प्लेग में टीका लगाने के लिये भेजे जाते हैं वे थोड़ी सर्जरी, कुओं में दवा डालना, प्लेग का टीका लगाना, साधारण रोगों की दवाई देना, मैजिक लालटैन के द्वारा व्याख्यान देना आदि काम जानते हैं।

वह आदमी एक महीने से उस खेमे में पड़ा था और अब उसने साहब से कहा—मैं प्रतिदिन इन लोगों को टीका लगाने के लिये बुलाता हूँ परन्तु ये नहीं आते। ये कहते हैं—"आप प्लेग के डाक्टर हैं। जब आप आगये हैं तब प्लेग जरूर आवेगा।" यही कह कर ये लोग मुझ पर हँस देते हैं। ये जाहिल और अनपढ़ हैं।'

इन लोगों के पास दवाई के बक्स टीका की सूई और दूसरे दूसरे औजार भी रहते हैं। अन्त में डाक्टर-साहब ने कहा—'अपने औजारों को मुझे देखने दो।' तब उसने कहा 'वे तो सब के-सब व्यर्थ हैं और टूट गये हैं। कुछ में तो मोर्चा लग गया है।'

तब डाक्टर ने कहा—'जब ये टूट गये तभी तुमने इन्हें मेरे पास क्यों नहीं भेज दिया। मैं उसी दम नया भेज देता। इस तरह से तो तुम टीका का काम बिल्कुल नहीं कर सकते।'

उसने कहा—'हाँ मैं भेजना चाहता था पर, मैं भेजना भूल गया।'

अट्ठाईसवां परिच्छेद

हमारे परिचित कठ वैद्य

ब्राह्मणों की एक कहावत है,—चलने से बैठना, बैठने से लेटना और जागने से सोना अच्छा है और मृत्यु सब से अच्छी है।

गत परिच्छेद के विषय में यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि किसी भारतवासी पर उसके देशकी विचित्र स्वास्थ्य संबंधी आदतों का क्या प्रभाव पड़ता है। इस प्रश्न का उत्तर मैं एक अमेरिका निवासी के शब्दों में देना अच्छा समझता हूँ। यह अमेरिका निवासी आज कल भारत में ही रहता है।

वह कहता है:—चूंकि भारतवासी बहुत समय से गन्दी नालियों का मिला हुआ पानी पीते आए हैं इसलिये अभ्यास हो जाने के कारण इस गन्दगी का उनके स्वास्थ्य पर अब अधिक बुरा असर नहीं पड़ता। किन्तु उनकी सब अंतड़ियों में अनेक प्रकार के रोग के कीड़े पाए जाते हैं जो उन के शरीर को नष्ट कर डालते हैं। और जब कभी इनल्फूएंज़ा या न्यूमोनिया का प्रकोप होता है, तब इस का प्रभाव और भी अधिक भयानक होता है। तब ये लोग मक्खियों की तरह मरते हैं और किसी प्रकार से बच नहीं सकते।'

बाल विवाह, विषय भोग में लापरवाही, मैथुन सम्बन्धी रोग ये सब हिन्दोस्तानियों की शारीरिक तथा मानसिक शक्तियों को नष्ट कर देते हैं और उन्हें भाँति भाँति के कष्टों को भोगना पड़ता हैं। उनकी यह दशा देखकर सहसा यह प्रश्न

उत्पन्न होता है कि जो लोग इस प्रकार से रहते हें और जिन का इस प्रकार पालन होता है वे आज तक कैसे जिन्दा हैं।

इस का उत्तर यूरोपीय अन्तर्राष्ट्रीय पवलिक हेल्थ के एक अत्यन्त योग्य कर्मचारी ने यों दिया है —नई परिस्थितियों के अनुकूल अपने को गिरा लेने के कारण ही तथा वर्तमान नीची श्रेणी की दशा में हो भारतीय लोग जिन्दा रह सके हैं। अंगरेज लोग ही इस भारी तथा ससार भरमें भय उपजाने वाली जाति को जिन्दा रखने के दोषी हैं। अगर अंगरेजों ने इन की रक्षा न की होती तो उत्तर की जानदार जातियों ने इन का नाम और निशान तक मिटा दिया होता।

उत्तर के सिख, पठान और अन्य मुसलमानों का भोजन इन हिन्दुओं से अच्छा होता है। ये उत्तर के लोग प्राय बाहर काम करते हैं और सब अन्न मांस तथा दूध खूब खाते हैं, इसीलिये अधिक जानदार होते हैं। दक्षिणी भारत के लोगों के भोजन में श्लिष्ट चीजें बहुत कम होती हैं। ये लोग मिठाई अधिक खाते हैं और प्राय बैठे रहते हैं। दक्षिण के अधिक नेता प्राय जीवन के प्रारम्भ में ही बहुमूत्र के शिकार हो जाते हैं, और उसी से उन की अकाल मृत्यु होती है।

लेफ्टिनेन्ट करनल क्रिस्टोफर (आई० एम्० एस्०) ने भारत के विषय में एक लेख में लिखा है —'भारत की सालाना मृत्यु सख्या ७०,००,००० है और यह लंडन की आबादी के बराबर है। इसमें कुछ भी सदेह नहीं कि सब लोग अवश्य ही मरेंगे परन्तु प्रत्येक मनुष्य को उचित जीवन के बाद ही मरना चाहिए। भारत में पहले साल के लडके की अवस्था की औसत २३ वर्ष और पांच साल के लड़कों की अवस्था

की औसत ३५ वर्ष होती है। उस से ज़्यादह उमर तक जीने की एक औसत भारतवासी आशा नहीं कर सकता।'

करनल क्रिस्टोफ़र कहते हैं कि लगातार बीमारी, उत्पादन शक्ति की कमी, शासन का अधिक ख़र्च, तिजारत की कठिनाइयों और टैक्स आदि सब के सब भारत की भलाई के मार्ग के रोड़े हो रहे हैं। इन सब बातों का बोझ भारत के नैतिक और आर्थिक जीवन पर इतना अधिक पड़ता है कि प्रजा खुशहाल होने नहीं पाती और पनपने नहीं पाती।

इसमें संदेह नहीं कि भारत की आवश्यकता बहुत है और इस के लिए साधनों की कमी है।

सन् १९२५-२६ की बजट के कुछ मद इस प्रकार हैं:—

	शिक्षा	पबलिक-स्वास्थ्य
बम्बई प्रान्त	१४,५०,००० पौंड	२,००,९४० पौंड
मद्रास प्रान्त	१२,९४,००० पौंड	२,१६,७०० पौंड
संयुक्त प्रान्त	११,९०,२०० पौंड	१,०२,८५० पौंड
बङ्गाल	६,००,४०० पौंड	१,८३,३५० पौंड

उन्नति के मार्ग तो खुले हैं परन्तु कोई भी उन पर चलता नहीं। सन् १९२३-२४ की एक सरकारी रिपोर्ट में लिखा है:—
'हिन्दोस्तान में कुछ लोगों की दशा अच्छी है और कुछ लोगों की दशा बुरी है। जिन शिक्षित लोगों की दशा अच्छी है उन्हें चाहिए कि वे तन, मन और धन से अपने अभागे भाइयों की सेवा करने का प्रयत्न करें। जब तक भारत अपने नाशकर सामाजिक तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी नियमों को नहीं बदलेगा तब तक वहाँ मृत्यु-संख्या और महामारियाँ कम नहीं हो सकतीं।

परन्तु भारत में परोपकार करने की इच्छा आज नहीं पाई

जाती। मिस्टर गान्धी ने अपनी पुस्तक इण्डियन होमरूल में इस सम्बन्ध में स्पष्ट रूप से कहा है —'हम लोगों को सोचना चाहिए कि हम लोग क्यों डाक्टर या वैद्य बनते हैं। सेवा के विचार से तो हम लोग ऐसा करते ही नहीं। हम लोग इज्जत और धन के विचार से ही डाक्टर बनते हैं।'

इस के बाद मिस्टर गाँधी कहते हैं —यूरोपियन डाक्टर तो और भी बुरे हैं।'

मिस्टर गाँधी फिर कहते हैं —'ये यूरोपियन डाक्टर हम लोगों के धर्मों को भी एक प्रकार से भ्रष्ट कर देते हैं। इनकी अधिकांश दवाइयों में मांस या शराब अवश्य ही रहती है और ये दोनों चीजें हिन्दू और मुसलमान दोनों के लिये मना हैं। जब मैं अधिक खा लेता हूँ तो भोजन नहीं पचता तब मैं एक डाक्टर के पास जाता हूँ और वह मुझे औषधि देता है। मैं अच्छा हो जाता हूँ फिर खूब खाता हूँ। फिर दवा की गोलियाँ खानी पड़ती हैं। मैं ने पहली बार ही जो औषधियों का सेवन न किया होता तो मुझे अधिक खाने का दंड मिल गया होता और फिर मैं कभी अधिक नहीं खाता निस्सन्देह जो आदमी अधिक दवाइयों का सेवन करता है वह अपने दिमाग को अपने वश में नहीं रख सकता। ऐसी दशा में हम लोग देश की सेवा नहीं कर सकते और यूरोपीय डाक्टरी का अध्ययन करना अपने देश को गुलामी के बन्धनों में अधिक जकड़ना है।'

मिस्टर गांधी के विचारों के सम्बन्ध में चाहे जो माना जाय, परन्तु उनकी सच्चाई के विषय में किसी को सन्देह ही नहीं हो सकता।

जब इन डाक्टरों के बारे में मिस्टर गांधी के ये विचार हैं

तब यह जान कर कुछ भी आश्चर्य नहीं हो सकता कि अपने असहयोग आन्दोलन के समय उन्होंने लड़कों को अपने मेडिकल स्कूलों तथा कालेजों तक को छोड़ देने के लिए कह दिया था। मिस्टर गाँधी ने सरकारी पढ़ाई तथा अन्य सब बातों के विरुद्ध आन्दोलन किया था।

कुछ दिनों के लिए इन लोगों ने लड़कों के खेलों की तरह काम किया परन्तु उस से भारत को कितनी हानि हुई!

आजकल की भारतीय जातीयता का एक दूसरा पक्ष आयुर्वेदिक इलाज के लिये पक्षपात है। वैद्यों का इलाज बङ्गाल, मध्यभारत और दक्षिण में बहुत किया जाता है।

इन लोगों का विचार है कि अति प्राचीन काल में देवताओं के द्वारा ये सब औषधियाँ प्राप्त हुईं। इन औषधियों के साथ ये लोग आध्यात्मिक तथा ईश्वरीय सम्बन्ध भी जोड़ते हैं। सुश्रुत उन दो प्रसिद्ध ग्रन्थों में से एक है जिनपर वैद्यक के सिद्धान्त अवलम्बित हैं।

सुश्रुत में एक स्थान पर लिखा है:—'रोगी के अच्छा होने या न होने का पता कई तरह से लगाया जा सकता है। जो आदमी वैद्य को बुलाने आता है, उसके शरीर, वस्त्र और चाल से भी इस बात का पता चल सकता है अथवा उसके पहुँचने के समय के नक्षत्रों से भी बहुत कुछ पता चल सकता है। हवा की दशा से, सड़क पर देखे हुए मनुष्यों से, शकुन से, अथवा स्वयं वैद्य की बातचीत तथा बैठने के ढंग से, भी रोगी का भविष्य जाना जा सकता है। यदि दूत भी रोगी की ही जाति का हो तो रोग अच्छा हो सकता है। परन्तु यदि ये दोनों दो भिन्न भिन्न जाति के हों, तो या रोग असाध्य होगा या रोगी मर जायगा।' इधर वैद्यक

पर अनेक ग्रन्थ लिखे गये हैं। इन में से कुछ तो यह भी सिद्ध करने का प्रयत्न करते हैं कि दो हजार वर्ष के पहले के सुश्रुत की सर्जरी आज की पश्चिमी सर्जरी से बहुत ही अधिक उपयोगी तथा श्रेष्ठ है। तब के और अब के आयुर्वेदिक नियमों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ इसीलिये ये लोग उसे परिपूर्ण कहते हैं मेजर जनरल सर पेट्रिक हेहिर ने कहा—'वैद्यक का एक सिद्धान्त यह है कि सब बीमारियाँ भूतों के कारण उत्पन्न होती हैं और मंत्र तथा बलिदान से अच्छी हो सकती हैं। बच्चों की बीमारियों के कारण भी भूत हैं। कविराज नगेन्द्र नाथ सेन गुप्त ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि ये वह भूत हैं जो यमराज के यहां से निकाल दिये गये हैं और जो पापात्मा माता पिता को कष्ट देने के लिये उनके बच्चों को सताते रहते हैं। पता ही नहीं चलता कि इस वैद्यक की पद्धति का आधार क्या है और किन किन आधारों पर निदान किया जाता है। आयुर्वेद सम्बन्धी पुस्तकें हाल में भी प्रकाशित हुई हैं जिनमें एक ही दवा मोटाई और सूनाक आदि सब तरह के रोगों का इलाज बताई गई है और एक और दवा के विषय में लिखा है कि स्त्री का कोई भी रोग हो उस दवा से अच्छा हो जाता है।

दो बार का मेरा भी वैद्यक का व्यक्तिगत अनुभव है। सन् १६२७ में मैंने मद्रास प्रान्त में देखा कि एक छोटा लड़का अपनी बांह को पार्सल की तरह बांध एक वैद्य के यहां से सरकारी अस्पताल में लिए हुए चला आ रहा था। उसने डाक्टर से प्रार्थना की कि इसे खोलिए बात यह थी कि उसकी बांह टूट गई थी और मांस के द्वारा लटक रही थी वैद्य ने पहले तो उसके खुले हुए घाव में गोबर लगाया और फिर

गरम करके छिलकों और गरम पत्तों से उसे बाँध दिया। ऋतु गर्मी की थी और छिलके जल्दी से सिकुड़ने लगे इस लिए रक्त का संचार भी बन्द हो गया और तब उसे और भी अधिक तकलीफ़ होने लगी। मालूम हुआ कि उसकी बाँह कोहनी से खराब हो जायगी। जब वैद्य ने देखा कि उससे काम न चलेगा तब उसने डाक्टरी सूई का सहारा लेने का उपदेश दिया।

दूसरी बात भी उसी प्रान्त की और सन् १९२६ ई०की है। एक आदमी की कमर में एक गिल्टी निकल आई थी। वैद्य ने अपनी पुस्तक के अनुसार उस गिल्टी को चीरने का विचार कर लिया वैद्य ने रोगी को लिटा दिया और बिना दवा के गिल्टी चीर दिया। जब छूरी भीतर गई तो आदमी चौंक पड़ा उसकी नस कट गई वैद्य ने अब समझा कि मामला टेढ़ा है उसने उसे अस्पताल में जाने का उपदेश दिया और प्रबन्ध भी कर दिया वहाँ पर अस्पताल में एक हिन्दोस्तानी डाक्टर था उसने डरके मारे इस मामले में हाथ ही नहीं दिया और उससे कहा,—'मैं इतना बड़ा आपरेशन नहीं कर सकता इसे बड़े अस्पताल ले जाओ मैं तो छोटी छोटी बीमारी की दवा करता हूं।'

परन्तु बड़े अस्पताल में पहुँचने के पहले ही वह आदमी मर गया।

पुलिस ने वैद्य पर ख़ून का मामला चलाया। परन्तु पाश्चात्य देश के शिक्षा पाए हुए अनेक हिन्दू-डाक्टरों ने रुपए से तथा अन्य सब प्रकार से लड़कर उस वैद्य को छुड़ा लिया।

इन लोगों ने कहा,--वैद्यक शास्त्रपर हमला नहीं होना चाहिये।

इन लोगों ने वैद्य को तो छुडा लिया परन्तु उक्त हिन्दोस्तानी डाक्टर के ऊपर डेरी करने के कारण मुकदमा चलाया।

वैद्य के बारे में प्राय ये लोग यही कहते हैं—'इसमे कम खर्च है, यह भारत के स्वभाव के अनुकूल है और इसकी उत्पत्ति देवताओं से है।'

अन्तिम बात को छोडकर—क्योकि बहस म इसकी जरूरत नहीं है—हम लोग भली भाँति जानते हैं कि आयुर्वेदिक शालाओं म अपेक्षाकृत कम खर्च नहीं होता, और सफेद या भूरे रगों के मनुष्यों पर दवाइयों का भिन्न भिन्न प्रभाव भी नहीं पडता।

माटेग्यू-चेम्सफोर्ड-रिफार्म से वैद्यो की औषधियो की खपत अधिक होने लगी है क्योंकि प्रान्तो के मिनिस्टरों के वोटों पर ही रहना पडता है और प्राय लोग वैद्यक और हकीमी के पक्ष में ही वोट दे दिया करते हैं। इसलिये ये नए मत्री आयुर्वेदिक और यूनानी कालेजों और चिकित्सालयों के कायम करने में सरकारी रुपया खर्च करते हैं। कांग्रेस भी यही कहती है कि वैद्यक और पाश्चात्य पद्धति दोनों ही वैज्ञानिक हैं। प्रसिद्ध कवि रवीन्द्र बाबू ने भी कहा है कि पश्चिम की पद्धति से वैद्यक अच्छी है। स्वराजिष्ट लोग भी देशभक्ति के आधार पर वैद्यक को अच्छा समझते हैं।

इन्हीं सब कारणों से भारत के स्वास्थ्य की दशा बहुत ही अधिक सोचनीय हो रही है क्योंकि इन दवाइयों और इलाज में सरकार पूरी तरह खर्च नहीं कर पाती उस देश में विज्ञान के साथ वही सलूक किया जाता है जो अमरीका के हब्शियों के से इलाज के तरीको के साथ।

इसमें तो कुछ भी सन्देह नहीं कि साधारण जनता वैद्यों में विश्वास करती है। इसमें भी सन्देह नही कि वैद्य लोग कुछ अच्छी वनस्पत्तियों का उपयोग भी करते हैं। इन्ही दो कारणों से वैद्यों और हकीमों की इज़्ज़त अभी तक बनी हुई है।

एक बार मिस्टर गान्धी ने कहा था,—'अस्पतालों से तरह तरह के पाप फैलते हैं। यूरोपियन डाक्टर सब से अधिक ख़राब हैं और अच्छे अच्छे डाक्टरों से ये हमारे परिचित कठ वैद्य ही अच्छे हैं।'

परन्तु एक बार मिस्टर गान्धी जेल में बीमार हो गये और तब एक अंगरेज़ डाक्टर उनसे भेंट करने आया।

उसने कहा,—'मिस्टर गान्धी! मुझे दुःख है इस समय आप को एपेन्डीसाईटीज़ का रोग है यदि आप मेरे रोगी होते तो मैं फ़ौरन आपरेशन करता। परन्तु जहाँ तक मैं समझता हूं आप किसी वैद्य को बुलाना अधिक पसन्द करेंगे। परन्तु मिस्टर गान्धी ने उसे आपरेशन करने की ही सम्मति दी।

डाक्टर ने कहा,—'मैं आप का आपरेशन नही करना चाहता क्योंकि यदि इसका नतीजा बुरा निकले तो आप के सब मित्र कहेंगे कि मैंने आप के साथ बुरा बर्ताव किया और अच्छी तरह से आपरेशन नही किया। इस समय मेरा कर्तव्य आपकी सच्ची सेवा करना है।'

मिस्टर गान्धी ने कहा,—'यदि आप आपरेशन करने को तैयार हों तो मैं अपने सब मित्रों को बुलाकर समझा दूँ कि आप मेरी प्रार्थना पर आपरेशन कर रहे हैं।' मिस्टर गान्धी जान बूझ कर उस अस्पताल में गये जो पाप फैलाता है

और सब से खराब अङ्गरेजी डाक्टर से आपरेशन करवाया।

वहाँ पर उनकी देख रेख एक अंग्रेजी नर्स ही करती रही। मिस्टर गांधी ने अन्त में इस विदेशी नर्स को एक उपयोगी व्यक्ति स्वीकार किया।

—०—

उनतीसवां परिच्छेद

आर्थिक दुरबीन—मानसिक झलक

इस में संदेह नहीं कि किसी देश का कुशल-मङ्गल उसकी आर्थिक अवस्था पर निर्भर है। इस पुस्तक में अभी तक मैंने भारत की आर्थिक अवस्था का कुछ उल्लेख किया है। इस के वारे में मैं थोड़ा और लिखना आवश्यक समझती हूँ। मैं पहले ही लिख देना चाहती हूँ कि यह पुस्तक किसी राजनैतिक उद्देश से नहीं लिखी गई और इस में जितनी बातें लिखी गई हैं वे केवल विखरे हुए अनुभवों के समान हैं।

भारत के लोग कहते हैं कि भारत की आर्थिक अवस्था इसलिये ख़राब है क्योंकि इस देश की धन सम्पत्ति ढुल ढुल कर वाहर चली जाती है। पहले की वातों की अपेक्षा यह तो वहुत ही ऊपरी वात है। भारतीय धन के नाश के ख़ास ख़ास कारण इस पुस्तक में दिखला दिए गये हैं। परन्तु भारत के राजनैतिक नेता उन्हें नहीं मानते। इन सव वातों को छोड़ कर राजनैतिक लोग रुई चाय, सरकारी कागजों पर सूद, अनाज का वाहर जाना, फ़ौज का ख़र्च और ब्रिटिश सिविल सर्विस की तनख़ाहों की शिकायत करते हैं।

यदि इन सव वातों पर पढ़े लिखे भारतवासियों से वहस की जाय तो ये कभी किसी एक बात पर नहीं टिकते और एक वात को छोड़ कर शीघ्रही दूसरी वात पर चले जाते हैं जहाँ पर थोड़ी देर तक के लिए वे ठहर सकते हैं। इनमें से कुछ चीज़ों के वारे में लिखने से मेरी यह वात समझ में आ जायगी।

रुई के बारे में प्राय ये लोग रुई कहते हैं कि यहां की रुई लङ्काशायर के लोगों को जीविका प्रदान करने के लिए भेजी जाती है और वहाँ से कपड़ा बनाकर भारत में भेज दिया जाता है और भारत निवासियों को विवश हो कर उसे खरीद ना पड़ता है।

इस सबंध म असली बातें ये हैं —(अ) जितने लोग भारत मे रुई खरीदते है उनम इगलैंड का नम्बर छवा है। (ब) भारत की रुई खराब, अनियमित छोटे तन्तु वाली, धोखे की और इगलिस्तान म कपड़े बनने योग्य नहीं होती। (स) लङ्काशायर के लिए रुई अमेरिका और सूडान से आती है। (द) भारत की रुई से इंगलिस्तान लेम्प म जलाने की बत्तियाँ, सफाई करने के कपड़े और ऐसी ही मोटी चीजें बनाता है।

इस सबध म दो बातें उल्लेखनीय हैं। एक तो यह कि अब भारत के बने हुए रुई के माल से कर उठ गया है और इसलिए भारत के बने हुए माल की उस देश में अधिक खपत होगी। दूसरी बात यह है कि भारत में लोग प्रति वर्ष कुछ न कुछ अधिक धनी होते चले जाते हैं और इसलिए प्रति वर्ष कुछ अधिक खर्च करने के आदी होते चले जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त वे बारीक वस्त्रों को पसद करते हैं और भारत के मिलों के कपड़े मोटे होते हैं। यद्यपि भारतवासी जो चाहें खरीद सकते हैं तथापि वे अच्छा होने के कारण विदेशी वस्त्रों को ही खरीदना पसन्द करते हैं। इसी लिए मिस्टर गान्धी के चर्खा आन्दोलन करने पर भी और जापान के सुन्दर वस्त्रों के बनाने पर भी भारत के लोग लङ्काशायर के बारीक वस्त्रों को खरीदना पसन्द करते हैं।

इसके सिवाय कपास की उन्नति करने के लिए सरकार

सदा प्रयत्न करती रही है। सरकारी कृषि के लिए सरकारी फ़ार्म तथा नमूना-गृह खोल रक्खे हैं जिस से लोग सीख सकें। इस की शिक्षा भी दी जाती है और अच्छे औज़ार तथा अच्छे बीज भी अमरीका से मंगाकर बांटे जाते हैं।

अमेरिका के एक आदमी ने कहा हैः—'अमेरिका की अपेक्षा रूई के लिये भारत एक अच्छा देश है। परन्तु भारत के लोग इस संबंध में उन्नति नहीं करते स्वराजिस्ट लोग इस उन्नति के मार्ग में रोड़े हो रहे है। इन लोगों का कथन है कि यहां पर अच्छी रूई उत्पन्न करने से भी लङ्काशायर वालों का ही लाभ है।'

मैं ठीक ठीक नहीं कह सकती कि भारत के राजनीतिज्ञ लोग वास्तव में जानतेही नहीं या जानने का प्रयत्न ही नहीं करते। परन्तु इन भारतीय नेताओं ने मुझसे कई बार कहा,—'इँगलैंड हम लोगों के यहां से कच्ची रुई अपने यहां के बेकार मनुष्यों को काम देने के लिए ले जाता है, वहाँ कपड़ा बनाता है और उसी कपड़े को ख़रीदने के लिए हम लोगों को विवश करता है। इस प्रकार सब लाभ इँगलैंड वालों को ही होता है और भारतवर्ष ठगा जाता है। यदि देश से इतना धन सर्वदा बाहर जायगा तो देश का कल्याण कैसे होगा?'

मैंने जवाब में कहा कि—'परन्तु अमेरिका में भी रुई होती है, इँगलैंड उसे ख़रीदता है, कपड़ा बनाता है और फिर उन कपड़ों को अमेरिका भेज देता है। अमेरिका वाले अपनी रुई उसी को बेंचते हैं जो जिसे आवश्यकता होती है और जो अपने मन के अनुसार बाहर से ख़रीद लेते हैं। स्वयं अमेरिका में भी कुछ कपड़ा बनते हैं। अब यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि अमेरिका और भारत में इस विषय में क्या अन्तर है।'

इस प्रश्न के उत्तर म भारतीय अर्थ शास्त्री कह उठता है—'परन्तु चाय के प्रश्न पर तो विचार करो। हम लोग बहुत चाय उत्पन्न करते है और कुल-का-कुल भारत के बाहर भेज दी जाती है। इससे भी इस देश को बड़ी हानि है।'

मैंने पूछा—'क्या आप चाय बेंचते हैं या बिना दाम दे देते है?'

उत्तर मिला—'हाँ। परन्तु चाय तो चली जाती है।

तीसरी शिकायत उस सूत की है जो लन्डन को दिया जाता है। केवल रेल के एक उदाहरण से यह बातें स्पष्ट हो जायगी।

पहली बार सन् १८५३ ई० में रेलगाडी भारतमें चली थी। सन् १६२४ के मार्च के अन्त म सब मिलाकर ३८०३६ मीलतक रेल बन गई है और सन् १६२५ ई० म भारत में रेल के यात्री प्रति मील स युक्त देश अमेरिका के मुकाबले म चौगुने से भी ज्यादा थे।

अब इस विषय म अमरीका और भारत का मुकाबला करके देखिये। जब सब में पहले अमेरिका ने रेल खोली थी, तब उसके पास पर्याप्त धन नहीं था और उसे भी उधार लेना पड़ा था। इस लिए अमेरिका ने यूरोप से और अधिकतर इँगलेंड से रुपया उधार लिया। लगभग आधा धन उसे उधार लेना पडा था परन्तु उसे आशा थी कि वह अन्त में लाभ उठाएगा। अमरीका की रेलों की आमदनी का कुछ भाग इस प्रकार सन् १६१४ तक बाहर जाता रहा।

जब भारत ने रेल का प्रबंध किया तो उसे भी भारत में पर्याप्त धन नहीं मिला परन्तु इसका कारण यह नहीं था। कि भारत में धन था ही नहीं किन्तु यह कि भारत के लोग

वहुत सूद चाहते थे। इसलिए भारत ने लन्डन से उधार लिया क्योंकि यहाँ उसे सब से सस्ता पड़ा। कुछ ढाई और कुछ पांच प्रति सैकड़े की दर से भारत ने उधार लिया इन सब की औसत साढ़े तीन प्रति सैकड़ा सूद पड़ी और इससे सस्ती सूद दर संसार भर में नही है।

इस भारी उधार के सूद को ही भारत के लोग देश की हानि समझते हैं और सन् १९२४-२५ में रेलों से भारत सरकार की आमदनी सूद इत्यादि देकर १,२२,३७,२०० पौंड थी।

रेलवे के बारे मे मिस्टर गान्धी के विचार ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध है और वह उनकी पुस्तक इण्डिया होमरुल में इस प्रकार लिखा है जो लोग भलाई करना चाहते है वे तो जल्दी में नही है परन्तु बुराई के तो पंख लग जाते हैं। इसलिये रेलवे से तो केवल बुराई ही फैल सकती हैं। इसमे तो सन्देह हो सकता है कि रेलवे से अकाल फैलता है या नही परन्तु इस में तो लेश मात्र भी सन्देह नहीं है कि रेलवे से बुराई फैलती है। ईश्वर ने मनुष्य के हाथ पैर इस तरह के बनाए कि वह एक विशेष रफ़तार से अधिक तेज़ चले किन्तु मनुष्य ने तुरन्त इस नियम को तोड़ने के तरीक़े निकाल लिये × × × × रेलवे एक अत्यन्त ख़तरनाक संस्था है।

तो भी स्वयं मिस्टर गांधी इसी बुराई के फैलाने का उदाहरण दिखलाते हैं क्योंकि वह अपने राज नैतिक दौरों में रेल पर भी चलते हैं। इस में सदेह नही कि मिस्टर गांधी को तो सदेह है। तथापि रेल के कारण देश में कभी दुर्भिक्ष से लोग मरने नही पाते। इस के विरुद्ध प्राचीन काल में सदा ही दुर्भिक्ष से लोग मरते रहते थे क्यों कि जब कभी वरसात धोखा दे देती थी, तभी दुर्भिक्ष पड़ जाता था। पहले अकाल के कारण

बहुत लोग मरते थे परन्तु अब तो उस से एक भी नहीं मरता क्योंकि सरकार की दुर्भिक्ष निवारण पद्धति से एक तो दुर्भिक्ष पीड़ित मनुष्य उन स्थानों पर पहुँचा दिए जाते हैं जहाँ मजदूरों की आवश्यकता रहती है और दूसरे जहां पर मनुष्यों के लिए भोजन और जानवरों के लिए चारा मिल सकता है वहा से ये चीजें दुर्भिक्ष के स्थान म पहुँचा दी जाती ह। रेल के अतिरिक्त सरकार ने बड़ी सुन्दर सड़कें बनवादी हैं जिनपर मोटर भी आजा सकती हैं जहाँ पहले बैल गाड़ियाँ रेंगा और लुढ़का करती थीं।

एक बूढे डेपुटी डिस्ट्रिक्ट कमिश्नर ने एक बार कहा था,- 'जबजब म प्राचीन काल के दुर्भिक्ष तथा मौतों के बारे में सोचता हूँ तब तब मैं कहता हूँ परमेश्वर ? मोटर बनाने वाले हेनरी फोर्ड का भला करे।'

रेलवे से पदार्थों के दामों का समीकरण, बाजारों का खुलना व्यापार की उन्नति, व्यक्ति गत उन्नति और सरकारी मालगुजारी की भी उन्नति होती ह। इसके अतिरिक्त रेलवे से अनेक लाभ हैं।

इसके बाद मिस्टर गाधी और सरकार के दूसरे समालोचक कहते हैं कि इस देश का अन्न दूसरे देश में भेज दिया जाता है और देश के लोग भूखों मरने लगते हैं। यह सरकार की बुरी इच्छा, लालच या अव्यवस्थित प्रबध का फल है उस विषय मे असलियत को चाहे कितना भी बदल कर कहा जाय किन्तु बात बिल्कुल स्पष्ट है।

सब लोग पहले अपने भोजन के लिये नाज रख कर तब बेचते हैं। यदि कोई आदमी अन्न बेचता है तो वह ऐसी चीज पाने के विचार से ही ऐसा करता है जिसकी उसे अन्न से अधिक

आवश्यकता है या उससे अधिक चाहता है। सरकार ने अन्तिम तीस वर्षों में कई ऊसरों को उपजाऊ भूमि के रूप में परिणत कर दिया है। लाखों हिन्दोस्तानी उन खेतों में उस से कहीं अधिक अन्न उत्पन्न करते हैं जितना वे खर्च कर सकते हैं। सड़कें, रेल और जहाजों के कारण संसार की सब मंडियां उनके दरवाज़ों पर आ गई हैं। सब से अधिक दाम देने वाले को वे अपनी चीजें बेंचते हैं। अगर सरकार टैक्स लगा कर भारत के अन्न को बाहर जाने से बन्द कर दे तो यह बड़ा भारी ज़ुर्म होगा क्योंकि ऐसा करना मानों कृषकों को उनके परिश्रम की कमाई से वंचित करना है। भारत से अन्न बाहर जाता है और आता है और ऐसा ही संसार भर में होता रहता है।

पाँचवीं बात यह है:—फ़ौज का खर्च देश की आमदनी की अपेक्षा अधिक है और यहाँ की फ़ौज भी अधिक है। यह भारत के नेताओं की शिकायत है। इस संबंध में यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या शान्ति स्थापित करने और तुम्हारी रक्षा करने के लिए इस से कम फ़ौज की आवश्यकता होगी?

इस प्रश्न के उत्तर में प्रायः ये लोग कहते हैं—'मैं नहीं जानता। मैंने इस संबंध में अभी नहीं सोचा है। परन्तु इस में संदेह नहीं कि भारत के लगान का अधिकांश भाग फ़ौज ही में खर्च हो जाता है और यह अन्याय है।'

इस संबंध में बहस करते समय ये लोग प्रायः केवल वाइसराय के बजट के बारे में ही उल्लेख किया करते हैं जिस में कुल आमदनी का ५६ प्रति सैकड़ा रक्षा संबंधी फ़ौज में खर्च होता है। यदि इस की ठीक ठीक जांच की जाय, तो इस

म प्रान्तीय खर्चों का भी हिसाब लगाना चाहिए। इस प्रकार हिसाब लगाने से कुल आमदनी का ३० प्रति सैकड़ा ही सेना पर खर्च होता है।

भारत के लोग सेना के लिए अर्थात् अपने देश की रक्षा के लिये केवल दो शि ०५ पैंस ही प्रति मनुष्य के हिसाब से देते हैं और इंगलैंड में यह कर प्रति मनुष्य २ पौंड १४ शि०, तथा अमरिकामें १ पोंड १ शि० है। जापान में भी प्रति मनुष्य भारत का छैगुना कर दिया जाता है, अर्थात् १४ शि० ७पैं०।

भारत म १,८००मील तक की सीमा खतरे से खाली नहीं है और प्रत्येक समय लड़ाई का भय रहता है इस सरहद पर पिछले सौ वर्ष के अन्दर तीन बार दंगे की आग भड़क चुकी है। भारत का समुद्री किनारा भी विस्तृत है और उसकी रक्षा अंग्रेजों की जलसेना करती है और इसके लिए भारत को कुछ भी नहीं देना पड़ता। इसके अतिरिक्त भारतवासी भी प्राय एक दूसरे से लड़ा ही करते हैं औ इस लिए भी सेना की आवश्यकता है। भारत म टैक्स बहुत कम है क्यों कि यहाँ के आदमी बहुत गरीब हैं। इसी लिए सरकारी आमदनी भी थोड़ी ही है। देश की रक्षा का खर्च इसी लिए अधिक जान पड़ता है कि यहां का कर कम है। प्रजा में शान्ति रखना और व्यवस्था करना सरकार का प्रधान कर्त्तव्य है। इस कर्त्तव्य के पालन के लिए कोई भी सरकार आवश्यक खर्च कर सकती है। यदि सरकार की आमदनी थोड़ी हो तो सब बातों के लिए रुपया कहाँ से आसकता है? इसी लिए कर का बढ़ाना ही एक मात्र इलाज है।

जो लोग यह दलील देते हैं कि भारत का सेना मद्द में धन भारत के बाहर चला जाता है उनकी बात बिल्कुल

ग़लत है क्योंकि भारत की लगभग सेना का ख़र्च भारत में ही रह जाता है।

भारत की सेना भारत में ही रहती है। भारत में अधिकतर सिपाही भी हिन्दोस्तानी ही हैं और उनका वेतन तो यहीं रहता है। इसमें सन्देह नहीं कि भारत से अंगरेज़ सिपाहियों का वेतन बाहर जाता है परन्तु वह धन इतना कम है कि इस पर लिखना व्यर्थ है। भारत के अङ्गरेज़-सैनिक अफ़सर अपनी तनख़ाहों के अलावा निजी धन भी इसी भारत में ही ख़र्च करते हैं। फ़ौज का सब सामान भी भारत से ही ख़रीदा जाता है। कुछ सामान लंडन में भी हाई कमिश्नर ख़रीदता है। परन्तु वह हाई कमिश्नर भी स्वयं हिन्दोस्तानी है। इनसब बातों से प्रकट होता है कि भारत के अधिकतर राजनैतिक लोग अपनी सुगमता के अनुसार उत्तर देते हैं और इस ओर ध्यान नहीं देते कि वास्तव में बात क्या है?

छठवीं बात 'इण्डियन सिविल सरविस' के अङ्गरेज़ नौकरों का वेतन है। इसमें सन्देह नहीं कि आरम्भ में अच्छे आदमियों को अच्छा वेतन देने की आवश्यकता थी। परन्तु इधर तो उनका वेतन काफ़ी नहीं बढ़ाया गया है गोकि सब वस्तुएं बहुत ही महँगी हो गई हैं। बाहर के लोगों का भारत में ठहरने से अधिक ख़र्च पड़ता है। यहाँ पर रहने से गोरे रंग के मनुष्यों का स्वास्थ्य तो अवश्य ही बिगड़ जाता है गोकि कभी कभी जान बच जाती है। इस अर्थ में भारत गोरे मनुष्यों का देश भी नहीं है। जब कोई गोरा मनुष्य भारत की नौकरी स्वीकार करता है। तब उसे अपने देश से बहुत दिनों तक अलग रहना पड़ता है। यदि वह शादी करता है तो उसे अपने लड़कों से दूर रहना पड़ता है और तीन सप्ताह के

मार्ग की दूरी पर उन्हें रखना पड़ता है। जब २५ या ३५ साल तक भारत की सेवा करने के बाद उसे पेंशन मिलती है तो वह लगभग एक हजार पौंड सालाना पाता है और उसमें से उसे २० प्रति सैकड़ा टैक्सों के रूप में दे देना पड़ता है। इसके अतिरिक्त इनका वेतन भी अधिक नहीं होता। इसमें सन्देह नहीं कि हिन्दोस्तानी लोग अङ्गरेजों के वेतनों को अधिक समझते हैं परन्तु उनके रहने का ढंग भी भिन्न होता है। कोई अङ्गरेज या यूरोपियन उतने गिरे हुए ढंग से रहने को राजी नहीं हो सकता। ऐसे अंगरेज् जिनकी शादी हो गई है और जिन्हें अपने लड़कों का भी खर्च देना पड़ता है बुरे दिन के लिए कुछ भी नहीं बचा सकते यदि उनकी आमदनी का कोई दूसरा मार्ग न हो।

तथापि सर० एम० विश्वेश्वरय्या कहते हैं —"अभागे भारत के लोगों को केवल अपने ही खाने पीने की चिन्ता नहीं करनी पड़ती किन्तु उन्हें एक ऐसे शासन का भी खर्च सहना पड़ता है जो सारे संसार में सब से अधिक महँगा है।" और बहुत से भारतीय नेता भी यही कहते हैं।

शासन व्यय के मदों पर एक दृष्टि डालने से ही पता चल जाता है कि इस बहस में अधिक समय नष्ट करना व्यर्थ है। भारत के इतने कम टैक्सों तथा करों से संसार का सब से अधिक खर्च करने वाली सरकार नहीं चल सकती। सन् १९२३-२४ में भारत का टैक्स केवल फी शख्स साढ़े पाँच रु० था जो ६ शि० ५ पेंस के बराबर है। इस में जमीन की मालगुजारी भी शामिल है जो इतनी कम है कि उसे टैक्स कहने की अपेक्षा केवल मालखाना कहना अधिक उचित है। इसके विरुद्ध फिलीपाइन्स में सन् १९२१ ई० में

टैक्स १४ शि० ३ पेंस फ़ी आदमी था।

परन्तु भारत की दरिद्रता के विचार से इतना धन भी बहुत है। दरिद्र के लिए सरकार का खर्च, चाहे वह कितना ही कम क्यों न हो बहुत है। परन्तु कुछ लोगों का यह भी विचार है कि भारत की दरिद्रता का एक कारण इस का कम टैक्स भी है क्योंकि कम टैक्स लेने से सरकार वे कार्य नहीं कर सकती जिनसे अधिक धन उत्पन्न हो।

इस में संदेह नहीं कि प्रधान प्रधान बातों का अब वर्णन कर दिया गया परन्तु और भी ऐसी अनेक बातें हैं जिन से भारत की दरिद्रता बढ़ती ही चली जाती है। ये बातें विवाहों का बेजा खर्च, सूद, साधु और धन का गाड़ कर रखना है। भारत में किसी मनुष्य का विवाह केवल उसी की जाति में हो सकता है। कभी कभी तो एक मनुष्य की शादी केवल छै घरानों में ही हो सकती है।

कभी कभी किसी मनुष्य के विवाह योग्य कन्याओं का उन की जाति में अभाव होता है। ऐसी दशा में इन्हें यों ही रह जाना पड़ता है और इस बात की प्रतीक्षा करनी पड़ती है कि जाति में किसी के यहाँ लड़की उत्पन्न हो। कभी कभी एक कन्या के प्राप्त करने के लिए पुरुष को अपने सब धन का सत्यानाश करना पड़ता है। कभी कभी तो इनमें अपनी जाति के वरों के लिए छीना-झपटी की भी नौबत आ जाती है। कभी कभी एक ही वर के लिए कई आदमी प्रयत्न करते हैं क्योंकि ये लोग अपनी कन्याओं को अविवाहित नहीं रख सकते। इसलिये कन्याओं के पिता लोग कभी कभी वर की प्राप्ति के लिए अपनी शक्ति भर खूब क़र्ज़ लेते हैं।

हाल में बंगाल में कई कन्याओं ने अपने पिता को दहेज के

भार से वचने के लिए आत्महत्या करली है और इन सब वातों को अब सब लोग जानते हैं। इसकी बगाल के युवकों ने बड़ी प्रशंसा की है। इस लिए ऐसी बातें अधिक होने लगी है। कभी कभी अच्छे तथा धनी लोगों का भी विवाह्य म दिवाला निकल जाता है क्योंकि इनका अभिमान और इनकी चाल ऐसी है जिस से उन्हे ऐसे अवसरों पर अपनी आमदनी से अधिक खर्च करना ही पड़ता है।

विवाह का खर्च, मृत्यु का खर्च, मुकदमेवाजी, अधिक खर्च करने की आदत, और फसल का विगड़ जाना हिन्दोस्तानियों के कर्जदार होने के मुख्य कारण है। भारत का वनिया ऐसाही है जैसा फिलीपाइन्स का सूद खोर वनिये लोग तो ३३ प्रति सैकड़ा या इससे भी अधिक सूद लेते है। इसी लिये ये लोग सरकार को रेल वनाने के लिए ३½ सैकड़े पर रुपया उधार नहीं देते यह काम तो इंगलेंड के बेवकूफ लोगों को ही करना पड़ता है।

वनिया जब देखता है कि इस साल अन्न की फसल मारी जायगी तब अपने आस पास के सब अन्न को जमा कर लेता है और वोने के समय अपने पड़ोसियों के हाथ २०० प्रति सैकड़ा लाभ उठा कर बीज बेचता है और आइन्दा फसल पर भी इसी तरह अधिकार कर लेता है।

जब कोई आदमी एक बार वनिये का कर्जदार हो जाता है तब उसका उसमे से निकलना कठिन हो जाता है। कपड़ा वेल आदि का भी दाम वनिया ही देता है और चक्रवृद्धि व्याज लगाता है। कभी कभी कई पुश्त उस वनिये के हँथ कड़ों म फँसे रह जाते हैं।

बहुत लोग कहेंगे कि इस ऋण का कारण दरिद्रता है

परन्तु वास्तव में ऐसी बात नहीं है। कल्वर्ट कहता है कि ऋण का कारण विश्वास है और विश्वास किसी मनुष्य के खुशहाली पर होता है दरिद्रता पर नहीं।

सरकार ने भारत में शान्ति स्थापित की है, वह माल की रक्षा करती है। सरकार के प्रयत्नों से खेतों का मूल्य और पैदावार बढ़ गयी है। इन सब कारणों से विश्वास उत्पन्न हो गया है। बनिया भी इसी विश्वास पर कर्ज़ देता है। इस लिये धनाढ्य और साहूकार बनिया इसी ब्रिटिश शासन की एक पैदावार है पंजाब में इस प्रकार के लगभग ४०,००० बनिए हैं और ये लोग पंजाबियों से सरकारी कर का तिगुना बतौर सूद के वसूल करते हैं। पंजाब एक धनाढ्य प्रान्त है।

ये बनिए प्रकट या गुप्त रीति से शिक्षा के सर्वदा विरुद्ध रहते हैं। यह सदा लोगों को मूर्ख बनाए रखना पसन्द करते हैं क्योंकि वे जानते है कि कोई पढ़ा हुआ आदमी उस तरह के काग़ज़ पर दस्तख़त न करेगा जिस तरह के काग़ज़ बनिये उनसे लिखा लेते हैं और जिनके ज़रिये वे सदा उन्हे फंसाए रखते हैं। पढ़े लिखे लोग यह भी जान जाते हैं कि उनका ऋण कब चुकता हो गया। सरकार ने कोआपरेटिव बक खोल दिये है जो लोगों को कम सूद पर रुपया उधार देते हैं। इस लिए बनिया सरकार से भी असन्तुष्ट है। दो हिन्दोस्तानी बनियों ने मुझसे जोश के साथ कहा कि,—'विदेशी सरकार के, हमारे साथ सहानुभूति नहीं है। उसने ज़बरदस्ती बीच में पड़कर कोआपरेटिव बैंक खोल दिये हैं। अङ्गरेज़ों के निरीक्षण में ये बैंक हमारे पुराने लेन देन के व्यापार को नष्ट कर रहे हैं। सरकार केवल इतनी ही शरारत नहीं करती बल्कि अब लोगों के दिमागों के बिगाड़ने के लिये रात के

स्कूल इत्यादि खोल रही है।'

पता चलता है कि इस देश में बनियों का बड़ा प्रभाव है इन बनियों का स्वराजिस्टों पर भी कम प्रभाव नहीं पड़ा है। बनिया जानता है कि मजदूरों को बढ़ाने और करेन्सी के सुधार से उसकी हानि होगी और इसी लिए वह स्वराजिस्टों को अपने पक्ष में किए रहता है कि वे इन सुधारों को न होने दें।

तीसरी वास्तविक और सब से बड़ी खराबी भारत वासियों को अपने सोने और चांदी का रखने का ढंग है इसे कम लोग जानते हैं किन्तु इसका प्रभाव सारे संसार पर पड़ता है। रोमन साम्राज्य के समय से ही पश्चिम के लोग वस्तुओं की अपेक्षा भारत को सिक्के देते आए हैं और भारत के लोग भी अपने माल के बदले में विदेशी वस्तुओं की अपेक्षा धातुओं को अधिक चाहते रहे हैं। यह बाहर का सोना चांदी सदा हिन्दुस्तान में खपता रहा है।

सन १८८६ ई० में यह अन्दाज किया गया था कि भारत के अन्दर २७ करोड पौण्ड का सोना भरा हुआ है जिसमें प्रति वर्ष ३० लाख पौण्ड का सोना बढ़ता रहता है इस से निजाम आदिक को किसी तरह का लाभ नहीं। यह खजाना बराबर बढ़ता रहता है और छोटे से छोटे मजदूर से लेकर बड़े से बड़े राजा तक सब के यहां थोड़ा बहुत मौजूद है।

सन १९२७ ई० में बम्बई में अमेरिका के व्यापार के कमिश्नर मिस्टर डी० सी० विल्सन ने कहा था,—'भारत में बहुत द्रव्य एकत्रित हुआ पड़ा है यह द्रव्य डेढ़ सौ खरब रुपए से हरगिज कम नहीं है। किन्तु यह सब रुपया सोने चांदी की शकल में घरों में भर लिया गया है जिससे किसी को कोई लाभ नहीं यदि इसे व्यापार में लगाया जावे या दुनिया की मंडियों

में उधार दिया जावे तो इसी रुपए की सहायता से भारत-वर्ष संसार के अधिक शक्तिशाली राष्ट्रों में से एक बन सकता है। भारत का प्राचीन प्रसिद्ध धन अब भी मौजूद है किन्तु ऐसी शकलों में है जिससे धन के मालिकों को कुछ भी लाभ नहीं होता।'

भारत में धन को इस प्रकार एकत्रित करना प्राचीन समय से धर्म समझा जाता है और पिता के एकत्रित किए हुए धनको यथाशक्ति पुत्र व्यय नहीं करता। पुत्र को भी इसी प्रकार कुछ एकत्रित कर जाना ही चाहिये। हैदराबाद के स्वर्गीय नवाब ने जवाहरों के रूप में बहुत धन एकत्रित किया था। वर्त्तमान नवाब सोने और चांदी एकत्रित करना पसन्द करते हैं और लगभग पचास साठ करोड़ का ख़ज़ाना उन्हों ने स्वयं एकत्रित भी कर लिया है। कृपक लोग भी रुपयों को ज़मीन में गुप्त रीति से गाड़ते हैं और अपनी स्त्रियों के ऊपर गहना भी लाद देते हैं। संसार भर में जितना सोना ख़र्च होता है उसका ४० प्रति सैकड़ा और चांदी का ३० प्रति सैकड़ा भारत में ख़र्च हो जाता है और इस सोने का उपयोग सिक्के ढालने में नहीं होता। चांदी के बारे में मिस्टर विलस ने लिखा है:—'भारत में चाँदी का अधिक उपयोग गहने बनाने में होता है। बेहद चांदी तो गाड़ी गई है और लोग उसे भूल गये हैं।' कभी कभी ऐसा भी होता है कि घर में आभूषण या दूसरे रूप में गुप्त धन मौजूद है तथापि मनुष्य बनिये से रुपया उधार लेता ही रहता है। ये लोग सोचते हैं कि यह संचित धन बुरे दिन काम आएगा। इसका एक कारण यह भी है कि ये लोग बैंको में विश्वास नहीं करते।

संसार भर से सोना चांदी भारत में आता है और यहाँ

आकर गायब हो जाता है। वास्तव में कोई दरिद्र देश ऐसा कर नहीं सकता। इसके अतिरिक्त कोई भी देश जो अपने धन को जमीन में गाड़ देता है और उसी पर सोता है, खुशहाल नहीं हो सकता।

भारतवासी लोग एक और भी बड़ी भारी गलती करते हैं। ये लोग पृथ्वी को भी लूटते रहते हैं।

भारत एक कृषि-प्रधान देश है परन्तु ये लोग अपने खेतों को अधिक उपजाऊ करने का प्रयत्न कभी नहीं करते। बारबार ये लोग बोते है, काटते हैं परन्तु उसे अधिक उपजाऊ कभी नहीं करते और तो भी कम खेती की शिकायत किया करते हैं। ये लोग प्राय गोबर की कंडी जलाते हैं, इनके यहा लकड़ी कम है। हड्डियों की खाद बहुत अच्छी होती है और वह इनके यहा है भी काफी। परन्तु खेतों की खाद के लिए ये हड्डियों का कभी भी उपयोग नहीं करते और देशके बाहर भेज देते हैं। धार्मिक विचारों के कारण से ही हिन्दू लोग ऐसा करते हैं। ये लोग जिस हल से जोतते हैं वह काठ का बना होता है और पृथ्वी की केवल ऊपरी सतह को खुरच पाता है।

यदि ये लोग अपने धार्मिक विचारो पर कायम रहें तो भी ये लोग अपने गड़े हुए या फँसे हुए धन या उसके सूद से काम करें, खेतों को अधिक उपजाऊ करें और मशीन का उपयोग करें तो भी इस एक बात से इनको बड़ा लाभ हो सकता है परन्तु इन लोगों का जीवन ही ऐसा है कि ये लोग ऐसा कभी नहीं कर सकते।

भारतवासियों के खेतों में एक और बड़ा यह ऐब है कि ये छोटे छोटे टुकड़ों में बँटते ही चले जाते हैं और कभी कभी तो एकाध हिस्से इतने छोटे हो जाते हैं कि उनमें उपयोगी खेती हो

खिड़की आदि हों तो ये उन्हें बंद कर देते हैं। ये लोग घरों की मरम्मत नहीं करते और जब बारिश के कारण एक घर काम नहीं देता तो दूसरा बना लेते हैं। यदि इन्हें रहने के लिए अधिक स्थान दिया जाय तब भी ये थोड़ी जगह में ही पड़े रहते हैं। ये लोग कठिन परिश्रम करके अधिक धन उत्पन्न नहीं करना चाहते बल्कि प्राचीन रीति के अनुसार केवल दिन भर के लिये थोड़ा सा कमा लेना और बाक़ी निकम्मे पड़े रहना अच्छा समझते हैं।

निस्संदेह इस तरह से वे अधिक सुरक्षित रहते हैं और दुर्भिक्ष आदिक से लड़ने की उनकी शक्ति अधिक हो जाती है। परन्तु यदि वे अच्छी तरह से रहना चाहते हैं तो उन्हें अपनी आमदनी बढ़ाने का भी प्रयत्न करना चाहिए। ऐसा करना सर्वदा इन्हीं के हाथ में है।

जब कोई मनुष्य भौतिक की इच्छा करता है, तो अपने व्यक्तिगत जीवन में उसके लिये परिश्रम भी करने लगता है।

भौतिक वस्तुओं (धन आदि), के प्राप्त करने की इच्छा अच्छी है या बुरी? इस सम्बन्ध में पूर्व और पश्चिम के विचार और व्यवहार में बड़ा अन्तर है।

हम लोगों को यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि अब भारत में पचास वर्ष पहले से ५,४०,००,००० आदमी अधिक हैं। भारत की आबादी, इसके अतिरिक्त प्रति दस वर्ष में ७ या ८ फ़ी सदी बढ़ती चली जाती है। ये सब लोग भारत ही की भूमि से पलते हैं।

मनुष्यों की इस बढ़ती का कारण भी शान्ति, लड़ाई का अभाव और दुर्भिक्ष की कमी है। संक्रामक रोगों के रुकने से भी आबादी बढ़ रही है। अब भोजन सामग्री भी कई तरह

की पैदा होती है। ये सब बातें एक अच्छी सरकार के गुण हैं। आगे भी अच्छी आशा है। थोडे ही दिनों में भारत की आबादी और भी अधिक बढ जायगी। यह वृद्धि भविष्य के लिये भयावह है। अब न तो लडके मारे जाते हैं और न सती प्रथा से ही आबादी कम होती है। दूसरी सहारक प्रथाएं भी अब बद है। हां बाल विवाह तथा बहु-संतानोत्पत्ति अब भी प्रचलित है। अब भारत उस सामाजिक उन्नति पर पहुँच गया है जहा केवल बीमारी का ही आबादी पर प्रभाव पडता है। बीमारी ही अब एक मात्र शक्ति है जो भारत की आबादी को सीमा के अन्दर रख रही है।

तीसवां परिच्छेद

उपसंहार

इस पुस्तक के गत पिछले परिच्छेदों में भारतवर्ष की वर्त्तमान परिस्थिति की सच्ची घटनाओं का उल्लेख है। ये घटनाएं सुगमता से अस्वीकार की जा सकती हैं परन्तु इन के: न तो झूठा साबित किया जा सकता है और न इन में कोई संदेह उत्पन्न किया जा सकता है। इस में संदेह नहीं कि और भी भारत के संबंध में अनेक बातें हैं और भी दृष्टि कोण हो सकते हैं और अन्य आंकड़े भी उद्धृत किए जा सकते हैं।

मैं इस बात को भी स्वीकार करती हूं कि इस पुस्तक में भारत के संबंध में जिन जिन बुरी बातों का मैंने उल्लेख किया है, उन में से कुछ बातें हम पश्चिम के लोगों में भी पाई जाती है। संभव है वे इतनी प्रचुरता से हममें न मिलें। परन्तु भारत ने आध्यात्म के नाम पर अहवाद तथा भौतिकवाद को पश्चिमवालों से बहुत ही अधिक विस्तृत और व्यापक बना डाला है। इसके फल व्यक्ति, कुटुम्ब और जाति में और भी अधिक स्पष्ट दिखाई देते हैं। क्योंकि उन से मार्ग के अन्त का पता लगता है।

बहुत कम भारतवासी इस सच्ची बात को बरदाश्त करेंगे और इसे एक मित्र के सच्चे भाव स्वीकार करेंगे परन्तु अधिक लोग इस से बुरा मानेंगे। ईश्वर करे कि मेरा यह इस प्रकार सच करने का काम इतनी अच्छी तरह हुआ हो

कि भारत वासियों का क्रोध इसी में लीन हो जावे। ईश्वर करे ललकार की कमी और इस स्पष्टवादिता के जवाब देने के लिए भारतीय जीवन और भारतीय समय नष्ट न किया जावे।

— o —

परिशिष्ट भाग

महात्मा गान्धी की आलोचना

सफ़ाई के जमादार की रिपोर्ट

यङ्ग इण्डिया से उद्धृत

'सज्जन के मुख में दोष भी गुण हो जाता है और दुर्जन के मुख में गुण भी दोष। महामेघ तो खारा पानी पी पी कर सुन्दर मीठा पानी बरसाते हैं और साँप दूध भी पी कर महाविष ही उगलता है।'

'नदियाँ अपना जल आप ही नहीं पी लेतीं, और न अपने फल वृक्ष आप ही खाते हैं। मेघ भी जो फसल पैदा करते हैं, उसे खुद नहीं खाते। सज्जनों की सारी विभूति, सम्पत्ति और शक्ति परोपकार के लिए ही होती है।'

* गुणायन्ते दोषाः सुजनवदने, दुर्जनमुखे
गुणा दोषायन्ते तदिदमपि नो विस्मयपदम्।
महामेघः क्षारं पिबति कुरुते वारि मधुरं
फणी क्षीरं पीत्वा वमति गरलं दु सहतरम्॥
पिबन्ति नद्यः स्वयमेव नाम्भः स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः।
नादन्ति सस्यं खलु वारिवाहाः परोपकाराय सतां विभूतयः॥

कई भाइयों ने, मिस मेयो की किताब 'भारत-माता' के विरुद्ध लेखों की या उसकी, आलोचनाओं की, कतरनें भेजी हैं। इसके अलावा कुछ ने मेरी अपनी राय भी मांगी है। लन्दन में एक भाई ने बिगड़ कर मुझ से कुछ सवालात पूछे हैं जो

उन्हों ने उस किताब में दिये गये मेरे लेखों के उद्धरणों पर तैयार किये गये हैं। खुद मिस मेयो ने भी मुझे अपनी किताब की एक प्रति भेजने की कृपा की है।

मैं इस किताब को मुसाफ़िरी में पढ़ने के लिये निश्चय ही समय निकालता, ख़ासकर तब जब कि, मुझ में शक्ति ही थोड़ी है और डाक्टर-मित्र मुझे बराबर अधिक मिहनत करने से मने करते रहते हैं। मगर इन पत्रों ने तो उसका तुरत ही पढ़ लेना मेरे लिए लाज़िमी बना डाला।

किताब बड़ी चतुराई और ढंग से लिखी गयी है। होशियारी से चुने गये उतारे (extracts) इसे सच्ची किताब का रूप दे देते हैं। मगर मुझ पर तो इसका यही असर पड़ा हैं कि यह सफ़ाई के जमादार की रिपोर्ट है जिसे सिर्फ़ इस ही काम से भेजा गया था कि मोरियों को खोल कर देखे या खुली हुई मोरियों की बदबू का सुन्दर वर्णन लिखे। अगर मिस मेयो ने ही कबूल कर लिया होता कि वे हिन्दुस्तान में सिर्फ़ यहाँ की मोरियां देखने आयी थी तो फिर उनकी किताब से किसी को शिकायत न होती। मगर वह तो दावे से कहती हैं, "ये मोरियां ही हिन्दुस्तान हैं।" यह सही है कि आख़िरी अध्याय में कुछ चेतावनी दी गई है, मगर, वह चेतावनी भी तो ऐसी चालाकी से की गयी है कि वह एक तौर पर निन्दा ही की पोषक हो जाती है। मेरा तो विचार है कि जो कोई हिन्दुस्तान को ज़रा भी जानता है वह यहाँ के आद-

मियों के जीवन और विचारों पर मिस मेयो के भयकर इल्जामों को मान ही नहीं सकता।

यह किताब बेशक झूठी है चाहे इसमें बतलायी गई बातें सच ही क्यों न हों। अगर मैं लंडन की मोरियों की सारी बदबू का वर्णन लिखूँ और कहूँ, "देखो, यही लंडन है" तो मेरी बातों को कोई झूठा नहीं कह सकता मगर मेरा निर्णय तो बेशक सत्य का गला घोंटने वाला होगा। मिस मेयो की किताब इससे बेहतर नहीं है, बल्कि इसके सिवाय और कुछ नहीं है।

लेखिका कहती है कि वह हिन्दुस्तान के बारे में किताबें, लेख वगैरह पढ कर असंतुष्ट हो गई थी और इसलिए यह जानने के लिये यहाँ आयी कि "एक स्वेच्छा से घूमने वाली, जिसने किसी से रिश्वत नहीं ली है, जो पहले से मत बनाये हुए नहीं है, जिसे कोई पक्षपात नहीं है, लोगों के साधारण दैनिक जीवन में क्या देख सकती है।"

बहुत ध्यान से किताब पढ जाने के बाद मुझे खेद से कहना पड़ता है कि यह दावा मानना मुश्किल है। यह हो सकता है कि उसे धन से किसी ने खरीद न लिया हो। मगर पक्षपात से और पूर्वमत से रहित तो वह अपने को ज़रूर ही किसी भी पृष्ठ में नहीं दिखला सकी है। हम लोगों को यहाँ हिन्दुस्तान में पक्षपाती पुस्तकों को सरकार से सहायता दी जाती देखने की आदत सी पड़ गयी है—

'सहायता के लिए दूसरा सुन्दर शब्द है 'संरक्षण'। अँगरेज़ों के आने के पहले से ही हम लोग समझते आ रहे हैं कि सरकार की नीति में, विद्वान, मान्य और ईमानदार कहे जाने वाले लोगों से गुप्त रूप से काम लेने की और दूसरे संदिग्ध चरित्र के लोगों का भेद लिवाने या तात्कालिक सरकार के गुण गाने वाली किताबें लिखवाने की कला भी एक है और इस कला को अँगरेज़ों ने संपूर्णता पर पहुँचाया है। मुझे उम्मेद है कि ऐसा कोई सन्देह करने से मिस मेयो बुरा नहीं मानेंगी। शायद इससे उन्हें कुछ सान्त्वना हो कि हिन्दुस्तान के कुछ बड़े से बड़े मित्र अँगरेज़ों पर भी ऐसा सन्देह किया जा चुका है।

मगर शक की बात को अलग रख कर देखना चाहिये कि उसने ऐसी झूठी किताब लिखी है किस लिए। यह दुगुनी झूठी है। पहले तो यह झूठ है कि वह एक सारे राष्ट्र की निन्दा करती है, या उसके शब्दों में, 'हिन्दुस्तान की जातियाँ' (हमें वह एक क़ौम नहीं मान सकती) धर्म, नीति या सफाई की कोई पर्वा नहीं करतीं। फिर यह भी झूठ है कि वह ब्रिटिश सरकार के लिये ऐसे गुणों का दावा पेश करती है जिनको साबित नहीं किया जा सकता और जिन्हें देख कर कितने ही ईमानदार ब्रिटिश अफ़सर शर्म से सिर झुका लेंगे।

अगर उसे अनुचित सहायता नहीं मिली है तो वह पक्की हिन्दुस्तान विरोधिनी और इंगलिस्तान पक्षिणी है जो हिन्दुस्तान

में अच्छी बातें देख ही नहीं सकती, और न अँगरेजों या अँगरेजी राज्य के बारे में कोई बुरी बात देख सकती है।

वह पश्चिम की समझदारी का कोई ऊँचा नमूना नहीं है बल्कि ऐसी श्रेणी के लेखकों का नमूना है जो उत्तेजक बातें लिखा करते हैं मगर यह बात सन्तोष जनक है कि इनकी तादाद घट रही है। अमेरिकनों में ऐसे लोगों की संख्या बढ रही है जो जरा सी भी उत्तेजक या बनी बनायी, या टेढ़ी मेढ़ी बातों से घृणा करते हैं। मगर अफसोस तो यह है कि पश्चिम में अब भी हजारों पड़े हुए हैं जो ओछी, पर उत्तेजक बातों से खुश हुआ करते हैं। लेखिका के सभी उतारे (Extracts) या सभी बातें सही सही नहीं लिखी गई हैं। मैं उन्हें चुन लेना चाहता हूँ जिन्हें मैं खुद जानता हूँ। सारी किताब ऐसे उतारों और बयानों से भरी पड़ी है, जो सन्दर्भ (Context) से तोड़ कर ले लिये गये हैं और जिनका सप्रमाण विरोध हो रहा है।

महाकवि रवीन्द्र का नाम बाल विवाह के साथ जोड़ कर लेखिका औचित्य की सभी सीमाएँ लाँघ गई है। महाकवि ने यह अवश्य लिखा है कि कम उम्र विवाह की संस्था उन्हें—न चाहने लायक—नहीं है। मगर कम उम्र के विवाह में और बाल विवाह में जमीन आसमान का फर्क है। अगर मिस मेयो ने शान्ति निकेतन की स्वतन्त्र और स्वतन्त्रता प्रिय लड़कियों और स्त्रियों से परिचय करने की तकलीफ गवारा

की होती तो वह महाकवि के 'विवाह' का अर्थ जान पातीं।

अपनी दलीलों के समर्थन में वह बार बार मेरा हवाला देती है। किसी सुधार के रोजनामचे से, संदर्भ (Context) छोड़ कर, उतारे ले ले कर कोई उन लोगों की निंदा करे, जिनमें वह सुधारक काम करता है तो निष्पक्ष पाठक या श्रोता उस पर ध्यान नहीं देंगे। मगर हर हिन्दुस्तानी चीज़ को बुरे रूप में देखने की उतावली में उसने न सिर्फ मेरे लेखों से ही बडी स्वच्छंदता से काम लिया है, बलिक मेरे बारे में उसने या औरों ने उससे जो कई बातें कही हैं, उनकी तसदीक़ भी उसने मुझसे नहीं की है। सच पूछो तो हम लोग जिन कामों को हिन्दुस्तान में न्यायाधीश और शासक के काम समझते हैं, दोनों को ये अकेले ही कर रही हैं। वह खुद पैरोकार और क़ाजी बनी है। उसने मुझसे मुलाकात करने का वर्णन दिया है और अपने पाठकों को बतलाती है कि मेरे पास दो 'सेक्रेटरी' बराबर बैठे रहते हैं जो मेरे मुंह से निकला हर शब्द लिखते जाते हैं। मैं जानता हूं कि यहां जान बूझ कर सत्य को तोड़ा मरोड़ा नहीं गया है। तोभी यह बात सच नहीं है। मैं उसे बतला देना चाहता हूँ कि मेरे नज़दीक ऐसा कोई नहीं रहता जिसका यह काम हो या जिससे उम्मेद की जाय कि वह मेरे मुँह से निकला हर लफ्ज़ लिखता जाय। मेरे साथ महादेव देशाई नामके एक सहकारी हैं जो मेरी बातें लिखने में हद कर देना चाहते हैं और उनके सामने अगर मैं उनकी समझ में

कोई खास अक़्लमदी की बात कहता हूँ तो वे लिख लेते हैं। मैं उन्हें रोक भी नहीं सकता क्योंकि मेरे और उनके बीच में तो हिन्दू विवाह जैसा अटूट संबध है। मगर मेरे विरुद्ध सब से बड़ा इल्जाम तो अभी कहने को बाकी है। पृष्ठ ३८७-८८ पर वह महाकवि का मत लिखती है, "उन्होंने बहुत जोरों से कहा है कि आयुर्वेद के किसी अग में पश्चिमी बढ नहीं सकता' (यहा पर अपने समर्थन म कोई उतारे नहीं दिये हैं) तब मेरी राय लिखती है कि अस्पताल तो पाप फैलाने की संस्थाएँ हैं और एक पवित्र घटना को जो अंगरेज डाक्टरों और (मैं उम्मेद करता हूँ कि) मेरे लिए भी, सामान्य है, इतना तोडा मरोडा है कि उसे पहचानने के काबिल नहीं छोडा। पाठक उस किताब में से पूरा उतारा लेने के लिए, (आशा है कि) मुझे क्षमा करेंगे

"चू कि उस समय वे जेल में थे, एक सरकारी नौकर अगरेज डाक्टर उनके पास सीधे पहुँचा। और बोला, जैसा कि उस समय अखबारों में निकला था, मि० गांधी, बडे खेद की बात है, आपको अपेन्डिसाईटिज हो गया है। अगर आप मेरे मरीज होते तो मैं तुरन्त ही नश्तर देता। मगर आप शायद अपने आयुर्वेदिक वैद्य को बुलाना चाहें।'

"मगर गांधी जी का दूसरा ही विचार था।

"डाक्टर ने फिर कहा, मैं नश्तर देना नहीं चाहता हू क्योंकि अगर इसका फल बुरा हुआ तो आप के सभी मित्र हमीं पर

बुरी नीयत का इल्ज़ाम लगावेंगे जो आप की संभाल रखने के लिये हैं।'

"गांधी जी ने मिन्नत से कहा, अगर आप सिर्फ नश्तर देने को राजी हो जावें तो मैं अपने मित्रों को बुला कर समझा दूंगा कि आप मेरे कहने पर नश्तर दे रहे हैं।'

"इस तरह मि० गांधी खुशी बखुशी एक ऐसी 'संस्था में गये जो पाप फैलती है,' उन पर 'बुरों से बुरों' में से एक सरकारी डाक्टर ने नश्तर लगाया, और अच्छे होने तक एक अंगरेज़ बहिनने सावधानी से उनकी शुश्रूषा की कि जिसको आखिरकार उन्होंने एक काम का इंसान मान ही लिया।"

यह तो सत्य का गला घोंटना है। मैं केवल वे ही बातें ठीक करने की कोशिश करूंगा जो निन्दात्मक हैं, और भूलें छोड़ दूंगा। यहां पर कोई आयुर्वेदिक वैद्य के बताने की बात ही नहीं थी, कर्नल मैडोक को, जिन्होंने नश्तर लगाया था, मुझसे बिना पूछे, बल्कि मेरे विरोध करने पर भी अगर वे चाहते तो नश्तर लगाने का अधिकार था। मगर उन्होंने और सर्जन जेनरल हूटन ने मेरे प्रति नाज़ुक ख्याल दिखलाया, और मुझ से पूछा कि क्या मैं अपने डाक्टरों के लिए ठहरूंगा जो डाक्टर खुद पश्चिमी चिकित्सा और जर्राही का इल्म पढ़े हुए थे और उन के जाने हुए थे। उनकी शालीनता और शिष्टता का जवाब देने में मैं क्यों पीछे रहूँ? मैंने तुरन्त ही कहा कि 'मेरे डाक्टरों को आपने तार दिया है परन्तु उनके लिए

ठहरे बिना आप नश्तर लगा सकते हैं और मैं खुशी से एक पत्र लिख दूंगा जिसमें अगर नश्तर असफल हो तो आप पर इल्जाम न आवे।' मैंने यह दिखलाने की कोशिश की कि उनकी योग्यता या नीयत में मुझे कोई सन्देह नहीं था। मेरे लिए तो अपनी व्यक्तिगत सदाशयता दिखलाने का यह बड़ा अच्छा अवसर था।

जहांतक अस्पतालों वगैरह के संबंध में मेरा मत है, वह तो खुद अपने आश्रितों को अनेकों बार हिंदुस्तानी और यूरोपियन डाक्टरों के इलाज में रखने के बाद भी है ही। रलवे और मोटरों की निन्दा पर पहले जैसा कायम रहते हुए भी, मैं उन्हें भी इस्तेमाल करता हूँ। मैं तो खुद शरीर को ही दूषित और अपनी उन्नति के पथ में एक बाधा मानता हूँ। मगर जबतक यह चलता है, इससे काम लेने और इसी के नाश के लिए इसका जो अच्छा से अच्छा तरीका मैं जानता हूं, उसके मुताबिक काम लेने में कोई असंगति नहीं देखता। यह तो ऐसे सत्य के तोड़ मरोड़ का नमूना है जिसे मैं खुद जानता हूँ। मगर किताब तो घटनाओं के ऐसे वर्णनों से लबालब भरी हुई है जिन्हें कम से कम साधारण औसत हिन्दुस्तानी तो नहीं जानता। जैसे कि वह युवराज के स्वागत का एक वर्णन देती है जिसे हिन्दुस्तानी तो नहीं जानते, मगर अगर वह हुआ होता तो जरूर ही जानते। कहा जाता है कि युवराज की मोटर तक भीड़ को लड़ के जाना पड़ा। मिस मेयो कहती

है, "पुलिस ने तो युवराज की मोटर के चारों ओर घेरा बनाने की नाकामयाब कोशिश की जो अब अरक्षित हो कर चारों ओर से आदमियों के ठोस सागर में घिर गयी और धीरे धीरे चल कर स्टेशन पर पहुँची।" तब रेलवे स्टेशन पर जब गाड़ी खुलने को तीन मिनट रहे तब, बक़ौल मिस मेयो के युवराज ने साधारण जनता के लिए रास्ते खोल देने को कहा। फिर लेखिका लिखती है, "नदी की बाढ़ जैसी जनता की भीड़ बढ़ी, और लोग शोर करने लगे, हँसने लगे, रोने लगे। जब गाड़ी खुली तो उसके साथ जहाँ तक दौड़ सके दौड़ते गये।" यह सब १२ नवंबर १९२१ की संध्या को हुआ, कहा जाता है, उस समय दंगे की बुझती चिनगारियाँ गर्म ही थीं। इस कल्पनाओं से भरे परिच्छेद में इसी तरह का सामान अभी बहुत भरा पड़ा है और इसका शीर्षक है—'प्रकाश को देखो।"

१६ वां परिच्छेद तो ब्रिटिश सरकार के कारनामों की तारीफ़ के लेखों का संग्रह है, जिनमें प्रायः एक एक का विरोध ऐसे अँगरेज़ और हिन्दुस्तानी लेखकों ने, जिनके चरित्र पर सन्देह नहीं किया जा सकता, बराबर किया है,। सतरहवाँ परिच्छेद यह दिखलाने को लिखा गया है कि हम 'दुनिया के लिये ख़तरा है। अगर मिस मेयो के कहने से राष्ट्र-संघ यह घोषित कर देवे की हिन्दुस्तान अलग छोड़ा हुआ देश है जो लूट के नाक़ाबिल है तो मुझे कोई शक नहीं है कि पूर्व और

पश्चिम दोनों का ही लाभ होगा। हमारी तब आन्तरिक लडाइयां होंगी। जैसा कि यह डराती है, मध्य एशिया की जमायतें हिन्दुओं को खा जायेंगी—यह स्थित भी रोज़ ब रोज़ अधिकाधिक नामर्द बनाये जाने से लाख दर्जे अच्छी होगी। जैसे कि बिजली के धक्के से क्षणभर में मार डालना, जीते तेल म तलने की अपेक्षा दयालुता है, वैसे ही एक बारगी ही, मध्य एशिया की जमायतों का एक झोके में आकर अविरोधी, गदे, बहमी और बकौल मिस मेयो के विषयी हिन्दुओं को खा जाना इस जीवन और शर्मनाक मौत से जो हम रोज़ ही मिल रही है, दयालु मुक्ति होगा।

दुर्भाग्य से मिस मेयो का यह उद्देश नहीं है। उनका तो कहना है कि हिन्दुस्तानी अपना शासन करने के नाकाबिल हैं, इस लिए उन पर गोरों की सत्ता बनी रहे।

जा चोट करने वाली बातें यह चतुर लेखिका भिन्न लोगों के मुँहों से कहलाती है, वे तो किसी सनसनीदार उपन्यास सी मालूम होती है। जिसमें सत्य की कोई पर्वाह ही नहीं की गयी है। मुझे तो उनके कई बयान बिलकुल ही विश्वास के लायक नहीं मालूम पडते और जिन पुरुषों या स्त्रियों ने उन्हें कहा है, वे उसमें भले रूप में नहीं दिखाई देते। लीजिए किसी देशी राजा के मुह से कहलाया जाता है।

"उनमें से एकने बडी शान्ति से कहा, 'हमारी सन्धियां तो इंगलेण्ड के बादशाह से है। हिन्दुस्तान के राजों ने उस

सरकार से कोई सन्धि नहीं की जिसमें बंगाली बाबू हों। हम लोग इन नये पदाधिकारियों से तो कोई व्यवहार ही नहीं करेंगे। जब तक ब्रिटिश हिन्दुस्तान पर हैं वे, इंगलैण्ड के राजा की ओर से बातें करने के लिए अंगरेज़ भले मानुसों को भेजेंगे और मित्रों में जैसा होता है, सब ठीक ही चलेगा। अगर ब्रिटेन चला गया तो हम हिन्दुस्तान को सीधा करने के तरीक़ों से नावक़िफ नपाये जायेंगे कि जो राजाओं को जानना चाहिए।" पृष्ठ ३१८

हिन्दुस्तानी राज चाहे जैसे गिरे क्यों न हों, मगर यह मानने के लिए कि उनमें कोई इतना गिरा होगा कि जो ऐसी बात कहे, असंदिग्ध प्रमाण चाहिए। यह तो कहना ही है कि लेखिका राजा का नाम नहीं देती हैं। इससे भी बुरी बात तो पृष्ठ ३६४ पर आती है। वह यह है :

दीवान ने कहा, 'महाराजा साहेब यह नहीं मानते कि ब्रिटेन हिन्दुस्तान को छोड़ने वाला है। मगर तौ भी इस नयी हुकूमत में शायद उसे ऐसी बुरी सलाह मिले। इसलिए महाराजा साहेब अपनी सेना ठीक कर रहे हैं, गोली बारूद जमा कर रहे हैं, और चांदी के सिक्के ढाल रहे हैं। और अगर अंगरेज़ चले गये तो बंगाल में न एक रुपया रहेगा न एक कुमारी लड़की बचने पावेगी।"

पाठक को इन महाराजा साहेब या बुद्धिमान दीवान का नाम नहीं बतलाया जाता। हिन्दुस्तान में रहनेवाले अंगरेज़

स्त्री पुरुष के मुख से भी कितनी बात कहलायी जाती हैं। मैं उनके बारे में यही कह सकता हूँ कि अगर सचमुच किसीने ऐसी बात कही है तो उसमें जो विश्वास दिखलाया गया है, वह उसके लायक नहीं है, और वह अपने आश्रितों और मरीजों के प्रति अन्याय करता है, अपनी जाति के प्रति भी अन्याय करता है। यह सोच कर मुझे जरूर खेद होगा कि यहां बहुत से अंगरेज स्त्री पुरुष हैं जो अपने हिन्दुस्तानी मित्रों से एक बात कहते हैं और अपने गोरे साथियों से दूसरी ही। जिन अंगरेज स्त्री पुरुषों की मिस मेयो की मलागाडी और लीपा पोती पर नजर पडेगी वे समझ जायगे कि किन बातों से मेरा मतलब है। हिन्दुस्तान को जलील देखने के लिए मिस मेयो ने अपनी बातें साबित करने के लिए जिन्हें वह 'अटल' या निर्विवाद कहने का दम भरती है, जिन लोगों का उपयोग किया है, उन लोगों को ही अनजाने जलील कर डाला है। मैं उम्मीद करता हूँ कि मैंने काफी ऐसे सबूत दे दिये हैं जिनसे उनकी कई बातों की अलग अलग भी जड कट जाती है और सब कुछ मिला कर तो उसकी किताब एक अत्यन्त झूठी तसवीर मालूम होती है।

मगर मैं यह लेख लिख ही क्यों रहा हूँ। हिन्दुस्तानी पाठकों के लिए नहीं, वरन् उन यूरोपियन और अमेरिकन पाठकों के लिए जो हर हफ्ते प्रेम और ध्यान से 'यंग इण्डिया' को पढा करते हैं। मिस मेयो ने मेरे मुंह पर से

जो संदेशा कहलाया है, वह कहना मुझे याद नहीं है। सिर्फ एक आदमी वहाँ पर था, और अगर कुछ बातें लिखी भी गयी थीं तो जिसने लिखी थीं उसे भी ऐसी कोई बात याद नहीं है। मगर मैं जानता हूं कि हर अमेरिकन को जो मुझे देखने आता है, मैं क्या कहता हूं, "अमेरिका में आपको जो अखबार या रोचक किताबें मिलती हैं, उन पर यक़ीन मत कीजिए। मगर अगर आप हिन्दोस्तान का कोई हाल जानना चाहते हैं तो हिन्दुस्तान में विद्यार्थी बनकर जाइए और हिन्दुस्तान का खुद अध्ययन कीजिए, अगर आप हिन्दुस्तान में नहीं जा सकते तो उसके पक्ष और विपक्ष की सब किताबें पहले पढ़ लीजिए और तब कोई नतीजा क़ायम कीजिए क्योंकि आप को जो किताबें मामूली तौर पर मिलती हैं, वे या तो हिन्दुस्तान की अत्यधिक निन्दा की होती हैं, या तारीफ़ की।"

मैं अमेरिकनों को और अंगरेज़ों को मिस मेयो की नक़ल करने से सावधान करता हूं। जैसा कि उसका दावा है वह पक्षपात रहित होकर नहीं आयी, बल्कि अपने पहले के बनाये विचारों और पक्षपातों को लेकर आयी जिनका पता हर एक पृष्ठ में मिलता है, यहां तक कि प्रारंभिक प्रस्तावना के परिच्छेद में भी जहाँ पर वह यह दावा पेश करती है कि वह हिन्दुस्तान को देखने के लिए नहीं आयी बल्कि मसाला जमा करने आयी, जिसका तीन चौथाई तो वह अमेरिका बैठे ही इकट्ठा कर सकती थी।

मिस मेयो की किताब जैसी किताब का इतना ज्यादा प्रचार होना पश्चिम के साहित्य और संस्कृत पर बुरी आलोचना है।

मैं यह लेख एक और आशा से भी लिख रहा हूँ चाहे उसका फलीभूत होना कितना ही कठिन क्यों न हो मुझे आशा है कि स्वय मिस मेयो का हृदय शायद पिघल जावे और उसको उस घोर अन्याय पर पश्चाताप हो कि जो उसने कदाचित अनजाने में अपने स्वजातीय अमेरिकनों के साथ उनका मन हिन्दुस्तान के विरुद्ध भड़काने म अपनी निर्विवाद योग्यता का उपयोग करके किया है—

'जले पर नमक' और दुर्भाग्य तो यह है कि यह किताब हिन्दुस्तान के लोगों को समर्पित की गयी है। अवश्य ही सुधारक बन कर प्रेम से उसने यह किताब नहीं लिखी है। अगर मेरा ख्याल गलत होवे तो वह हिन्दुस्तान लौट आये। वह जिरह करने देवे और अगर उसकी कही बातें जिरह और बहस की आच में स जैसी की तैसी निकल आवे तो वह हमारे बीच में रहे और हमारे जीवन का सुधार करे। इतना भर तो मिस मेयो और उसके पाठकों के लिए हुआ।

अब इसका दूसरा पहलू देखना है। गो मैं इस किताब का किसी अंग्रेज या अमेरिकन के पढ़न के योग्य नहीं समझता क्योंकि उससे उनको कुछ भी लाभ नहीं पहुँचा सकता तो भी हर एक हिन्दुस्तानी इसे पढ़कर कुछ न कुछ लाभ उठा सकता

है। इल्ज़ामों की बनावट का हम विरोध कर सकते हैं, मगर उसके भीतर के तत्व का विरोध तो नहीं कर सकते। जैसे दूसरे हमें देखते हैं, उसी प्रकार अपने को देखना अच्छा होता है। किताब लिखने के उद्देश्य को हम को भूल जाना चाहिये सावधान सुधारक उसका कुछ उपयोग कर सकता है। इसमें ऐसी बातें भी हैं जिनकी जांच होनी चाहिए। जैसे कि लिखा है कि वैष्णव तिलक का अश्लील अर्थ है। मेरा तो जन्म ही वैष्णव परिवार में हुआ है। वैष्णव मन्दिरों में जाने की मुझे पक्की याद है। मेरे घरवाले कट्टर वैष्णव थे। बचपन में खुद मैं तिलक दिया करता था, मगर न तो मैं, न मेरे घर का और ही कोई जानता था कि इस सुन्दर चिह्न में भी कोई अश्लील रहस्य है। मद्रास में जहां यह लेख लिखा जा रहा है, मैंने एक वैष्णव दल से पूछा। इस कहे जानेवाले अश्लील रहस्य की बात वे भी नही जानते। इस लिए मै यह नही कहता कि इसका कोई अश्लील अर्थ कभी था ही नही मगर मै यह ज़रूर कहता हूँ कि इसके पीछे जो अश्लीलता कही जाती है, उससे लाखों आदमी अनजान ज़रूर हैं। हमारे पश्चिमीय दर्शकों के लिए अब यह बाकी है कि वे हमारे कई कामों में अश्लीलता दिखायें जिन्हें हम आज तक निर्दोष समझते आ रहे हैं। पहले पहल किसी पादरी की किताब में मैंने जाना कि शिवलिंग में अश्लीलता है मगर अब भी जब कभी मैं कहीं शिवलिंग देखता हूँ तो न उसका रूप न उसके

आसपास की चीज ही अश्लीलता का कोई भाव सुझाती है। किसी पादरी की किताब में ही मैंने देखा कि अश्लील मूर्त्तियों के द्वारा उडिस्सा के मंदिर कुरूप बना डाले गये हैं। जब मैं पुरी गया था तो सहज ही ये चीजें नहीं देखी जा सकी थी। मगर मैं यह जरूर जानता हूं कि इन मन्दिरों में दर्शन के लिए जो हजारों आदमी जाते हैं, वह इन मन्दिरों के चारों ओर की अश्लीलता के बारे में कुछ नहीं जानते। लोग इसके लिए तैयार तो होते नहीं और वे मूर्त्तियाँ आखों के आगे आकर खड़ी नहीं होतीं मगर हमारा बुरा पहलू चाहे जहा हो, उसे अगर कोई हमें दिखलाये तो हम बुरा न मानना चाहिये। हमारी गदगी, बालविवाह वगैरह के चित्र उसने बेशक बढा कर खींचे हैं। मगर हमें समाज के दोष दूर करने में ये चित्र उत्साहित ही करें। जो कुछ भली बात विदेशी यात्री हमारे बारे में कह जायँ, उनके लिए उनका उपकार मानते हुए हम अगर अपने गुस्से पर काबू रक्खें तो हम अपने आलोचकों से ही, सरक्षकों की बनिस्बत कहीं अधिक बातें सीखेंगे, जैसा कि मैंने सीखा है। मिस मेयो की निन्दाओं के विरुद्ध उचित और न्याय क्रोध, हम दिखलायेंगे ही, मगर उससे हमारी आखें हमारे स्पष्ट दोषों और त्रुटियों की ओर से मुड न जायँ। हमारे क्रोध से तो मिस मेयो का बाल भी बाका न होगा, मगर वह उलट कर हमारा ही बुरा करेगा। पश्चिम जैसे अपने यहा भी तो विचारहीन पाठक हैं ही और मिस मेयो की एक एक बात

ग़लत साबित करने में हमारे लेखक पाठकों को विश्वास दिलायेंगे कि हम संपूर्णता को पहुँचे हुए मनुष्य हैं जिनके विरुद्ध कोई एक शब्द भी नहीं कह सकता। इस तरह पर इस किताब के विरुद्ध जो आन्दोलन हो रहा है, उसमें मर्यादा के उल्लंघन का डर है। क्रोध करने का कोई कारण नहीं है। मैं यहां यह आलोचना, जो कि मैंने बहुत ही अनिच्छा से और काम की बहुत भीड़ में लिखी है, तुलसीदास का एक दोहा दे कर समाप्त करूंगा।

दोहा

जड़ चेतन गुण दोष मय, विश्व कीन्ह करतार।
संत हंस गुण गहहिं पय, परिहरि वारि विकारि॥

(नवजीवन)

———o———
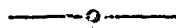
लाला लाजपतराय की आलोचना

मदर इण्डिया

(इण्डियन पीपुल से उद्धृत)

विदेशियो ने जितनी किताब, आज तक हिन्दोस्तान पर लिखी हैं उनम से किसी ने भी इतनी हलचल इगलिस्तान और हिन्दोस्तान मे नहीं मचाई, जितनी कि मिस मेयो की इस किताब न मचा रक्खी है—

मेरे एक अगरेज मित्र ने जिनके विचार हिन्दोस्तान की स्वाधीनता के बारे म बडे पक्के और समय से बढ चढे ह मुझे पिछली जुलाई म लिखा था कि इस किताब से "हमारे" पक्ष की अत्यन्त हानि हो रही है—उसके बाद कई प्रतिष्ठित हिन्दोस्तानियों ने जो इस समय इगलिस्तान में हैं इस पुस्तक में लिखी बातो का दृढ प्रतिरोध किया। इस प्रतिरोध पर हस्ताक्षर करने वाला म अधिकतर 'नाइट' (Knight) यानी (Sir) 'सर' की पदवी से विभूषित थे। और उनमें सरकारी व गैरसरकारी सभी हिन्दोस्तानी सम्मिलित थे। इस प्रतिरोध के लदन के प्रसिद्ध पत्र 'टाइम्स' (Times) ने छापने से इकार कर दिया। अब वह हिन्दोस्तान के समाचार पत्रों में छप चुका ह अतएव मुझे उसके दोहराने की आवश्य-

कता नहीं। प्रतिरोध की भाषा जितनी कड़ी हो सकती थी उतनी थी।

पिछले चार साल में मैं तीन वार इंगलिस्तान जा चुका हूँ और मैं भली प्रकार देख चुका हूँ कि न सिर्फ़ इंगलिस्तान में बल्कि दुनियां के और और मुल्कों में भी ख़ास कर अमेरिका में हिन्दोस्तान के और हिन्दोस्तानियों के स्वाधीनता के अधिकारों के विरुद्ध एक प्रभावशाली, सर्वव्यापी, सुसंगठित आन्दोलन किया जा रहा है और प्रचार में काफ़ी रुपया ख़र्च किया जा रहा है। हमें पूरी तरह वदनाम करने की ग़रज़ से बड़ी बड़ी तैय्यारियां की गई हैं और हर प्रकार के साधन काम में लाये जा रहे हैं। इस शुभ काम में एंग्लोइंडियन (नौकर और पिनशनिये दोनों) अंगरेज़ पादरी और बड़े बड़े सौदागर सभी जुट पड़े हैं। जिस ढंग से यह काम हो रहा है वह अत्यन्त चतुरता तथा धूर्त-नीति से भरा है। राजनैतिक अथवा औद्योगिक दृष्टिकोण से हम पर आलोचना नहीं की जाती। केवल हमारी सामाजिक बुराईयां और कमज़ोरियां वखानी जाती हैं। और वह भी इतनी वढ़ा वढ़ा कर कि जिससे हमारी विल्कुलही वनावटी झूठी और घिनौनी तस्वीर लोगों के सामने खड़ी हो जावे और हिन्दोस्तानियों के प्रति अत्यन्त घृणा के भाव फैल जावें। समाचारपत्र, सभा मंडप, गिरजाघर, थियेटर और सिनेमा तक का हिन्दोस्तानियों के विरुद्ध उपयोग किया गया है। दुर्भाग्य से कुछ

विचारहीन हिन्दोस्तानियों ने भी इसमें योग दिया है कुछ ने तो स्वार्थ और लोभ के वश में आकर और कुछ ने अनजान में। कई कारणों से मुझे शुभा होता है कि मिस मेयो की "मदर-इंडिया" भी इस ही आन्दोलन का एक अंग है। मिस मेयो की आन्तरिक इच्छा का वास्तविक ज्ञान मुझे नहीं है परन्तु उसका जीवन-उद्देश्य से यह प्रतीत होता है कि जो हलचल एशिया की पराधीन जाति में एंग्लो-सैक्सन जाति की मात हती से छुटकारा पाने के लिये मचा रही है उसको हास्यास्पद और तुच्छ दिखा कर उसका विरोध करें। यह काम मिस मेयो एक समाजिक सुधारक के भेष में करती है। जैसा कि १८ अगस्त १९२७ के "पीपल" में डाक्टर तारक नाथ दास लिखते हैं मिस मेयो एक अमरीकन समाचार पत्र लेखिका है जो एक ऐसी ही पुस्तक (Phillipine) फिलीपाइन जातीय आन्दोलन के विरुद्ध लिख चुकी है। इस पुस्तक का नाम "Isles of Fear" "आइल्स आफ फीयर" (भयावह द्वीप) है और इसमें फिलीपाइन द्वीप निवासियों के राष्ट्रीय आन्दोलन का अत्यन्त बुरा दिखला कर उनका स्वाधीनता-प्रदान करने का घोर विरोध किया गया है। इस पुस्तक का अंगरेजी संस्करण इंगलिस्तान में सन् १९२५ में अगस्त और दिसम्बर के बीच में निकला था। क्योंकि इसकी भूमिका Mr Lionel Curtis (मि० लियोनल कर्टिस) ने अगस्त सन् १९२५ में (Williams Town massa-

chusetts U.S.A.) अमरीका ही में बैठ कर लिखी है। "शुरू अक्टूबर १९२५ में" (मिस मेयो के कथनानुसार) मिस मेयो हिन्दोस्तान आती हुई लन्दन ठहरी और वह लन्दन-स्थित India Office इंडिया आफ़िस (मानो भारत-सचिव के दफ्तर) में अपने काम ("मदर-इंडिया" लिखने) की सफलता का आशीर्वाद लेने गई। Mr. Lionel Curtis मि० लियोनल कर्टिस ने जो भूमिका 'आइल्स आफ फ़ीयर" पुस्तक की लिखी है उससे मिस मेयो के उद्देश्य और उसके काम करने के तरीक़ों पर कुछ प्रकाश पड़ता है। मि० कर्टिस लिखते हैं कि:—

"वृटिश गवर्नमेण्ट के अलावा संसार की और सरकारें दूसरी जितनी जातियों पर राज्य करती हैं उन सब में कहीं अधिक जातियें वृटिश गवर्नमेन्ट के आधीन हैं और इसलिये वृटिश सरकार की ज़िम्मेदारी सब से भारी है। और हमारा (यानी वृटिश जाति का) अनुभव इस मामले में सदियों—पुराना है (क्या हम पूछ सकते हैं कि कितनी सदियों—पुराना है ? क्योंकि वृटिश सरकार को एशिया में पैर जमाये अभी पूरे दो सौ बरस भी नहीं हुए!) और हम दूसरी ऐसी ही, यानी अमरीकन, जाति के अनुभव से अनभिज्ञ नहीं रह सकते या वृटिश पार्लियामेंट में हिन्दोस्तानी या (Colonial) (प्रादेशिक) मामलों पर बहस करने वाले वृटिश-सचिव से यह आशा की जा सकती है कि वह पार्लियामेंट के सदस्यों

को यह बतलाय कि वृटिश जाति को भली प्रकार मालूम है कि अमरीकन या डच सरकारें अपने अपने अधीन फिलीपाइन या जावा प्रदेशों में इसी प्रकार की समस्याओं को कैसे सुलझाती है। सन १९१७ के हिन्दोस्तानी-जातीय आन्दोलन करने वाले आम तौर पर उस नीति की मिसाल दिया करते थे कि जो अमरीकन सरकार अपने अधीन फिलीपाइन प्रदेश में फिलीपाइनों के साथ काम में ला रही थी। सन् १९१८ में हिन्दोस्तान की अंग्रेजी सरकार के सदस्य (Sir W ma, er (सर डब्ल्यू मेअर) जब पेंशन लेकर विलायत जाने लगे तो वह भी फिलीपाइन प्रदेश में ठहर कर गये थे। यह मालूम नहीं कि उन्हों ने फिलीपाइन्स में अमरीकन-नीति पर कोई रिपोर्ट लिख कर लन्दन स्थित भारत सचिव को दी या नहीं। इसलिये आशा की जाती है कि कुछ स्वतन्त्र वृटिश निरीक्षक अवश्य ही इस ओर ध्यान देंगे। अमरीकन कांग्रेस (यानी अमरीकन-सरकार) ने सन १९१६ में Jones Law जोन्स ला पास करके अपने आधीन फिलीपाइनों को बहुत कुछ स्वतन्त्रता दे दी थी। यानी कानून बनाना और हर प्रकार के सरकारी खर्च को मजूर करना स्वयं फिलीपाइनों के आधीन कर दिया था। केवल इन्तजामी अधिकार एक गवनर को दे दिये गये थे और गवर्नर-अमरीका के प्रेसीडेंट के प्रति जवाबदेह रक्खा गया था। जो शासन पद्धति हिन्दोस्तान में १९२० में चलाई गई है उसके

अलावा यदि कोई और शासन-पद्धति हिन्दोस्तान के उपयुक्त हो सकती थी तो वह ऊपर कही गई (Jones Law) जोन्स ला वाली शासन-पद्धति से ही मिलती जुलती हो सकती थी। केवल यही एक ऐसा कारण है कि जिससे हिन्दोस्तानी-स्थिति के जानने वाले (बृटिश) विचारकों के लिये यह आवश्यक हो जाता है कि वह उन नतीजों का भली प्रकार अध्ययन करें, कि जो जोन्स ला के फल-स्वरूप फिलीपाइन-प्रदेश में दृष्टि-गोचर हो रहे हैं। अतएव मैं इस पुस्तक (Isles of Fear) आइल्स आफ़-फ़ियर को अंगरेज़ी पाठकों के अध्ययन के योग्य समझता हूँ और सिफ़ारिश करता हूं कि वह उसको ध्यान से पढ़ें। मै जानता हूँ (मि० कर्टिस आगे चल कर कहते हैं) कि मिस मेयो ने जो बुरे नतीजे फिलीपाइनों को अमरीकन सरकार द्वारा प्रारम्भिक स्वराज्य मिलने के दिखलाये हैं उन का प्रभाव अंगरेज़ों की हिन्दुस्तान शासन की उस सुधार-नीति पर जो १९१७ से शुरू हुई है बहुत बुरा पड़ेगा। मिस मेयो जो तस्वीरें मानवी संसार की खींचा करती है उस में केवल दो ही रंग हुआ करते हैं स्याह (अत्यन्त बुरा) और सफ़ेद (अत्यन्त अच्छा)। इसलिये उनकी तस्वीरों में यह गुंजाइश ही नही होती वह कोई मध्यम या हल्का रङ्ग (अच्छाई का या बुराई का) दिखा सकें'

जो विचार अमरीकन लोगों के दिलों में मिस मेयो की (Isles of Fear) आइल्स-आफ़-फ़ीयर पुस्तक से पैदा हुए

उसका वर्णन करते हुए मि० कर्टिस स्वलिखित भूमिका में कहते हैं —

"यहां यानी 'विलियम्स टाउन (Williams Town) में और अमरीका में तथा दूसरी जगहों में ऐसे मित्रों से मिल चुका हूँ कि जिनको स्वयं सरकारी और निजी तौर पर फिलीपाइन प्रदेश के वो सब हालात और घटनाएं मालूम हैं कि जिनका वर्णन मिस मेयो ने इस पुस्तक आईल्स आफ फीयर (Isles of Fear) में किया है। ये सब मित्र दो बातों पर सहमत हैं। एक तो यह कि मिस मेयो ने कोई बात ऐसी नहीं लिखी है कि जो उनकी (मित्रों की) राय में सत्य नहीं है किन्तु यह मित्र यह अवश्य कहते हैं कि और भी बहुत सी जरूरी और विचार-योग्य बातें हैं जो मिस मेयो जान ही नहीं सकती थीं क्योंकि उनके जानने के लिये मिस मेयो का गुजरे हुए जमाने में फिलीपाइन्स जाना जरूरी था। इन मित्रों में से दो ऐसे हैं कि जो हिन्दोस्तान रह चुके थे और हिन्दोस्तानी राष्ट्रीय नेताओं से मिल चुके थे। जब मैं ने उनसे पूछा कि फिलीपाइन नेताओं के मुकाबले में हिन्दोस्तानी नेता कैसे जचते थे। तो उन्हों ने यह अवश्य कहा कि हिन्दोस्तानी नेता फिलीपाइनों से अधिक ऊंचे दरजे के और बेहतर होते हैं।"

क्या हम पूछ सकते हैं कि क्या मिस मेयो इस ही लिये हिन्दोस्तान आई थीं कि कतिपय अमरीकन लोगों के इन

अच्छे विचारों को जो हिन्दोस्तानियों के प्रति उनके दिलों दिमाग़ में जगह पा चुके थे मिटाने के लिये मसाला जमा करें? हम ऊपर कह चुके हैं कि मि० कॉटन ने ऊपर लिखी भूमिका अगस्त १९२५ में लिखी। मिस मेयो हिन्दोस्तान को आती हुई लन्दन अक्टूबर सन १९२५ में ठहरीं और इण्डिया आफ़िस गईं। अट्ठारह महीने से कुछ कम में उस ने यह सब काम कर डाला कि वह तमाम हिन्दोस्तान भर में घूम गईं और हिन्दुओं के सामाजिक जीवन की छोटी छोटी बातें लेकर ऐसा ज़हरीला मसाला इकट्ठा कर लिया कि जो हिन्दोस्तानियों की स्वराज की मांग पर वज्र घात करे और इस मसाले को पुस्तकाकार में अङ्गरेज़ी पब्लिक के सामने पेश कर दिया। जून सन् १९२७ में यह किताब "मदर इण्डिया" इंगलिस्तान में प्रकाशित हो गई। यह किताब पहले अमरीका और फिर इङ्गलिस्तान में प्रकाशित हुई। दो जगह छपने में कुछ समय लगा ही होगा परन्तु यह सब अट्ठारह महीने में ही हो गया। यह पुस्तक ऐन मौक़े पर हिन्दुस्तान की राजनैतिक उन्नति के विरोधियों के हाथ लगी और उन लोगों के बड़े काम की चीज़ बन गई, जो इस कोशिश में हैं कि आगामी रायल कमीशन के सदस्य केवल अंगरेज़ ही हों। लंदन के सुप्रसिद्ध "टाइम्स" ने सब से पहले इस पुस्तक की समालोचना की और इस को The Book of the Year, अर्थात् "इस वर्ष की सब से प्रभाव शाली पुस्तक" की पदवी

दी। "टाइम्स" पहले से ही अङ्गरेजी पब्लिक को यह शिक्षा दे रहा था कि आगामी कमीशन में सिर्फ अंग्रेज ही होने चाहियें और हिन्दोस्तानी वर्ण व्यवस्था को पाप मय दिखा कर पराम लाच अङ्कून, पर विशेष जोर दे कर, इन्हीं सब दलीलों से इस शिक्षा की पुष्टि कर रहा था। ऐसे समय में इस शत्रुता-भरे बदनीयत आन्दोलन म योग देन के लिये यह पुस्तक "टाइम्स" के हाथ लग गई। जब एक 'निष्पक्ष' अमेरिकन लेखिका हिन्दोस्तानी सामाजिक पद्धति की पोल खोलती है। तथा हिन्दोस्तानी नेताओं के (अपने हा गरीब भाइयों के प्रति) कठोर पाशविक व्यवहार और उनकी नैतिक भीरता का कच्चा चिट्ठा पेश करती है तो इस से अधिक जोरदार और क्या दलील स्वराज की माग को अस्वीकार करने और स्वाधीनता के दावे को खारिज कर देने के पक्ष मे हो सकती है। इन विचारों से रंग हुए मस्तिष्क के इंगलिस्तान के सबसे बड़े समाचार पत्र "टाइम्स" को इस पर बाध्य कर दिया कि वह उस प्रतिरोध को छपने से इन्कार करदे कि जिसको चन्द हिन्दोस्तानी नेताओं ने प्रकाशनार्थ उसके पास भेजा था। इस प्रतिरोध में मिस मेयो की ईमानदारी तथा उसकी कथित बातों की सत्यता पर सदेह जनक आक्षेप किया गया था। उस पर अधिकतर ऐसे ऐसे हिन्दोस्तानियों के हस्ताक्षर थे कि जिनके देश प्रेम तथा राजनीतिज्ञता कि प्रशसा अनेक बार स्वय "टाइम्स" कर

चुका था। इनमें इंडिया कौंसिल India council (लंदन स्थित भारत-सचिव की कौंसिल) के तीनों हिन्दोस्तानी मेम्बर (२ हिन्दू-१ मुसलिम) भी शामिल थे। इनमें कितने ही माडरेट (Moderate) नरम-दल के हिन्दोस्तानी नेता ऐसे भी थे कि जो अंगरेज़ी-सरकार द्वारा नाइट हुड Knight-hood यानी "सर" की उपाधि से विभूषित तथा और तरह पर सम्मानित थे। लंदन-स्थित इंडियन हाई कमिश्नर (Indian High Commissioner) सर अतूल चन्द्र चैटर्जी के भी हस्ताक्षर उस प्रतिरोध पर थे। ऐसे महत्व के प्रतिरोध को छाप देना "टाइम्स" के लिये अपने पैर आप कुल्हाड़ी मारना था ख़ास कर ऐसी हालत में जब कि अंगरेज़ी पब्लिक की यह हालत हो कि "टाइम्स" में हिन्दोस्तान के बारे में जो कुछ भी छप जावे उस हा को अंगरेज़ी पब्लिक वेद वाक्य की तरह मानने को तैय्यार हो—

लीडर (Leader) के लंदन-स्थित सम्वाद दाता का कहना है कि इंगलिस्तान के अधिकारी वर्ग में यह किताब मुफ़्त बांटी गई है-"लीडर" के लंदन-स्थित सम्वाद-दाता एक शुद्ध हृदय रखने वाले अंगरेज़ सज्जन हैं जो कभी भी इस क़िस्म की ख़बर देने वाले नहीं, अगर उस में कुछ भी तत्व नहीं है—

पाठकगण ! निष्पक्ष हो कर स्वयं तय कर लें कि ऊपर लिखी घटनाओं से यह नतीजा निकलता है कि नहीं, कि जो इस

लेग में निकाला गया है यानी यह कि यह पुस्तक "मदर इंडिया" उस आन्दोलन का एक अंग है कि जो अपने रुपये की सहायता से हिन्दोस्तान की स्वराज की माग के विरोधी चला रहे हैं। पुस्तक ही में ऐसा मसाला मौजूद है जो इस निर्णय के न्याय सगत होने का प्रमाण है पुस्तक की भूमिका लिखी जाने की न कोई तारीख दी गई है और न उस में किसी नाम का ही उल्लेख किया गया है। परन्तु उसमें लिखा है कि —

"मुझे उन अनेक हिन्दोस्तानी और अंगरेज सज्जनों का नाम कृतज्ञता पूर्ण उल्लेख करने में निहायत ही खुशी होती कि जिनकी कृपा और सौजन्यता से मुझे वह कागजात, लेख, स्थान और वस्तुएं देखने में सुभीता मिला है कि जिनको मैं स्वयं देखना चाहती थी। लेकिन इन सज्जनों को इसका क्या पता चल सकता था की मैं किन किन नतीजों पर पहुँचूंगी और न वह सज्जन मेरे नतीजों के लिये किसी प्रकार जिम्मेदार हैं। अतएव मैं उनके नामोल्लेख को मुनासिब नहीं समझती। इस ही कारण इस पुस्तक की हस्त लिपि गवर्नमेंट आफ इंडिया के किसी भी सदस्य को अथवा किसी भी ऐसे हिन्दोस्तानी या अंगरेज सज्जन को नहीं दिखलाई गई है कि जिसका सम्बन्ध सरकारी संस्थाओं से हो"

ऊपर लिखे रेखाङ्कित शब्द कुछ कुछ पोल को खोल देते हैं। अतएव मेरा यह निर्णय है कि "मदर इंडिया" किसी हिन्दोस्तान के अथवा मनुष्य मात्र के नेक नीयत मित्र की लेखनी

से नहीं निकली है। यह ऐसे नितान्त पक्षपाती साम्राज्य-लोलुप लेखक का काम है कि जो संसार में एंग्लो-सैक्सन जाति की प्रभुता बनाये रखने का इच्छुक है और जिसकी सहानुभूति एशियाई जातियों के विरुद्ध है। इस लेखक का एक मात्र उद्देश्य यह मालूम होता है की जो जाति इस समय एंग्लो सेक्सन जाति के आधिपत्य में मजबूर और बेबस हैं उनकी सभ्यता और रस्म रिवाज की केवल कमज़ोरियां ढूंढ ढूंढ कर निकाली जावें। यह मित्र का काम नहीं है कि वह दोष ही दोष देखे और दिखलावे। मित्र तो दोष गुण दोनों ही की सच्ची तस्वीर खींचता है। मिस मेयो ने जो हिन्दोस्तान की तस्वीर खींच कर संसार को दिखाई है वह एक अत्यन्त अंधकारमय तथा निराशामय नरक की है। उस में यदि कोई प्रकाश की किरण दिखलाई है तो वह यही है कि जिसकी आशा अंगरेज़ों के इस देश पर एक अनिश्चित भविष्य तक जमे रहने से की जा सके।

यदि हिन्दुस्तानी ऐसी किताब का मुंह तोड़ जवाब देना चाहें तो वह भी पश्चिमीय सभ्यता के नमूने न्यूयार्क शिकागो, लंदन और पेरिस में होने वाली इतनी ही बल्कि इनसे भी ज़्यादा गन्दी और घृणित घटनाओं को सप्रमाण वर्णन कर के दे सकते हैं कि जैसी घटनाओं का चित्र हिन्दोस्तान के सम्बन्ध में "मदर इंडिया" में खींचा गया है। हम

भी "मिस मेयो" से कह सकते हैं कि देखो जी, महाराज पहले अपना इलाज तो कर लीजिये।

"मदर इंडिया" सत्य अर्ध। सत्य, अर्ध सत्य और असत्य की खिचड़ी है। ऐसी किताब का सरकार द्वारा जब्त कराने की कोशिश करना बेफायदा है। जिस जहरीली हवा का हमारे विरुद्ध फैलाना इस किताब की मन्शा थी वह इस किताब को इंगलिस्तान, यूरोप और अमरीका में प्रकाशित करके फैलाई जा चुकी है। साम्राज्य लोलुप अंग्रेजों को अपने इस पुराने राग का अलापने के लिये कि 'हिन्दोस्तानी अपने अंग्रेज मालिकों की कृपा पात्र होने के योग्य ही नहीं हैं" एक और सहारा और प्रमाण मिल गया। अगर पुस्तक जब्त करली जावे तो संभव है कि हिन्दुस्तानियों का उचित रूप संसार पर प्रकट होने का अवसर और इस तरह हिन्दुस्तानियों की अयोग्यता का कलंक भी कुछ मिट जावे। परन्तु जिन हालात में कि पुस्तक का जन्म हुआ, प्रतीत होता है उनमें यह आशा निर्मूल है कि हिन्दुस्तान की अंगरेजी सरकार पुस्तक को जब्त करने की कार्रवाई करेगी।

तो भी पुस्तक हमारे लिये शिक्षाप्रद अवश्य है। इस में कुछ ऐसी कड़वी परन्तु सच बातें अवश्य हैं कि जो हिन्दोस्तानी नेताओं के पठन और मनन करने योग्य हैं। कभी कभी मित्र की चापलूसी से कहीं अधिक शत्रु की कड़ी आलोचना लाभदायक हो जाया करती है—

लाला लाजपत राय का दूसरा लेख

"निष्पक्ष" मिस मेयो

(इण्डियन पीपुल से उद्धृत)

यह अब भली प्रकार विदित हो चुका है कि "मदर-इंडिया" की लेखिका मिस मेयो एक निष्पक्ष सत्य की खोजने वाली न थी बल्कि वह हिन्दोस्तान एक ख़ास मतलब से साम्राज्य-लोलुप अंगरेज़ों के स्वार्थ का साधन बन कर आई थी। मतलब था हिन्दोस्तानियों को गालियां देना और-गांधी जी के शब्दों में उसने "गन्दी नालियों के निरीक्षक" का काम इस योग्यता से किया है कि उसके पृष्ठ-पोषक सज्जनों ने उसकी भूरि भूरि प्रशंसा की है और पैसों की भी कमी नहीं रहने दी। पैसों से हमारा मतलब उस धन से है जो मिस मेयो को "मदर इंडिया" की असाधारण बिक्री से प्राप्त हुआ है। इसके अतिरिक्त यदि मिस मेयो को कुछ और धन बतौर सहायता या इनाम के मिला हो तो इसके बाबत हम कुछ कह ही नहीं सकते। यदि न्यू स्टेट्स मैन (New statesman) वगैरः पुरानी लकीर के फ़कीर साम्राज्य वादी अंग्रेज़ी समचार पत्रों ने इस पुस्तक का ऐसा प्रचार न किया होता तो कदाचित अमेरिका में जनता का ध्यान "मदर इंडिया" की ओर आंधक न खिंचता। न्यू स्टेट्स मैन पत्र का भाव हिन्दोस्तान के सम्बन्ध में कट्टर साम्राज्य-

वादियों का भी मदा ही रहा है और अब आशा की जाती है कि हिन्दोस्तानी भी समझ गये होंगे कि न्यू स्टेट्स मैन साम्यवादी या मजदूर दल के श्रेष्ठतर विचारों का प्रतिनिधि नहीं है। वह तो पुरानी लकीर के फकीर वाले सिद्धान्त का मुख पत्र है और हिन्दुस्तानी समस्याओं को सुलझाने के समय उसकी आंखों पर सदैव ही पक्षपात की ऐनक चढ़ी रहती है। अंग्रेजी साम्राज्य वादी पत्रों के अतिरिक्त एंग्लो इंडियन पत्रों ने तथा एङ्गलो इन्डियन जमात ने "मदर इन्डिया" को खूब ही अपनाया है और प्रसिद्ध किया है।

यह भी विदित हो ही चुका है कि यह पुस्तक सरकार के प्रकाशन विभाग (Publicity Department) की पक्षपाती छत्र छाया में तैय्यार की गई थी। होम मेम्बर (गृहसचिव) ने यह तो स्वीकार किया ही है सरकारी अफसरों ने मिस मेयो की पुस्तक के लिये मसाला जमा करने में सहायता दी है। साथ ही (होम मेम्बर ने) इतना और कह दिया है कि मिस मेयो के प्रति दिखाई गई सरकारी सौजन्यता और उसको दी गई सरकारी सहायता उससे अधिक नहीं थी जो कि साधारणतया प्रकाशन विभाग की सहायता के सभी प्रार्थी पाते हैं। होम मेम्बर ने जो और उत्तर लेजिस-लेटिव एसेम्बली (Legislative Assembly) के प्रश्नकर्ता सदस्यों को दिये हैं वह यद्यपि झूठे नहीं हैं तथापि भ्रम में डालने वाले अवश्य हैं। जैसे कि यह उत्तर:—

"सरदार शार्दूल सिंह कवीशर का यह बयान गलत है कि किसी ख़ुफ़िया पुलिस इन्सपैक्टर ने उन्हें लाहौर में मिस मेयो से मिलने के लिए निमंत्रण दिया था।"

हो सकता है कि ख़ुफ़िया पुलिस इन्सपैक्टर ने सरकारी तौर पर वहाँ नियत ख़ुफिया पुलिस इन्सपैक्टर के सरदार साहब को निमंत्रण न दिया हो लेकिन यह नितान्त सत्य है कि उसने निमंत्रण अवश्य दिया था। हमें वास्तविक तौर पर मालूम है कि एक ख़ुफ़िया पुलिस इन्सपैक्टर के कहने से पंजाब व्यवस्थापिका सभा (Punjab Legislative Council) के एक अधिकारी ने डाक्टर गोकल चन्द नैरंग एम एल सी. को भी मिस मेयो से मिलने का निमंत्रण दिया था। होम मेम्बर ने यह भी कहा है कि लंडन स्थित भारत सचिव का दफ़्तर इंडिया आफ़िस (India Office) ने "मदर इंडिया" पुस्तक पार्लियामेंट के सदस्यों को मुफ़्त नहीं बांटी। इसके यह अर्थ नहीं हैं कि उक्त पुस्तक को किसी और पुरुष या संस्था ने पार्लियामेंट के सदस्यों में बिना मूल्य बांटा ही नहीं। जिस किसी ने भी यह काम किया है वह अवश्य ही हिन्दुस्तानियों को तथा उन की उन्नति-कामनाओं को बदनाम करने का इच्छुक होगा। हमें भय है कि इस पुस्तक के प्रकाशित होने तथा एंग्लो-इंडियन जाति और मुख-पत्रों द्वारा प्रशंसित होने का कदाचित यह बुरा परिणाम होगा कि एंग्लो-इंडियन जाति

और हिन्दोस्तानियों के बीच में मन मुटाव बढ़ जायेगा। अभी तक केवल एक एंग्लो-इंडियन लेखक ने इस पुस्तक की तीव्र आलोचना की है। हमें मालूम है कि यूरोपियन लोग इस पुस्तक से इतने प्रसन्न हैं कि फूले नहीं समाते। व्यवस्थापिका सभा-भवनों में, होटलों में, निजी मुलाकात की बातचीत में प्रायः ऐसी टीका टिप्पणी की और सुनी जाती है कि जिस से यह प्रतीत होता है कि यूरोपियन तथा एंग्लो इंडियन लोग मिस मेयो के विचारों से नितान्त सहमत हैं। यह लोग इस बात से और भी अधिक प्रसन्न हैं कि उन्हें अपने भावों तथा विचारों को स्वयं प्रकाशित करने की जिम्मेदारी से मिस मेयो ने बचा दिया और खुद उनका मुख बन गई। परन्तु हिन्दोस्तानी इतने मूर्ख नहीं हैं कि इतना भी न समझें कि कौन मिस मेयो को हिन्दोस्तान लाया और किस ने इस दूषित पुस्तक की तैयारी में नैतिक और भरपूर सहायता दी है। अतएव हिन्दोस्तानियों का यह निर्णय नितान्त न्याय संगत है कि हिन्दोस्तान और हिन्दोस्तानियों का जो यह घोर अपमान (मदर-इण्डिया द्वारा) किया गया है उसका जिम्मेदार एंग्लो-इंडियन समाज है। इस बात को हिन्दोस्तानी आसानी से भूलने वाले भी नहीं हैं।

यह तो अब साफ साफ विदित हो चुका है कि मिस मेयो ने घटनाओं के वर्णन में ईमानदारी से काम नहीं लिया है वरन झूठी बातें और चुटकुले गढ़ने के अतिरिक्त उसने

ऐसी ऐसी बातें हिन्दोस्तानियों तथा और लोगों के मुख से कहलवा दी हैं कि जो सच्ची नहीं हैं। मैं ने अपनी ६३ वर्ष की आयु भर में सत्य के भेष में झूठ की ऐसी भरमार कभी किसी पुस्तक में नहीं देखी कि जैसी मिस मेयो ने अपनी इस पुस्तक में की है।

पुस्तक के पृष्ठ २८४ पर मिस मेयो ने उस बात चीत का वर्णन किया है कि जो (मिस मेयो के कथनानुसार) देहली में मिस मेयो के साथ कतिपय होमरूल सिद्धान्ती बंगाली सज्जनों ने उस दावत में की, कि जो एक हिन्दोस्तानी-मित्र ने मिस मेयो के सम्मानार्थ दी थी। कहा जाता है कि दावत देने वाले एक बंगाली-हिन्दू सज्जन थे। पूछने पर पता चला है कि मिस मेयो के आतथ्य-सत्कार करने वाले बंगाली-हिन्दू मित्र मिस्टर के० सी० राय थे। मिस्टर राय और उनकी धर्म्म पत्नी दोनों ही विश्वास दिलाते हैं कि उस दावत में सिर्फ़ एक ही और बंगाली सज्जन सम्मिलित थे (जिनका नाम मि० सैन है और जो एसोसियेटेड प्रेस से सम्बन्ध रखते हैं) और जो बातें मिस मेयो ने अपनी पुस्तक में "कतिपय होमरूल-सिद्धान्ती बंगालियों" के मुख से कहलवाती हैं वह उस दावत में किसी ने भी नहीं कहीं।

अब लीजिये वह बातें जो मिस बोस (विक्टोरिया गर्ल्स स्कूल लाहौर) के मुख से कहलवाई गई हैं। "लीडर" के एक सम्वाद-दाता ने मिस बोस से मिल कर इस बारे में पूछ

ताछ की है और मिस बोस ने यह विश्वास दिलाया है कि जो बातें मिस मेयो ने मेरे सिर मढ़ दी है उनमें से अत्यधिक तो मैं ने बिलकुल कही ही नहीं। "लीडर" के प्रतिनिधि ने जो विवरण मिस बोस से मुलाकात करने का भेजा है उस में से कुछ की नकल नीचे दी जाती है.—

"मिस बोस एक हिन्दुस्तानी ईसाई घराने की तीसरी पुश्त में नहीं हैं। पृष्ठ १३२ के तीसरे पेरे में जो बात अछूत बालकों के बारे में मिस बोस से कहलाई गई है वह ठीक नहीं है और कभी कही ही नहीं गई। मिस मेयो पृष्ठ १३४ के शुरू में लिखती हैं कि पंडितों को परदे के पीछे बैठ कर शिक्षा देनी होती है। मिस बोस कहती हैं कि सदैव ही हिन्दू कन्याओं का पुरुष पंडित बिना पर्दे के संस्कृत पढ़ाते हैं। और अतिशय-वृद्ध पंडित की बात ४० वर्ष पुराना है। जो उद्देश्य इस स्कूल का मिस मेयो ने पृष्ठ १३३ के तीसरे पैरे में बतलाया है उसको मिस बोस नितान्त भ्रमोत्पादक बतलाती हैं। मिस मेयो ने जो यह लिखा है हिन्दोस्तान में स्त्रियें सिलाई के काम से करीब करीब अनभिज्ञ हैं उसके बारे में मिस बोस कहती हैं कि सीना पिरोना की कला को हिन्दोस्तानी स्त्रियें कई युगों से जानती हैं। मिस मेयो ने पृष्ठ १३४ के शुरू में जो यह बात फैलाई है कि "प्रौढ़ावस्था में हिन्दोस्तानी

स्त्रियें स्वाभाविक तौर पर स्वयं भोजन नहीं बनातीं वरन सब भोजन मैले नौकरों से बनवाती हैं जिससे अधिक बीमारी फैलती है और मृत्यु संख्या बढ़ती है"

इसको मिस बोस मन गढ़न्त बतलाती हैं। मिस बोस जवाब इस प्रकार देती हैं।

'नौकर होते हुए भी हर मकान कि स्त्रियें स्वयं ही भोजन बनाती हैं। किसी भी अच्छे घराने में नौकर मैले नहीं रहने पाते और हिन्दू घरानों में तो निश्चय ही मैले नहीं होते"

अब गांधी जी के कथन को लीजिये मगर हर हिन्दुस्तानी चीज़ को बुरे रूप में देखने की उतावली में उसने न सिर्फ मेरे लेखों से ही बड़ी स्वच्छंदता से काम लिया है, बल्कि मेरे बारे में उसने या औरों ने उससे जो कई बातें कही हैं, उनकी तसदीक़ भी उसने मुझसे नहीं की है। सच पूछो तो हम लोग जिन कामों को हिन्दुस्तान में न्यायाधीश और शासक के काम समझते हैं, दोनों को ये अकेले ही कर रही है। वह खुद पैरोकार और क़ाज़ी बनी है। अब उस वर्णन को लीजिये कि जो मिस मेयो ने जेल-स्थित म० गांधी के ओपरेशन का किया है। यह विवरण कोटेशन मार्क में है जिससे विदित है कि मिस मेयो यह वर्णन किसी के मुख से कहलवाती हैं।

परन्तु एक बार मिस्टर गान्धी जेल में बीमार हो गये और तब एक अंगरेज़ डाक्टर उनसे भेंट करने आया।

उसने कहा,—'मिस्टर गान्धी ! मुझे दुःख है इस समय आप को एपेन्डेसाईटीज का रोग है यदि आप मेरे रोगी होते तो मैं फौरन आपरेशन करता। परन्तु जहाँ तक मैं समझता हूँ आप किसी वैद्य को बुलाना अधिक पसन्द करेंगे। परन्तु मिस्टर गान्धी ने उस आपरेशन करने की ही सम्मति दी।

डाक्टर ने कहा,—मैं आप का आपरेशन नहीं करना चाहता क्योंकि यदि इसका नतीजा बुरा निकले तो आप के सब मित्र कहेंगे कि मैंने आप के साथ बुरा बर्ताव किया और अच्छी तरह से आपरेशन नहीं किया। इस समय मेरा कर्तव्य आपकी सच्ची सेवा करना है।'

मिस्टर गान्धी ने कहा,—'यदि आप आपरेशन करने को तैयार हों तो मैं अपने सब मित्रों को बुलाकर समझा दूँ कि आप मेरी प्रार्थना पर आपरेशन कर रहे हैं।' मिस्टर गान्धी जान बूझ कर उस अस्पताल में गये जो पाप फैलाता है और सब से खराब अंग्रेजी डाक्टर से आपरेशन करवाया।

यहां पर उनकी देख रेख एक अंग्रेजी नर्स हो करती रही मिस्टर गांधी ने अन्त में इस विदेशी नर्स को एक उपयोगी व्यक्ति स्वीकार किया"

इस पर गांधी जी की टिप्पणी इस प्रकार है।

यह तो सत्य का गला घोंटना है। मैं केवल वे ही बातें ठीक करने की कोशिश करूंगा जो निन्दात्मक हैं, और भूलें छोड़ दूंगा। यहां पर कोई आयुर्वेदिक वैद्य के बताने की बात

ही नहीं थी, कर्नल मैडाक को, जिन्होंने नश्तर लगाया था, मुझसे बिना पूछे, बल्कि मेरे विरोध करने पर भी अगर वे चाहते तो नश्तर लगाने का अधिकार था। मगर उन्होंने और सर्जन जेनरल हूटन ने मेरे प्रति नाजुक ख्याल दिखलाया, और मुझ से पूछा कि क्या मैं अपने डाक्टरों के लिए ठहरूंगा जो डाक्टर खुद पश्चिमी चिकित्सा और जर्राही का इल्म पढ़े हुए थे और उन के जाने हुए थे। उनकी शालीनता और शिष्टता का जवाब देने में मैं क्यों पीछे रहूँ? मैंने तुरन्त ही कहा कि 'मेरे डाक्टरों को आपने तार दिया है परन्तु उनके लिए ठहरे बिना आप नश्तर लगा सकते हैं और मैं खुशी से एक पत्र लिख दूंगा जिसमें अगर नश्तर असफल हो तो आप पर इल्ज़ाम न आवे।' मैंने यह दिखलाने की कोशिश की कि उनकी योग्यता या नीयत में मुझे कोई सन्देह नहीं था। मेरे लिए तो अपनी व्यक्तिगत सदाशयता दिखलाने का यह बड़ा अच्छा अवसर था।

—:o:—

लाला लाजपत राय का तीसरा लेख

मिस मेयो और सरकार

(इण्डियन पीपुल से उद्धृत)

यद्यपि सरकार इससे इंकार करती है तथापि इस में हमें कोई सन्देह नहीं है कि मिस मेयो को "मदर इंडिया" पुस्तक के लिये मसाला जमा करने तथा उसके लिखने में सरकारी तथा गैर-सरकारी एंग्लो इंडियन लोगों से काफी सहायता मिली है। हमें शिमले में विश्वस्त सूत्र से पता लगा था कि मिस मेयो शिमले में सर और लेडी बैसिल ब्लेकैट (गवर्मेंट के सर्वोच्च अधिकारियों में से एक) के यहां अतिथि रूप में ठहरी थीं। राजा साहब पानागल का कहना है कि मद्रास में मिस मेयो खास गवर्मेंट हाउस (गवर्नर का निवास-स्थान) में ठहरी थीं और वहीं उक्त राजा साहब से और मिस मेयो से बात चीत हुई थी। सरदार शार्दूल सिंह बतलाते हैं कि लाहौर में मिस मेयो की अर्दली में पुलिस अधिकारी रहा करते थे। गवर्मेंट स्वयं स्वीकार करती है कि मिस मेयो को मसाला जमा करने में सहायता दी गई यद्यपि यह सहायता उसे अधिक नहीं बतलाई जाती जितनी कि साधारणतया हर किसी सहाय्य

प्रार्थी को मिल सकती है। अनुभव से हमें मालूम है कि हिन्दोस्तानियों की जानकारी के लिये सरकारी-विभाग कोई भी बात बतलाने को ऐसे प्रस्तुत नहीं रहते।

पुस्तक के प्रचार के बारे में यह कहना यथेष्ठ है कि इंगलिस्तान में अंगरेज़ी समाचार पत्रों ने और हिन्दोस्तान में एंग्लो-इंडियन समाचार पत्रों ने उसे ख़ूब ही प्रसिद्ध किया है। 'कैपिटेल' पत्र में लिखने वाले 'डिचर' के अतिरिक्त एक भी हैसियत रखने वाले एंग्लो-इंडियन ने अथवा एंग्लो-इंडियन समाचार पत्र ने हिन्दोस्तानी स्त्री-पुरुषों पर (मदर-इंडिया द्वारा) किये गये मिथ्या दोषारोपण का प्रतिवाद नहीं किया है। यदि हमारी राजनैतिक अयोग्यता (जो केवल मन गढ़ंत है) दर्शाई जावे या ईमानदारी से हमारी सामाजिक पद्धति का दोषान्वेषण किया जावे अथवा हमारे धार्मिक विश्वासों पर नेक नीयती से आलोचना की जावे तो हम बुरा मानने वाले नहीं हैं। और नहीं हम इतने तुनक मिज़ाज हैं कि भिज्ञ या अनभिज्ञ व्यक्तियों द्वारा की गई इसी प्रकार की टीका टिप्पणी पर (चाहे वह कितनी ही कड़ी क्यों न हो) एतराज़ करें परन्तु जब हमारी समस्त स्त्री-जाति पर (कि जिसकी धार्म्मिकता संसार भर की प्रत्येक स्त्री-जाति से बढ़ी चढ़ी है) दुष्टता का कलंक लगाया जा रहा है तब हम क्रोध संवरण नहीं कर सकते। यह तो अब साफ़ ही ज़ाहिर है कि "मदर-इंडिया" उस एंग्लो-इंडियन षड्यंत्र

का फलस्वरूप है कि जो हमारी इज्जत और आबरू पर आघात करने के लिये रचा गया है। आत्म-सम्मान तथा मान मर्य्यादा की रक्षा की आवश्यकता का यही आदेश है कि शिक्षित हिन्दुस्तानी अपने रोष को उचित रूप दें। यदि शिक्षित हिन्दुस्तानी चुप चाप रह कर ऐसे लोगों को जो हमारे ही रुपये और हमारी ही मेहनत के भरोसे अपना जीवन व्यतीत करते हैं यह हिम्मत दिलायेंगे कि वह हमको चीटियों की तरह पैरों से कुचल डालें और यदि शिक्षित हिन्दोस्तानी ऐसे दुष्ट व्यवहार का भी प्रतिरोध नहीं करते तो संसार भर के स्वाभिमानी माननीय लोगों का यह प्रमाणित हुए बिना न रहेगा कि हिन्दोस्तानी वास्तव में ऐसे ही दुष्ट और घृणास्पद हैं जैसा कि मिस मेयो ने उन्हें चित्रित किया है।

दासत्व भाव

दुर्भाग्यवश हमारी बेकसी और दासता के भाव इस दर्जे को पहुँचे हुए हैं कि हमारे ही देशबन्धुओं में से कितने ही प्राणी अपने ही ऊपर प्रहार करने वाले जूतों की वन्दना करते हैं। कभी कभी तो ऐसा होता है कि उधर से जूता पड़ा और इधर से तत्काल ही उसकी पूजा की गई। इसके अतिरिक्त हमारे निजी अन्तर जातीय और अन्तर मतावलम्बी वैमनस्य और झगड़ों ने यह करीब करीब असम्भव ही कर रक्खा है कि हम अपने विरोधियों के साथ कोई भी प्रभावशाली

कार्रवाई कर सकें। मिस मेयो की जो किताब इंगलिस्तान में प्रकाशित हुई है उसमें केवल हिन्दुओं की ख़बर ली गई है। इसलिये मुस्लिम भाइयों को क्या पड़ी है कि वो हिन्दुओं के साथ मिल कर हिन्दुस्तान को बदनाम करने वालों की ख़बर लें। इस कारण से भी हिन्दुओं के लिये यह अत्यन्त आवश्यक हो जाता है कि वह उनको मिथ्या बदनाम करने वाली पुस्तक के असली जन्म-दाताओं पर अपना सर्वथोचित क्रोध प्रकट करें। यदि सरकारी और ग़ैर-सरकारी एंग्लो-इंडियन संसार सहायता न करता तो मिस मेयो और उसकी पुस्तक इतनी प्रसिद्ध तथा विख्यात होने के सर्वथा अयोग्य थी। अभागे प्रभुतालोलुप ख़ुशामदियों ने यह असम्भव ही कर दिया है कि देश-प्रेमी हिन्दोस्तानी को भी उचित कार्रवाई सर्व सम्मतया कर सकें।

मिस मेयो का मिशन

(इण्डियन पीपुल से उद्धृत)

'मदर इण्डिया' की प्रसिद्ध लेखिका मिस कैथरइन मेयो के बारे में यह ख़ूब ही मशहूर किया गया है कि वह हिन्दोस्तान की एक निष्पक्ष अमरीकन समालोचक हैं—स्वयं मिस मेयो ने यह दावा अपनी किताब के शुरू ही में किया है कि उनके विचार सरकारी असर से बिल्कुल पाक साफ़ हैं—मगर सरदार शारदूल सिंह कवीशर ने समाचार पत्रों में

इस दावे का विरोध एक पत्र लिख कर किया है—सरदार साहब लिखते हैं कि—

"मिस मेयो अपने (हिन्दोस्तान के) दौरे भर में बराबर सरकारी अफसरों से घिरी रहती थीं और ये अफसर बराबर उसकी अर्दली में रहा करते थे।"

मिस मेयो के लाहौर के दौरे के बारे में सरदार साहब लिखते हैं कि—

"जब वह लाहौर में ठहरी हुई थीं तो एक दिन टेलीफोन पर मुझ से कहा गया कि मैं उनसे मिलूं—खुफिया पुलिस के अफसर ने जिसको मैं जानता था मुझ से कहा कि एक अमरीकन महिला हिन्दोस्तान के प्रश्नों का अध्ययन करने आई हुई हैं और मुझ से मिलना चाहती हैं—मैंने उस भले-मानस से कहा कि अगर वह महिला आप की निजी मित्र हैं और आप निजी तौर पर मुझसे और महिला से मुलाकात कराने को उत्सुक हैं तो मैं खुशी से तैय्यार हूँ, लेकिन अगर आप सरकारी तौर पर मुझसे मिलवाना चाहते हैं तो मुझे मिलने की कोई इच्छा नहीं है—मुझे जवाब मिला कि निजी तौर पर मेरा कोई ताल्लुक मिस मेयो के अध्ययन या जांच पड़ताल से नहीं है बल्कि एक बड़े अफसर ने मुझसे कहा था कि मिस मेयो जिन आदमियों से मिलना चाहें उनसे उनको मिलवा दिया जावे'—सरदार शार्दूल सिंह ने इन हालात में मिस मेयो से मिलने से इन्कार कर दिया लेकिन

अगर सरदार साहब की लिखी घटना ठीक है तो सरदार साहब ने जो नतीजा अपने पत्र के अखीर में निकाला है वह न्याय संगत अवश्य है यानी "जिस प्रकार मिस मेयो पर सरकारी छत्र छाया बहती थी और जिस प्रकार हिन्दोस्तान भर में सरकारी अधिकारी वर्ग ख़ास कर खुफ़िया पुलिस वाले उनके संग रहा करते थे उसको देखकर 'मिस मेयो का हिन्दोस्तान पर ऐसा कुठाराघात करना कोई अचरज की बात नही है।"

इण्डियन सोशल रिफार्मर के सम्पादक

श्रीयुत के० नटराजन की आलोचना

मिस मेयो की मदर इण्डिया का प्रत्युत्तर

(१)

मिस मेयो ने अपनी पुस्तक के पाच भाग किए हैं, हर एक भाग में पाच छ या सात परिच्छेद हैं। प्रत्येक भाग के आरम्भ में प्रस्तावना दी हुई है जिसका नाम प्रथम परिच्छेद के आरम्भ में भूमिका रक्खा गया है। प्रथम भाग की भूमिका का शीर्षक है "मोटर बस द्वारा मांडले की यात्रा"। इस भूमिका के आठों पृष्ठों में कलकत्ता के काली मन्दिर का वर्णन है और मांडले के विषय में एक शब्द भी नहीं कहा गया। इसलिए इस शीर्षक के कोई मानी नहीं रह जाते जब तक यह न मान लिया जाय कि इस पुस्तक को लिखते समय मिस मेयो का भौगोलिक ज्ञान विकृत मिल्त'हा गया था। मोटर बस के बारे में कुछ कहा भी गया है पर मांडले की तो चर्चा ही नहीं छेड़ी गई। शायद मिस मेयो का मतलब यह था कि उन बगाली नवजवानों को जिन्हें उसने कलकत्ता में देखा था एक न एक दिन मांडले की हवा आवश्य खानी पड़ेगी।

इस भूमिका के पहलेही पृष्ठ में लेखिका ने हिन्दुस्तानी चीजों के प्रति अपनी भयङ्कर घृणा का परिचय दे दिया है।

उसने आधुनिक योरोपीय कलकत्ता का मुक़ाबिला उस हिन्दुस्तानी नगर से किया है "जिसने नक़शे पर चौकोनी रेखाओं के होते हुये भी मन्दिरों, मसजिदों, बाज़ारों, और पेचीदा गली कूचों के सहित किसी न किसी प्रकार अपना निर्माण कर ही डाला है" इससे पता चलता है कि किस प्रकार उसकी घृणा मूर्खता के ऊपर अवलम्बित है, कोई नगर यहां तक कि हिन्दुस्तानी नगर, भी 'किसी न किसी तरह' अपना निर्माण नहीं करता। उसका विकास क्रमशः मनुष्यों की आवश्यकताओं के अनुसार धीरे धीरे होता है और एक समाज शास्त्र के ज्ञाता की शिक्षित दृष्टि में कई पीढ़ियों का प्रायः कई शताब्दियों का इतिहास प्रगट करता है। अगर आप नासिक जायँ और गोदावरी के तपोवन तट पर खड़े होकर हिन्दोस्तानी नगर को देखें तो नदी के सन्निकट सबसे निचले वर्तमान नगर के अतिरिक्त चार या पाँच बस्तियों का सिलसिलेवार अनुसन्धान आप को मिलेगा। स्पष्ट है कि पानी के लिए नदी तक आसानी से पहुँचना—यही नासिक के विकाश का प्रधान कारण है। सदियों से ज्यों ज्यों नदी चट्टानों को काट काट कर गहरी धँसती गई, त्यों त्यों नगर की बस्तियों को क्रमशः नीचे की ओर खिसकना पड़ा ताकि उन स्त्रियों को बहुत ज़्यादा कष्ट न हो जिन्हें नित्य स्नान के बाद घर के लिए पानी लाना पड़ता था। उसके वाक्यके अन्तिम शब्दों से पता चलता है कि मिस मेयो को एक ग़लत ख़्याल पैदा हो गया है।

शायद वह समझती है कि नगर किसी नक्शे के अनुसार बनाया गया है जो बिल्कुल उल्टी बात है। असल में नगर का अस्तित्व नक्शा खींचे जाने के बहुत पहले से चला आता है।

इसके ठीक बाद वाले वाक्य में मिस मेयो फिर जहर उगलती हैं। उसको इससे सन्तोष नहीं है कि वह सारी बातें बयान कर दे और पाठकों को, जो नतीजे वे स्वयं निकालना चाहें, निकालने दें या सारी बातें कहती चले और अपनी टीका टिप्पणी अन्त के लिए रख छोड़े। वह अपनी पुस्तक के प्रथम परिच्छेद के द्वितीय वाक्य में ही "किताबों की उन अनेक छोटी छोटी दूकानों "का जिक्र करती है" जहाँ देशी पोशाक में नंग छाती वाले रक्त हीन भारतीय नवयुवक रूसी पर्चों की उन गड्डियों में लीन रहते हैं जिन्हें मक्खियों ने गंदा कर रक्खा है। इन पंक्तियों के लेखक ने एक बार नहीं कई बार कलकत्ते को अच्छी तरह देखा है लेकिन भारतीय नगर का ऐसा चित्र उसकी आँखों के सामने नहीं आता। विदेशी बंगाली बाबुओं को प्रायः 'मेलिया मसान' भले ही कहते हैं पर 'क्षयग्रस्त' कभी नहीं कहते।

हिन्दुस्तानी राजनैतिक उत्साहियों को एंग्लो इण्डियन लोग नष्टप्राय सा समझते हैं उसी धारणा के अनुसार मिस मेयो ने बंगाली नवयुवक का चित्र खींचा है। सच पूछिये तो बंग विभाग के उपरान्त बंगाल के नवजवानों ने शारीरिक

योग्यता की ओर विशेष ध्यान दिया है। जिसका अनुसरण समस्त देश में किया जा रहा है।

रहा रूसी पर्चों का सवाल, अगर मिस मेयो का मतलब यह है कि वे पर्चे रूसी भाषा में लिखे गए हैं तो हमारे ख्याल से कलकत्ता के हज़ार में से एक विद्यार्थी भी रूसी भाषा नहीं पढ़ सकता और सोवियट आन्दोलन के जो प्रधान कार्यालय हैं उनके संचालकों को महा मूर्ख समझना चाहिए कि वे हिन्दुस्तान में ढेर के ढेर रूसी पर्चे भेज कर अपना इतना रुपया व्यर्थ में बर्बाद करते हैं। मिस मेयो का मतलब शायद ऐसी अंग्रेज़ी किताबों से है जिनका मौलिक आधार रूसी साहित्य है। अगर ऐसा हो तो भी मिस मेयो के इस कथन का यथेष्ट प्रमाण मिलना चाहिए क्योंकि भारतीय सरकार ने कम्यूनिष्ट साहित्य के प्रकाशनों की ज़ब्तगी का पोस्ट आफ़िस और सी कस्टम्स एक्ट के रूप में क़ानून पास कर दिया है। अगर मान लें कि कुछ लोगों ने इस क़ानून का उल्लङ्घन भी किया हो तो भी यह कैसे विश्वास किया जाय कि ढेर का ढेर ऐसा साहित्य हिन्दुस्तानी कलकत्ता की छोटी छोटी दूकानों में विद्यार्थियों के पढ़ने के लिए खुला पड़ा रहेगा; तो फिर इतना सरासर झूट मिस मेयो क्यों बकती हैं? जवाब बिल्कुल साफ़ है। 'रूसी' शब्द अंग्रेज़ी भाषा-भाषी संसार के लिए शैतान को उंगली दिखाने के समान है और मिस मेयो का मतलब शुरू से आख़ीर तक यह था कि जहाँ

तक हो सके वह अपने पाठकों के मन में हिन्दोस्तानियों के प्रति विद्वेष का भाव पैदा कर दें ताकि वे उसकी भयङ्कर बातों को सुनने के लिए तैयार हो जायँ।

कलकत्ता का पहला स्थान, जहां मिस मेयो जाती हैं, या यों कहिए कि जिसका वर्णन करना वह अपनी भूमिका के लिए उपयुक्त समझती हैं न बेथून कालेज है, न ब्राह्म समाज, न सर जे सी बोस की विश्व विख्यात प्रयोगशाला, न सर पी सी राय का विज्ञान विद्यालय और न वह विश्व विद्यालय जहाँ अध्यापक रमण और राधाकृष्ण विज्ञान और दर्शन की खोज किया करते हैं। इन स्थानों से उसका काम नहीं सधता। हिन्दुस्तान का प्रमुख दृश्य दिखलाने के लिए वह कालीघाट के मन्दिर को चुनती है जो हिन्दुस्तान के उन इने गिने मन्दिरों में से है जिनमें आज तक पशुओं का बलिदान किया जाता है। कालीघाट की प्रसिद्धि केवल कलकत्ता के अन्तर्गत है, उसके बाहर कुछ भी नहीं। वह काशी, जगन्नाथ, रामेश्वर, मदूरा श्रीरङ्ग-नासिक, द्वारिका, मथुरा, वृन्दावन, प्रयाग, हरद्वार और अमृतसर की तरह समस्त भारत की निगाह में पवित्र नहीं है। फिर भी मिस मेयो ने इन तमाम बड़े बड़े मन्दिरों को जिनमें से कई एक इमारती कला के ख्याल से भी कहीं अधिक शानदार हैं जान बूझ कर छोड़ दिया है और चुना है काली-घाट के भयङ्कर समूह को जिस का बीभत्स वर्णन उसने ब्यौरे के साथ किया है।

ताहम जो बातें कालीघाट में आज होती हैं वे उस समय जब कि ईशुमसीह मन्दिरों के ओसारे में अपनी शिक्षा देते थे जेरोसलम में नित्य और कहीं अधिक हुवा करती थीं। नीचे हम उस पुस्तक की कुछ पंक्तियों को उद्धृत करते हैं जो अभी हाल में पाल के ऊपर निकली हैं।

"पाल के मन में इन सब का ख्याल आया। इसका आरम्भ रक्त की उष्ण और तीक्ष्ण सुगन्धि से हुवा था। यद्यपि पुरोहित लोग हर एक वस्तु को काफ़ी साफ़ रखने की कोशिश करते थे, यद्यपि बिना कटे और चिकनाए हुए पत्थरों की छमाही सफ़ेदी की जाती थी, तथापि जली हुई चर्बी और रक्त की वीभत्स सुगन्ध बलि-वेदी के चारों ओर रही आती थी। चाहे तुम उन वेश्रों के निकट न भी जाओ जो उस पूर्वीय अग्नि कुण्ड के समीप थीं जिस पर बलिदान का पशु जलाया जाता था, तो भी पहाड़ी से आई हुई हवा के झोंके उस दुर्गन्ध को खम्भों के चारों ओर फैला देते थे। वह धधकती हुई आग जिसमें अधजले गोश्त और हड्डियों के टुकड़े और राख इत्यादि सफ़ाई के साथ पाँचों के द्वारा एकत्रित किये जाते थे; मज़बूती के साथ पकड़ा हुवा मेमना जिसकी टाँगे मशक की तरह इकट्ठा कर के बंधी रहती थीं, वध करने वाले पुजारी की उंगलियाँ जो उस पशु की श्वास नलिका को टटोलती रहती थीं, दूसरे सहायक पुजारी का वह चाँदी का बर्तन लिए हुए जिसमें रक्त पशु के कटे हुए गले से निकल कर

गिरना, झुका रहना—उसके बाद खून के फव्वारे, साफ की हुई अँतड़ियां, चर्बी और मांस से लदी हुई संगमर्मर की मेजें, नमक की ढेरी, पुजारियों के श्वेत वस्त्र पर रक्त के छींटे, और नमक बिखरे हुए मार्ग से वेदी तक जाने आने में उनके नंगे पाँवों का भी रक्ताक्त हो जाना यह सब पाल देख सकता था। उसके जीवन भर मंदिर की पूजा के साथ उस दुर्गन्धि का और भेड़ों और बकरियों की चिल्लाहट का जब कि वे बलिदान के लिए सोने की जंजीरों से बाँधे जाते थे, निरन्तर सम्पर्क रहा।"

हम यह सब इसलिए नहीं कहते कि जो कुछ कालीघाट पर होता है वह ठीक है। बल्कि इसके विरुद्ध जिस के चारों ओर अहिंसा का पवित्र प्रकाश इस प्रकार फैल रहा हो वह भारत अगर अनबोलते पशुओं का वध धर्म के नाम पर सहन करता है तो और भी अधिक अपराधी है। लेकिन मिस मेयो का यह अभिप्राय नहीं है। उसने और दूसरों ने भी धर्म को एक नैतिक धर्म मान लिया है यद्यपि अनबोलते पशुओं का जलाना उस धर्म की दैनिक क्रियाओं का उस समय प्रधान भाग था जब वह धर्म अपनी जन्म भूमि में फल फूल रहा था। जहाँ तक हम समझते हैं, अगर जेरुसलम का मन्दिर ध्वंस न कर दिया जाता तो वह बलिदान आज भी होता रहता क्योंकि पुराने तरीकों को कायम रखने में यहूदी लोग उतने ही कट्टर हैं जितने कि हिन्दू। फिर तो एक ऐसे देश में

जहाँ गौतम बुद्ध ने जन्म ग्रहण किया और अपनी शिक्षा दी, जहाँ जैन मत आज तक जीवित है और जहाँ हिन्दू मत से वैदिक बलिदान की रसमें एक दम उठ गई हैं थोड़े से काली के मन्दिरों में ऐतिहासिक कारणों से यह निर्दय रिवाज पाया जाता है तो हिन्दूओं और हिन्दू मत की असमानताओं पर मिस मेयो गला फाड़ फाड़ कर चिल्ला उठती हैं। एक शब्द और वह भी साधारण बुद्धि का कालीघाट के मन्दिर में त्रस्त भेड़ों और बकरों की हत्या को देख कर मिस मेयो का हृदय दहल गया है। लेकिन मिस मेयो! क्या तुम्हें कभी यह ध्यान नहीं आया कि नित्य हज़ारों भेड़ बकरी, गाय बैल और सुअरों का वध योरुप और अमरिका में पेट देवता की पूजा के लिए होता है? अच्छा होगा कि मिस मेयो अपने सेण्ट मैथ्यू को एक बार फिर पढ़लें:—

"ऐ पाखण्डी तुम को धिक्कार है! तुम लोग कटोरों और थालियों के बाहरी भाग को साफ़ करते हो लेकिन उनके अन्दर लूट खसोट और अत्याचार (का मैल) भरा हुवा है।

ऐ अन्धे! पहले तू कटोरे और थाल के अन्दरूनी भाग को साफ़ कर ताकि उसके बाहर का भाग भी साफ़ हो जाय।

ऐ पाखण्डी! तुम्हें धिक्कार है! क्योंकि तुम लोग सफ़ेदी की हुई क़ब्रों के समान हो जो बाहर से इतनी सुन्दर दिखाई पड़ती हैं लेकिन उनके अन्दर मुर्दों की हड्डियाँ और अनेक प्रकार की गन्दगी भरी पड़ी है।

उसी तरह तुम भी बाहर से बडे सच्चे दिखते हो लेकिन तुम्हारे अन्दर पाखण्ड और अन्याय भरा पडा है।"

मेथ्यू २५—२६ अध्याय २३

(२)

मिस मेयो का विषय यह है कि हिन्दुस्तान की मुसीबता का कारण वृटिश राज्य नहीं है बल्कि उसके धार्मिक, सामाजिक और स्त्री पुरुष सम्बन्धी विडम्बनाएं हैं। किसी हिन्दुस्तानी की भौतिक और अध्यात्मिक विपत्तियों का स्तम्भ शारीरिक आधार के ऊपर अवलम्बित है। वह आधार उसका जीवन मे प्रवेश करने का ढग और उसके बाद मे उसका जीवन दाम्पत्य जीवन है। हम पहले हिन्दुस्तानी के जीवन मे प्रवेश करने के ढग पर विचार करेंगे। मिस मेयो के शब्दों में ही उसकी व्याख्या इस प्रकार है

'एक बारह वर्ष की कन्या को लीजिए, रक्त और हड्डी का एक दर्शनीय नमूना, निराक्षरा, मूर्ख जिसे स्वास्थ्य-साधन की कोई शिक्षा नहीं मिली। जितना शीघ्र होसके उसके ऊपर मातृत्व का बोझ रख दो" (पृष्ठ २४)

और फिर 'हिन्दुस्तानी लड़की साधारणत मासिक धर्म आरम्भ होने के बाद नौ महीने के भीतर माता होने की आशा करती है—अथवा चौदह और आठ वर्ष की अवस्था के अन्दर किसी समय। आठ वर्ष शीघ्रता की पराकाष्ठा है यद्यपि असाधारण नहीं है, चौदह वर्ष औसत से काफी

है वह सदा के लिए गुलामी में रहने को बाध्य है इतिहास से अप्रमाणित हो जाता है। प्राचीन यूनानियों, रूमियों और हिब्रू लोगों में बालविवाह की प्रथा प्रचलित थी ईशु मसीह एक ऐसी स्त्री से पैदा हुए थे जिसकी मँगनी जोज़ेफ़ के साथ हो चुकी थी, पर विवाह नहीं हुवा था मार्च २७,१९२६ के रिफ़ार्मर में हम ने एलिज़बेथ गाडफ्रे द्वारा लिखित 'स्टुअर्टस के ज़माने में गृह जीवन' नामी पुस्तक की आलोचना उद्धृत की है, उससे प्रगट होता है कि पिल्ग्रिम फ़ादर्स के ज़माने में इङ्गलैण्ड में बालविवाह बराबर प्रचलित था और उनमें के बहुतेरे कमसिन माताओं के गर्भ से पैदा हुए थे। निम्न लिखित अंश पुस्तक से उद्धृत किया गया था।'

"दुधमुँहे बच्चे की शादी होना जैसा कि लेडी मेरी विलियर्स का दृष्टान्त है जो नौ वर्ष के पहले केवल पत्नी ही नहीं बल्कि विधवा हो गई थीं असाधारण था, पर तेरह वर्ष की अवस्था में बच्चों का व्याह हो जाना मामूली बात थी। उस अवस्था में पति के साथ रहने से पहिले एक या दो वर्ष तक कन्या को शिक्षा दी जाती थी और उसका पति अगर वह केवल पंद्रह या सोलह वर्ष का होता था तो शादी के बाद ऑक्सफ़र्ड या अन्य देशों को यात्रा के लिए जाता था। अर्ल आव कार्क के वृहद परिवार में ऐसे बालविवाहों के अनेक दृष्टान्त मिलते हैं। उनकी सब से बड़ी लड़की एलिस का व्याह तेरह वर्षकी अवस्था में लार्ड बरीमोर के साथ

हुवा था। दूसरी लडकी सारा जब उसकी मँगनी सर टॉमस मूर के साथ हुई थी तब वह केवल बारह वर्ष की थी। वस्तुत व्याहकी बात चीत उसी समय होने लगी थी जब वह आठ वर्ष वर्ष की थी। चौदह वर्ष की अवस्था में विधवा हो जाने पर शीघ्र ही उसका पुनर्विवाह डिगबी घराने में हो गया था।"

इतिहास को पीछे छोडिए और सम सामयिक दशाओं का निरीक्षण कीजिए। १६०१ की जन संख्या की रिपोर्ट के लेखक रिसले और गेट की राय है इस देश में बालविवाह अवश्य ही शारीरिक शक्ति के लिए हानि कर नहीं है। वे कहते हैं —

"जिस किसी ने पजाबी फौज को मार्च करते हुए या बलिष्ट जाट स्त्रियों को अपने गाँव के कुये पर बडे भारी पानी के घटे को उठाते हुए देखा है, उसे कोई शुबहा नहीं रह जायगा कि इन की विवाह प्रणाली का कोई असर इनकी शारीरिक गठन पर नहीं पडता। राजपूत स्त्री और पुरुष दोनों जाटों की अपेक्षा छोटे कद के होते हैं पर उनमे भी क्षीणता के चिन्ह नहीं पाये जाते। केवल नमूना दूसरा है और कुछ नहीं (१६०१ की भारत जन गणना रिपोर्ट पृष्ठ ४३३)

कुछ भी हो सन् १६०१ से आज तक एक जमाना गुजर गया और चूंकि मिस मेयो को उत्तर-पूर्वीय भारत के एक ऐसे अस्पताल में जाना पडा जो इसी तरह के रोगियों के लिए विशिष्ट है और वहाँ उसे चालीस वर्ष के इधर की कोई बात

नहीं मिली (उसने ऐसी बारह घटनाओं का उल्लेख किया है जिन का संग्रह १८६१ ई० में किया गया था) इससे यह प्रगट होता है कि ऐसी घटनाएं बहुत ही कम कभी कभी हुवा करती हैं।......

दो वर्ष हुए विवाह सम्मति की अवस्था तेरह वर्ष कर दी गई है। अनेक लोगों की प्रबल धारणा है कि यह काफ़ी नही है। अखिल भारतीय स्त्री कान्फ्रेन्स ने सर हरी सिंह गौड़ के प्रस्ताव का जिसके अनुसार सम्मति-अवस्था चौदह वर्ष की होनी चाहिए, समर्थन करने के लिए सार्वजनिक राय सुसंगठित करने का भार अपने सिर पर लिया है। हिन्दुस्तानियों का संसार में प्रवेश करने का ढंग कोई भी हो किन्तु जनता में जाग्रति फैल गई है और जहाँ कहीं थोड़ी बहुत बुराइयाँ मौजूद भी हैं वह शीघ्रही दूर हो जायगी। यह इस बात का बहुत बड़ा सुबूत है और दूसरे देश के इतिहास से भी सिद्ध होता है कि राजनीतिक उन्नति सामाजिक-सुधारों की बहुत बड़ी सहायक है। यह हम लोगों की विचारपूर्ण राय है कि भारत वर्ष में स्वराज्य प्राप्ति के साथ साथ सामाजिक उन्नति भी होती जायगी। और बिना स्वराज्य के समाज जहाँ है वहीं पड़ा पड़ा सड़ा करेगा।

(२)

मिस मेयो ने बड़ी बुद्धिमानी के साथ भारत वर्ष में प्रचलित बाल विवाह का ब्योरा नही दिया। अगर उन्हों ने ऐसा

किया होता तो उन्हें यह नतीजा निकालने में सुविधा न हुई होती कि हिन्दुओं में बाल विवाह प्राय सदा हुआ करता है और अधिक अवस्था पर विवाह होना बिल्कुल असाधारण है। हर अवस्था की एक लाख भारतीय स्त्रियों में २५७० या २५ प्रति-सैकड़ा स्त्रियों की अवस्था पाँच वर्ष से लेकर पद्रह वर्ष तक की है। (तालिका १, पृष्ठ १३०–१६२१ जन संख्या रिपोर्ट) (पाँच वर्ष से कम अवस्था वाले बच्चों को हम छोड़े देते हैं क्योंकि ऐसे बच्चे १००० म केवल १५ विवाहित या विधवा हैं और मिस मेयो स्वयं भी यह नहीं कहतीं कि ५ वर्ष से कम आयु की कन्याएं अपने पति के साथ सम्भोग करती हैं और माताएं बनती हैं)।

हिन्दुओं में हर एक अवस्था की १०००० स्त्रियों में ५ और १५ वर्ष के दर्मियान की स्त्रियाँ २५३४ हैं। विवाहिता (या विधवा) कन्याओं की ओसत १००० में २४६ सभी मजहब वालों में और २८७ हिन्दुओं में अर्थात् ३० प्रति सेकड़ा से कम है। वास्तव में अधिकाश शादियाँ लडकियों की १५ वर्ष की या उससे ऊपर की अवस्था में होती हैं। इस से जाहिर है कि समस्त देश में अथवा समस्त हिन्दू जाति में बाल विवाह हर प्रकार की शादियों का केवल एक अश रह जाता है। और वह भी अधिकाशदशाओं में केवल व्याह ही मात्र होते हैं जिसे पति पत्नी का वास्तविक सम्मिलन नहीं कह सकते।

(४)

किसी एक हिन्दुस्तानी के जीवन म प्रवेश करने के समय से

जो उसका दाम्पत्य जीवन आरंभ होता है विशेष उसके सम्बन्ध में मिस मेयो ने कई दोषारोपण किए हैं। यह हिन्दू धर्म से अपना आक्षेप आरम्भ करती हैं। लिखती हैं कि "हिन्दुओं के सब से बड़े देवता शिव की मूर्ति सड़क पर, मन्दिरों में, घर में, छोटी छोटी वेदियों पर या व्यक्तिगत तावीज़ों में लिंगाकार बनाई जाती है और उसी रूप में वह देवता नित्य अपने भक्त की पूजा स्वीकार करता है।

वैष्णव लोग, जिनकी संख्या दक्षिण में बहुत है, बचपन से ही अपने मस्तक पर उत्पत्ति क्रिया का चिन्ह धारण करते हैं। यद्यपि यह मान लिया गया है कि इन चिन्हों के आविष्कारकों का उद्देश्य इनके द्वारा आध्यात्मिक उन्नति करना था, पर इन देवताओं के विषय में जो विस्तृत कथा कथानक घरों में कहे जाते हैं अथवा और भी जो रीत रस्म इनके सम्बन्ध में प्रचलित हैं उनके कारण साधारण आदमी जो इसका मोटा आशयपूर्ण अर्थ लगाता है उसकी परिपुष्टि धर्म द्वारा भी हो जाती है" (पृष्ट ३१) इन चिन्हों के धार्मिक अर्थ के लिए और इस विचार के लिए कि हिन्दुओं के चित्त में ऐसे चिन्ह रति का भाव पैदा करते हैं मिस मेयो ने अबे डुबौय को प्रमाण स्वरूप पेश किया है। धार्मिक चिन्हों की व्युत्पत्ति में पुरा-तत्ववेत्ताओं को चाहे जितनी दिलचस्पी हो लेकिन किसी विषेश समय पर किसी धर्म का क्या नैतिक प्रभाव पड़ रहा है इसके प्रमाण स्वरूप उन व्युत्पत्तियों का कोई मूल्य

नहीं है हमारे पास फ्रान्सिस म्विती की एक छोटी सी पुस्तक है जिसका नाम है ' क्रास' और 'सर्किल' का गुप्त रहस्य'। उस में धार्मिक चिन्हो का अनुसधान मिश्र के चित्राक्षर काल से दिया गया है। इस लेखक के अनुसार शिव लिङ्ग की भाँति क्रास की भी उपस्थेन्द्रिय उत्पत्ति है। लेकिन किसी भी ईसाई को क्रास देख कर पुरुषेन्द्रिय की याद नहीं आती न किसी हिन्दू को शिव लिङ्ग देख कर इस प्रकार का स्मरण आता है। प्रो० जेम्स विसेट प्राट साहब लिङ्ग के विषय में लिखते हैं कि जननेन्द्रिय चिन्ह तमाम ससार में पाए जाते हैं और अन्य चिन्हों की भाँति लिङ्ग की उत्पत्ति भी किसी प्रारम्भिक औत्पत्तिक देवता के चिन्ह स्वरूप हुई है। कुछ भी हो शिव और उनके लिङ्ग के विषय में शिव भक्तों की रति सम्बन्धी कोई धारणा शेष नहीं रह गई। अब तो वह एक ऐसा रूपमात्र है जिसमें महादेव की पूजा के लिए अपने आप को व्यक्त करते हैं।" (भारत वर्ष और उसके धर्म हफटन मिफलिन कम्पनी पृष्ठ १७)

शैव मत के हिन्दू व्याख्याता लिंग की जननेन्द्रिय उत्पत्ति को नहीं मानते। स्वामी विवेकानन्द जिनको मिस मेयो ने "जननेन्द्रिय पूजन के आध्यात्मिक अर्थ का आधुनिक गुरू" कह कर टाल दिया है लिंग की जननेन्द्रिय व्याख्या का कारण पाश्चात्यों की उस पुरानी प्रवृत्ति को वतलाते हैं जो प्रत्येक वस्तु के स्थूल और बाह्य रूप को ही देखने की अभ्यस्त है।

एक और दृष्टान्त लीजिए :

अगर किसी स्त्री के बराबर सन्तान न होती हो किन्तु पति सबसे अन्तिम उपाय यह करता है कि वह अपनी पत्नी को उपहार ले कर किसी मंदिर की यात्रा के लिए भेज देता है। लोगों ने इसे प्रमाणित बतलाया है। कुछ जातियों में तो समय बचाने के लिए विवाह के बाद प्रथम रात्रि को ही ऐसा किया जाता है। मन्दिर में दिन के समय स्त्री ईश्वर से पुत्र के लिए प्रार्थना करती है और रात में उसे पवित्र चहार दीवारी के भीतर सोना पड़ता है। प्रातः काल होने पर उसे पुजारी को सारा किस्सा बतलाना पड़ता है कि रात के अँधेरे में उस पर क्या बीती। उसका सारा समाचार सुन कर पुजारी कहता है "सम्मानवती पुत्री तू स्तुति कर, धन्यवाद दे, वह स्वयं ईश्वर था। इसके बाद वह अपने घर वापस आती है। अगर सन्तान पैदा होती है और वह जीवित रहती है तो एक साल बाद वह स्त्री उस सन्तान के सिर के बाल और अन्य उपहार की सामग्री लेकर मन्दिर में फिर आती है।"

इस कथा का प्रमाण भी अबे दुर्बोध है, किन्तु शायद अबे को यह विचार शायद बुकेशियो की पुस्तक से मिला। उस पुस्तक में लिखा है कि महन्त अलबर्टो किसी स्त्री को विश्वास दिला देता है कि प्रधान देवदूत जिब्रील उसके ऊपर मोहित हैं और इस बहाने से वह रात में कई बार उस स्त्री के पास जाता है इस प्रकार चालाकी और सफ़ाई से

भरे हुए नैतिक पतन पर वे केवल उस इटालियन ने बल्कि बाद में आने वाले अनेक लेखकों ने लिखा है। अवे डुबौय इस देश में कोई आत्मिक आदेश पाकर नहीं आया था बल्कि, जैसा उसने स्वयं कहा है कि फ्रांसीसी क्रान्ति के उपद्रवों से बचने के लिए भाग निकला था। वह लिखता है कि "अगर मैं न भागता तो मैं (उस क्रान्ति का) उसी प्रकार आखेट बन जाता जैसा कि मेरी भाँति राजनीतिक और धार्मिक सम्मति वाले हुए थे। पादरियों का दुराचरण उस फ्रांसीसी क्रान्ति का एक कारण था जिसने सारे ईसाई देवताओं का सम्पूर्ण सफाया कर दिया और उसके स्थान पर तर्क की देवी को प्रस्थापित कर दिया। हिन्दू मत के ऊपर अवे डुबौय के बहुत से ख्यालात वही हैं जो उन्हों ने अपने देश के धर्म के सम्बन्ध में बना रक्खे थे। सन्तान हीन स्त्रियों का पुजारी के रूप में ईश्वर द्वारा साक्षात् के लिए मन्दिरों में जाने का किस्सा सरासर अवे के अध्ययन काल की स्मृति है। इन तमाम ढकोसलों के होते हुए भी एक ईसाई धर्मोपदेशक की हैसियत से अवे ने अपनी असफलता स्वयं स्वीकृत की है। देश रीति के अनुसार अपने को ढालने में वह रोक टोक और तंगी जिसके अन्दर मुझे रहना पड़ता था, प्राय लोगों के पक्षपात पूर्ण विचारों का ग्रहण करना, उन्हीं की तरह रहते रहते बहुत कुछ मेरा स्वयं हिन्दू हो जाना; सक्षेप में सबके लिए सब कुछ हो जाना ताकि मैं कुछ लोगों

की रक्षा कर सकूं—यह सब मिलकर भी मुझे लोगों के ईसाई बनाने में कारगर नहीं हुए।

पादरी की हैसियत से मैं इतने दिनों तक हिन्दुस्तान में रहा, लेकिन एक देशी पादरी की सहायता से केवल दो तीन सौ स्त्री पुरुषों को ईसाई बना पाया। इन में से दो तिहाई पारिया या भिखमंगे थे, बाकी शूद्र, आवारा, और अनेक जातियों से निकाले हुए ऐसे लोग थे जिनकी रोज़ी का कोई ज़रिया नहीं था और उन लोगों ने केवल शादी इत्यादि का सम्बन्ध स्थापित करने के लिए या और किसी स्वार्थ वश ईसाई धर्म ग्रहण किया था। (सम्पादकीय भूमिका पृष्ठ २५,२७) धर्म प्रचार के कार्य में असफल रहने पर पादरी महाशय ने ईसाई धर्म की सेवा का दूसरा मार्ग ढूँढ निकाला। वे लिखते हैं:—

"इस पुस्तक के लिखने का एक सब से बड़ा उद्देश्य है। मुझे ख़्याल आया कि अगर बहु देवोपासनी और मूर्ति पूजा की बुराइयों का एक सच्चा चित्र खींचा जाय तो ईसाई धर्म का सौन्दर्य और पूर्णत्व खूब चमक उठेगा। यही कारण था कि लेसीडेमोनिया वाले अपने बच्चों के सामने शराब के नशे में बदहवास गुलामों को रखते थे ताकि लड़कों के चित पर नशेबाज़ी की भयानकता पूर्ण रीति से अंकित हो जाय।' लेखक की भूमिका पृष्ठ ६।"

पादरी साहब स्वयं स्वीकार करते हैं कि यह पुस्तक

हिन्दू धर्म की बुराइयों को दिखला कर ईसाई धर्म के गुणों को प्रकाशित करने के लिए लिखी गई थी, फिर भी यह बड़े आश्चर्य की बात है कि उसे हिन्दू धर्म के रस्मोरिवाज का विश्वसनीय वर्णन मान लिया जाय।

बात तो यह है कि पादरी महाशय की पुस्तक, उतनी ही अविश्वनीय है जितनी मिस मेयो की। दोनों के चित्त में प्रबल पक्षपात पहले से ही जमा हुआ है। अबे इसाई धर्म का कट्टर और असफल प्रचारक था, मिस मेयो श्वेताङ्ग प्रभुत्व की उतनी ही कट्टर प्रतिपादिका हैं। असल में पुनर्जन्म में विश्वास करने वाले यह सोच सकते हैं कि एक शताब्दी पहले का बगलाभगत अबे हमारे समय में अमरीकन सफाई विभाग के दारोगा के रूप में पैदा हुआ है।

(८)

मिस मेयो का कथन है कि मैं ने यह पुस्तक हिन्दू स्त्रियों और बच्चों के प्रेम विवश होकर लिखी है, सच पूछिए तो उसने हिन्दू स्त्रियों को पुरुषों से कहीं अधिक लथेड़ा है नीचे दिए हुए आक्रमण से और अधिक जहरीले आक्रमण की हम भावना भी नहीं कर सकते।

यह दोष भी न समाज के किसी वर्ग विशेष से सम्बन्ध रखता है न विशेष मूर्खता के कारण है। असल में यह लोग भलाई बुराई का इतना कम ज्ञान रखते हैं कि माताएं, चाहे वे उच्च कुल की हों चाहे नीच की, अपने बच्चों पर कन्याओं को

अच्छी तरह सुलाने के लिए और पुत्रों को पौरुषवान बनाने के लिए—इसका (हस्त क्रिया का) अभ्यास करती हैं। यह एक ऐसी कुटेव है जिसका अभ्यास लड़के अपने शेष जीवन में नित्य करते रहते हैं। पिछले वाक्य पर विशेष ध्यान देना चाहिए। विस्तृत रूप से बड़े से बड़े डाक्टर इसका समर्थन करते हैं कि लगभग प्रत्येक बच्चे के शरीर पर, जो किसी भाँति उनके निरीक्षण में आया. इस कुटेव के चिन्ह पाए गए" (पृष्ट ३२,३३)

हिन्दुस्तान की माताओं के इस गर्हित दोष का कोई स्पष्ट प्रमाण मिस मेयो नहीं दे सकीं। जिनका हवाला मिस मेयो प्रायः दिया करती हैं यहां तक कि अबे डुबौय ने इस विषय पर एक शब्द भी नहीं कहा, यद्यपि यह नहीं हो सकता कि समस्त हिन्दू जाति पर कलंक का कालिख पोतते हुए पादरी महाशय इस बात को छोड़ जाते अगर इस दुर्व्यसन के अस्तित्व का रत्ती भर भी आधार उनके पास होता। मिस मेयो का कहना है कि बड़े से बड़े डाक्टरों ने हिन्दू माताओं द्वारा उनके अपने बच्चों के इस सार्वभौमिक दुपप्रयोग का समर्थन किया है। लेकिन उसने अपने दावा के सबूत में एक भी रिपोर्ट या अन्य सर्कारी या ग़ैर सर्कारी प्रकाशन पेश नहीं किया। कम से कम एक बहुत बड़े प्रसिद्ध डाक्टर ने मिस मेयो के इस दोषारोपण का घोर प्रतिवाद किया है। प्रसिद्ध समाजसेवी और मदरास लेजिस्लेटिव कौन्सिल की वाइस प्रेसिडेन्ट श्री मती डा०

मूथू लक्ष्मी देवी ने अपने विस्तीर्ण डाक्टरी के अनुभव द्वारा कहा है कि इस असाधारण दूषण को देखने का संयोग मुझे कभी नहीं मिला जिसे कुछ भी पता है कि किस सम्मान से भारतवर्ष की माताएं और मातृत्व देखा जाता है उसे यह कहने में रत्ती भर भी सकोच न होगा कि मिस मेयो का यह कथन नितान्त निर्दय कठोर और सुचिन्तित असत्य है। हिन्दुस्तान मिस मेयो की बहुतेरी बातों को माफ कर सकता है लेकिन अपनी (पूज्य) माताओं के सम्मान पर इस कायरतापूर्ण आक्रमण को कभी नहीं भूल सकता। केवल यही एक कथन साबित करता है कि मिस मेयो स्वय लेकिन कुछ अधिक कहना व्यर्थ है।

लड़कों के बड़े हो जाने पर इस आदत के जारी रखने के विषय पर केवल यही कहना है कि यह अच्छी तरह मालूम है कि हिन्दुओं में यह दुर्गुण कभी प्रचलित नहीं रहा है। विवाहा और बालविवाहों के सार्वभौतिक प्रचार ने उस कारण की बुनियाद ही काट दी जो आधुनिक देशों में इस बुराई को फैलाता है।

(हैवलाक एलिस की "दि टास्क आव सोशल हाइजीन" नामी पुस्तक में, जिसका नया सस्करण अभी ऑक्सफर्ड युनिवर्सिटी प्रेस से निकला है, इस पर और इससे मिलते जुलते अन्य विषयों पर बहुत अच्छा, प्रकाश डाला गया है)।

एक और झूठी और तमाशे की बात मिस मेयो एक विस्तृत

आधुनिक अनुभव प्राप्त महिला डाक्टर-का कथन स्वरूप कहती हैं कि "हिन्दुस्तानी कमसिन पत्नियां दिन भर में दो तीन बार वैवाहिक प्रयोग का अनुभव करती हैं" अवश्य ही हिन्दुस्तानी पति कामुकता का विशाल राक्षस है जो अपनी उस आदत के साथ जिसका आरम्भ मिस मेयो के कथनानुसार उसकी शैशवावस्था में उसकी माता ने कराया था, इस भीषणता का अभ्यास भी कर सकता है! ऐसी बातों का उल्लेख करते हुए हमें बड़ी लज्जा आती है लेकिन जब एक निर्लज्ज स्त्री, जो स्वयं कामुकता से पीड़ित मालूम पड़ती है, इस प्रकार संसार के सामने एलान करती है कि हिन्दुस्तानी जीवन के लिए यह मामूली बातें हैं तो हमें लाचार हो कर ऐसा लिखना ही पड़ता है। गत सप्ताह में हमारे एक अमरीकन मित्र ने ठीक ही लिखा है कि यह पुस्तक 'भारत-माता' की उतनी द्योतक नहीं है जितनी मिस मेयो की।......

मिस मेयो ने निम्न लिखित बातें एक अंग्रेज़ महिला डाक्टर से, जो "बम्बई से एक हज़ार मील पूर्व बसती है" सुनकर लिखा है:—

"मेरे रोगी अधिकतर विश्वविद्यालय के विद्यार्थियों की पत्नियां हैं। उन में हर एक को कोई न कोई विषय सम्बन्धी रोग हैं" (पृष्ठ ५९) मिस मेयो की पुस्तक में अनेक स्थलों पर कहा गया है कि भारतवर्ष में विषय सम्बन्धी बीमारियाँ प्रायः सर्वत्र पायी जाती हैं। यहां पर थोड़ी सी बातें बतला कर

हम संताप कर लेंगे। स्वर्गवासी सर नारायण चन्दा वर्कर ने एक बार हिन्दुस्तानियों में विषय सम्बन्धी बीमारियों के दोषारोपण का बड़ा अच्छा जवाब दिया था। उन्हों ने कहा था कि यह बीमारी इस देश में फिरंगी रोग के नाम से प्रसिद्ध है अर्थात वह रोग जो योरोप निवासियों के साथ यहाँ आया। बम्बई के एक प्रसिद्ध यूनानी हकीम ने, थोड़े दिन हुए, मुझ से कहा था कि यूनानी हिकमत की किताबों में इस मर्ज का यही नाम दिया हुआ है। अब भी देश के अन्दरूनी भागों में जहाँ योरोपियनों का संसर्ग नहीं हुवा है। यह रोग शायद ही कहीं पाया जाता है। डा० नार्मन लीज अपनी 'केनिया' नामी पुस्तक में लिखते हैं कि नई दुनिया के आविष्कार के पहले पुरानी दुनिया में इस रोग का नामो निशान तक न था।

जाति पाति के बहुत से कायदे और बन्धन स्वास्थ्य रक्षक के आधार पर बनाए गए थे। हजरत मूसा की भाँति महाराज मनु ने भी अपने धार्मिक और सामाजिक नियमों में स्वास्थ्य रक्षा के कानूनों को घुसेड़ दिया है। जाति गत दो सहोदर विष—अर्थात् मदिरा और उपदंश (गर्मी)—अगर योरोपियनों द्वारा हिन्दुस्तान में प्रथम बार लाए नहीं गए तो उनके प्रभाव से इन का प्रचार खूब हुआ है। यह पैशाचिक झूठ है कि हिन्दुस्तान में विश्वविद्यालय के लोग सामूहिक तौर पर उपदंश के रोगी हैं और उनकी स्त्रियाँ भी इसी रोग से संक्रान्त हैं।

सर रवीन्द्रनाथ ठाकुर की आलोचना

("मैंचिस्टर गार्डियन" से उद्धृत चिट्ठी)

महाशय,—आशा है कि न्याय के अनुरोध से आप अपने पत्र में मेरी इस चिट्ठी को स्थान देने की कृपा करेंगे जो मैं ने अत्यन्त अन्याय-पूर्ण आक्रमण के विरुद्ध अपनी भारतवर्ष के प्रतिनिधित्व की स्थिति की रक्षा में लिखने के लिए विवश हुआ हूं।

वालि के इस द्वीप में भ्रमण करते हुए संयोग वश १६ जुलाई सन् १९२७ ई० का 'न्यू स्टेट्समैन" मेरे हाथ पड़ गया जिसमें एक पुस्तक के ऊपर जो किसी अमरीकन यात्री द्वारा भारतवर्ष के ऊपर लिखी गई है, एक समालोचना प्रकाशित हुई है। पुस्तक की लेखिका ने हमारे देशवासियों पर जो कलंक लगाए हैं उनका बड़े चिकने चुपड़े विद्वेष के साथ समर्थन करते हुए और हिन्दुओं के बड़े से बड़े लोगों में साधारण तौर पर पाई जाने वाली असत्य निष्ठा की ओर बार बार ध्यान आकर्षित हुए समालोचक ने एक मन गढन्त कथा को प्रकाशित किया है जो न केवल उन सरासर गालियों का नमूना समझी जा सकती है जिन से ऐसी किताबें भरी पड़ी रहती हैं बल्कि जिसे ऐसी सूचना समझ सकते हैं जो देने वाले ने बिना मांगे हुए स्वेच्छापूर्वक दी है और जिसकी

सभ्यता के विषय में लेखक ने बड़े छिपे ढग से अपनी व्यक्तिगत प्रामाणिकता की ओर सकेत किया है। वह मन गढन्त कथा इस प्रकार है —

"कविवर सर रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने अपना यह विश्वास छाप कर प्रकाशित करवा दिया है नारी सुलभ विषय वासना के चाञ्चल्य से बचने के लिए यह आवश्यक है कि स्त्रियों का ब्याह रजोदर्शन से पूर्व ही हो जाना चाहिए।"

"बरी देशों के विरुद्ध पश्चिम म किस प्रकार जान बूझ कर भयानक असत्यों का प्रचार किया जाता है उससे हम खेद पूर्वक भली प्रकार परिचित हो गए हैं, किन्तु उसी प्रकार का प्रचार उन व्यक्तियों के विरुद्ध जिनके देश वासियों ने अपनी राजनीतिक अकाक्षाओं द्वारा लेखक को अप्रसन्न किया है देख कर मुझे बडा आश्चर्य हुआ अगर किसी समय, संयुक्त राज्य अमरीका इङ्गलेण्ड की निगाहा में राजनीतिक कारणों से घृणास्पद हो गया था तो यह हम अनुमान कर सकते है कि किस तरह इस श्रेणी का लेखक अमरीकन पत्रों के समाचारों की सहायता से बडी प्रसन्नता के साथ यह प्रमाणित करेगा कि अमरीका निवासी दण्डनीय अपराधों से बडी सुरुचि रखते हैं और अपने वक्तव्य के समर्थन में वह उनकी उस अनुरक्ति का उल्लेख करेगा जो वे निरन्तर सिनमा की तसवीरों द्वारा अपराधो के आनन्द उठाने में दिखाया करते हैं। लेकिन क्या यह अपनी उच्छृङ्खल वाक्पटुता के

भयानक से भयानक उद्वेग में प्रेसिडेण्ट विलसन ऐसे मनुष्य के ऊपर इतना भयङ्कर दोषारोपण करने का साहस करेगा कि उन्होंने अपना पवित्र विश्वास प्रगट किया है कि ईसाई सद्गुणों की वृद्धि के लिए हब्शियों को अन्याय पूर्वक दण्ड देना उच्चतर सभ्यता की एक नैतिक आवश्यकता है। अथवा क्या वह यह कहने का साहस करेगा कि प्रो० डेवे साहब का यह सिद्धान्त है कि सदियों तक जादूगरनियों को जलाते जलाते पाश्चात्य जाति वालों में एक ऐसा तीव्र नैतिक चैतन्य पैदा हो गया है जो उन लोगों के विचार करने या उन्हें दण्ड देने में बड़ा सहायक होता है जिन्हें वे नहीं जानते, नहीं समझते, या नहीं पसन्द करते और जिनकी दण्डनीयता के विषय में उन्हें निर्णयात्मक प्रमाणों की कमी कभी नहीं रहती। लेकिन इस लेखक का यह सुचिन्तित असत्यता पूर्ण अनुत्तरदायित्व जिससे सम्पादक भी अपनी दृष्टि बचा गया है क्या मेरे विषय में इसलिए आसानी से सम्भव हो गया कि मैं केवल एक अँग्रेज़ी राज्य की प्रजा हूँ जिसका जन्म संयोगवश हिन्दू कुल में हुवा है न कि उस मुस्लिम जाति में जो लेखक के अनुसार उसकी जाति की और हमारे सर्कार की विशेष कृपापात्र है।

मैं इसी प्रसंग में बतला देना चाहता हूँ कि कुछ चुनी हुई बातों के आधार पर किसी बहुत बड़े जनसमुदाय के विषय में कोई साधारण और अपरिवर्तित कथन एक विदेशी

यात्री के हाथ में भयङ्कर असत्य का एक ऐसा विपक्त बाण हो सकता है जिस का बहुत थोडा निशाना स्वयं अँग्रेज जाति बडी आसानी से बन सकती है हिन्दुओं को सामूहिक रूप से गौ गोबर भक्षी कहना कमीनेपन की चालाकी और झूठ है। यह वैसा ही अत्याचार है कि जैसे किसी अनजान को अँग्रेजों का परिचय कोकीन सेवी कह कर दिया जाय क्योंकि कोकीन का व्यवहार उनकी दन्त चिकित्सा में प्राय होता है। हिन्दुओं में कभी कभी विरले ही अवसर पर भोजन के साथ नहीं बल्कि किसी सामाजिक नियम भंग के प्रायश्चित सस्कार में बहुत ही थोडा सा गोबर काम में लाया जाता है। योरोप निवासी अपने दैनिक भोजन में प्राय घोंघा और पनीर का इस्तेमाल करते हैं अगर इसी के आधार पर उन्हें जीवित जन्तु भक्षी या सडी गली चीज खाने वाला कहा जाय तो हिन्दुओं को गोबर भक्षी कहने की अपेक्षा इसमें अधिक सत्य है, लेकिन जिसे योरोप निवासियों के प्रति विद्वेष भाव पैदा करना विशेष अभीष्ट नहीं है और जो ईमान्दार है वह ऐसा कहने से अवश्य हिचकेगा। छोटी छोटी गौण बातों के ऊपर जरुरत से ज्यादा जोर देना और इस प्रकार अपवाद को नियम का रूप देना असत्य का गुप्त और कपटपूर्ण ढंग है।

× × × ×

नैतिक विरुद्धताओं के उदाहरण जब हम अन्य देश या अन्य जाति में पाते हैं तो स्वभावत वे बहुत बडे आकार में हमें

दिखाई पड़ते हैं क्योंकि अन्दर से काम करने वाली स्वास्थ्य की निश्चयात्मक positive और समाज के सामञ्जस्य को क़ायम रखने वाली अवरोधक शक्तियाँ किसी विदेशी को प्रगट रूप में नहीं दिखाई पड़तीं। विशेषतः उसको जो नैतिक क्रोध के असंयत बाहुल्य के लिये लालायित रहता है। यदि पीछे से देखें तो मालूम होगा कि यह भी उसी उद्भ्रान्त रोग-निदान शास्त्र का चिन्ह है जिस का दोषी वह दूसरों को समझता है। जब इस प्रकार का समालोचक सत्य के लिए नहीं बल्कि अपने अतिशय आत्म संतोष के हुलसित उपभोग के लिए पूर्वीय देशों में आता है और बड़ी प्रफुल्लता के साथ यहाँ की कुछ सामाजिक कुरीतियों को अप्रासङ्गिक तौर पर प्रधानता देता है तो वह हमारे नवयुवक समालोचकों को वही अपवित्र कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करता है। वे भी यात्रियों को पता बताने वाली उन सहस्रों पुस्तकों की सहायता से जो मानव जाति के कल्याण के लिए दोषोन्मुक्त साधनों द्वारा प्रकाशित की जाती हैं, पाश्चात्य समाज के उन अन्धकारपूर्ण गर्तों का पता लगाते हैं जो अन्य दुर्व्यसनों और नैतिक मलिनताओं की उत्पादक भूमि है; भ्रष्टता के चुने हुए नमूनों को वे भी उसी पवित्र उत्साह और भक्ति-पूर्ण उल्लास के साथ ढूंढ़ निकालते हैं जिसका परिचय उनके विदेशी आदर्श किसी समस्त जाति के नाम पर गन्दी नालियों का कीचड़ पोतने में देते हैं। × × × × × ×

और इसी प्रकार नित्य प्रति संचित होने वाली मिथ्या भावना और पारस्परिक दोषारोपण का अन्तहीन दूषित वृत्त पैदा होता है जो विश्व की शान्ति के लिए महा अनिष्टकर है। अवश्य ही हमारे पूर्वीय नवयुवक समालोचक को एक असुविधा है। क्योंकि पाश्चात्य लोगों के पास शब्दों का महा-प्रवर्द्धक यंत्र है जिस के कारण वे बड़ी गहराई तक और बड़ी दूर तक अनायास ही पहुँच जाते हैं चाहे वे दूसरों को दूषित करने के लिए कहे जाय या दूसरों के मर्मस्पर्शी दोषारोपणा से आत्म रक्षा के लिए।

दूसरी ओर हमारे अपमानित समालोचक को अपने असहाय फेफड़ों से ही भिड़ना पड़ता है जो केवल फुसफुसा सकते हैं और आह भर सकते हैं लेकिन शोर नहीं मचा सकते, क्या यह मालूम नहीं है कि हमारी निर्बल भावनाएं जब वे हमारे मस्तिष्क के निस्तब्ध और अन्धकार-पूर्ण तहखानों में ठूँस ठूँस कर भर दी जाती हैं, तो और भी अधिक ज्वलनात्मक हो जाती हैं ? पूर्वीय प्रायद्वीप में, पश्चिम के समालोचकों की सहायता से ऐसे शीघ्र दाह्य पदार्थ नित्य प्रति जमा होते जा रहे हैं। वे समालोचक अपना एक सुखद कर्तव्य समझ कर अपने पक्षपातों को प्रगट करने पर सदा तुले रहते हैं और बड़ी सुगमता से अपने उस निश्चित अन्त-करण को पालते रहते हैं जो बड़े आराम से उन्हें यह भुला देता है कि पश्चिम में भी ऐसी नैतिक उच्छृङ्खलताएं चाहे

उनके सुन्दर सजे धजे संस्थापनों में हो अथवा उनकी गन्दी अपवित्र गलियों में, किसी न किसी रूप में मौजूद हैं मैं अपने पाश्चात्य पाठकों को अच्छी तरह विश्वास दिला देना चाहता हूँ कि न मुझे और न मेरे साथी और रुष्ट भारतीय मित्रों को उन बातों का बाल बाल पता था, जिनका वर्णन उस पुस्तक में किया गया है और जिसे विकृत हास-मय विश्वास के साथ लेखक ने उद्धृत किया है और जिसे वे विषयातिशयिता की शिक्षा का साधारण अभ्यास समझते हैं।

उस पुस्तक और उससे लिए गए उद्धरण में जो अनेक अविश्वसनीय बातें कहीं गई हैं उनको नितान्त निर्मूल कहने में मेरी क्या कठिनाई है इसे मेरे वे पाश्चात्य पाठक भली भाँति समझ सकते हैं जो जानते हैं कि किस प्रकार स्वयं उनके (योरोप अमरीका) समाज में यकायक ऐसे अद्भुत रहस्य खुल जाया करते हैं जिनसे निस्सन्देही जनता को विषय सम्बन्धी उन अस्वाभाविक पैशाचिक लीलाओं का पता चल जाता है जो नियमित रूप से ऐसे वातावरण में हुआ करती हैं जिसे 'मनुष्यतर' सभ्यता का द्योतक नहीं कहा जाता।

'न्यूस्टेट्समैन' के लेखक ने सङ्केत किया है कि यात्री मिस मेयो द्वारा अपने दुराचारों के लिए निन्दित हिन्दुस्तानियों को सुरक्षित रूप से अपना अस्तित्व क़ायम रखने में अँग्रेज़ी सेना द्वारा कोई सहायता न मिलनी चाहिए। यह लेखक जान

बूझ कर यह बात भूल जाना चाहता है कि बिना अँग्रेजी सेना की सहायता के इन लोगों ने अपनी सभ्यता और अपना अस्तित्व स्वयं अँग्रेजों की अपेक्षा कहीं अधिक सदियों तक कायम रक्खा है। कुछ भी हो मैं नहीं चाहता कि मैं अपना ज्ञान इन साधनों के द्वारा प्राप्त करूं या जाति-भेद का दूषित संक्रमण फैलाने वाले ऐसे लेखकों के विषय में उन्ही की भाँति विनाशक संकेत करूं क्योंकि उत्तेजना मिलने पर भी मानव-स्वभाव के सुधार की अपरिमित योग्यता में धैर्य के साथ हमें विश्वास रखना चाहिए और आशा करनी चाहिए कि मनुष्य के अन्दर अभी जो कुछ थोडी सी वन्यता विद्यमान है वह भी धीरे धीरे निकल जायगी, किन्तु हिंसात्मक तत्वों को शारीरिक विनाश द्वारा नहीं बल्कि मानसिक शिक्षा और सच्ची सभ्यता के अनुशासन द्वारा दूर करने से।

———o———

डा० टैगोर का प्रचण्ड प्रतिवाद

'झूठ और विकृत सत्य का संयोग'

मिस मेयो की 'मदर इण्डिया' पर श्रीयुत रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने निम्न लिखित पत्र न्यूयार्क के 'नेशन' नामी पत्र के सम्पादक को लिखा था जो माडर्न रिव्यू के दिसम्बर वाले अङ्क में प्रकाशित हुआ है:--

महाशय जी,

आप के पत्र के विज्ञापन वाले स्तम्भ में मैं ने पढ़ा कि मिस मेयो की "मदर इण्डिया" की प्रशंसा अर्नल्ड बेनेट ने "सम्मान्य अर्थ में हृदय को कम्पित करने वाली पुस्तक" कह कर की है। अभाग्यवश स्पष्ट कारणों से भारतवर्ष पर शासन करने वाली जाति उसे अपमानित और कलंकित करने वाले किसी भी अपवाद को सच मानने के लिए सदा तैयार रहती है इसीलिए मिस मेयो की दंग कर देने वाली बातों से उन्हें हिन्दुस्तानियों के ऊपर घृणायुक्त क्रोध करने का बड़ा सुन्दर अवसर मिल गया है। लोगों को दंग कर देने के लिए बड़ी चालाकी के साथ जो बातें मिस मेयो ने गढ़ी हैं उनकी और उसके घोर दारुण असत्यों की पोल हमारे पत्रों में नित्य खोली जा रही हैं लेकिन इनकी पहुँच उन पाठकों तक कभी न होगी

जिन्हें धोखा देना मिस मेयो के लिए इतना आसान है। भूटे आन्दोलनों के अन्य पूर्वीय शिकारों की भांति हम हिन्दुस्तानी भी नि शक साहित्य की गन्दी बौछार सहने के लिए मजबूर हैं। क्योंकि आप के लेखकों के हाथ में प्रकाशन का वह निर्दय और सबल यन्त्र है जो ऐसे स्थान से, जहा हमारी कोई पहुँच नहीं है, हमारी निन्दा की वर्षा करके हमारे सारे सुयश को निर्दयता पूर्वक छिन्न भिन्न कर डालता है।

सयोग से म उन लोगों मे से एक हू जिनकी ओर लेखिका ने विशेष तौर से ध्यान दिया है, और अपने निशागन आक्रमण का निशाना बनाया है। यद्यपि दुष्टता के इस सक्रामक रोग से अपनी रक्षा करना मेरे लिए बड़ा कठिन है तथापि आपके पत्र द्वारा कमसे कम अपने उन थोड़े बहुत मित्रो के कान तक अपनी आवाज पहुँचाना चाहता हूँ जो अटलाण्टिक के उस पार हैं और जिनकी न्याय बुद्धि म मुझे इतना विश्वास है कि वे एक समस्त जाति के विरुद्ध किसी आकस्मिक यात्री के दिल बहलाने वाले कथनों को योंही सम्मान्य मान लेने के पहले उनकी सच्चाई के विषय मे अपनी राय कायम करना मुलतवी रक्खेंगे।

अपनी सफ़ाई म मे श्रीयुत नटराजन के, जो हमारी सामाजिक कुरीतियों के निर्भीक आलोचक हैं, पत्र का एक अश पेश करूगा। सयोगवश उन्होंने उसी दोषारोपण के बारे में कुछ लिखा है जो मिस मेयो ने मेरे ऊपर लगाए हैं

और जिनको गढ़ने के लिए उसने मेरे उस लेख के जो मैं ने केसलिङ्ग की विवाह सम्बन्धी किताब के लिए लिखा था, कुछ वाक्य ऐसे ढंग से ले लिए हैं कि उनका असली अर्थ लुप्त हो गया है और उस के घृणित अर्थ-साधन के लिए उन्होंने नितान्त असत्य प्रमाण का रूप धारण कर लिया है। श्रीयुत नटराजन लिखते हैं:—

'अपने निबंधके अन्तिम पाँच पृष्ठों में टैगोर ने विवाह का अपना आदर्श दिया है।

डा० टैगोर की सम्मति में विवाह की प्रथा केवल भारत-वर्ष में ही नहीं वलिक समस्त संसार में आदि काल से लेकर अब तक स्त्री और पुरुष के वास्तविक सम्मिलन में बाधा स्वरूप रही है। वास्तविक सम्मिलन तभी सम्भव होगा जब 'समाज घर के रचनात्मक कार्यों से बिना प्रथक किए हुए स्त्री की शक्ति विशेष द्वारा सम्पादनीय रचनात्मक कार्यों के लिए उसे सुविशाल क्षेत्र प्रदान कर सकेगा।' अगर मिस मेयो केवल एक प्रचारिका न हो कर सच्ची जिज्ञासु होती और अगर उसमें टैगोर के निबन्ध को पूरा पढ़ने का धैर्य न होता तो वह कलकत्ता में किसी से पूछ सकती थी कि टैगोर के घराने में लड़कियों का व्याह किस अवस्था में होता है। लेकिन यह स्पष्ट है कि वह कवि सम्राट को अपमानित करने के लिए तुली हुई थी।

मैं चाहता हूँ कि आप के लेखकों में से कोई केसरलिङ्ग

की पुस्तक में प्रकाशित हिन्दू विवाह पर मेरा निबन्ध पढे और मिस मेयो को यह प्रमाणित करने के लिए आह्वान करे कि यह मेरी सम्मति है कि 'बाल विवाह सर्वोत्कृष्ट आन्तरिक भावना का पुष्प है, जातीय सभ्यता की उन्नति के लिए प्रखर बुद्धि द्वारा प्राप्त भौतिकता और विषयाशक्ति के ऊपर विजय है जिसका 'छिपा हुआ अर्थ' केवल यह है कि अगर हिन्दुस्तानी स्त्री को काबू में रखना है तो स्त्रीत्व को प्राप्त होने के पहले उसे अच्छी तरह बन्धन में कस कर किसी पुरुष के हवाले कर देना चाहिये।"

अन्त में आप के पाठकों का ध्यान मैं एक दूसरे अद्भुत मिथ्या कथन की ओर आकर्षित करना चाहता हूँ जिस में मेरे लिए अवज्ञा पूर्वक कहा गया है कि पाश्चात्य डाक्टरी के विज्ञान के विरुद्ध मैं आयुर्वेदिक प्रथा का सुरक्षक हूँ। अगर मिस मेयो में सामर्थ्य हो तो इस दोष को भी साबित करे।

मेरी तरह और बहुतेरे साक्षी हैं जो अगर पाश्चात्य पाठकों तक पहुँच सकें तो अपनी शिकायत उनके सामने रक्खें और उन्हें बतलाए कि किस प्रकार उनके विचारों का गलत अर्थ किया गया है, किस प्रकार उनके शब्द तोड़े मरोड़े गए हैं और किस प्रकार यथार्थ बातों को निर्दयता पूर्वक ऐसा स्वरूप दिया गया है जो असत्य से भी बदतर है।

डिचर साहब की आलोचना

(कैपिटल' से उद्धृत)

मिस मेयो अपनी संकीर्णताओं से अच्छी तरह वाक़िफ़ जान पड़ती हैं क्योंकि अपनी सड़ी गली बातों के लिए वह चण्डूख़ाने की गप्पें ढूंढती फिरतीं हैं।

जिन लोगों ने ऐसी बातें उसे बतलाईं उन्होंने उसे बेवक़ूफ़ बनाया। उदाहरण के लिए यह लीजिए:—

"यह क़िस्सा एक ऐसे आदमी के मुँह से सुना गया है जिसकी सच्चाई में कभी किसी को सन्देह नहीं हुवा। सन् १९२० के तूफ़ानी दिनों की बात है जब नया 'रिफ़ार्म्स एक्ट' समस्त देश में सन्देह उत्पन्न कर रहा था और बराबर यह अफ़वाह फैल रही थी कि अँग्रेज़ लोग हिन्दुस्तान छोड़ कर चले जाना चाहते हैं। उसी ज़माने में एक अमरीकन सज्जन जिन्हें भारत में बहुत दिनों तक रहने का अवसर मिल चुका था, एक बहुत बड़े राजा के यहाँ गए हुए थे। वह राजा अपने सौन्दर्य अपनी शिष्टता और अपने शक्ति के लिए बड़ा प्रसिद्ध था और उसके राज्य का प्रबन्ध प्रथम श्रेणी का समझा जाता था। राजा का दीवान भी उस अवसर पर मौजूद था और तीनों सज्जन पुराने मित्र की भाँति बड़े मज़े में बातें कर रहे थे।

दीवान ने कहा कि महाराजा साहब को विश्वास नहीं है कि अँग्रेज लोग हिन्दुस्तान छोड कर चले जायगे, ताहम इङ्गलैण्ड के नए शासन में ऐसा हो जाना असम्भव नहीं है। इसीलिए हमारे महाराज सैन्य तैयार कर रहे हैं, लडाई का सामान इकट्ठा कर रहे हैं और चाँदी के सिक्के ढलवा रहे हैं। अगर अँग्रेज लोग वाक़ई चल जायगे तो तीन महीने के बाद समस्त बगाल म एक भी रुपया या एक भी क्वाँरी कन्या शेष न रहेगी।

बगाल से हिन्दुस्तान की चौडाई की आधी दूरी पर अपनी राजधानी म बैठे हुए राजा ने बड़ी प्रसन्नता के साथ अपनी अनुमति दे दी। उस राजा के पूर्वज हमेशा से लुटेरे महरठे सर्दार रह चुके थे।"

चालीस वर्ष पहले मैं इस कहानी को मौलिक रूप में सुन चुका था। उस समय यह अधिक रोचकता और ग्यूरी के साथ कही गई थी। इस कहानी के पात्र एक लार्ड डफरिन थे और दूसरे वीर राजपूत सर प्रताप सिंह थे जो कई बार जोधपुर के रीजेण्ट रह चुके थे। क़िस्सा यों है —वाइसराय ने पूछा 'अगर अँग्रेज लोग हिन्दुस्तान छोड दें तो क्या होगा?' 'क्या होगा?' राजपूत योधा ने कहा 'मैं अपने जवानों को तयार करूँगा और एक महीने मे एक भी क्वाँरी कन्या या एक भी रुपया बगाल में न रह जायगा।'

म सर प्रताप सिंह को अच्छी तरह जानता था और

लार्ड कर्ज़न वाले दर्बार में उनसे पूछा था कि क्या यह बात चीत आप और वाइसराय में कभी हुई थी। सर प्रताप ने तैश में हो कर जवाब दिया "झूठ, मित्र! बिल्कुल झूठ! हम राजपूत लोग निरपराधों को कभी नहीं सताते। जब कभी हम अपने वैरियों का अपमान करते हैं तो उन्हें भी तलवार से जवाब देने का अवसर देते हैं।

अमरीकनों को बुद्धू बनाना कितना आसान है इस बात पर मेरी इच्छा होती है कि सिडनी स्मिथ का एक वाक्य पेश करूं, पर एक उद्भ्रान्त स्त्री के प्रलाप के कारण समस्त जाति पर दोषारोपण से क्या लाभ।

—:o:—

हिन्दोस्तान के प्रसिद्ध नेताओं की

बृटिश जनता को चेतावनी

(९ अगस्त १९२७)

लदन के प्रसिद्ध समाचार पत्र "टाइम्स" को नीचे लिखा पत्र प्रकाशनार्थ इन सज्जनों ने हस्ताक्षर करके भेजा था कि जिसको 'टाइम्स" ने प्रकाशित करने से इन्कार कर दिया। हस्ताक्षर कर्ता ये सज्जन है-सर तेज बहादुर सप्रू, सर चिम्मनलाल सीतल वाड, सर अतुल चैटर्जी, मि० सुरेन्द्रनाथ मलिक सी० आई० ई, सर मुहम्मद रफीक, डा० परांजपे, सर एम० एम० भोवानगरी, मि० सच्चिदानन्द सिंह, मि० कामट, मि० भगवानदीन दुबे, मि० जे० एन० बसु,—

'एमरिकन मुसाफिर मिस कैथरिन मेयो की "मदर इण्डिया" नामक पुस्तक की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया गया है। पुस्तक हालही में प्रकाशित हुई है। मिस मेयो सन् १९२५-२६ की शरद ऋतु में हिन्दोस्तान गई थी, हम में से किसी को भी आज तक ऐसी पुस्तक देखने का मौका नहीं पड़ा कि जिस में इस प्रकार हिन्दोस्तानी सभ्यता और चाल चलन पर एक तरफ से विना विवेक गालियों की बौछार की गई हो

हम इतना तो मानने को तैय्यार हैं कि उन दूसरे लोगों की तरह जो केवल जाड़ों की मौसम में मुल्कों की सैर किया करते हैं मिस मेयो को भी यह अधिकार है कि चाहे जो राय क़ायम करलें और उसको प्रकाशित भी करदें। परन्तु जब एक विदेशी हमारे देश में कुछ ही महीने घूम कर हिन्दोस्तान जैसे पुरानी सभ्यता वाले विशाल देश के समस्त ३२ करोड़ वासियों पर विना अपवाद यह कलंक लगा दे कि हम लोग सब के सब शारीरिक अधोगति को पहुँचे हुए, नैतिक दृष्टि से दुष्ट और निर्लज्ज झूठ बोलने वाले हैं।

तब इस शर्मनाक कलंक के सर्वव्यापी प्रचार के विरुद्ध एक अत्यन्त दृढ़ प्रतिरोध करने का समय आजाता है विशेष कर जब कि इतना बड़ा कलंक ऐसे ऐसे बोदे प्रमाणों के सहारे पर लगाया गया हो जैसे कि अस्पतालों की तथा फ़ौजदारी अदालतों के मुक़द्दमों की रिपोर्टें तथा कहीं कहीं पर स्वयं देखी हुई एक आध घटना (कि जिस का मन माना अर्थ देखने वाले ने स्वयं ही लगा लिया हो) मिस मेयो ने इसी ही प्रकार का मसाला इकट्ठा करने के अतिरिक्त (हिन्दोस्तानी) किताबों और लेखों से विना प्रसंग के उद्धरण ले कर भी अपने पक्ष का समर्थन किया है। ऐसे ही कमज़ोर सबूत पर मिस मेयो ने हमारी सभ्यता और चाल चलन को भयंकर रूप से बदनाम किया है। यदि कोई हिन्दोस्तानी भी इस ही प्रकार अमेरिका अथवा योरोप के किसी देश में कुछ महीने रह कर और वहां

के अस्पतालों अदालतों की रिपोर्टों में से तथा समाचार पत्रों में से अपने मतलब की सनसनीदार घटनाएं उद्धरित करके उनके सहारे पर समस्त प्रश्चिमीय जनता और उसकी सभ्यता, चाल चलन और रहन सहन पर नैतिक दुश्चरित्रता या शारीरिक हीनता का कलंक लगाने का साहस करे तो यह बिल्कुल ठीकही होगा कि उसकी बकवाज ध्यान देने योग्य न समझी जावे। अचरज की बात तो यह है कि जहां देखो वहां पर ही हिन्दोस्तान के दोषों को तो मिस मेयो ने बड़े चाल से चुन चुन कर संग्रह किया है परन्तु स्वयं हिन्दोस्तानियों द्वारा जो कितनेही सफल आन्दोलन देश वासियों की सामाजिक उन्नति और शिक्षा प्रचार के हेतु पिछले पचास वर्ष से भी अधिक समय से चल रहे हैं उनकी ओर न तो मिस मेयो का ध्यान ही गया है और न उनसे जानकारी प्राप्त करने की उसने कोई परवाह ही की है। यह भी प्रतीत होता है कि मिस मेयो को इससे भी कोई गरज नहीं थी कि देश विख्यात सामाजिक-सुधारकों तथा देशीय विचारों के नेताओं से जानने योग्य बातें स्वयं पूछने में कुछ थोड़ा सा समय भी खर्च करे। मिस मेयो की पुस्तक के करीब करीब हर एक पन्ने को मिथ्या सारहीन और हमारी समस्त जाति और देश पर बुरी नीयत से लगाये गये जिन जिन इलजामों ने कलंकित कर रक्खा है उन सब का सविस्तार प्रतिवाद करने का यह उचित स्थान और समय नहीं है। साधारणतया हमें इस की भी आवश्यकता

नहीं थी कि ऐसी पुस्तक की ओर प्रकाश्य रूप से तनिक भी ध्यान देकर जनता के सामने अपने विचार रक्खें परन्तु जब हम देखते हैं कि अंग्रेज़ी समाचार पत्र इस पुस्तक को महत्व दे रहे हैं और इसका ख़ूब प्रचार कर रहे हैं कि जिससे हिन्दोस्तान को ऐसे समय पर हानि पहुँच जाने की पूरी सम्भावना है तो हमारा यह कर्त्तव्य हो जाता है कि अंग्रेज़ी जनता को सावधान करदें कि यह पुस्तक कितनी अधिक अन्यायपूर्ण और मनो मालिन्य बढ़ाने वाली है"

इति

—o—